श्री समवायाङ्गसूत्रम्

आचार्यश्रीअभयदेवसूरिविरचितवृत्तिविभूषितम्

सम्पादकः संशोधकश्च
पूज्यपादमुनिराजश्रीभुवनविजयान्तेवासी
मुनि जम्बूविजयः

प्राचीनश्रुतसमुद्धारपद्ममालायां
२६
षड्विंशतितमपद्मम्

प्रकाशकः
श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट,
मुंबई-२

नवाङ्गीटीकाकारश्रीमदभयदेवसूरिविरचितविवरणविभूषितं

पञ्चमगणधरदेवश्री सुधर्मस्वामिपरम्पराऽऽयातं

श्री समवायाङ्गसूत्रम्

आद्यसंशोधका आगमप्रभाकराः

पूज्यपादमुनिराजश्री **पुण्यविजयजी**महाराजाः

सम्पादकः पुनः संशोधकश्च

पूज्यपादाचार्यदेवश्रीमद्विजयसिद्धिसूरीश्वरपट्टालङ्कार-

पूज्यपादाचार्यदेवश्रीमद्विजयमेघसूरीश्वरशिष्यरत्न-

पूज्यपादगुरुदेवमुनिराजश्रीभुवनविजयान्तेवासी

मुनि जम्बूविजयः

सहायकाः

मुनिराजश्री धर्मचन्द्रविजय-पुण्डरीकरत्नविजय-धर्मघोषविजय-महाविदेहविजयाः

पंन्यासपद्मविजयपुण्यस्मृतौ

प्राचीनश्रुतसमुद्धारपद्ममालायां

२६

पड्विंशतितमपद्मम्

वि.सं. २०६४ वीर सं. २५३४

प्रकाशकः

श्री जिनशासन आराधना ट्रस्ट,

दु-५, बद्रिकेश्वर सोसायटी, नेताजी सुभाष रोड, मरीनड्राइव 'इ' रोड, मुंबई-२

❁ दिव्यकृपा ❁

सिद्धान्तमहोदधि-कर्मसाहित्यनिष्णात-आचार्यदेवेशश्रीमद्-

विजय **प्रेमसूरीश्वराः**

न्यायविशारद-वर्धमानतपोनिधि-आद्यशिबिरप्रणेतृ-आचार्यदेवेशश्रीमद्-

विजय **भुवनभानुसूरीश्वराः**

समतासागर-पंन्यासप्रवर-श्री **पद्मविजयगणिवराः**

❁ आज्ञा-आशीः ❁

सिद्धान्तदिवाकर-गच्छाधिपतिश्रीविजय **जयघोषसूरीश्वराः**

❁ प्रेरकाः ❁

वैराग्यदेशनादक्ष-श्रीसीमंधरजिनोपासकाचार्यदेवेश-

श्रीविजयहेमचन्द्रसूरीश्वराः

श्रुतसर्जनसुकृतप्रशस्तिः

श्रीसुधर्मस्वामिगणधरगुम्फित-श्रीमदभयदेवसूरिविवरणविभूषितानां श्रीसमवायाङ्गसूत्राणं प्रकाशने प.पू.पंन्यास-**मुक्तिवल्लभविजयगणि**-मुनिश्री**मेघवल्लभविजयगणि**-मुनिश्री-**उदयवल्लभविजयगणि**-मुनिश्री**हृदयवल्लभविजयगणिवराणां** प्रेरणया द्रव्यसहायकः

श्री-प्रेमवर्धक-जैन-श्वे. मू. पू. सङ्घः, पालडी

तस्मै शतशः साधुवादः

- श्री जिनशासन आराधना ट्रस्टः

मुद्रक

श्री पार्श्व कोम्प्युटर्स, 58 पटेल सोसायटी, जवाहर चोक, मणिनगर, अमदावाद. फोन : 079-25460295

से किं तं समवाए ?

श्रीसुधर्मस्वामिगणधरनिरूपित**मभयदेवसूरि**विवृत्तमिदं तुर्याङ्गं नैक-गभीरभावावभासनभासुरभास्करायमानं भविष्यति भविकात्मनां भव्यणिबन्धनमिति सहर्षं पुनः प्रकाश्यते। चतुस्त्रिंशदतिशयज्ञापकं पारमर्षमिदमिति त्वद्यतनबालानामपि श्रीपद्मविजयकृतश्रीयुगादिदेवस्तोत्रतः प्रसिद्धम् । पुण्यावसरेऽस्मिन् पूर्वप्रकाशकाः श्रीसिद्धिभुवनमनोहरजैनट्रस्ट-श्रीजैनआत्मानन्दसभासभ्या एवं सम्पादकाः संशोधकाश्च बहुश्रुतमुनिवराः **श्रीजम्बूविजया** अप्यनल्पधन्यवादार्हाः।

सार्धत्रिशतप्राचीनश्रुतसमुद्धारप्रेरकाणां वैराग्यदेशनादक्षाणामाचार्य-देवश्रीमद्विजय**हेमचन्द्रसूरीश्वरा**णां पुण्यप्रेरणया समतासागरपंन्यासप्रवरश्रीपद्म-विजयगणिवराणां शुभस्मृतौ श्रीजिनशासन-आराधना-ट्रस्टग्रथितायां श्रीप्राचीन-श्रुतसमुद्धारपद्ममालायां षड्विंशतितमं पद्ममिदं सानन्दं समर्पयामः श्रीश्रमण-सङ्घायेति शम् ।

एतद्ग्रन्थस्वामित्वं श्रीजैनश्वेताम्बरमूर्तिपूजकतपागच्छसङ्घस्यैव।
एतद्ग्रन्थपठनपाठनाधिकारी कृतयोगोद्वहनगुर्वाज्ञाप्राप्तमुनिरेव ।

श्रुतसमुद्धारक

१. भानभाई नानजी गडा, मुंबई
(प्रेरक : प.पू. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद्विजय भुवनभानुसूरि म.सा.)
२. शेठ आनंदजी कल्याणजी, अमदावाद
३. श्री शांतिनगर श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ, अमदावाद
(प्रेरक : प.पू. तपसम्राट आचार्यदेव श्रीमद्विजय हिमांशुसूरि म.सा.)
४. श्री श्रीपालनगर जैन उपाश्रय ट्रस्ट, वालकेश्वर, मुंबई
(प्रेरक : प.पू. ग. आ. रामचंद्रसूरि म.सा. नी दिव्यकृपा तथा पू. आचार्यदेव श्रीमद्विजय मित्रानंद सू. म.सा.)
५. श्री लावण्य सोसायटी श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ, अमदावाद
(प्रेरक : प.पू. पंन्यासजी श्री कुलचंद्रविजयजी गणिवर्य)
६. नयनबाला बाबुभाई सी. जरीवाला हा. चंद्रकुमार, मनीष, कल्पनेश
(प्रेरक : प.पू. मुनिराजश्री कल्याणबोधि विजयजी म.सा.)
७. केशरबेन रतनचंद कोठारी हा. ललितभाई
(प्रेरक : प.पू. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय जयघोषसूरीश्वरजी महाराज)
८. श्री श्वेतांबर मूर्तिपूजक तपगच्छीय जैन पौषधशाला ट्रस्ट, दादर, मुंबई
९. श्री मुलुंड श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ, मुलुंड, मुंबई
(आचार्यदेव श्री हेमचंद्रसूरि म.सा. की प्रेरणा से)
१०. श्री सांताक्रुज श्वे. मूर्ति. तपागच्छ संघ, सांताक्रुज, मुंबई
(प्रेरक : आचार्यदेव श्री हेमचंद्रसूरि म.सा.)
११. श्री देवकरण मूलजीभाई जैन देरासर पेढी, मलाड (वेस्ट), मुंबई
(प्रेरक : प.पू. मुनिराजश्री संयमबोधि वि. म.सा.)
१२. संघवी अंबालाल रतनचंद जैन धार्मिक ट्रस्ट, खंभात
(पू.सा. श्री वसंतप्रभाश्रीजी म. तथा पू.सा. श्री स्वयंप्रभाश्रीजी म. तथा पू.सा.श्री दिव्ययशाश्रीजी म. की प्रेरणा से मूलीबेन को आराधना की अनुमोदनार्थे)
१३. बाबु अमीचंद पन्नालाल आदीश्वर जैन टेम्पल चेरीटेबल ट्रस्ट, वालकेश्वर, मुंबई-४००००६.
(प्रेरक : पू. मुनिराजश्री अक्षयबोधि विजयजी म.सा. तथा पू. मुनिराजश्री महाबोधि विजयजी म.सा. तथा पू. मुनिराजश्री हिरण्यबोधि विजयजी म.सा.)

१४. श्री श्रेयस्कर अंधेरी गुजराती जैन संघ, मुंबई
(प्रेरक : पू. मुनिश्री हेमदर्शन वि.म. तथा पू. मुनिश्री रम्यघोष वि.म.)
१५. श्री जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ, मंगल पारेखनो खांचो, शाहपुर, अमदावाद
(प्रेरक : प.पू. आचार्यदेव श्री रूचकचंद्र सूरि म.)
१६. श्री पार्श्वनाथ श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ, संघाणी इस्टेट, घाटकोपर (वेस्ट), मुंबई
(प्रेरक : पू. मुनिराजश्री कल्याणबोधि विजयजी म.सा.)
१७. श्री नवजीवन सोसायटी जैन संघ, बोम्बे सेन्ट्रल, मुंबई
(प्रेरक : पू. मुनिराजश्री अक्षयबोधि वि.म.)
१८. श्री कल्याणजी सोभागचंदजी जैन पेढी, पींडवाडा.
(प्रेरक : सिद्धांतमहोदधि स्व. आ. श्रीमद् विजय प्रेमसूरीश्वरजी म.सा. ना संयमनी अनुमोदनार्थे)
१९. श्री घाटकोपर जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक तपगच्छ संघ, घाटकोपर (वेस्ट), मुंबई
(प्रेरक : वैराग्यदेशनादक्ष पू.आ. श्री हेमचंद्रसूरि म.सा.)
२०. श्री आंबावाडी श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ, अमदावाद
(प्रेरक : पू. मुनि श्री कल्याणबोधि वि.म.)
२१. श्री जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ, वासणा, अमदावाद
(प्रेरक : पू. आचार्य श्री नररत्नसूरि म. ना संयमजीवननी अनुमोदनार्थे पूज्य तपस्वीरत्न आचार्य श्री हिमांशुसूरीश्वरजी म.सा.)
२२. श्री प्रेमवर्धक आराधक समिति, धरणिधर देरासर, पालडी, अमदावाद
(प्रेरक : पू. गणिवर्य श्री अक्षयबोधि विजयजी म.)
२३. श्री महावीर जैन श्वे. मूर्तिपूजक संघ, पालडी, शेठ केशवलाल मूलचंद जैन उपाश्रय, अमदावाद. (प्रेरक : प.पू. आचार्य श्री राजेन्द्रसूरि महाराज सा.)
२४. श्री माटुंगा जैन श्वे. मूर्तिपूजक तपगच्छ संघ अेन्ड चेरिटीज, माटुंगा, मुंबई
२५. श्री जीवीत महावीरस्वामी जैन संघ, नांदिया (राजस्थान)
(प्रेरक : पू. गणिवर्य श्री अक्षयबोधि विजयजी म.सा. तथा मुनिश्री महाबोधि विजयजी म.सा.)
२६. श्री विशा ओसवाल तपगच्छ जैन संघ, खंभात (प्रेरक : वैराग्यदेशनादक्ष प.पू. आचार्यदेव श्री हेमचंद्रसूरि म.सा.)
२७. श्री विमल सोसायटी आराधक जैन संघ, बाणगंगा, वालकेश्वर, मुंबई - ४०० ००६

२८. श्री पालिताणा चातुर्मास आराधना समिति
(प्रेरक : परम पूज्य वैराग्यदेशनादक्ष आचार्यदेव श्रीमद् विजय हेमचंद्रसूरीश्वरजी महाराज साहेब संवत २०५३ के पालिताणा में चातुर्मास प्रसंग पर ज्ञाननिधि में से)
२९. श्री सीमंधर जिन आराधक ट्रस्ट, अेमरल्ड एपार्टमेन्ट, अंधेरी (ईस्ट), मुंबई
(प्रेरक : मुनिश्री नेत्रानंद विजयजी म.सा.)
३०. श्री धर्मनाथ पोपटलाल हेमचंद जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ, जैन नगर, अमदावाद
(प्रेरक - मुनिश्री संयमबोधि वि. म.)
३१. श्री कृष्णनगर जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ, सैजपुर, अमदावाद
(प्रेरक : प.पू. आचार्य विजय हेमचंद्रसुरीश्वरजी म.सा. ना कृष्णनगर मध्ये संवत २०५२ के चातुर्मास निमित्त प.पू. मुनिराजश्री कल्याणबोधि विजय म.सा.)
३२. श्री बाबुभाई सी. जरीवाला ट्रस्ट, निजामपुरा, वडोदरा
३३. श्री गोडी पार्श्वनाथजी टेम्पल ट्रस्ट, पुना
(प्रेरक : पू. गच्छाधिपति आचार्यदेव श्रीमद् विजय जयघोषसूरीश्वरजी म.सा. तथा पू. मुनिराजश्री महाबोधि विजयजी म.सा.)
३४. श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जैन श्वेताम्बर मंदिर ट्रस्ट, भवानी पेठ, पुना.
(प्रेरक : पू. मुनिराज श्री अनंतबोधि विजयजी म.सा.)
३५. श्री रांदेर रोड जैन संघ, सुरत (प्रेरक : पू.पं. अक्षयबोधि विजयजी म.सा.)
३६. श्री श्वेताम्बर मूर्तिपूजक तपागच्छ दादार जैन पौषधशाला ट्रस्ट, आराधना भुवन, दादर, मुंबई (प्रेरक : मुनिश्री अपराजित विजयजी म.सा.)
३७. श्री जवाहर नगर जैन श्वे. मूर्तिपूजक संघ, गोरेगाव, मुंबई
(प्रेरक : पू.आ. श्री राजेन्द्रसूरि म.सा.)
३८. श्री कन्याशाला जैन उपाश्रय, खंभात
(प्रेरक : पू.प्र.श्री रंजनश्रीजी म.सा. पू.प्र. श्री इंद्रश्रीजी म.सा. के संयमजीवन के अनुमोदनार्थे प.पू.सा. श्री विनयप्रभाश्रीजी म.सा. तथा प.पू.सा. श्री वसंतप्रभाश्रीजी म.सा. तथा साध्वीजी श्री स्वयंप्रभाश्रीजी म.सा.)
३९. श्री माटुंगा जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक तपागच्छ संघ अेन्ड चेरीटीज, माटुंगा, मुंबई
(प्रेरक : पू. पंन्यासप्रवर श्रीजयसुंदरविजयजी गणिवर्य)
४०. श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ, ६० फुट रोड, घाटकोपर (ईस्ट)
(प्रेरक : पू.पं.श्री वरबोधिविजयजी गणिवर्य)

४१. श्री आदिनाथ श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ, नवसारी
(प्रेरक : प.पू.आ. श्री गुणरत्नसूरि म. के शिष्य पू. पंन्यासजी श्री पुण्यरत्नविजयजी गणिवर्य तथा पू.पं. यशोरत्नविजयजी गणिवर्य)
४२. श्री कोईम्बतूर जैन श्वेतांम्बर मूर्तिपूजक संघ, कोईम्बतूर
४३. श्री पंकज सोसायटी जैन संघ ट्रस्ट, पालडी, अमदावाद
(प.पू.आ. श्री भुवनभानुसूरि म.सा. के गुरुमूर्ति प्रतिष्ठा प्रसंग हुए आचार्य-पंन्यास-गणि पदारोहण दिक्षा वगेरे निमित्ते ज्ञाननिधि में से हुए)
४४. श्री महावीरस्वामी जैन श्वेतांम्बर मूर्तिपूजक देरासर, पावापुरी, खेतवाडी, मुंबई
(प्रेरक : पू. मुनिश्री राजपालविजयजी म.सा. तथा पू.पं. श्री अक्षयबोधिविजयजी म.सा.)
४५. श्री हीरसूरीश्वरजी जगद्गुरु श्वेतांम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ ट्रस्ट, मलाड (पूर्व), मुंबई
४६. श्री पार्श्वनाथ श्वे. मूर्ति. पू. जैन संघ, संघाणी ईस्टेट, घाटकोपर (वेस्ट), मुंबई
(प्रेरक : गणिवर्यश्री कल्याणबोधि वि. म.)
४७. श्री धर्मनाथ पोपटलाल हेमचंद जैन श्वे. मू.पू. संघ जैन नगर, अमदावाद
(पू. मुनिश्री सत्यसुंदर वि. के प्रेरणा से चातुर्मास में ज्ञाननिधिमें से)
४८. रतनबेन वेलजी गाला परिवार, मुलुंड - मुंबई (प्रेरक : पू. मुनिश्री रत्नबोधि विजयजी)
४९. श्री मरीन ड्राईव जैन आराधक ट्रस्ट, मुंबई
५०. श्री सहस्रफणा पार्श्वनाथ जैन देरासर उपाश्रय ट्रस्ट, बाबुलनाथ, मुंबई
(प्रेरक : मुनिश्री सत्वभूषण विजयजी)
५१. श्री गोवालीया टेंक जैन संघ, मुंबई (प्रेरक : गणिवर्यश्री कल्याणबोधि वि.)
५२. श्री विमलनाथ जैन देरासर आराधक संघ, बाणगंगा, मुंबई
५३. श्री वाडीलाल साराभाई देरासर ट्रस्ट प्रार्थना समाज, मुंबई
(प्रेरक : मुनिश्री राजपालविजयजी तथा पं. श्री अक्षयबोधि विजयजी गणिवर)
५४. श्री प्रीन्सेस स्ट्रीट, लुहार चाल जैन संघ (प्रेरक : गणिवर्य श्री कल्याणबोधि वि.)
५५. श्री धर्मशांति चेरीटेबल ट्रस्ट, कांदिवली (ईस्ट), मुंबई
(प्रेरक : मुनिश्री राजपाल विजयजी तथा पं. श्री अक्षयबोधि विजयजी गणिवर)
५६. साध्वीजी श्री सुर्ययशाश्रीजी तथा सुशीलयशाश्रीजीना पार्ला (ईस्ट)
कृष्णकुंज में हुए चातुर्मास की आवक में से
५७. श्री प्रेमवर्धक देवास श्वे. मूर्तिपूजक जैन संघ, देवास, अमदावाद
(प्रेरक : पू.आ. श्री हेमचंद्रसूरिजी म.)

५८. श्री पार्श्वनाथ जैन संघ, समारोड, वडोदरा
(प्रेरक : पंन्यासजी श्री कल्याणबोधिविजयजी गणिवर्य)

५९. श्री मुनिसुव्रतस्वामी जैन देरासर ट्रस्ट, कोल्हापुर (प्रेरक : पू. मुनिराज श्री प्रेमसुंदर विजयजी)

६०. श्री धर्मनाथ पो. हे. जैन नगर श्वे. मू.पू. संघ, अमदावाद
(प्रेरक - पू. पुण्यरति विजयजी महाराजा)

६१. श्री दिपक ज्योति जैन संघ, कालाचोकी, परेल, मुंबई
(प्रेरक - पू.पं. श्री भुवनसुंदर विजयजी गणिवर्य तथा पू.पं. श्री गुणसुंदर विजयजी गणिवर्य)

६२. श्री पद्ममणि जैन श्वेतांबर तीर्थ पेढी - पाबल, पुना
(प्रेरक : पं. कल्याणबोधि विजयजी के वर्धमान तप सो ओलीनी अनुमोदनार्थे,
पं. विश्वकल्याण विजयजी)

६३. ओमकार सूरीश्वरजी आराधना भुवन - सुरत
(प्रेरक : आ. गुणरत्नसूरि म. ना शिष्य मुनिश्री जिनेशरत्नविजयजी म.)

६४. श्री गोडी पार्श्वनाथ जैन श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ, नायडु कोलोनी, घाटकोपर (ईस्ट), मुंबई

६५. श्री आदीश्वर श्वेतांबर मूर्तिपूजक संघ, गोरेगाव

६६. श्री आदीश्वर श्वेतांबर ट्रस्ट, सालेम (प्रेरक : पू. गच्छाधिपति आ. जयघोषसूरीश्वरजी म.सा.)

६७. श्री गोवालिया टेंक जैन संघ, मुंबई

६८. श्री विलेपारले श्वेतांबर मूर्तिपूजक जैन संघ अेन्ड चेरिटीझ, विलेपार्ले (पूर्व), मुंबई

६९. श्री नेन्सी कोलोनी जैन श्वे.मू.पू. संघ, बोरीवली मुंबई

७०. मातुश्री रतनबेन नरसी मोनजी सावला परिवार
(प.पू. श्री कल्याणबोधि वि. ना शिष्य मुनि भक्तिवर्धन वि. म. तथा सा. जयशीलाश्रीजी के संसारी सुपुत्र राजनजी के पुण्यस्मृति निमित्ते हः सुपुत्रो नवीनभाई, चुनीलाल, दिलीप, हितेश)

७१. श्री सीमंधर जिन आराधक ट्रस्ट, अेमरल्ड एपार्टमेन्ट, अंधेरी (ई)
(प्रेरक : प.पू. श्री कल्याणबोधी विजयजी गणिवर्य)

७२. श्री धर्मवर्धक श्वे. मूर्तिपूजक जैन संघ, कार्टर रोड नं.१, बोरीवली
(प्रेरक : प.पू. वैराग्यदेशनादक्ष आचार्य भगवंत श्री विजय हेमचंद्रसूरीश्वरजी म.सा. तथा पंन्यासप्रवर श्री कल्याणबोधी विजयजी गणिवर्य)

७३. श्री उमरा जैन संघनी श्राविकाओ (ज्ञाननिधि में से)
(प्रेरक : प.पू. मुनिराजश्री जिनेशरत्न विजयजी म.सा.)

७४. श्री केशरीया आदिनाथ जैन संघ, झाडोली राज.
(प्रेरक : प.पू. मु.श्री मेरुचंद्र वि.म. तथा पं. श्री हिरण्यबोधि वि.ग.)
७५. श्री धर्मशांति चेरीटेबल ट्रस्ट, कांदीवली, मुंबई
(प्रेरक : प.पू. मुनिराजश्री हेमदर्शन वि.म.सा.)
७६. श्री जैन श्वे. मू. सुधाराखाता पेढी, महेसाणा
७७. श्री विक्रोली संभवनाथ श्वेताम्बर मूर्तिपूजक जैन संघ, विक्रोली (ईस्ट), मुंबई के आराधक बहनों की तरफ से (ज्ञाननिधि)
७८. श्री के.पी. संघवी चेरीटेबल ट्रस्ट, सुरत, मुंबई
(प्रेरक : प.पू. वैराग्यदेश के दक्ष आचार्य भगवंत श्री विजय हेमचंद्रसुरीश्वरजी म.सा. तथा पंन्यासप्रवर श्री कल्याणबोधी विजयजी गणिवर्य)
७९. शेठ कनैयालाल भेरमलजी चेरिटेबल ट्रस्ट, चंदनबाला, वालकेश्वर, मुंबई
८०. शाह जेसींगलाल मोहनलाल आसेडावालोंके स्मरणार्थे
(हः प्रकाशचंद्र जे. शाह, आफ्रिकावाले)
(प्रेरक : पंन्यासप्रवर श्री कल्याणबोधी विजयजी गणिवर्य)
८१. श्री नवाडीसा श्वे. मूर्तिपूजक जैन संघ, बनासकांठा

श्री सिद्धाचलमण्डन-श्रीऋषभदेवस्वामिने नमः ।
श्रीशान्तिनाथस्वामिने नमः । श्री शङ्खेश्वरपार्श्वनाथाय नमः ।
श्री महावीरस्वामिने नमः । श्री गौतमस्वामिने नमः ।
पूज्यपादाचार्यमहाराजश्रीमद्विजय**सिद्धि**सूरीश्वरजीपादपद्मेभ्यो नमः ।
पूज्यपादाचार्यमहाराजश्रीमद्विजय**मेघ**सूरीश्वरजीपादपद्मेभ्यो नमः ।
पूज्यपाद सद्गुरुदेवमुनिराजश्री **भुवनविजयजी**पादपद्मेभ्यो नमः ।

आमुखम् ।

अनन्तोपकारिणां परमकृपालूनां जिनेश्वराणां परमकृपया परमोपकारिणां पितृचरणानां सद्गुरुदेवानां पूज्यपादमुनिराजश्री **भुवनविजयजी**महाराजानां च परमकृपया साहाय्येन च सम्पन्नं पू.आ.भ.श्री**अभयदेवसूरि**विरचितया वृत्त्या विभूषितं पञ्चमगणधरदेवश्री**सुधर्मस्वामि**-परम्परयाऽऽयातं श्री **समवायाङ्गसूत्रं** प्राचीन-प्राचीनतर-प्राचीनतमविविधहस्तलिखितादर्शानुसारेण संशोधनं विधाय विविधैः परिशिष्टैश्च समलङ्कृत्य जिनागमरसिकानां पुरत उपन्यस्यन्तो वयमद्यामन्दमानन्दमनुभवामः ।

आ.प्र.पू.मुनिराजश्री **पुण्यविजयजी**महाभागैः [प्रायः] चत्वारिंशतो वर्षेभ्यः प्राक् समवायाङ्गसूत्रस्य समवायाङ्गवृत्तेश्च संशोधनं विहितमासीत् । आगमोदयसमित्या विक्रमसं.१९७४ तमे वर्षे प्रकाशिते वृत्तिसहिते समवायाङ्गसूत्रे, सूत्रस्य वृत्तेश्च प्राचीनान् हस्तलिखितानादर्शानवलम्ब्य परःशताः शुद्धपाठाः तैः स्वयमेव लिखिताः ।

तमिमम् आ.प्र.पू.मु.श्री **पुण्यविजयजी**म. संशोधितमादर्शमवलम्ब्य अन्यांश्च प्राचीनान् हस्तलिखितादर्शान् उपयुज्य, संशोध्य, विविधैः परिशिष्टैश्चालङ्कृत्य सम्पादितोऽयं ग्रन्थोऽस्माभिः । यदस्मिन् विषये किञ्चिद् वक्तव्यं तद् गूर्जरभाषायां निबद्धायां प्रस्तावनायां लिखितमस्माभिरतस्तत्रैव द्रष्टव्यं जिज्ञासुभिः ।

किञ्चान्यत्, श्रीमहावीरजैनविद्यालयेन विक्रमसंवत् २०४१ तमे [ई.स.१९८५] वर्षे जैन-आगम-ग्रन्थमालायां ग्रन्थाङ्क ३ रूपेण प्रकाशितस्य मूलमात्रस्य स्थानाङ्गसूत्रस्य समवायाङ्गसूत्रस्य च गूर्जरभाषानिबद्धायां प्रस्तावनायाम्, संस्कृतभाषानिबद्धे आमुखे, टिप्पणेषु, विविधेषु परिशिष्टेषु च यथायोगं विस्तरेण बहुतरं लिखितमस्माभिः । अतः सटीकस्य समवायाङ्गसूत्रस्य वैशद्येन अध्येतृभिः

श्रीमहावीरजैनविद्यालयेन विक्रमसं. २०४१ तमे [ई.स.१९८५] वर्षे प्रकाशितं **स्थानाङ्ग**सूत्रं **समवायाङ्ग**सूत्रं च अवश्यमेव उपयोज्यम् । एतदनुसारेणैव मूलरूपं समवायाङ्गसूत्रमस्मिन् सटीके समवायाङ्गसूत्रे मुद्रितम्, तथापि क्वचित् क्वचित् यथायोग्यं परिवर्तनमपि अत्र विहितमिति सुधीभिरवश्यं ध्येयम् ।

सटीकस्य स्थानाङ्गसूत्रस्य प्रथम-द्वितीय-तृतीयविभागेषु प्रस्तावनायाम् आमुखादौ परिशिष्टेषु च यल्लिखितमस्माभिः तदपि विशेषजिज्ञासुभिर्निरीक्षणीयम् ।

वृत्तिसहितस्य समवायाङ्गसूत्रस्य संशोधने येषां हस्तलिखितानामादर्शानामुपयोगोऽस्माभिर्विहितः तेषां किञ्चित् स्वरूपम् अस्य ग्रन्थस्य प्रथमपत्रेऽन्तिमपत्रे चाधस्तात् टिप्पने प्रदर्शितम् ।

अस्माभिः संशोधिता ग्रन्थाः शृङ्खलारूपेण प्रकाश्यन्ते । अतो ये ग्रन्थाः पूर्वं प्रकाशिताः तेषु याः अशुद्धयो दृष्टिपथमवतीर्णाः तासामपि परिमार्जनं संस्करणं च अस्माभिः ग्रन्थान्तरेषु विधीयते-विधास्यते च । अतः सटीकस्य स्थानाङ्गस्य प्रथम-द्वितीय-तृतीयविभागानां शुद्धि-वृद्धिपत्रकमस्मिन् समवायाङ्गे नवमे परिशिष्टे द्रष्टव्यम् । तदनुसारेण स्थानाङ्गेऽपि शुद्धिर्वृद्धिश्च सुधीभिः स्वयमेव करणीया ।

यत्र पाठे किञ्चिद् विशेषतो वक्तव्यं तत्र * एतादृशं चिह्नं विहितम्, तत्र विशेषजिज्ञासुभिः तृतीये परिशिष्टे टिप्पनेषु द्रष्टव्यम् ।

अस्माकं या सम्पादने संशोधने च शैली सा पूर्वतनेषु ग्रन्थेषु प्रस्तावनादौ निवेदिता एव इति तत एवावधार्या ।

धन्यवादः- अस्य ग्रन्थस्य संशोधने सम्पादने च यतो यतः किमपि साहायकं लब्धं तेभ्यः सर्वेभ्यो भूयो भूयो धन्यवादान् वितरामि । विशेषतस्तु इमे स्मर्तव्याः- सटीकस्य समवायाङ्गसूत्रस्य प्राचीनान् हस्तलिखितानादर्शानवलम्ब्य आगमप्रभाकरपूज्यमुनिराजश्री **पुण्यविजयजी** महाभागैः संशोधनं विहितमासीत् । तं मु.श्री **पुण्यविजयजी**म. संशोधितमादर्शं मुख्यतया अवलम्ब्य अस्य ग्रन्थस्य संशोधनं सम्पादनं चास्माभिर्विहितम् । किञ्च, श्रीमहावीरजैनविद्यालयेन प्रारब्धाया जैनागमग्रन्थमालायाः प्रकाशने बीजभूताः प्रेरकाश्च आ.प्र.मु.श्री**पुण्यविजयजी**महाभागा एव । तैरेव च संशोधन-सम्पादनक्षेत्रेऽहं योजितः । अतः कृतज्ञभावेन तेषां चरणयोर्वन्दनं विदधामि ।

अनेकेभ्यो वर्षेभ्यः प्राक् आगमोद्धारकैराचार्यश्री**सागरानन्दसूरि**भिः महान् ग्रन्थराशिः महता महता परिश्रमेण जैनसंघस्य पुरस्ताद् मुद्रयित्वा उपन्यस्तः । समग्रोऽपि जैनसंघः तैरुपकृतः । अतस्तेषामपि चरणयोः वन्दनं विदधामि ।

परमोपकारिणी परमपूज्या विक्रमसंवत् २०५१ तमे वर्षे श्री सिद्धक्षेत्रे **पालिताणा**नगरे पौषशुक्लदशम्यां दिवंगता शताधिकवर्षायुष्का मम माता साध्वीजीश्री **मनोहरश्री**रिहलोक-परलोककल्याणकारिभिराशीर्वचनैर्निरन्तरं मम परमं साहायकं सर्वप्रकारैर्विधत्ते ।

लोलाडाग्रामे विक्रमसंवत् २०४० कार्तिकशुक्लद्वितीयादिने दिवंगतो ममान्तेवासी वयोवृद्धो देवतुल्यो मुनि**देवभद्र**विजयः सदा मे मानसिकं बलं पुष्णाति ।

ममातिविनीतोऽन्तेवासी मुनि**धर्मचन्द्र**विजयः तच्छिष्यः मुनि**पुण्डरीकरत्न**विजयः मुनि-**धर्मघोष**विजयः मुनि**महाविदेह**विजयश्च अनेकविधेषु कार्येषु महद् महत् साहायकमनुष्ठितवन्तः ।

एवमेव मम मातुः साध्वीश्री**मनोहरश्रियः** शिष्यायाः साध्वीश्री**सूर्यप्रभाश्रियः** शिष्यया साध्वीश्री**जिनेन्द्रप्रभाश्रिया** एतद्ग्रन्थसंशोधनसम्बन्धिषु सर्वकार्येषु प्रभूतं प्रभूतं साहायकमनुष्ठितम् ।

श्री**महावीर**जैनविद्यालयस्य कार्यवाहकैः महता द्रव्यव्ययेन साध्यस्य एतन्मुद्रणादिकस्य व्यवस्था स्वीकृता । अतस्तेभ्योऽपि भूयो भूयो धन्यवादान् वितरामि ।

एतेभ्यः सर्वेभ्यो भूयो भूयो धन्यवादा वितीर्यन्ते ।

देव-गुरुप्रणिपातपूर्वकं प्रभुपूजनम्

परमकृपालूनां परमेश्वराणां देवाधिदेवश्री **शङ्खेश्वरपार्श्वनाथ**प्रभूणां परमोपकारिणां पूज्यपादानां पितृचरणानां सद्गुरुदेवानां मुनिराजश्री **भुवनविजय**जीमहाराजानां च कृपया साहाय्याच्चैव संपन्नं कार्यमिदमिति तेषां चरणेषु अनन्तशः प्रणिपातं विधाय अस्मिन् **कुंभण**ग्रामे मूलनायकरूपेण विराजमानस्य श्री**शान्तिनाथ**स्य भगवतः करकमलेऽद्य भक्तिभरनिर्भरेण हृदयेन भगवद्वचनात्मकमेव पुष्परूपमेतं ग्रन्थं निधाय अनन्तशः प्रणिपातपूर्वकं भगवन्तं श्री शान्तिनाथं महयाम्येतेन कुसुमेन ।

— इत्यावेदयति
पूज्यपादाचार्यश्रीमद्विजय**सिद्धिसूरीश्वर**पट्टालङ्कार-
पूज्यपादाचार्यमहाराजश्रीमद्विजय**मेघसूरीश्वर**शिष्य-
पूज्यपादसद्गुरुदेवमुनिराजश्री **भुवनविजया**न्तेवासी
मुनि **जम्बूविजयः**

कुंभण [जिल्ला-भावनगर]
[तालुका- महुवा बंदर]
पीन-३६४२९०
गुजरातराज्य [सौराष्ट्र]

विक्रम सं.२०६१,
कार्तिकशुक्लपञ्चमी, ज्ञानपञ्चमी,
भौमवासरः, ता.१६-११-२००४

वृत्तिसहितस्य समवायाङ्गसूत्रस्य विषयानुक्रमः

सूत्राङ्काः	विषयः	पृष्ठाङ्काः
१-१६०	**वृत्तिसहितं समवायाङ्गसूत्रम्**	१-३१०
१	भगवदाख्याता आत्मादय एकपदार्थाः	१-१३
२	दण्ड-राशि-बन्धन-नक्षत्र-स्थिति-श्वासोच्छ्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	१३-१५
३	दण्ड-गुप्ति-शल्य-गौरव-विराधना-नक्षत्र-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	१५-१७
४	कषाय-ध्यान-विकथा-संज्ञा-बन्ध-योजन-नक्षत्र-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	१७-१९
५	क्रिया-महाव्रत-कामगुणा-ऽऽस्रवसंवरद्वार-निर्जरास्थान-समित्यस्तिकाय-नक्षत्र-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	१९-२२
६	लेश्या-जीवनिकाय-तपः-समुद्घाता-ऽर्थावग्रह-नक्षत्र-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	२२-२४
७	भयस्थान-समुद्घात-भगवन्महावीरोच्चत्व-वर्षधर-वर्ष-नक्षत्र-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	२४-२६
८	मदस्थान-प्रवचनमातृ-चैत्यवृक्ष-जम्बू-कूटशाल्मली-जगती-केवलि-समुद्घात-प्रभुपार्श्वगणधर-नक्षत्र-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	२६-२९
९	ब्रह्मगुप्ति-अगुप्ति-ब्रह्मचर्याध्ययन-प्रभुपार्श्वोच्चत्व-नक्षत्र-तारा-मत्स्य-विजयद्वार-सभा-कर्मप्रकृति-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	२९-३२
१०	श्रमणधर्म-समाधिस्थान-मन्दरविष्कम्भ-अरिष्टनेम्यर्हदाद्युच्चत्व-ज्ञानवृद्धिकरनक्षत्र-कल्पवृक्ष-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	३३-३७
११	उपासकप्रतिमा-ज्योतिश्चक्रान्त-ज्योतिश्चार-गणधर-नक्षत्र-विमान-मन्दरोच्चत्व-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	३७-४२
१२	भिक्षुप्रतिमा-सम्भोग-कृतिकर्म-विजयाराजधानी-बलदेवायुः-दिनरात्रिमान-ईषत्प्राग्भारा-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	४२-४९
१३	क्रियास्थान-विमानप्रस्तट-आयामविष्कम्भ-जातिकुलकोटी-पूर्ववस्तु-प्रयोग-सूर्यमण्डल-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	४९-५२
१४	भूतग्राम-पूर्व-पूर्ववस्तु-श्रमणसंख्या-जीवस्थान-जीवा-रत्न-महानदी-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	५२-५६
१५	परमाधार्मिक-नमिनाथोच्चत्व-ध्रुवराहु-नक्षत्र-दिनरात्रिमान-पूर्ववस्तु-प्रयोग-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	५६-६१

विषयानुक्रमः

१६	गाथाषोडशक-कषाय-श्रमणसंख्या-पूर्ववस्तु-आयाम-विष्कम्भ-लवणसमुद्र-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	६२-६४
१७	असंयम-संयम-मानुषोत्तरा-ऽऽवासपर्वत-लवणसमुद्र-चारणगति-उत्पातपर्वत-मरण-कर्मप्रकृति-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	६४-६९
१८	ब्रह्मचर्य-श्रमणसंख्या-श्रमणस्थान-पदाग्र-ब्राह्मीलिपि-पूर्ववस्तु-दिनरात्रिमान-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	६९-७२
१९	ज्ञाताध्ययन-सूर्य-शुक्र-जम्बूद्वीपकला-तीर्थकर-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	७२-७४
२०	असमाधिस्थान-मुनिसुव्रतार्हदुच्चत्व-घनोदधिबाहल्य-सामानिकसाहस्री-कर्मबन्धस्थिति-पूर्ववस्तु-काल-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	७४-७७
२१	शबल-कर्म-काल-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	७७-८०
२२	परीषह-दृष्टिवादसूत्र-पुद्गलपरिणाम-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	८०-८३
२३	सूत्रकृदध्ययन-तीर्थकरज्ञानादि-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	८३-८४
२४	देवाधिदेव-जीवा-इन्द्र-पौरुषीयच्छाया-नदीविस्तार-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	८५-८७
२५	भावना-मल्लिजिनाद्युच्चत्व-निरयावासा-ऽध्ययन-कर्मप्रकृति-प्रपात-पूर्ववस्तु-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	८७-९०
२६	दशाकल्पव्यवहारोद्देशनकाल-कर्म-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	९०-९१
२७	अनगारगुण-नक्षत्र-विमानपृथिवी-कर्म-सूर्यचार-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	९१-९४
२८	आचारप्रकल्प-मोहनीयकर्मा-ऽऽभिनिबोधिकज्ञान-विमानावास-नामकर्म-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	९४-९७
२९	पापश्रुतप्रसङ्ग-आषाढमासादिदिवस-चन्द्रदिनमान-नामकर्म-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	९७-१००
३०	मोहनीयस्थान-मण्डिकपुत्रायुः-अहोरात्रमुहूर्तनाम-अरजिनोच्चत्व-सहस्रारेन्द्र-सामानिकसंख्या-पार्श्ववीरजिनागारवासमान-निरयावास-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार- सिद्धयः	१००-११३
३१	सिद्धगुण-मन्दरपर्वतपरिक्षेप-सूर्यचार-अभिवर्धितादित्यमास-दिवस-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	११३-११५
३२	योगसंग्रह-देवेन्द्र-कुन्थुनाथकेवलि-नक्षत्र-नाट्य-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	११५-११८
३३	आशातना-भौम-महाविदेहवर्षविष्कम्भ-सूर्यचार-स्थिति-श्वासा-ऽऽहार-सिद्धयः	११८-१२२
३४	बुद्धातिशेष-चक्रवर्तिविजय-दीर्घविजयार्ध-तीर्थकर-भवननिरयावासाः	१२२-१२६

३५	सत्यवचनातिशेष-कुन्थुजिनाद्युच्चत्व-जिनसक्थि-निरयावासाः	१२८-१२९
३६	उत्तराध्ययन-सभा-वीरजिनार्यासंख्या-पौरुषीच्छायाः	१२९-१३०
३७	कुन्थुजिनगणधर-जीवा-प्राकार-उद्देशनकाल-पौरुषीच्छायाः	१३०
३८	पार्श्वजिनार्यासंख्या-जीवा-मेरु-उद्देशनकालाः	१३१
३९	नमिजिनावधिज्ञानि-कुलपर्वत-निरयावास-कर्मप्रकृतयः	१३१-१३२
४०	नमिजिनार्या-मेरुचूलिका-शान्तिजिनोच्चत्व-भवन-उद्देशनकाल-पौरुषीच्छाया-विमानानि	१३२-१३३
४१	नमिजिनार्यिका-निरयावास-उद्देशनकालाः	१३३
४२	वीरजिनश्रामण्यपर्याया-ऽऽवासपर्वत-कालोदचन्द्रसूर्य-स्थिति-नामकर्म-लवण-उद्देशनकाल-कालाः	१३३-१३६
४३	कर्मविपाकाध्ययन-निरयावासा-ऽऽवासपर्वत-उद्देशनकालाः	१३६
४४	ऋषिभाषित-विमलजिनपुरुषयुगसिद्ध-भवन-उद्देशनकालाः	१३६-१३७
४५	समयक्षेत्रादिसाम्य-धर्मजिनोच्चत्व-मन्दर-नक्षत्र-उद्देशनकालाः	१३७-१३८
४६	दृष्टिवादपद-ब्राह्म्यक्षर-भवनानि	१३८-१३९
४७	सूर्यचारा-ऽग्निभूतिगृहवासौ	१३९-१४०
४८	चक्रवर्तिपत्तन-धर्मजिनगणधर-सूर्यमण्डलानि	१४०
४९	भिक्षुप्रतिमा-कुरुमनुष्य-स्थितयः	१४०-१४१
५०	मुनिसुव्रतजिनार्यिका-अनन्तजिदुच्चत्व-वासुदेवोच्चत्व-दीर्घवैताढ्य-विष्कम्भ-विमान-गुफा-कञ्चनपर्वताः	१४१-१४२
५१	आचाराङ्गप्रथमश्रुतस्कन्धोद्देशनकाल-सभा-बलदेवायुः-कर्माणि	१४२
५२	मोहनीयनामा-ऽऽवासपर्वत-कर्म-विमानानि	१४२-१४४
५३	जीवा-अनुत्तरौपपातिकवीरजिनशिष्य-स्थितयः	१४४-१४५
५४	उत्तमपुरुष-नेमिजिनछद्मस्थकाल-वीरजिनव्याकरण-अनन्तजिज्जिनगणधराः	१४५
५५	मल्लिजिनायुः-मन्दर-वीरजिनव्याकरण-निरयावास-विमानानि	१४५-१४७
५६	नक्षत्र-विमलजिनगणधराः	१४७
५७	अङ्गत्रयाध्ययना-ऽऽवासपर्वत-मल्लिजिनमनःपर्यायज्ञानि-जीवाः	१४७-१४८
५८	निरयावास-कर्मा-ऽऽवासपर्वताः	१४८-१४९
५९	चान्द्रवर्षऋतुदिन-सम्भवजिनगृहवास-मल्लिजिनावधिज्ञानिनः	१४९
६०	सूर्यमण्डल-लवणसमुद्र-विमलजिनोच्चत्व-सामानिक-विमानानि	१४९-१५०
६१	ऋतुमास-मन्दर-चन्द्रसूर्यमण्डलानि	१५०-१५१
६२	युगपूर्णिमामावास्या-वासुपूज्यजिनगणधर-शुक्ल-कृष्णपक्ष-विमान-विमानप्रस्तटाः	१५१-१५३

६३	ऋषभजिनराज्यकाल-हरिवर्षादिमनुष्य-निषधादिसूर्योदयाः	१५३-१५४
६४	भिक्षुप्रतिमा-असुरकुमारावास-सामानिक-दधिमुख-विमान-हाराः	१५४-१५५
६५	सूर्यमण्डल-मौर्यपुत्रगृहंवास-भौमाः	१५५-१५६
६६	मनुष्यक्षेत्रचन्द्रसूर्य-श्रेयांसजिनगणधर-आभिनिबोधिकस्थितियः	१५६-१५७
६७	नक्षत्रमास-बाहा-मन्दर-नक्षत्रसीमाविष्कम्भाः	१५७-१५९
६८	धातकीखण्ड-पुष्करार्धविजय-तीर्थकरादि-विमलजिनश्रमणाः	१५९-१६०
६९	समयक्षेत्रवर्ष-वर्षधर-मन्दर-कर्माणि	१६०-१६१
७०	वीरजिनपर्युषणाकाल-पार्श्वजिनश्रामण्यकाल-वासुपूज्यजिनोच्चत्व-कर्मस्थिति-सामानिकाः	१६१-१६२
७१	सूर्यावृत्ति-वीर्यपूर्वप्राभृत-अजितजिनसगरचक्रिगृहवासः	१६२-१६४
७२	आवास-लवणसमुद्र-वीरजिनायुः-अचलभ्रात्रायुः-चन्द्र-सूर्य-चक्रवर्तिपुर-कला-स्थितयः	१६४-१६६
७३-७४	जीवा-बलदेवायुः-अग्निभूत्यायुः-सीतोदा-निरयावासाः	१६६-१६८
७५-७६	सुविधिजिनकेवलि-शीतलजिनशान्तिजिनगृहवास-भवनपत्यावासाः	१६८-१६९
७७	भरतचक्रिकुमारवास-अङ्गवंशप्रव्रजितनृप-लौकान्तिकपरिवार-मुहूर्तलवाग्राणि	१६९-१७०
७८	शक्राधिपत्य-अकम्पितगणधरायुः-सूर्यचाराः	१७०-१७२
७९	अन्तराणि	१७२-१७४
८०	श्रेयांसजिनाद्युच्चत्व-राज्यकाल-काण्डबाहल्य-सामानिक-सूर्योदयाः	१७४
८१	भिक्षुप्रतिमा-कुन्थुजिनमनःपर्यायज्ञानि-व्याख्याप्रज्ञप्तिमहायुग्मानि	१७४-१७५
८२	सूर्यचार-वीरगर्भापहारा-ऽन्तराणि	१७५-१७६
८३	वीरजिनगर्भापहार-शीतलजिनगणधर-मण्डितपुत्रायुः-ऋषभजिन-भरतचक्रिगृहवासाः	१७६-१७७
८४	निरयावास-ऋषभजिन-श्रेयांसजिनाद्यायुः-सामानिक-मन्दराद्युच्चत्व-धनुःपृष्ठ-पङ्कबहुलकाण्ड-व्याख्याप्रज्ञप्तिपद-नागकुमारावास-प्रकीर्णक-योनि-गुणकार-ऋषभजिनगणधर-श्रमण-विमानानि	१७७-१८१
८५	आचाराङ्गोद्देशनकाल-मन्दर-रुचक-नन्दनानि	१८१-१८२
८६	सुविधिजिनगणधर-सुपार्श्वजिनवादि-घनोदध्यन्तराणि	१८२
८७-८८	अन्तर-कर्म-अन्तर-महाग्रह-दृष्टिवादसूत्र-अन्तर-सूर्यचाराः	१८३-१८५
८९	ऋषभजिन-वीरजिननिर्वाणगमन-हरिषेणराज्य-शान्तिजिनार्याः	१८५-१८६
९०	शीतलजिनोच्चत्व-अजितजिनगणधर-स्वयम्भूविजय-अन्तराणि	१८६
९१	परवैयावृत्यप्रतिमा-कालोदपरिक्षेप-कुन्थुजिनावधिज्ञानि-कर्माणि	१८६-१८८
९२	प्रतिमा-गौतमस्वाम्यायुः-अन्तराणि	१८८-१९०

९३	चन्द्रप्रभजिनगणधर-शान्तिजिनचतुर्दशपूर्वि-सूर्यमण्डलानि	१९०
९४	जीवा-अवधिज्ञानिनः	१९०-१९१
९५	सुपार्श्वजिनगणधर-महापाताल-लवणसमुद्र-कुन्थुजिनायुः-मौर्यपुत्रायूंषि	१९१-१९२
९६	चक्रवर्तिग्रामकोटी-भवन-दण्ड-आदिमुहूर्ताः	१९२-१९३
९७-९८	अन्तर-कर्म-हरिषेणगृहवासाः, अन्तर-धनुःपृष्ठ-सूर्यचारताराः	१९३-१९५
९९	मन्दर-अन्तर-सूर्यमण्डल-अन्तराणि	१९५-१९६
१००	भिक्षुप्रतिमा-नक्षत्रतारा-सुविधिजिनोच्चत्व-पार्श्वजिनायुः-सुधर्मगण-धरायुः-दीर्घवैताढ्याद्युच्चत्वादि	१९६-१९७
१०१-१०३	चन्द्रप्रभजिनोच्चत्व-विमानानि, सुपार्श्वजिनोच्चत्व-पर्वत-पद्मप्रभजिनोच्चत्व-प्रासादोच्चत्वानि	१९७
१०४-१०५	सुमतिजिनोच्चत्व-नेमिजिनकुमारवास-विमानप्राकार-वीरजिनचतुर्दशपूर्वि-सिद्धावगाहनाः, पार्श्वजिनचतुर्दशपूर्वि-अभिनन्दनजिनोच्चत्वानि	१९७-१९८
१०६-१०८	सम्भवजिनोच्चत्व-पर्वतोच्चत्वादि-विमान-वीरजिनवादिनः, अजितजिन-सगरचक्र्युच्चत्वम्, पर्वताद्युच्चत्वादि-ऋषभजिनभरतचक्र्युच्चत्व-पर्वताद्युच्चत्वादि-विमानोच्चत्वानि	१९८-२००
१०९	विमानोच्चत्व-अन्तर-पार्श्वजिनवादि-अभिचन्द्रकुलकरोच्चत्व-वासुपूज्यजिनसहप्रव्रजिताः	२००-२०१
११०	विमान-वीरजिनकेवलि-वैकुर्विक-नेमिजिनकेवलपर्याय-अन्तराणि	२०१
१११	विमान-भौमेयविहार-वीरजिनानुत्तरौपपातिक-सूर्यचार-नेमिजिनवादिनः	२०१-२०२
११२	विमान-अन्तर-विमलवाहनकुलकरोच्चत्व-तारा-अन्तराणि	२०२-२०३
११३-११४	विमान-पर्वत-नेमिजिनायुः-पार्श्वजिनकेवलि-सिद्ध-द्रहाः, विमान-पार्श्वजिनवैकुर्विकाः	२०३-२०४
११५-११७	द्रह-अन्तर-द्रहाः	२०४-२०५
११८-११९	अन्तर-विमानावासाः	२०५
१२०-१३१	अन्तर-वर्ष-जीवा-मन्दर-जम्बूद्वीप-लवण-पार्श्वजिनश्राविका-धातकीखण्ड-लवण-भरतचक्रिराज्यकाल-अन्तर-विमानावासाः	२०५-२०७
१३२-१३५	अजितजिनावधिज्ञानि-वासुदेवायूंषि, भगवतो महावीरस्य तीर्थकरभवात् षष्ठो भवः, ऋषभ-वीरजिनयोरन्तरम्	२०७-२०८
१३६	द्वादशाङ्गीनामानि तथा आचाराङ्गसूत्रस्वरूपम्	२०८-२१३
१३७	सूत्रकृताङ्गसूत्रस्वरूपम्	२१३-२१८
१३८	स्थानाङ्गसूत्रस्वरूपम्	२१८-२१९
१३९	समवायाङ्गसूत्रस्वरूपम्	२१९-२२२

१४०	व्याख्याप्रज्ञप्ति(भगवती)सूत्रस्वरूपम्	२२२-२२५
१४१	ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्रस्वरूपम्	२२५-२३०
१४२	उपासकदशाङ्गसूत्रस्वरूपम्	२३०-२३२
१४३	अन्तकृतदशाङ्गसूत्रस्वरूपम्	२३३-२३४
१४४	अनुत्तरोपपातिकदशाङ्गसूत्रस्वरूपम्	२३४-२३७
१४५	प्रश्नव्याकरणसूत्रस्वरूपम्	२३७-२४०
१४६	विपाकश्रुतस्वरूपम्	२४०-२४६
१४७	दृष्टिवादवर्णनम्	२४६-२५३
१४८	द्वादशाङ्गगणिपिटकस्वरूपम्	२५३-२५६
१४९	जीवाजीवराशिस्वरूपम्	२५६-२६१
१५०	असुरकुमाराद्यावासाः	२६१-२६७
१५१	नारकादिजीवानां स्थितिः	२६७-२६९
१५२	औदारिकशरीरादिवर्णनम्	२६९-२७५
१५३	अवधि-वेदना-आहारवर्णनम्	२७५-२७९
१५४	आयुर्बन्ध-उपपातोद्वर्तना-आकर्षस्वरूपम्	२७९-२८३
१५५-१५६	संहनन-संस्थान-वेदाः	२८३-२८५
१५७-१५९	कुलकर-तीर्थकर-बलदेव-वासुदेवादिवक्तव्यता	२८५-३१०

परिशिष्टानि

प्रथमं परिशिष्टम् समवायाङ्गसूत्रान्तर्गतानां गाथार्धानामकारादिक्रमः १-४

द्वितीयं परिशिष्टम् कतिपयानि विशिष्टानि टिप्पनानि ५-२७

तृतीयं परिशिष्टम् समवायाङ्गसूत्रटीकायामुद्धृतानां साक्षिपाठानामकारादिक्रमः २८-३०

॥ अर्हम् ॥

नवाङ्गीटीकाकारश्रीमदभयदेवसूरिविरचितटीकाविभूषितं
पञ्चमगणधरदेवश्री सुधर्मस्वामिपरम्पराऽऽयातं

श्री समवायाङ्गसूत्रम् ।

[सूत्रम् १] [१] [1]सुयं मे आउसं ! तेणं भगवता एवमक्खातं–

[टीका] [2]श्रीवर्द्धमानमानम्य **समवायाङ्गवृत्तिका** ।
विधीयतेऽन्यशास्त्राणां प्रायः समुपजीवनात् ॥१॥

दुःसम्प्रदायादसदूहनाद्वा भणिष्यते यद् वितथं मयेह ।
तद् धीधनैर्मामनुकम्पयद्भिः शोध्यं मतार्थक्षतिरस्तु मैवम् ॥२॥

इह **स्थाना**ख्यतृतीयाङ्गानुयोगानन्तरं क्रमप्राप्त एव **समवाया**भिधानचतुर्थाङ्गानुयोगो भवतीति सोऽधुना समारभ्यते । तत्र च [3]फलादिद्वारचिन्ता **स्थानाङ्गा**नुयोगवदवसेया, नवरं समुदायार्थोऽयमस्य– **सम्** इति सम्यक् **अवे**त्याधिक्येन अयनम् **अयः** परिच्छेदो

१. श्री **महावीर जैन विद्यालये**न विक्रमसंवत् २०४१ [ईशवीयसन १९८५] वर्षे प्रकाशिते जैनागमग्रन्थमालायाः तृतीये ग्रन्थाङ्के प्राचीनान् हस्तलिखितादर्शानवलम्ब्य अस्माभिः संशोधितं सम्पादितं च यत् **समवायाङ्गसूत्रं** वर्तते प्रायः तदेवात्र मुद्रितम् । ये तु तत्र पाठभेदाः ते जिज्ञासुभिः तत्रैव विलोकनीयाः ॥ **२.** अत्रेदमवधेयम्– अस्याः समवायाङ्गवृत्तेः संशोधनं जे१,२, खं० इति प्राचीनांस्तालपत्रोपरिलिखितानादर्शानवलम्ब्य विहितम् । **जे१** = **जेसलमेरु**दुर्गस्थे खरतरगच्छीयाचार्यश्री **जिनभद्रसूरि**भिः विक्रमसंवत् १४०१ वर्षे संस्थापिते तालपत्रीयजैनग्रन्थभाण्डागारे विद्यमान आदर्शः, New Catalogue of Sanskrit and Prakrit Manuscripts JESALMER COLLECTION अनुसारेण अस्य '८' अष्टमः क्रमाङ्कः, अत्र १-४५ पत्रेषु मूलमात्रं समवायाङ्गसूत्रं वर्तते, पञ्चदशं पत्रमत्र नास्ति, ४६-१३४ पत्रेषु समवायाङ्गवृत्तिर्वर्तते, "समवायाङ्गवृत्तिः सम्पूर्णा ॥ संवत् १४८७ वर्षे पोस सुदि १० रवौ" इति अस्यान्ते उल्लेखः॥ **जे२** = अयमपि जेसलमेरुदुर्गस्थ एवादर्शः, अस्य '९' नवमः क्रमाङ्कः, अत्र १-६४ पत्रेषु मूलमात्रं समवायाङ्गसूत्रं वर्तते, चतुर्विंशतितमं पत्रमत्र नास्ति, ६५-२१५ पत्रेषु समवायाङ्गवृत्तिर्वर्तते, "संवत् १४०१ वर्षे माघ-शुक्ल एकादश्यां श्री **स**मवायाङ्गसूत्रवृत्तिपुस्तकं सा. **रउला**सुश्रावकेण मूल्येन गृहीत्वा श्री**खर**तरगच्छे श्री**जिन**पद्मसूरिपट्टालङ्कार श्री**जिन**चन्द्रसूरिसुगुरोः प्रादायि । आचन्द्रार्कं नन्दतात्" इति अस्यान्ते उल्लेखः । **खं०** = **खम्भात**नगरे श्री शान्तिनाथतालपत्रीयजैनग्रन्थभाण्डागारे विद्यमान आदर्शः Catalogue of Palm-leaf Manuscripts in the Śāntinātha Jain Bhandāra, Cambay अनुसारेण अस्य क्रमाङ्कः ३७, अत्र १-९७ पत्रेषु मूलमात्रं समवायाङ्गसूत्रं वर्तते, ३४, ३५, ६७ तमानि पत्राणि न सन्ति, ९८-३३० पत्रेषु समवायाङ्गवृत्तिर्वर्तते, १८३, २७३ तः २७८, ३१८, ३२० तः ३२२ पत्राणि न सन्ति, "संवत् १३४९ वर्षे माघ सुदि १३ अद्येह **दयावटे** श्रे० **होना** श्रे० **कु**मरसीह श्रे० **सो**मप्रभृतिसंघसमवायसमारब्धपुस्तकभाण्डागारे ले० **सी**हाकेन श्री**स**मवायवृत्तिपुस्तकं लिखितम्" इत्येवमस्यान्ते उल्लेखः । अत्रोपयुक्तानां **हे१,२** इति कागजपत्रोपरिलिखितानामादर्शानां तु स्वरूपमस्य ग्रन्थस्य प्रान्ते टिप्पणे विलोकनीयम् ॥ **३. स्था० टी०** पृ०२॥

जीवाजीवादिविविधपदार्थसार्थस्य यस्मिन्नसौ **समवायः** । समवयन्ति वा समवतरन्ति सम्मिलन्ति नानाविधा आत्मादयो भावा अभिधेयतया यस्मिन्नसौ **समवाय** इति । स च प्रवचनपुरुषस्याङ्गमिवाङ्गमिति **समवायाङ्गम्** ।

तत्र किल श्री **श्रमणमहावीरवर्द्धमानस्वामि**सम्बन्धी पञ्चमो गणधर आर्य**सुधर्मस्वामी** स्वशिष्यं **जम्बू**नामानम[1]भि **समवायाङ्गा**र्थमभिधित्सुः भगवति धर्माचार्ये बहुमानमाविर्भावयन् स्वकीयवचने च 'समस्तवस्तुविस्तारस्वभावावभासिकेवलालोककलित**महावीर**वचननिश्रिततयाऽविगानेन प्रमाणमिदम्' इति शि[2]ष्यस्य मतिमारोपयन्निदमादावेव सम्बन्धसूत्रमाह– **सुयं मे** इत्यादि । **श्रुतम्** आकर्णितं **मे** मया हे **आयुष्मन्** चिरजीवित ! **जम्बू**नामन् ! **तेणं** ति योऽसौ निर्मूलोन्मूलितराग-द्वेषादिविषमभाववरिपुसैन्यतया भुवनभावावभासनसहसंवेदनपुरस्सराविसंवादिवचनतया च त्रिभुवनभवनप्राङ्गणप्रसर्प्पत्सुधाधवलयशोराशिस्तेन **महावीरेण भगवता** समग्रैश्वर्यादियुक्तेन **एव**मिति वक्ष्यमाणेन प्रकारेण **आख्यातम्** अभिहितम् 'आत्मादिवस्तुतत्त्वम्' इति गम्यते । अथवा **आउसंतेणं** ति **भगवता** इत्यस्य विशेषणम्, **आयुष्मता** चि[3]रजीवितवता भगवतेति । अथवा पाठान्तरेण 'मया' इत्यस्य विशेषणमिदम्, [4]**आवसता** मया गुरुकुले, [5]**आमृशता** वा संस्पृशता मया विनयनिमित्तं करतलाभ्यां गुरोः क्रमकमलयुगलमिति । यद्वा **आउसंतेणं** ति आजुषमाणेन प्रीतिप्रवणमनसेति । यदाख्यातं तदधुनोच्यते– **एगे आया** इत्यादि ।

[सू०१] [२] इह खलु समणेणं भगवता महावीरेणं आदिकरेणं तित्थकरेणं सयंसंबुद्धेणं पुरिसोत्तमेणं पुरिससीहेणं पुरिसवरपुंडरीएणं पुरिसवरगंधहत्थिणा लोगोत्तमेणं लोगनाहेणं लोगहितेणं लोगपईवेणं लोगपज्जोयगरेणं अभयदएणं चक्खुदएणं मग्गदएणं सरणदएणं जीवदएणं धम्मदएणं धम्मदेसएणं धम्मणायगेणं धम्मसारहिणा धम्मवरचाउरंतचक्कवट्टिणा अप्पडिहतवरणाण-

---

१. °मिह स° जे२ ॥ २. **शिष्यमतिं चारोप°** खं० जे१ ॥ ३. **चिरजीविना भगवतेति अथवा मयेत्यस्य** हे२ ॥ ४. **'आवसंतेणं'** इति पाठान्तरमत्राभिप्रेतम् ॥ ५. **'आमुसंतेणं'** इति पाठान्तरमत्राभिप्रेतम् ॥

दंसणधरेणं विअट्टच्छउमेणं जिणेणं जाणएणं तिन्नेणं तारएणं बुद्धेणं बोहएणं मुत्तेणं मोयगेणं सव्वण्णुणा सव्वदरिसिणा सिवमयलमरुयमणंतमक्खय-मव्वाबाहमपुणरावत्तयं सिद्धिगतिणामधेयं ठाणं संपाविउकामेणं इमे दुवालसंगे गणिपिडगे पण्णत्ते, तंजहा– आयारे १, सूयगडे २, ठाणे ३, समवाए ४, विवाहपण्णत्ती ५, णायाधम्मकहाओ ६, उवासगदसातो ७, अंतगडदसातो ८, अणुत्तरोववातियदसातो ९, पण्हावागरणाइं १०, विवागसुते ११, दिट्ठिवाए १२ ।

तत्थ णं जे से चउत्थे अंगे समवाए त्ति आहिते तस्स णं अयमट्ठे, तंजहा–

[टी०] कस्यांचिद् वाचनायामपरमपि सम्बन्धसूत्रमुपलभ्यते, यथा– **इह खलु समणेणं भगवये**त्यादि, तामेव च[1] वाचनां बृहत्तरत्वाद् व्याख्यास्यामः । इदं च द्वितीयसूत्रं सङ्ग्रहरूपप्रथमसूत्रस्यैव प्रपञ्चरूपमवसेयम् ।

अस्य चैवं गमनिका– **इह** अस्मिँल्लोके निर्ग्रन्थतीर्थे वा, **खलु**र्वाक्यालङ्कारे अवधारणे वा, तथा च इहैव, न **शाक्या**दिप्रवचनेषु, श्राम्यति तपस्यतीति **श्रमणः**, तेन, इदं चान्तिमजिनस्य सहसन्मति[2]सम्पन्नं नामान्तरमेव, यदाह– **सहसंमुईयाए[3] समणे** [आचा० सू० ७४३] त्ति । **भगवते**[4]ति पूर्ववत् । महांश्चासौ वीरश्चेति **महावीरः**, तेन, इदं च महासात्त्विकतया प्राणप्रहाणप्रवणपरीषहोपसर्गनिपाते[5]ऽ-

१. च जे२ हे१ नास्ति ॥ २. **सहजसन्मति**° खं० विना । **सहजसम्मति**° हे१ ॥ ३. **सहसंमुइयाए** हे१,२ । **सहसमुयाए** जे२ । ''समणे भगवं महावीरे कासवगुत्ते णं, तस्स णं तओ नामधिज्जा एवमाहिज्जंति, तंजहा- अम्मापिउसंतिए वद्धमाणे १, सहसमुइयाए समणे २, अयले भयभेरवाणं, परीसहोवसग्गाणं खंतिखमे, पडिमाणं पालए, धीमं, अरतिरतिसहे, दविए, वीरियसंपन्ने, देवेहिं से नाम कयं 'समणे भगवं महावीरे' ३ ।'' इति **पर्युषणाकल्पसूत्रे** सू० १०८ । ''श्रमणो भगवान् महावीरः काश्यप इतिनामकं गोत्रं यस्य स तथा, तस्य भगवतः त्रीणि अभिधानानि एवमाख्यायन्ते, तद्यथा- **मातापितृसत्कं** मातापितृदत्तं वर्धमान इति प्रथमं नाम १, सहसमुदिता सहभाविनी तपःकरणादिशक्तिः, तया श्रमणः इति द्वितीयं नाम २, भयभैरवयोर्विषये अचलो निष्प्रकम्पः, तत्र भयम् अकस्माद्भयं विद्युदादिजातम्, भैरवं तु सिंहादिकम्। तथा परिषहाः क्षुत्पिपासादयो द्वाविंशतिः, उपसर्गाश्च दिव्यादयश्चत्वारः, सप्रभेदास्तु षोडश, तेषां क्षान्त्या क्षमया क्षमते, न त्वसमर्थतया, यः स क्षान्तिक्षमः । प्रतिमानां भद्रादीनाम् एकरात्रिक्यादीनां वा अभिग्रहविशेषाणां पालकः । धीमान् ज्ञानत्रयाभिरामत्वात् । अरति-रती सहते, न तु तत्र हर्ष-विषादौ कुरुते इति भावः । द्रव्यं तत्तद्गुणानां भाजनम्, राग-द्वेषरहित इति वृद्धाः । वीर्यं पराक्रमः, तेन सम्पन्नः । यतो भगवानेवंविधस्ततो देवैः **से** इति तस्य भगवतो नाम कृतं श्रमणो भगवान् महावीर इति तृतीयम् ३।'' इति **पर्युषणाकल्पसूत्र**स्य टीकायां **सुबोधिकायाम्** ॥ ४. °**वते** त्ति जे१,२ खं० ॥ ५. °**षहोपनिपातेऽप्यप्रकम्पत्वेन** जे२, हे१,२ ॥

प्यप्रकम्पत्वेन [१]पीयूषपानप्रभुभिराविर्भावितम्, आह च– [२]**अयले भयभेरवाणं खंतिक्खमे परीसहोवसग्गाणं पडिमाणं पारए देवेहिं कए महावीरे** [पर्युषणा०] त्ति। कथम्भूतेनेत्याह– **आदौ** प्राथम्येन श्रुतधर्म**माचारा**दिग्रन्थात्मकं करोति तदर्थ[३]प्रणायकत्वेन प्रणयतीत्येवंशील **आदिकरः**, तेन। [४]तथा तरन्ति तेन संसारसागरमिति **तीर्थं** प्रवचनम्, तदव्यतिरेकादिह सङ्घस्तीर्थम्, तस्य करणशीलत्वात् **तीर्थकरः**, तेन। तीर्थकरत्वं च तस्य नान्योपदेशबुद्धत्वपूर्वकमित्यत आह– **स्वयम्** आत्मनैव नान्योपदेशतः **सम्यग् बुद्धो** हेयोपादेयवस्तुतत्त्वं विदितवानिति **स्वयंसम्बुद्धः**, तेन।

स्वयंसम्बुद्धत्वं [५]चास्य न प्राकृतस्येवासंभाव्यं पुरुषोत्तमत्वादस्येत्यत आह– पुरुषाणां मध्ये तेन तेनातिशयेन रूपादिनोद्गतत्वाद् ऊर्ध्ववर्त्तित्वादुत्तमः **पुरुषोत्तमः**, तेन। अथ पुरुषोत्तमत्वमेव सिंहा[६]द्युपमानत्रयेणास्य समर्थयन्नाह– सिंह इव **सिंहः**, पुरुषश्चासौ सिंहश्चेति **पुरुषसिंहः**, लोकेन हि सिंहे शौर्यमतिप्रकृष्टमभ्युपगतमतः शौर्ये स उपमानं कृतः, शौर्यं तु भगवतो बाल्ये प्रत्यनीकदेवेन भाप्यमानस्याप्यभीतत्वात् कुलिशकठिनमुष्टिप्रहार[७]प्रहतिप्रवर्द्धमानामरशरीरकुब्जताकरणाच्च इति, अतस्तेन। तथा वरं च तत् पुण्डरीकं च **वरपुण्डरीकं** धवलं सहस्रपत्रम्, पुरुष एव वरपुण्डरीकं **पुरुषवरपुण्डरीकम्**, धवलता चास्य भगवतः सर्वाशुभमलीमसरहितत्वात् सर्वैश्च शुभैरनुभावैः शु[८]द्धत्वादिति, अतस्तेन। तथा वरश्चासौ गन्धहस्ती [९]च वरगन्धहस्ती, पुरुष एव वरगन्धहस्ती **पुरुषवरगन्धहस्ती**, यथा गन्धहस्तिनो गन्धेनैव सर्वगजा भज्यन्ते तथा भगवतस्तद्देशविहरणेन ईति-परचक्र-दुर्भिक्ष-[१०]जनमरकादीनि [११]दुरितानि नश्यन्तीति, अतस्तेन **पुरुषवरगन्धहस्तिना**।

न भगवान् पुरुषाणामेवोत्तमः, किन्तु सकलजीवलोकस्यापीत्यत आह– **लोकस्य** तिर्यग्-नर-नरकि-नाकिलक्षणजीवलोकस्य **उत्तमः** चतुस्त्रिंशद्बुद्धातिशयाद्य-साधारणगुणगणोपेततया सकलसुरा-ऽसुर-खचर-नरनिकरनमस्यतया च प्रधानो

---

१. पीयूषपाना देवाः, तेषां प्रभव इन्द्रा इत्यर्थः ॥ २. दृश्यतां पृ.३ टि० ३ ॥ ३. **प्राणा**° जे१ खं० ॥ ४. **तथा** नास्ति जे१ खं० ॥ ५. **चास्य प्राकृ**° खं० ॥ ६. °**द्युपमात्रयेणास्य** जे२ ॥ ७. °**प्रहतवर्ध**° जे२ ॥ ८. **शुभत्वा**° जे२ ॥ ९. **च** नास्ति जे२ खं० ॥ १०. °**जनडमरका**° जे१ ॥ ११. **दुरितानि नश्यंतीति** [**सपाद**- खंसं०] **शतयोजनमध्ये अतस्तेन** जे१ खं० ।

लोकोत्तमः, तेन । लोकोत्तमत्वमेवास्य पुरस्कुर्वन्नाह– **लोकस्य** सञ्ज्ञिभव्यलोकस्य **नाथः** प्रभु**र्लोकनाथः**, तेन । नाथत्वं चास्य **योग-क्षेमकृन्नाथः** [ ] इति वचनाद् अप्राप्तस्य सम्यग्दर्शनादेर्योगकरणेन लब्धस्य तस्यैव पालनेन चेति । लोकनाथत्वं च तात्त्विकं तद्धितत्वे सति सम्भवतीत्याह– **लोकस्य** एकेन्द्रियादिप्राणिगणस्य **हितः** आत्यन्तिकतद्रक्षाप्रकर्षप्ररूपणेनानुकूलवृत्ति**र्लोकहितः**, तेन । यदेतन्नाथत्वं हितत्वं वा तद्भव्यानां यथावस्थितसमस्तवस्तुस्तोमप्रदीपनेन नान्यथेत्याह– **लोकस्य** विशिष्टतिर्यग्-नरा-ऽमररूपस्याऽऽन्तरतिमिरनिकरनिराकरणेन प्रकृष्टपदार्थप्रकाशकारित्वात् प्रदीप इव **प्रदीपो लोकप्रदीपः**, तेन । इदं च विशेषणं द्रष्टृलोकमाश्रित्योक्तम्, अथ दृश्यं लोकमाश्रित्याह– **लोकस्य** लोक्यते इति लोक इति व्युत्पत्त्या लोकालोकरूपस्य समस्तवस्तुस्तोमस्वभावस्याखण्डमार्तण्डमण्डलमिव निखिलभावस्वभावावभासनसमर्थ-केवलालोकपूर्वकप्रवचनप्रभापटलप्रवर्तनेन **प्रद्योतं** प्रकाशं करोतीत्येवंशीलो **लोकप्रद्योतकरः**, तेन ।

ननु लोकनाथत्वादिविशेषणयोगी हरि-हर-हिरण्यगर्भादिरपि तत्तीर्थिकमतेन सम्भवतीति कोऽस्य विशेष इत्याशङ्कायां तद्विशेषाभिधानायाह– न भयं **दयते** प्राणापहरणरसिकोपसर्गकारिण्यपि प्राणिनि ददातीत्य**भयदयः**, **अभया** वा सर्वप्राणिभयपरिहारवती **दया** घृणा यस्य सोऽ**भयदयः**, हरि-हरादिस्तु नैवमिति, तेनाऽ**भयदयेन** । न केवलमसावपकारकारिणामप्यनर्थपरिहारमात्रं करोति, अपि त्वर्थप्राप्तिं करोतीति दर्शयन्नाह– चक्षुरिव **चक्षुः** श्रुतज्ञानं शुभाशुभार्थविभागकारित्वात्, तद्दयते इति **चक्षुर्दयः**, तेन । यथा हि लोके चक्षुर्दत्त्वा वाञ्छितस्थानमार्गं दर्शयन् महोपकारी भवतीत्येवमिहापीति दर्शयन्नाह– **मार्गं** सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रात्मकं परमपदपथं दयत इति **मार्गदयः**, तेन । यथा हि लोके चक्षुरुद्घाटनं मार्गदर्शनं च कृत्वा चौरादिविलुप्तान् निरुपद्रवं स्थानं प्रापयन् परमोपकारी भवति एवमिहापीति दर्शयन्नाह– **शरणं** त्राणं नानोपद्रवोपद्रुतानां तद्रक्षास्थानम्, तच्च परमार्थतो निर्वाणम्, तद्दयत इति **शरणदयः**,

---

१. ''तथा लोकनाथेभ्य इति योगक्षेमकृदयमिति विद्वत्प्रवादः'' इति **ललितविस्तरायाम्** ॥ २. °**त्यत आह** खं० ॥ ३. **भवतीति** जे२ हे१,२ ॥

तेन। यथा हि लोके चक्षु-मार्ग-शरणदानात् दुःस्थानां जीवितव्यं ददाति एवमिहापीति दर्शयन्नाह– जीवनं **जीवो** भावप्राणधारणममरणधर्मत्वमित्यर्थः, तं दयत इति **जीवदयः** जीवेषु वा दया यस्य स **जीवदयो**ऽतस्तेन ।

इदं चानन्तरोक्तं विशेषणकदम्बकं भगवतो धर्ममयमूर्तित्वात् सम्पन्नमिति धर्मात्मकतामस्य विशेषणपञ्चकेनाह– **धर्मं** श्रुत-चारित्रात्मकं दुर्गतिप्रपतज्जन्तुधरणस्वभावं **दयते** ददातीति **धर्मदयः**, तेन। तद्दानं चास्य तद्देशनादेवेत्यत आह– **धर्मम्** उक्तलक्षणं **देशयति** कथयतीति **धर्मदेशकः**, तेन । धर्मदेशकत्वं चास्य धर्मस्वामित्वे सति, न पुनर्यथा नटस्येति दर्शयन्नाह– **धर्मस्य** क्षायिकज्ञान-दर्शन-चारित्रात्मकस्य **नायकः** स्वामी यथावत् पालनाद् **धर्मनायकः**, तेन । तथा धर्मस्य सारथि**र्धर्मसारथिः**, यथा रथस्य सारथी रथं रथिकमश्वांश्च रक्षति एवं भगवांश्चारित्रधर्माङ्गानां संयमा-ऽऽत्म-प्रवचनाख्यानां रक्षणोपदेशाद्धर्मसारथिर्भवतीति तेन **धर्मसारथिना** । तथा त्रयः समुद्राश्चतुर्थो हिमवान् एते चत्वारः अन्ताः पृथिव्याः पर्यन्तास्तेषु स्वामितया भवतीति चातुरन्तः, स चासौ चक्रवर्त्ती च चातुरन्तचक्रवर्त्ती, वरश्चासौ चातुरन्तचक्रवर्त्ती चेति **वरचातुरन्तचक्रवर्त्ती** राजातिशयः, धर्मविषये वरचातुरन्तचक्रवर्त्ती **धर्मवरचातुरन्त-चक्रवर्त्ती**, यथा हि पृथिव्यां शेषराजातिशायी वरचातुरन्तचक्रवर्त्ती भवति तथा भगवान् धर्मविषये शेषप्रणेतॄणां मध्ये सातिशयत्वात् तथोच्यत इति तेन **धर्मवरचातुरन्तचक्रवर्त्तिना** ।

एतच्च धर्मदायकत्वादिविशेषणपञ्चकं प्रकृष्टज्ञानादियोगे सति भवतीत्यत आह– **अप्रतिहते** कट-कुड्य-पर्वतादिभिरस्खलिते अविसंवादके वा, अत एव क्षायिकत्वाद्वा **वरे** प्रधाने ज्ञान-दर्शने केवललक्षणे धारयतीति **अप्रतिहतवरज्ञानदर्शनधरः**, तेन । एवंविधसंवेदनसंपदुपेतोऽपि छद्मवान् मिथ्योपदेशित्वान्नोपकारीति निश्छद्मताप्रतिपादनायाऽस्याऽऽह, अथवा कथमस्याप्रतिहतसंवेदनत्वं सम्पन्नम्, अत्रोच्यते, आवरणाभावात्, एतदेवाह– **व्यावृत्तं** निवृत्तमपगतं **छद्म** शठत्वमावरणं वा यस्य स तथा, तेन **व्यावृत्तछद्मना** । माया-ऽऽवरणयोश्चाभावोऽस्य रागादिजयाज्जात इत्यत आह– **जयति** निराकरोति राग-द्वेषादिरूपानरातीनिति **जिनः**, तेन ।

रागादिजयश्चास्य रागादिस्वरूप-तज्जयोपायज्ञानपूर्वक एव भवतीत्येतदस्याह– जानाति छाद्मस्थिकज्ञानचतुष्टयेनेति **ज्ञायकः**, तेन ।

अनन्तरमस्य स्वार्थसम्पत्त्युपाय उक्तः, अधुना स्वार्थसम्पत्तिपूर्वकं परार्थसम्पादकत्वं विशेषणषट्केनाह– तीर्ण इव **तीर्णः**, संसारसागरमिति गम्यते, तेन । तथा तारयति परानप्युपदेशवर्त्तिन इति **तारकः**, तेन । तथा **बुद्धेन** जीवादितत्त्वम्, तथा **बोधकेन** जीवादितत्त्वमेव परेषाम् । तथा **मुक्तेन** बाह्याभ्यन्तरग्रन्थबन्धनात्, **मोचकेन** तत एव परेषाम् ।

तथा मुक्तत्वेऽपि **सर्वज्ञेन सर्वदर्शिना**, न तु मुक्तावस्थायां दर्शनान्तराभिमतपुरुषेणेव भाविजडत्वेन । तथा **शिवं** सर्वाबाधारहितत्वात्, **अचलं** स्वाभाविक-प्रायोगिकचलनहेत्वभावात्, **अरुजम्** अविद्यमानरोगं शरीर-मनसोरभावात्, **अनन्त**मनन्तार्थविषयज्ञानस्वरूपत्वात्, **अक्षयम्** अनाशं साद्यपर्यवसितस्थितिकत्वात्, **अक्षतं** वा परिपूर्णत्वात् पूर्णिमाचन्द्रमण्डलवत्, **अव्याबाध**मपीडाकारित्वात्, **अपुनरावर्तकम्** अविद्यमानपुनर्भवावतारं तद्बीजभूतकर्माभावात्, सिद्धिगतिरिति नामधेयं यस्य तत् **सिद्धिगतिनामधेयम्**, तिष्ठति यस्मिन् कर्मकृतविकारविरहितत्वेन सदाऽवस्थितो भवति तत् **स्थानं** क्षीणकर्मणो जीवस्य स्वरूपं लोकाग्रं वा, जीवस्वरूपविशेषणानि तु लोकाग्रस्याधेयधर्माणामाधारेऽध्यारोपादवसेयानि, तदेवंभूतं **स्थानं सम्प्राप्तुकामेन** यातुमनसा, न तु तत्प्राप्तेन, तत्प्राप्तस्याऽकरणत्वेन प्रज्ञापनाऽभावात्, प्राप्तुकामेनेति च यदुच्यते तदुपचाराद्, अन्यथा हि निरभिलाषा एव भगवन्तः केवलिनो भवन्ति,

मोक्षे भवे च सर्वत्र, निःस्पृहो मुनिसत्तमः [ ] इति वचनादिति ।

तदेवमगणितगुणगणसम्पदुपेतेन भगवता **इमे** त्ति **इदं**[१] वक्ष्यमाणतया प्रत्यक्षमासन्नं च, द्वादशाङ्गानि यस्मिंस्तद् **द्वादशाङ्गम्**, **गणिनः** आचार्यस्य पिटकमिव पिटकं **गणिपिटकम्**, यथा हि वालञ्जुकवाणिजकस्य पिटकं सर्वस्वाधारभूतं भवति एवमाचार्यस्य द्वादशाङ्गं ज्ञानादिगुणरत्नसर्वस्वाधारकल्पं भवतीति भावः, **प्रज्ञप्तं** तीर्थकरनामकर्मोदयवर्तितया प्रायः कृतार्थेनापि परोपकाराय प्रकाशितम् । **तद्यथे-**

---

१. इदं च व° जे२ खं० ॥

त्युदाहरणोपदर्शने, **आचार** इत्यादि द्वादश पदानि वक्ष्यमाणनिर्वचनानीति कण्ठ्यानि। **तत्थ णं** ति **तत्र** द्वादशाङ्गे **णमित्यलङ्कारे यत्तच्चतुर्थमङ्गं समवाय इत्याख्यातं तस्यायमर्थः** आत्मादिः अभिधेयो 'भवती'ति गम्यते, **तद्यथे**ति वाचनान्तरद्वितीय-सम्बन्धसूत्रव्याख्येति ।

[सू०१] [३] **एके आता १, एके अणाया २। एगे दंडे ३, एगे अदंडे ४। एगा किरिया ५, एगा अकिरिया ६। एगे लोए ७, एगे अलोए ८। एगे धम्मे ९, एगे अधम्मे १०। एगे पुण्णे ११, एगे पावे १२। एगे बंधे १३, एगे मोक्खे १४।**

एगे आसवे १५, एगे संवरे १६। एगा वेयणा १७, एगा णिज्जरा १८।

[टी०] इह च विदुषा पदार्थसार्थमभिदधता सक्रम एवासावभिधातव्य इति न्यायः, तत्राचार्य एकत्वादिसङ्ख्याक्रमसम्बद्धानर्थान् वक्तुकाम आदावेकत्वविशिष्टानात्मनश्च सर्वपदार्थभोजकत्वेन प्रधानत्वादात्मादीन् सर्वस्य वस्तुनः सप्रतिपक्षत्वेन सप्रतिपक्षान् **एगे आया** इत्यादिभिरष्टादशभिः सूत्रैराह । **स्थानाङ्गो**क्तार्थानि चैतानि प्रायस्तथापि किञ्चिदुच्यते– **एक आत्मा**, कथञ्चिदिति गम्यते, इदं च सर्वसूत्रेष्वनुगमनीयम् । तत्र प्रदेशार्थतया असङ्ख्यातप्रदेशोऽपि जीवो द्रव्यार्थतया एकः, अथवा प्रतिक्षणं पूर्वस्वभावक्षया-ऽपरस्वरूपोत्पादयोगेनाऽनन्तभेदोऽपि कालत्रयानुगामिचैतन्यमात्रापेक्षया **एक आत्मा**, अथवा प्रतिसन्तानं चैतन्यभेदेनाऽनन्तत्वेऽप्यात्मनां सङ्ग्रहनयाश्रितसामान्यरूपापेक्षयैकत्वमात्मन इति । तथा न आत्मा **अनात्मा** घटादिपदार्थः, सोऽपि प्रदेशार्थतया सङ्ख्येया-ऽसङ्ख्येया-ऽनन्तप्रदेशोऽपि तथाविधैकपरिणामरूप-द्रव्यार्थापेक्षया एक एव[1], एवं संतानापेक्षयाऽपि, तुल्यरूपापेक्षया तु अनुपयोग-लक्षणैकस्वभावयुक्तत्वात् कथञ्चिद्भिन्नस्वरूपाणामपि धर्मास्तिकायादीनामनात्मनामेकत्वमवसेयमिति ।

तथा **एको दण्डो** दुष्प्रयुक्तमनोवाक्कायलक्षणो हिंसामात्रं वा, एकत्वं चास्य सामान्यनयादेशाद्, एवं सर्वत्रैकत्वमवसेयम् । तथै**कोऽदण्डः** प्रशस्तयोगत्रयमहिंसामात्रं वा ।

१. एव नास्ति खं० जे१ ॥

तथैका **क्रिया** कायिक्यादिका आस्तिक्यमात्रं वा । तथैका **अक्रिया** योगनिरोधलक्षणा नास्तिकत्वं वा । तथैको **लोकः**, त्रिविधोऽप्यसङ्ख्येयप्रदेशोऽपि वा द्रव्यार्थतया । तथा **एकोऽलोकः**, अनन्तप्रदेशोऽपि द्रव्यार्थतया, अथवैते लोकालोकयोर्बहुत्व-व्यवच्छेदनपरे सूत्रे, अभ्युपगम्यन्ते च कैश्चिद् बहवो लोकाः, अतस्तद्विलक्षणा अलोका अपि तावन्त एवेति, एवं सर्वत्र गमनिका कार्या ।

नवरं **धर्मो** धर्मास्तिकायः, **अधर्मः** अधर्मास्तिकायः, **पुण्यं** शुभं कर्म, **पापम्** अशुभं कर्म । **बन्धो** जीवस्य कर्मपुद्गलसंश्लेषः, स चैकः सामान्यतः, सर्वकर्मबन्धव्यवच्छेदावसरे वा पुनर्बन्धाभावाद्, अनेनोद्देशेन मोक्षा-ऽऽस्रव-संवर-वेदना-निर्जराणामप्येकत्वमवसेयमिति । इह चानात्मग्रहणेन सर्वेषामनुपयोगवतामेकत्वं प्रज्ञाप्य पुनर्लोकादितया यदेकत्वप्ररूपणं तत् सामान्यविशेषापेक्षमवगन्तव्यमिति ।

[सू० १] [४] जंबुद्दीवे दीवे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते १।

अपइट्ठाणे णरते एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते २।

पालए जाणविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ३।

सव्वट्ठसिद्धे महाविमाणे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ४।

[५] अद्दाणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ५। चित्ताणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ६।

सातिणक्खत्ते एगतारे पण्णत्ते ७।

[६] इमीसे [णं] रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं णेरइयाणं एगं पलितोवमं ठिती पण्णत्ता १।

इमीसे [णं] रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयाणं उक्कोसेणं एगं सागरोवमं ठिती पण्णत्ता २।

दोच्चाए णं पुढवीए णेरतियाणं जहण्णेणं एगं सागरोवमं ठिती पण्णत्ता ३।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं एगं पलितोवमं ठिती पण्णत्ता ४।

असुरकुमाराणं देवाणं उक्कोसेणं एगं साहियं सागरोवमं ठिती पण्णत्ता ५।

असुरकुमारिंदवज्जियाणं भोमेज्जाणं देवाणं अत्थेगतियाणं एगं पलितोवमं ठिती पण्णत्ता ६।

असंखेज्जवासाउयसण्णिपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं अत्थेगतियाणं एगं पलितोवमं ठिती पण्णत्ता ७।

असंखेज्जवासाउयगब्भवक्कंतियसन्निमणुयाणं अत्थेगतियाणं एगं पलितोवमं ठिती पण्णत्ता ८।

वाणमंतराणं देवाणं उक्कोसेणं एगं पलितोवमं ठिती पण्णत्ता ९।

जोइसियाणं देवाणं उक्कोसेणं एगं पलिओवमं वाससयसहस्समब्भहियं ठिती पण्णत्ता १०।

सोहम्मे कप्पे देवाणं जहण्णेणं एगं पलितोवमं ठिती पण्णत्ता ११।

सोहम्मे कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं एगं सागरोवमं ठिती पण्णत्ता १२।

ईसाणे कप्पे देवाणं जहण्णेणं सातिरेगं [एगं] पलितोवमं ठिती पण्णत्ता १३।

ईसाणे कप्पे देवाणं अत्थेगतियाणं एगं सागरोवमं ठिती पण्णत्ता १४।

जे देवा सागरं सुसागरं सागरकंतं भवं मणुं माणुसुत्तरं लोगहियं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं एगं सागरोवमं ठिती पण्णत्ता १५।

[७] ते णं देवा एगस्स अद्धमासस्स आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा णीससंति वा १६। तेसि णं देवाणं एगस्स वाससहस्सस्स आहारट्ठे समुप्पज्जति १७।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे एगेणं भवग्गहणेणं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिणिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणं अंतं करिस्संति १८।

[टी०] एवं चात्मादीनां सकलशास्त्र[१]प्रपञ्च्यानामर्थानां प्रत्येकमेकत्वमभिधाय [२]अधुनात्मानात्मपरिणामरूपाणामर्थानां तदेवाह, **जंबू** इत्यादि सूत्रसप्तकमाश्रयविशेषाणां

---

१. °प्रपंच्यमानामर्थानां जेमू२ । °प्रपंच्यामानामर्थानां जेसं२ । °प्रवंध्यानामर्थानां खं० ॥ २. अधुनात्मपरि° जे१॥

तथा **इमीसे ण**मित्यादि सूत्राष्टादशकमाश्रयिणां स्थित्यादिधर्माणां प्रतिपादनपरं सुबोधम् । नवरं **जंबुद्दीवे दीवे** इह सूत्रे **आयामविक्खंभेणं** ति क्वचित् पाठो दृश्यते, क्वचित्तु **चक्कवालविक्खंभेणं** ति, तत्र प्रथमः सम्भवति, अन्यत्रापि तथा श्रवणात्, सुगमश्च । द्वितीयस्त्वेवं व्याख्येयः– **चक्रवालविष्कम्भेण** वृत्तव्यासेन, इदं च प्रमाणयोजनमवसेयम्, यदाह–

[१]**आयंगुलेण वत्थुं उस्सेहपमाणओ मिणसु देहं ।**
नग-पुढवि-विमाणाइं मिणसु पमाणंगुलेणं तु ॥ [बृहत्सं० गा० ३४९]

तथा **पालकं यानविमानं सौधर्मेन्द्र**सम्बन्ध्याभियोगिक**पालका**भिधानदेवकृतं वैक्रियम्, **यानं** गमनम्, तदर्थं **विमानम्**, यायते वाऽनेनेति यानं तदेव विमानं **यानविमानं** पारि[२]यानिकमिति य[३]दुच्यते ।

अत्थीत्यादि, **अस्ति** विद्यते **एकेषां** केषाञ्चिन्नै**रयिकाणामेकं पल्योपमं स्थिति**रिति कृत्वा **प्रज्ञप्ता** प्रवेदिता मया अन्यैश्च जिनैः, सा च चतुर्थे प्रस्तटे मध्यमाऽवसेयेति, एव**मेकं सागरोपमं** त्रयोदशे प्रस्तटे उत्कृष्टा **स्थिति**रिति ।

असुरिंदवज्जियाणं ति चमर-बलिवर्जितानां **भोमेज्जाणं** ति भवनवासिनाम्, **भूमौ** पृथिव्यां **रत्नप्रभा**भिधानायां भवत्वात्तेषामिति, तेषां चैकं पल्योपमं मध्यमा स्थितिर्यत उत्कृष्टा देशोने द्वे पल्योपमे सा, आह च–

[४]**दाहिण दिवड्ढ पलियं दो देसूणुत्तरिल्लाणं ॥** [बृहत्सं० गा० ५] ति ।

असंखेज्जेत्यादि, असङ्ख्येयानि वर्षाण्यायुर्येषां ते तथा, ते च ते **सञ्ज्ञिनश्च** समनस्काः, ते च ते पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाश्चेति **असङ्ख्येयवर्षायुःसञ्ज्ञि-**

१. ''आत्माङ्गुलेन मिमीष्व वास्तु । तच्च त्रिविधम्, तद्यथा-खातमुच्छ्रितमुभयं च । तत्र खात कूप-तडाग-भूमिगृहादि, उच्छ्रितं धवलगृहादि, उभयं भूमिगृहयुक्तधवलगृहादि । उत्सेधप्रमाणेनाङ्गुलेन मिमीष्व देहं सुरादीनां शरीरम् । प्रमाणाङ्गुलेन पुनर्मिमीष्व नग-पृथिवी-विमानानि। तत्र नगाः पर्वता मेर्वादयः, पृथिव्यो घर्मादयः, विमानानि सौधर्मावतंसकादीनि । विमानग्रहणं भवन-नरकावासाद्युपलक्षणम्, तेन तान्यपि प्रमाणाङ्गुलेन मिमीष्व'' । इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरि**सूरिविरचितायां टीकायाम् ॥ २. **परि** खं० ॥ ३. **तदुच्यते** जे२ हे२ ॥ ४. ''**दाहिणे**त्यादि, दाक्षिणात्यानां नागकुमाराद्यधिपतीनां धरणप्रमुखानां नवानामिन्द्राणामुत्कृष्टमायु**र्द्व्यर्धं पल्योपमं** सार्धं पल्योपममित्यर्थः । **उत्तरिल्लाणं** ति औत्तराहानामुत्तरदिग्भाविनां नागकुमारादीन्द्राणां भूतानन्दप्रभृतीनां नवानां देशोने किञ्चिदूने द्वे पल्योपमे'' इति **बृहत्संग्रहणीटीकायाम्** ॥

पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिकाः, तेषां केषाञ्चिद् ये **हैमवतैरण्यवत**वर्षयोरुत्पन्नास्तेषा**मेकं पल्योपमं स्थितिः** । एवं मनुष्यसूत्रमपि, नवरं **गर्भे** गर्भाशये **व्युत्क्रान्तिः** उत्पत्तिर्येषां ते **गर्भव्युत्क्रान्तिका** न सम्मूर्च्छनजा इत्यर्थः ।

वाणमन्तराणं देवाणं ति, देवानामेव न तु देवीनाम्, तासामर्द्धपल्योपमस्य प्रतिपादितत्वात् । **जोइसियाणं देवाणं** ति चन्द्रविमानदेवानाम्, न सूर्यादिदेवानां नापि चन्द्रादिदेवीनाम्, [1]**पलियं च सयसहस्सं चंदाण वि आउयं जाण** ।। [बृहत्सं० गा० ७] इति वचनात्। **सोहम्मे कप्पे देवाणं** ति, इह देवशब्देन देवा देव्यश्च गृहीताः, सौधर्मे हि पल्योपमाद्धीनतरा स्थितिर्जघन्यतोऽपि नास्ति, इयं च प्रथमप्रस्तटेऽवसेया। **सोहम्मे कप्पे अत्थेगइयाणं देवाणं एगं सागरोवम**मिति, अत्र देवानामेव ग्रहणं न देवीनाम्, उत्कृष्टतोऽपि तत्र तासां पञ्चाशत्पल्योपमस्थितिकत्वात्, तथा **एकं सागरोपम**मिति मध्यमस्थित्यपेक्षया, उत्कर्षतस्तत्र सागरोपमद्वयसद्भावात्, प्रस्तटापेक्षया त्वेषां सप्तमप्रस्तटे मध्यमाऽवसेया । **ईसाणे कप्पे देवाण**मित्यत्र देवग्रहणेन देवा देव्यश्च गृह्यन्ते, यतस्तत्र सातिरेकपल्योपमादन्या जघन्यतः स्थितिरेव नास्ति । **ईसाणे कप्पे देवाणं अत्थेगइयाण**मित्यत्र देवानामेव ग्रहणं न देवीनाम्, तत्र तासामुत्कर्षतोऽपि पञ्चपञ्चाशत्पल्योपमस्थितिकत्वादिति । तथा **ये देवाः सागरं** सागराभिधानमेवं **सुसागरं सागरकान्तं भवं मनुं मानुषोत्तरं लोकहित**मिह चकारो द्रष्टव्यः, समुच्चयस्य द्योतनीयत्वाद्, **विमानं** देवनिवासविशेषमासाद्येति शेषः, **देवत्वेन** न तु देवीत्वेन, तासां सागरोपमस्थितेरसम्भवात्, **उत्पन्ना** जाता[2]**स्तेषां देवानामेकं सागरोपमं स्थिति**रिति । एतानि च विमानानि सप्तमप्रस्तटेऽवसेयानि ।

स्थित्यनुसारेण [3]च देवानामुच्छ्वासादयो भवन्तीति तान् दर्शयन्नाह– **ते ण**मित्यादि, येषां देवानामेकं सागरोपमं स्थिति**स्ते** देवाः, **ण**मित्यलङ्कारे, **अर्द्धमासस्य** 'अन्ते' इति शेषः **आनन्ति प्राणन्ति**, एतदेव क्रमेण व्याख्यानयन्नाह– **उच्छ्वसन्ति निःश्वसन्ति**,

---

१. ''चन्द्राणामपि सर्वेषां प्रत्येकमुत्कृष्टमायुर्विजानीयात् एकं पल्योपमं वर्षशतसहस्रम्'' इति **बृहत्संग्रहणीटीकायाम्**।।
२. °**स्तेषां देवानामेव ग्रहणं न देवीनाम् । तत्र तासां सागरोपमं स्थितिरिति** जे२ ।। ३. **च** नास्ति जे२ ।।

वाशब्दाः विकल्पार्थाः, तथा **तेषामेव वर्षसहस्रस्य** 'अन्ते' इति शेषः, **आहारार्थः** आहारप्रयोजनमाहारपुद्गलानां ग्रहणमाभोगतो भवति, अनाभोगतस्तु प्रतिसमयमेव विग्रहादन्यत्र भवतीति । गाथेह–

जस्स जइ [१] सागरोवम ठिई तस्स तत्तिएहिं पक्खेहिं ।
ऊसासो देवाणं वाससहस्सेहिं आहारो [२] ।। [बृहत्सं० गा० २१४] त्ति ।

सन्ति विद्यन्ते **एगइया** एके केचन **भवसिद्धिय** त्ति **भवा** भाविनी **सिद्धिः** मुक्तिर्येषां ते **भवसिद्धिकाः** भव्याः । **भवग्गहणेणं** ति **भवस्य** मनुष्यजन्मनो **ग्रहणम्** उपादानं **भवग्रहणं** तेन **सेत्स्यन्ति** अष्टविधमहर्द्धिप्राप्त्या, **भोत्स्यन्ते** केवलज्ञानेन तत्त्वम्, **मोक्ष्यन्ते** कर्मांशैः, **परिनिर्वास्यन्ति** कर्मकृतविकारविरहाच्छीतीभविष्यन्ति, किमुक्तं भवति ? **सर्वदुःखानामन्तं करिष्यन्तीति** ।।१।।

[सू० २] [१] दो दंडा पण्णत्ता, तंजहा– अट्ठादंडे चेव अणट्ठादंडे चेव १।

दुवे रासी पण्णत्ता, तंजहा– जीवरासी चेव अजीवरासी चेव २।

दुविहे बंधणे पण्णत्ते, तंजहा– रागबंधणे चेव दोसबंधणे चेव ३।

[२] पुव्वाफग्गुणीणक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते १। उत्तराफग्गुणीणक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते २। पुव्वाभद्दवताणक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते ३। उत्तराभद्दवताणक्खत्ते दुतारे पण्णत्ते ४।

[३] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं णेरतियाणं दो पलितोवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

दोच्चाए पुढवीए णं अत्थेगतियाणं णेरतियाणं दो सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं दो पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ३।

---

१. **सागरोवमा ठिई** जे२ खंमू० हे१ । **सागराइं ठिई खंसं०** । **सागरोवमाइं ठिई** हे२ । ''जस्स जइ सागराइं ठिई तस्स तत्तिएहिं पक्खेहिं । ऊसासो देवाणं वाससहस्सेहिं आहारो ।।'' **बृहत्सं०** गा० २१४ । ''देवानां मध्ये यस्य देवस्य यावन्ति सागरोपमाणि स्थितिस्तस्य तावद्भिः पक्षैरुच्छ्वासः, तावद्भिर्वर्षसहस्रैराहारः ।'' इति **बृहत्संग्रहणीटीकायाम्** ।।

२. °**म्मेण आहारो** जे१ ।।

असुरिंदवज्जियाणं भोमेज्जाणं देवाणं उक्कोसेणं देसूणातिं दो पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ४।

असंखेज्जवासाउयसण्णिपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं अत्थेगतियाणं दो पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ५।

असंखेज्जवासाउयसण्णिमणुस्साणं अत्थेगतियाणं दो पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ६।

सोहम्मे कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं दो पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ७।

ईसाणे कप्पे देवाणं अत्थेगतियाणं दो पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ८।

सोहम्मे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं दो सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ९।

ईसाणे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं साहियातिं दो सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता १०।

सणंकुमारे कप्पे देवाणं जहण्णेणं दो सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ११।

माहिंदे कप्पे देवाणं जहण्णेणं साहियातिं दो सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता १२।

जे देवा सुभं सुभकंतं सुभवण्णं सुभगंधं सुभलेसं सुभफासं सोहम्मवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं दो सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता १३।

[४] ते णं देवा दोण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं दोहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

अत्थेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे दोहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति मुच्चिस्संति परिनिव्वाइस्संति सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ३।

[टी०] सामान्यनयाश्रयणादेकतया वस्तून्यभिधायाधुना विशेषनयाश्रयणाद् द्वित्वेनाह– **दो दंडे**त्यादि सुगममा द्विस्थानकसमाप्तेः, नवरमिह दण्ड-राशि-बन्धनार्थं सूत्राणां त्रयम्, *नक्षत्रार्थं चतुष्टयम्, स्थित्यर्थं त्रयोदशकम्, उच्छ्वासाद्यर्थं त्रयमिति। तत्र* ***अर्थेन*** *स्व*-परोपकारलक्षणेन प्रयोजनेन **दण्डो** हिंसा **अर्थदण्डः**, एतद्विपरीतोऽ**नर्थदण्ड** इति। तथा

रत्नप्रभायां द्विपल्योपमा स्थितिश्चतुर्थप्रस्तटे मध्यमा, **द्वितीयायां** द्वे सागरोपमे स्थितिः षष्ठप्रस्तटे मध्यमा । तथा **असुरेन्द्रवर्जित**भवनवासिनां द्वे देशोनपल्योपमे स्थितिरौदीच्य**नागकुमारादी**नाश्रित्यावसेया, यत आह– दो देसूणुत्तरिल्लाणं [बृहत्सं० ५] ति । तथा **असङ्ख्येयवर्षायुषां** पञ्चेन्द्रियतिरश्चां मनुष्याणां च हरिवर्ष-रम्यकवर्षजन्मनां द्विपल्योपमा स्थितिरिति ॥२॥

[सू० ३] [१] तओ दंडा पण्णत्ता, तंजहा– मणदंडे वयदंडे कायदंडे १।

तओ गुत्तीओ पण्णत्ताओ, तंजहा– मणगुत्ती वयगुत्ती कायगुत्ती २।

तओ सल्ला पण्णत्ता, तंजहा– मायासल्ले णं, नियाणसल्ले णं, मिच्छादंसणसल्ले णं ३।

तओ गारवा पण्णत्ता, तंजहा– इड्ढीगारवे रसगारवे सायागारवे ४।

तओ विराहणाओ पण्णत्ताओ, तंजहा– नाणविराहणा दंसणविराहणा चरित्तविराहणा ५।

[२] मिगसिरणक्खत्ते तितारे पण्णत्ते १। पुस्सणक्खत्ते तितारे पण्णत्ते २। जेट्ठाणक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ३। अभीइणक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ४। सवणणक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ५। अस्सिणिणक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ६। भरणिणक्खत्ते तितारे पण्णत्ते ७।

[३] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं णेरतियाणं तिण्णि पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता १।

दोच्चाए णं पुढवीए णेरतियाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता २।

तच्चाए णं पुढवीए णेरतियाणं जहण्णेणं तिण्णि सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ३।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं तिण्णि पलितोवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

असंखेज्जवासाउयसण्णिपंचिंदियतिरिक्खजोणियाणं उक्कोसेणं तिण्णि पलितोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

असंखेज्जवासाउयसण्णिगब्भवक्कंतियमणुस्साणं उक्कोसेणं तिण्णि पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ६।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं तिण्णि पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ७।

सणंकुमार-माहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं तिण्णि सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ८।

जे देवा आभंकरं पभंकरं आभंकरपभंकरं चंदं चंदावत्तं चंदप्पभं चंदकंतं चंदवण्णं चंदलेसं चंदज्झयं [1]चंदरूवं चंदसिंगं चंदसिट्ठं चंदकूडं चंदुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तिण्णि सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ९।

[४] ते णं देवा तिण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तिहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे तिहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करिस्संति ३।

[टी०] अथ त्रिस्थानकम्– **तओ** इत्यादि सर्वं सुगमम् । नवरमिह दण्ड-गुप्ति-शल्य-गौरव-विराधनार्थं सूत्राणां पञ्चकम्, नक्षत्रार्थं सप्तकम्, स्थित्यर्थं नवकम्, उच्छ्वासाद्यर्थं त्रयमिति । तत्र **दण्ड्यते** चारित्रैश्वर्यापहारतोऽसारीक्रियते एभिरात्मेति **दण्डाः** दुष्प्रयुक्तमनःप्रभृतयः । मन एव दण्डो मनोदण्डो मनसा वा दुष्प्रयुक्तेनात्मनो दण्डो दण्डनं **मनोदण्डः**, एवमितरावपि । तथा गोपनानि **गुप्तयः** मनःप्रभृतीनामशुभप्रवृत्तिनिरोधनानि शुभप्रवृत्तिकरणानि चेति । तथा तोमरादिशल्यानीव **शल्यानि** दुःखदायकत्वात् मायादीनि, तत्र **माया** निकृतिः, सैव शल्यं **मायाशल्यम्**, **णं**कारो वाक्यालङ्कारे, एवमितरे अपि। नवरं **निदानं** देवादिऋद्धीनां दर्शन-श्रवणाभ्याम् 'इतो ब्रह्मचर्यादेरनुष्ठानात् ममैता भूयासुः' इत्यध्यवसायः, **मिथ्यादर्शनम्**

---

१. चंदरूवं जे१ खं० विना नास्ति ॥

अतत्त्वार्थश्रद्धानमिति । तथा **गौरवाणि** अभिमान-लोभाभ्यामात्मनोऽशुभभावगुरुत्वानि, तानि च संसारचक्रवालपरिभ्रमणहेतुकर्मनिदानानि । तत्र ऋद्ध्या नरेन्द्रादिपूज्याचार्यत्वादिलक्षणया गौरवम् **ऋद्धिगौरवम्**, ऋद्धिप्राप्त्यभिमान-तदप्राप्तिप्रार्थनद्वारेणात्मनोऽशुभभावगौरवमित्यर्थः, एवं रसेन गौरवं **रसगौरवम्**, सातेन गौरवं **सातगौरवं** चेति । तथा **विराधनाः** खण्डनाः, तत्र ज्ञानस्य विराधना **ज्ञानविराधना** ज्ञानप्रत्यनीकता-निह्नवादिरूपा, एवमितरे अपि, नवरं दर्शनं सम्यग्दर्शनं क्षायिकादि, **चारित्रं** सामायिकादीति । तथा **असङ्ख्यातवर्षायुषां** पञ्चेन्द्रियतिर्यग्मनुष्याणां देवकुरूत्तरकुरुजन्मनां त्रीणि पल्योपमानीति । तथा **आभङ्करं प्रभङ्करं आभङ्करप्रभङ्करं चन्द्रं चन्द्रावर्त्तं चन्द्रप्रभं चन्द्रकान्तं चन्द्रवर्ण्णं चन्द्रलेश्यं चन्द्रध्वजं चन्द्रशृङ्गं चन्द्रशिष्टं चन्द्रकूटं चन्द्रोत्तरावतंसकं** विमानमिति ॥३॥

[सू० ४] [१] **चत्तारि कसाया पण्णत्ता, तंजहा– कोहकसाए, माणकसाए, मायाकसाए, लोभकसाए १।**

चत्तारि झाणा पण्णत्ता, तंजहा– अट्टे झाणे, रुद्दे झाणे, धम्मे झाणे, सुक्के झाणे २।

चत्तारि विगहातो पण्णत्तातो, तंजहा– इत्थिकहा, भत्तकहा, रायकहा, देसकहा ३।

चत्तारि सण्णा पण्णत्ता, तंजहा– आहारसण्णा, भयसण्णा, मेहुणसण्णा, परिग्गहसण्णा ४।

चउव्विहे बंधे पण्णत्ते, तंजहा– पगडिबंधे, ठितिबंधे, अणुभावबंधे, पदेसबंधे ५।

चउगाउए जोयणे पण्णत्ते ६।

[२] **अणुराहाणक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते १।**

पुव्वासाढणक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते २। उत्तरासाढनक्खत्ते चउतारे पण्णत्ते ३।

[३] **इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं चत्तारि पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता १।**

तच्चाए णं पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं चत्तारि सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं चत्तारि पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं चत्तारि पलितोवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

सणंकुमार-माहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं चत्तारि सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा किट्ठिं सुकिट्ठिं किट्ठियावत्तं किट्ठिप्पभं किट्ठिजुत्तं किट्ठिवण्णं किट्ठिलेसं किट्ठिज्झयं किट्ठिसिंगं किट्ठिसिट्ठं किट्ठिकूडं किट्ठुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं चत्तारि सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ६।

[४] ते णं देवा चउण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं चउहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

अत्थेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे चउहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] चतुःस्थानकमपि सुगममेव, नवरं कषाय-ध्यान-विकथा-सञ्ज्ञा-बन्ध-योजनार्थं सूत्राणां षट्कम्, नक्षत्रार्थं त्रयम्, स्थित्यर्थं षट्कम्, शेषं तथैव[१]। अन्तर्मुहूर्त्तं यावच्चित्तस्यैकाग्रता योगनिरोधश्च ध्यानम्, तत्राऽऽर्त्तं मनोज्ञा-ऽमनोज्ञवस्तुवियोग-संयोगादिनिबन्धनचित्तविक्लवलक्षणम्, **रौद्रं** हिंसा-ऽनृत-चौर्य-धनसंरक्षणाभि[२]-सन्धानलक्षणम्, **धर्म्यम**ाज्ञादिपदार्थस्वरूपपर्यालोचनैकाग्रता, **शुक्लं** पूर्वगतश्रुतालम्बनेन[३] मनसोऽत्यन्तस्थिरता योगनिरोधश्चेति । तथा विरुद्धाश्चारित्रं प्रति स्त्र्यादिविषयाः कथा **विकथाः** । तथा **सञ्ज्ञाः** असातवेदनीय-मोहनीयकर्मोदयसम्पाद्या आहाराभिलाषादिरूपाश्चेतनाविशेषाः । तथा [४]सकषायत्वाज्जीवस्य कर्मणो योग्यानां

१. **तथैव च । अन्त**° खं० ॥ २. °**भिधान**° जे१ हे१ ॥ ३. °**तावलम्ब**° जे२ ॥ ४. ``सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान् पुद्गलानादत्ते स बन्धः'' इति **तत्त्वार्थसूत्रे** ८।२ ॥

पुद्गलानां बन्धनम् आदानं **बन्धः**, तत्र **प्रकृतयः** कर्मणोंऽशा भेदाः ज्ञानावरणीयादयोऽष्टौ, तासां बन्धः **प्रकृतिबन्धः**, तथा **स्थितिः** तासामेवावस्थानं जघन्यादिभेदभिन्नम्, तस्या बन्धो निर्वर्त्तनं **स्थितिबन्धः**, तथा **अनुभावो** विपाकस्तीव्रादिभेदो रसः, तस्य बन्धोऽ**नुभावबन्धः**, तथा जीवप्रदेशेषु कर्मप्रदेशानामनन्तानन्तानां प्रतिप्रकृति प्रतिनियतपरिमाणानां **बन्धः** सम्बन्धनं **प्रदेशबन्ध** इति । तथा **कृष्टि-सुकृष्ट्यादीनि** द्वादश विमानानि पूर्वोक्तविमाननामानुसारवन्तीति ॥४॥

[सू० ५] [१] **पंच किरियातो पण्णत्तातो, तंजहा– काइया अहिगरणिया पाओसिया पारितावणिया पाणातिवातकिरिया १।**

पंच महव्वया पण्णत्ता, तंजहा– सव्वातो पाणातिवातातो वेरमणं, सव्वातो मुसावायातो वेरमणं, सव्वातो जाव परिग्गहाओ वेरमणं २।

पंच कामगुणा पण्णत्ता, तंजहा– सद्दा रूवा रसा गंधा फासा ३।

पंच आसवदारा पण्णत्ता, तंजहा– मिच्छत्तं अविरति पमाए कसाए जोगा ४।

पंच संवरदारा पण्णत्ता, तंजहा– सम्मत्तं विरती अप्पमादो अकसायया अजोगया ५।

पंच निज्जरट्ठाणा पण्णत्ता, तंजहा– पाणातिवातातो वेरमणं, मुसावायातो वेरमणं, अदिण्णादाणातो वेरमणं, मेहुणातो वेरमणं, परिग्गहातो वेरमणं ६।

पंच समितीतो पण्णत्ताओ, तंजहा– इरियासमिती, भासासमिती, एसणासमिती, आयाणभंडनिक्खेवणासमिती, उच्चार-पासवण-खेल-सिंघाण-जल्लपारिट्ठावणिया समिती ७।

पंच अत्थिकाया पण्णत्ता, तंजहा– धम्मत्थिकाए अधम्मत्थिकाए आगासत्थिकाए जीवत्थिकाए पोग्गलत्थिकाए ८।

[२] **रोहिणीनक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते १। पुणव्वसू नक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते २। हत्थे नक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते ३। विसाहानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते ४। धणिट्ठानक्खत्ते पंचतारे पण्णत्ते ५।**

[३] इमीसे रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं पंच पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता १।

तच्चाए णं पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं पंच सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं पंच पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं पंच पलितोवमातिं ठिती पण्णत्ता ४।

सणंकुमार-माहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं पंच सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा वायं सुवायं वातावत्तं वातप्पभं वातकंतं वातवण्णं वातलेसं वातज्झयं वातसिंगं वातसिट्ठं वातकूडं वाउत्तरवडेंसगं सूरं सुसूरं सूरावत्तं सूरप्पभं सूरकंतं सूरवण्णं सूरलेसं सूरज्झयं सूरसिंगं सूरसिट्ठं सूरकूडं सूरुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं पंच सागरोवमातिं ठिती पण्णत्ता ६।

[४] ते णं देवा पंचण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं पंचहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा [जे] पंचहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] पञ्चस्थानकमपि सुगमम्, नवरं क्रिया-महाव्रत-कामगुणा-ऽऽश्रव-संवर-निर्जरास्थान-समित्यस्तिकायार्थं सूत्राणामष्टकम्, नक्षत्रार्थं पञ्चकम्, स्थित्यर्थं षट्कम्, उच्छ्वासाद्यर्थं त्रयमेवेति । [१]**क्रियाः** व्यापारविशेषाः । तत्र कायेन निर्वृत्ता **कायिकी**, कायचेष्टेत्यर्थः । अधिक्रियते आत्मा नरकादिषु येन तदधिकरणम्, तेन निर्वृत्ता **आधिकरणिकी** खड्गादिनिर्वर्त्तनादिलक्षणेति । **प्रद्वेषो** मत्सरः, तेन निर्वृत्ता **प्राद्वेषिकी**।

१. तथा क्रियाः हे२ ॥

परितापनं ताडनादिदुःखविशेषलक्षणम्, तेन निर्वृत्ता **पारितापनिकी** । **प्राणातिपातक्रिया** प्रतीतेति । तथा **काम्यन्ते** अभिलष्यन्ते इति **कामाः**, ते च ते **गुणाश्च** पुद्गलधर्माः शब्दादय इति **कामगुणाः**, **काम**स्य वा मदनस्योद्दीपका गुणाः **कामगुणाः** शब्दादय इति । तथा **आश्रवद्वाराणि** कर्मोपादानोपाया मिथ्यात्वादीनि। **संवर**स्य कर्मानुपादानस्य **द्वाराणि** उपायाः **संवरद्वाराणि** मिथ्यात्वाद्याश्रवद्वारविपरीतानि सम्यक्त्वादीनि । तथा **निर्जरा** देशतः कर्मक्षपणा, तस्याः **स्थानानि** आश्रयाः कारणानीति यावत् **निर्जरास्थानानि** प्राणातिपातविरमणादीनि, एतान्येव च सर्वशब्दविशेषितानि महाव्रतानि भवन्ति, तानि च पूर्वसूत्रेऽभिहितानि, स्थूलशब्दविशेषितानि त्वणुव्रतानि भवन्ति, निर्जरास्थानत्वं पुनरेषां साधारणमिति तदिहैषामभिहितम् ।

तथा **समितयः** सङ्गताः प्रवृत्तयः, तत्रे**र्यासमितिः** गमने सम्यक् सत्त्वपरिहारतः प्रवृत्तिः, **भाषासमितिः** निरवद्यवचनप्रवृत्तिः, **एषणासमितिः** द्विचत्वारिंशद्दोषवर्जनेन भक्तादिग्रहणे प्रवृत्तिः, **आदाने** ग्रहणे **भाण्डमात्राया** उपकरणपरिच्छदस्य **निक्षेपणे** अवस्थापने **समितिः** सुप्रत्युपेक्षितादिसाङ्गत्येन प्रवृत्तिश्चतुर्थी, तथो**च्चारस्य** पुरीषस्य **प्रश्रवणस्य** मूत्रस्य **खेलस्य** निष्ठीवनस्य **सिंघानस्य** नासिकाश्लेष्मणो **जल्लस्य**[1] च मलस्य **परिष्ठापनायां** परित्यागे **समितिः** स्थण्डिलादिदोषपरिहारतः प्रवृत्तिरिति पञ्चमी। **अस्तिकायाः** प्रदेशराशयः, **धर्मास्तिकायाद**यो गतिस्थित्यवगाहोपयोगस्पर्शादिलक्षणाः। स्थितिसूत्रेषु स्थितेरुत्कृष्टादिविभाग एवमनुगन्तव्यः, यदुत–

सागरमेगं[2] १ तिय २ सत्त ३ दस य ४ सत्तरस ५ तह य बावीसा ६ ।
तेत्तीसं जाव ठिई सत्तसु वि कमेण पुढवीसु ॥१॥

---

१. **यल्लस्य** जे१.२ खं० ॥ २. "सप्तसु पृथिवीष्वियं यथासङ्ख्यमुत्कृष्टा स्थितिः । तद्यथा-रत्नप्रभायां पृथिव्यामेकं सागरोपममुत्कृष्टा स्थितिः । शर्कराप्रभायां त्रीणि सागरोपमाणि । वालुकाप्रभायां सप्त । पङ्कप्रभायां दश । धूमप्रभायां सप्तदश । तमः-प्रभायां द्वाविंशतिः । तमस्तमःप्रभायां त्रयस्त्रिंशदिति ॥२३३॥ सम्प्रति सप्तस्वपि पृथिवीषु जघन्यां स्थितिमाह-या **प्रथमायां** रत्नप्रभाभिधायां पृथिव्यां **ज्येष्ठा** उत्कृष्टा स्थितिः सागरोपमलक्षणा सा **द्वितीयस्यां** पृथिव्यां शर्कराप्रभायां **कनिष्ठा** जघन्या भणिता । एष **तरतमयोगो** जघन्योत्कृष्टस्थितियोगः सर्वास्वपि पृथिवीषु भावनीयः । .....२३४॥" इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरिसूरिविरचितायां टीकायाम्** ॥

जा पढमाए जेट्ठा सा बीयाए कणिट्ठिया भणिया ।
तरतमजोगो एसो दस वाससहस्स रयणाए ॥२॥ [बृहत्सं० गा० २३३-२३४] तथा–
[1]दो १ साहि २ सत्त ३ साही ४ दस ५ चोद्दस ६ सत्तरेव अयराइं ।
सोहम्मा जा सुक्को तदुवरि एक्केक्कमारोवे ॥ [बृहत्सं० गा० १२]
पलियं १ अहियं २ दो सार ३ साहिया ४ सत्त ५ दस य ६ चोद्दस य ७ ।
सत्तरस ८ सहस्सारे तदुवरि एक्केक्कमारोवे ॥ [बृहत्सं० गा० १४] त्ति ।

तथा **वातं सुवात**मित्यादीनि द्वादश **वाता**भिलापेन विमाननामानि, तावन्त्येव **सूरा**भिलापेनेति ॥५॥

[सू० ६] [१] छल्लेसातो पण्णत्तातो, तंजहा– कण्हलेसा नीललेसा काउलेसा तेउलेसा पम्हलेसा सुक्कलेसा १।

छज्जीवनिकाया पण्णत्ता, तंजहा– पुढवीकाए आउकाए तेउकाए वाउकाए वणस्सतिकाए तसकाए २।

छव्विहे बाहिरे तवोकम्मे पण्णत्ते, तंजहा– अणसणे ओमोदरिया वित्तीसंखेवो रसपरिच्चातो कायकिलेसे संलीणया ३।

छव्विहे अब्भंतरए तवोकम्मे पण्णत्ते, तंजहा– पायच्छित्तं विणओ वेयावच्चं सज्झाओ झाणं उस्सग्गो ४।

छ छाउमत्थिया समुग्घाया पण्णत्ता, तंजहा– वेयणासमुग्घाते

---

१. ``**सौधर्मात्** सौधर्मकल्पात् **यावत् शुक्रो** महाशुक्राभिधः कल्पस्तावदनेन क्रमेण उत्कृष्टा स्थितिः प्रतिपत्तव्या. तद्यथा-सौधर्मे कल्पे देवानामुत्कृष्टा स्थितिर्द्वे अतरे इति सम्बध्यते, तरीतुमशक्यं प्रभूतकालतरणीयत्वात् **अतरं** सागरोपमम्, द्वे सागरोपमे इत्यर्थः । ईशाने कल्पे ते एव द्वे सागरोपमे **साधिके** किञ्चित् समधिके उत्कृष्टा स्थितिः। सनत्कुमारे कल्पे उत्कृष्टा स्थितिः सप्त सागरोपमाणि । माहेन्द्रकल्पे तान्येव सप्त सागरोपमाणि साधिकानि । ब्रह्मलोके कल्पे दश सागरोपमाणि । लान्तके कल्पे चतुर्दश । महाशुक्रे कल्पे सप्तदश । **तदुवरि इक्किक्कमारोवे** इति तस्य महाशुक्रस्य कल्पस्योपरि प्रतिकल्पं प्रतिग्रैवेयकं च पूर्वस्मात् पूर्वस्मादधिकमेकैकं सागरोपममुत्कृष्टायुश्चिन्तायामारोपयेत् ।.... ॥१२॥ सौधर्मे कल्पे जघन्या स्थितिः **पलियं** ति एकं पल्योपमम् । ईशाने कल्पे **अहियं** ति तदेव पल्योपमं किञ्चित् समधिकं जघन्या स्थितिः । सनत्कुमारे कल्पे द्वे सागरोपमे जघन्या स्थितिः । **साहिय** त्ति ते एव द्वे सागरोपमे किञ्चित्समधिके माहेन्द्रकल्पे जघन्या स्थितिः । सप्त सागरोपमाणि ब्रह्मलोके । दश लान्तके । चतुर्दश महाशुक्रे । सप्तदश सहस्रारे। ततस्तस्य **सहस्रारकल्पस्योपरि** प्रतिकल्पं प्रतिग्रैवेयकं विजयादिचतुष्टये चैकैकं सागरोपममधिकं जघन्यस्थितिचिन्तायामारोपयेत् । ॥१४॥'' इति **बृहत्संग्रहणीटीकायाम्** ॥ २. **य** नास्ति जे२ खं० ॥

कसायसमुग्घाते मारणंतियसमुग्घाते वेउव्वियसमुग्घाते तेयससमुग्घाते आहारसमुग्घाते ५।

छव्विहे अत्थोग्गहे पण्णत्ते, तंजहा– सोतेंदियअत्थोग्गहे चक्खुइंदिय-अत्थोग्गह घाणिंदियअत्थोग्गहे जिब्भिंदियअत्थोग्गहे फासिंदियअत्थोग्गहे नोइंदियअत्थोग्गहे ६।

[२] कत्तियानक्खत्ते छतारे पण्णत्ते १। असिलेसानक्खत्ते छतारे पण्णत्ते २।

[३] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरतियाणं छ पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

तच्चाए णं पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरतियाणं छ सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं छ पलितोवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं छ पलितोवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

सणंकुमार-माहिंदेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं छ सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा सयंभुं सयंभुरमणं घोसं सुघोसं महाघोसं किट्ठिघोसं वीरं सुवीरं वीरगतं वीरसेणियं वीरावत्तं वीरप्पभं वीरकंतं वीरवण्णं वीरलेसं वीरज्झयं वीरसिंगं वीरसिट्ठं वीरकूडं वीरुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं छ सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[४] ते णं देवा छण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं छहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे छहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] षट्स्थानकमथ[1], तच्च सुबोधम्, नवरमिह लेश्या-जीवनिकाय-

१. °कमेतच्च सुबोधम् जे२ ॥

बाह्याभ्यन्तरतपः-समुद्घाता-ऽवग्रहार्थानि सूत्राणि षट्, नक्षत्रार्थे द्वे, स्थित्यर्थानि षट्, उच्छ्वासाद्यर्थं त्रयमेवेति । तत्र लेश्यानां स्वरूपमिदम्–

कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात् परिणामो य आत्मनः ।
स्फटिकस्येव तत्रायं लेश्याशब्दः प्रयुज्यते । [ ] इति ।

तथा **बाह्यं तपः** बाह्यशरीरस्य परिशोषणेन कर्मक्षपणहेतुत्वादिति, **आभ्यन्तरं** चित्तनिरोधप्राधान्येन कर्मक्षपणहेतुत्वादिति । तथा छद्मस्थः अकेवली, तत्र भवा **छाद्मस्थिकाः, सम्** एकीभावेन **उत्** प्राबल्येन च **घाता** निर्जरणानि **समुद्घाताः**, वेदनादिपरिणतो हि जीवो बहून् वेदनीयादिकर्मप्रदेशान् कालान्तरानुभवयोग्यानुदीरणाकरणेनाकृष्योदये प्रक्षिप्यानुभूय निर्जरयति, आत्मप्रदेशैः संश्लिष्टान् शातयतीत्यर्थः, ते चेह वेदनादिभेदेन षडुक्ताः । तत्र **वेदनासमुद्घातो**ऽसद्वेद्यकर्माश्रयः, **कषायसमुद्घातः** कषायाख्यचारित्रमोहनीयकर्माश्रयः, **मारणान्तिकसमुद्घातो**ऽन्तर्मुहूर्तशेषायुष्ककर्माश्रयः, **वैकुर्विक-तैजसा-ऽऽहारकसमुद्घाताः** शरीरनामकर्माश्रयाः । तत्र वेदनासमुद्घातसमुद्धत आत्मा वेदनीयकर्मपुद्गलशातं करोति, कषायसमुद्घातसमुद्धतः कषायपुद्गलशातम्, मारणान्तिकसमुद्घातसमुद्धत आयुःकर्मपुद्गलघातम्, वैकुर्विकसमुद्घातसमुद्धतस्तु जीवप्रदेशान् शरीराद् बहिर्निष्काश्य शरीरविष्कम्भबाहल्यमात्रमायामतश्च सङ्ख्येयानि योजनानि दण्डं निसृजति, निसृज्य च यथास्थूलान् वैक्रियशरीरनामकर्मपुद्गलान् प्राग्बद्धान् शातयति, एवं तैजसाऽऽहारकसमुद्घातावपि व्याख्येयाविति । तथा **अर्थस्य** सामान्यानिर्देश्यस्वरूपस्य शब्दादेः **अवेति** प्रथमं व्यञ्जनावग्रहानन्तरं **ग्रहणं** परिच्छेदनमर्थावग्रहः, स चैकसामयिको नैश्चयिकः, व्यावहारिकस्त्वसङ्ख्येयसामयिकः, स च षोढा श्रोत्रादिभिरिन्द्रियैर्नोइन्द्रियेण च मनसा जन्यमानत्वादिति । स्थितिसूत्रे **स्वयम्भ्वा**दीनि विंशतिर्विमानानीति[1] ॥६॥

[सू० ७] [१] सत्त भयट्ठाणा पण्णत्ता, तंजहा– इहलोगभए परलोगभए आदाणभए अकम्हाभए आजीवभए मरणभए असिलोगभए १।

---

१. °मानानि खं० ॥

सत्त समुग्घाता पण्णत्ता, तंजहा– वेयणासमुग्घाते कसायसमुग्घाते मारणंतियसमुग्घाते वेउव्वियसमुग्घाते तेयससमुग्घाते आहारसमुग्घाते केवलिसमुग्घाते २।

समणे भगवं महावीरे सत्त रयणीतो उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ३।

सत्त वासहरपव्वया पण्णत्ता, तंजहा– चुल्लहिमवंते महाहिमवंते निसढे नीलवंते रुप्पी सिहरी मंदरे ४।

सत्त वासा पण्णत्ता, तंजहा– भरहे हेमवते हरिवासे महाविदेहे रम्मए हेरण्णवते एरावते ५।

खीणमोहे णं भगवं मोहणिज्जवज्जातो सत्त कम्मपगतीओ वेदेति ६।

[२] महानक्खत्ते सत्ततारे[१] [पण्णत्ते १।]

कत्तियादीया सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पण्णत्ता २।

महादीया सत्त नक्खत्ता दाहिणदारिया पण्णत्ता ३।

अणुराहाइया सत्त नक्खत्ता अवरदारिया पण्णत्ता ४।

धणिट्ठाइया सत्त नक्खत्ता उत्तरदारिया पण्णत्ता ५।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं सत्त पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

तच्चाए णं पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

चउत्थीए णं पुढवीए नेरइयाणं जहण्णेणं सत्त सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं सत्त पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं सत्त पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

सणंकुमारे कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

माहिंदे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं सातिरेगाइं सत्त सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

---

१. सत्ततारे । पाठांतरेण अभियाईया सत्त नक्खत्ता पं० तं० । कित्तियातीया सत्त जे१ खंमू०। सत्ततारे। अभियाईया सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पं० तं० । पाठांतरेण कित्तियातीया खंसं० ॥

बंभलोए कप्पे देवाणं जहण्णेणं सत्त सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ८।

जे देवा समं समप्पभं महापभं पभासं भासरं विमलं कंचणकूडं सणंकुमारवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं सत्त सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ९।

[३] ते णं देवा सत्तण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं सत्तहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे सत्तहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति बुज्झिस्संति जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथ सप्तस्थानकं विव्रियते, तच्च कण्ठ्यम्, नवरमिह भय-समुद्घात-महावीर-वर्षधर-वर्ष-क्षीणमोहार्थानि सूत्राणि षट्, नक्षत्रार्थानि पञ्च, स्थित्यर्थानि नव, उच्छ्वासाद्यर्थानि त्रीण्येवेति । तत्रे**हलोकभयं** यत् सजातीयात्, **परलोकभयं** यद् विजातीयात्, **आदानभयं** यद् द्रव्यमाश्रित्य जायते, **अकस्माद्भयं** बाह्यनिमित्तनिरपेक्षं स्वविकल्पाज्जातम्, शेषाणि प्रतीतानि, नवर**मश्लोकः** अकीर्त्तिरिति । **समुद्घाताः** प्राग्वत्, नवरं **केवलिसमुद्घातो** वेदनीय-नाम-गोत्राश्रय इति । तथा **रत्निः** वितताङ्गुलिर्हस्त इति, **ऊर्ध्वोच्चत्वेन** न तिर्यगुच्चत्वेनेति, **होत्था** बभूवेति । तथा *__अभिजिदा__*दीनि सप्त नक्षत्राणि पूर्वद्वारिकाणि, पूर्वदिशि येषु गच्छतः शुभं भवति, एवमश्विन्यादीनि दक्षिणद्वारिकाणि, पुष्यादीन्यपरद्वारिकाणि, स्वात्यादीन्युत्तरद्वारिकाणीति सिद्धान्तमतम्, इह तु मतान्तरमाश्रित्य **कृत्तिकादी**नि सप्त सप्त पूर्वद्वारिकादीनि भणितानि, **चन्द्रप्रज्ञप्तौ** तु बहुतराणि मतानि दर्शितानीहार्थ इति । स्थितिसूत्रे **समादीन्यष्टौ** विमाननामानीति ॥७॥

[सू० ८] अट्ठ मयट्ठाणा पण्णत्ता, तंजहा– जातिमए कुलमए बलमए रूवमए तवमए सुतमए लाभमए इस्सरियमए १।

अट्ठ पवयणमाताओ पण्णत्ताओ, तंजहा– इरियासमिई भासासमिई

---

*: *एतादृशचिह्नाङ्कितेषु स्थलेषु विशेषजिज्ञासुभिः परिशिष्टे टिप्पणेषु द्रष्टव्यम् ॥*

एसणासमिई आयाणभंडनिक्खेवणासमिई उच्चार-पासवण-खेल-सिंघाण-जल्लपरिट्ठावणियासमिई मणगुत्ती वतिगुत्ती कायगुत्ती २।

वाणमंतराणं देवाणं चेतियरुक्खा अट्ठ जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ३।

जंबू णं सुदंसणा अट्ठ जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ४।

कूडसामली णं गरुलावासे अट्ठ जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ते ५।

जंबुद्दीविया णं जगती अट्ठ जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ६।

अट्ठसमइए केवलिसमुग्घाते पण्णत्ते, तंजहा– पढमे समए दंडं करेति, बीए समए कवाडं करेति, ततिए समए मंथं करेति, चउत्थे समए मंथंतराइं पूरेति, पंचमे समए मंथंतराइं पडिसाहरति, छट्ठे समए मंथं पडिसाहरति, सत्तमे समए कवाडं पडिसाहरति, अट्ठमे समए दंडं पडिसाहरति, ततो पच्छा सरीरत्थे भवति ७।

पासस्स णं अरहतो पुरिसादाणीयस्स अट्ठ गणा अट्ठ गणहरा होत्था, तंजहा–

सुभे य सुभघोसे य वसिट्ठे बंभयारि य ।
सोमे सिरिधरे चेव, वीरभद्दे जसे इ य ॥१॥ ८।

[२] अट्ठ नक्खत्ता चंदेणं सद्धिं पमद्दं जोगं जोएंति, तंजहा– कत्तिया १, रोहिणी २, पुणव्वसू ३, महा ४, चित्ता ५, विसाहा ६, अणुराहा ७, जेट्ठा ८ । ९

[३] इमीसे णं रयणप्पहाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

चउत्थीए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं अट्ठ सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं अट्ठ पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

बंभलोए कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं अट्ठ सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा अच्चिं अच्चिमालिं वइरोयणं पभंकरं चंदाभं सुराभं सुपतिट्ठाभं अग्गिच्चाभं रिट्ठाभं अरुणाभं अरुणुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं अट्ठ सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[४] ते णं देवा अट्ठण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं अट्ठहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जाव अट्ठहिं अंतं करेस्संति ३।

[**टी०**] अथाष्टस्थानकं व्याख्यायते, सुगमं चैतत्, नवरमिह मदस्थान-प्रवचनमातृ-चैत्यवृक्ष-जम्बू-शाल्मली-जगती-केवलिसमुद्घात-गणधर-नक्षत्रार्थानि सूत्राणि नव, स्थित्यर्थानि षट्, उच्छ्वासाद्यर्थानि त्रीणीति । तत्र **मदस्य** अभिमानस्य **स्थानानि** आश्रयाः **मदस्थानानि** जात्यादीनि । तान्येव मदप्रधानतया दर्शयन्नाह– **जाईमए** इत्यादि। जात्या मदो **जातिमदः**, एवमन्यान्यपि । अथवा मदस्य **स्थानानि** भेदाः **मदस्थानानि**, तान्येवाह– **जाईमए** इत्यादि, शेषं तथैव । तथा **प्रवचनस्य** द्वादशाङ्गस्य तदाधारस्य वा सङ्घस्य **मातर** इव जनन्य इव **प्रवचनमातरः** ईर्यासमित्यादयः, द्वादशाङ्गं हि ता आश्रित्य साक्षात् प्रसङ्गतो वा प्रवर्त्तते, भवति च यतो यत् प्रवर्त्तते तस्य तदाश्रित्य मातृकल्पतेति । सङ्घपक्षे तु यथा शिशुर्मातरममुञ्चन्नात्मलाभं लभते एवं सङ्घस्ता अमुञ्चन् सङ्घत्वं लभते नान्यथेतीर्यासमित्यादीनां प्रवचनमातृतेति । तथा **व्यन्तरदेवानां चैत्यवृक्षाः** तन्नगरेषु सुधर्मादिसभानामग्रतो मणिपीठिकानामुपरि सर्वरत्नमयाः छत्र-ध्वजादिभिरलङ्कृता भवन्ति, ते चैवं श्लोकाभ्यामवगन्तव्याः–

कलंबो उ पिसायाणं वडो जक्खाण चेइयं ।
तुलसी भूयाण भवे रक्खसाणं तु कंडओ ॥१॥
असोगो किन्नराणं च किंपुरिसाण य चंपओ ।
नागरुक्खो भुयंगाणं गंधव्वाण य तुंबुरु[१] ॥२॥ [स्थानाङ्गसू० ६५४] त्ति ।

तथा **जम्बु** त्ति **उत्तरकुरुषु जम्बूवृक्षः** पृथिवीपरिणामः, **सुदर्शनेति** तन्नाम । एवं

१. तुंबरु जे१ हे२ । तेंदुओ इति स्थानाङ्गे पाठः ॥

कूटशाल्मली वृक्षविशेष एव, देवकुरुषु गरुडजातीयस्य **वेणुदेवा**भिधानस्य देवस्यावास इति । **जगती** जम्बूद्वीपनगरस्य प्राकारकल्पा पालीति । तथा **पार्श्वस्यार्हतः** त्रयोविंशतितमतीर्थकरस्य **पुरिसादाणीयस्स** त्ति पुरुषाणां मध्ये **आदानीयः** आदेयः पुरुषादानीयस्तस्य **अष्टौ गणाः** समानवाचना-क्रियाः साधुसमुदायाः, **अष्टौ गणधराः** तन्नायकाः सूरयः, इदं चैतत् प्रमाणं **स्थानाङ्गे**[1] **पर्युषणाकल्पे**[2] च श्रूयते, केवल**मावश्यके** अन्यथा, तत्र ह्युक्तम्–

दस नवगं गणाण माणं जिणिंदाणं [[3]आव० नि०२६८] ति । कोऽर्थः ? **पार्श्वस्य** दश गणाः गणधराश्च । तदिह द्वयोरल्पायुष्कत्वादिना कारणेनाविवक्षाऽनुमातव्येति । **सुभे** इत्यादि श्लोकः ।

तथा **अष्टौ नक्षत्राणि चन्द्रेण सार्धं प्रमर्दं** 'चन्द्रो मध्येन तेषां गच्छति' इत्येवंलक्षणं **योगं** सम्बन्धं **योजयन्ति** कुर्वन्ति, अत्रार्थेऽभिहितं[4] **लोकश्रियाम्**–

पुणव्वसु रोहिणी चित्ता मह जेट्ठणुराह कित्तिय विसाहा । चंदस्स उभयजोग [**लोकश्री**] त्ति । यानि च दक्षिणोत्तरयोगीनि तानि प्रमर्दयोगीन्यपि कदाचिद् भवन्ति, यतो **लोकश्रीटीकाकृतोक्तम्– एतानि नक्षत्राण्युभययोगीनि चन्द्रस्योत्तरेण दक्षिणेन च युज्यन्ते, कदाचिच्चन्द्रेण भेदमप्युपयान्ति** [**लोकश्रीटीका**] इति । तथा **अर्च्चि**रादीन्येकादश विमाननामानि ॥८॥

[सू० ९] [१] नव बंभचेरगुत्तीओ पण्णत्तातो, तंजहा– नो इत्थीपसुपंडगसंसत्ताणि सेज्जासणाणि सेवित्ता भवति १, नो इत्थीणं कहं कहित्ता भवइ २, नो इत्थीणं ठाणाइं[5] **सेवित्ता भवति ३, नो इत्थीणं इंदियाइं मणोहराइं मणोरमाइं आलोएत्ता निज्झाएत्ता [भवति] ४, नो पणीयरसभोई [भवति]**

---

१. सू०६५८ ॥ २. ''पासस्स णं अरहओ पुरिसादाणीयस्स अट्ठ गणहरा हुत्था, तंजहा- सुभे य १ अज्जघोसे य २, वसिट्ठ ३ बंभयारि य ४ । सोमे ५ सिरिहरे ६ चेव, वीरभद्दे ७ जसे वि य ८ ॥१६०॥'' - इति **पर्युषणाकल्पसूत्रे पार्श्वनाथ**चरित्रे ॥ ३. ''तित्तीस अट्ठवीसा अट्ठारस चेव तहय सत्तरस । इक्कारस दस नवगं गणाण माणं जिणिंदाणं ॥'' इति सम्पूर्णा गाथा **आवश्यकनिर्युक्तौ** ॥ ४. दृश्यतां **स्था० टी०** पृ०७६२ ॥ ५. दृश्यतां **स्था० सू०** ६६३, **स्था० टी०** पृ० ७६६ ॥

५, नो पाण-भोयणस्स अइमायं आहारइत्ता [भवति] ६, नो इत्थीणं पुव्वरयाइं पुव्वकीलिआइं सुमरइत्ता भवइ ७, नो सद्दाणुवाती नो रूवाणुवाती नो गंधाणुवाती नो रसाणुवाती नो फासाणुवाती नो सिलोगाणुवाती ८, नो सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवति ९ । १।

नव बंभचेरअगुत्तीओ पण्णत्ताओ, तंजहा– इत्थी-पसु-पंडगसंसत्ताणं सेज्जासणाणं सेवणया जाव सायासोक्खपडिबद्धे यावि भवति २।

नव बंभचेरा पण्णत्ता, तंजहा–

सत्थपरिण्णा लोगविजओ सीओसणिज्जं सम्मत्तं ।
आवंती धुतं विमोहायणं उवहाणसुतं महपरिण्णा ॥२॥ ३।

पासे णं अरहा [पुरिसादाणीए] नव रयणीओ उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ४।

[२] अभीजिणक्खत्ते साइरेगे णव मुहुत्ते चंदेणं सद्धिं जोगं जोएति १।

अभीजियाइया णं णव णक्खत्ता चंदस्स उत्तरेणं जोगं जोएंति, तंजहा– अभीजि, सवणो जाव भरणी २।

इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जातो भूमिभागातो नव जोयणसते उड्ढं अबाहाते उवरिल्ले तारारूवे चारं चरति ३।

जंबुद्दीवे णं दीवे णवजोयणिया मच्छा पविसिंसु वा पविसंति वा पविसिस्संति वा १।

विजयस्स णं दारस्स एगमेगाए बाहाए णव णव भोमा पण्णत्ता २।

वाणमंतराणं देवाणं सभाओ सुधम्माओ णव जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ताओ ३।

दंसणावरणिज्जस्स णं कम्मस्स णव उत्तरपगडीओ पण्णत्ताओ, तंजहा– णिद्दा पयला णिद्दाणिद्दा पयलापयला थीणगिद्धी चक्खुदंसणावरणे अचक्खुदंसणावरणे ओहिदंसणावरणे केवलदंसणावरणे ४।

[३] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं नव पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

चउत्थीए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं नव सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २। असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं नव पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३। सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं नव पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

बंभलोए कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं नव सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा पम्हं सुपम्हं पम्हावत्तं पम्हप्पभं पम्हकंतं पम्हवण्णं पम्हलेसं जाव पम्हुत्तरवडेंसगं सुज्जं सुसुज्जं सुज्जावत्तं सुज्जप्पभं सुज्जकंतं जाव सुज्जुत्तरवडेंसगं रुतिल्लं रुतिल्लावत्तं रुतिल्लप्पभं जाव रुतिल्लुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं [उक्कोसेणं] नव सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[४] ते णं देवा नवण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं नवहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे नवहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेस्संति ३।।

[टी०] अथ नवस्थानकं सुबोधं च, नवरमिह ब्रह्मगुप्ति-तदगुप्ति-ब्रह्मचर्याध्ययन-पार्श्वार्थं सूत्राणां चतुष्टयम्, ज्योतिष्कार्थं त्रयम्, मत्स्य-भौम-सभा-दर्शनावरणार्थं चतुष्टयम्, स्थित्याद्यर्थानि तथैव । तत्र **ब्रह्मचर्यगुप्तयो** मैथुनविरतिपरिरक्षणोपायाः । **नो स्त्री-पशु-पण्डकैः संसक्तानि** सङ्कीर्णानि **शय्यासनानि** शयनीय-विष्टराणि वसत्यासनानि वा **सेवयिता भवतीत्येका** १, **नो स्त्रीणां कथां [1]कथयिता भवतीति** द्वितीया २, **नो [2]स्त्रीगणान्** स्त्रीसमुदायान् **सेवयिता** उपासयिता **भवतीति** तृतीया ३, **नो स्त्रीणामिन्द्रियाणि** नयन-नासावंशादीनि **मनोहराणि** आक्षेपकत्वात् **मनोरमाणि** रम्यतयाऽऽ**लोकयिता** [3]द्रष्टा, **[4]निर्ध्याता** तदेकाग्रचित्ततया द्रष्टैव **भवतीति** चतुर्थी ४,

---

१. **कथिता** खं० ॥ २. दृश्यतां स्था०सू० ६६३, स्था०टी० पृ० ७६६ ॥ ३. हे२ विना- **द्रष्टा निध्याता तदेक**° जे१, हे१ । **द्रष्टा निध्यक्षति । तदे**° खं० । **द्रष्ट ध्यानिता तदेक**° जे२ । ४. 'निर्ध्याता' इति स्थानाङ्ग[६६३ तम]सूत्रटीकायाम् ॥

नो प्रणीतरसभोजी गलत्स्नेहरसबिन्दुकस्य भोजनस्य भोजको भवतीति पञ्चमी ५, **नो पानभोजनस्यातिमात्रम्** अप्रमाणं यथा भवत्येवमा**हारकः** सदा भवतीति षष्ठी ६, **नो पूर्वरत-पूर्वक्रीडितमनुस्मर्त्ता भवति, रतं** मैथुनम्, **क्रीडितं** स्त्रीभिः सह तदन्या क्रीडेति सप्तमी ७, **नो शब्दानुपाती, नो रूपानुपाती, नो गन्धानुपाती, नो रसानुपाती, नो स्पर्शानुपाती, नो श्लोकानुपाती,** कामोद्दीपकान् शब्दादीनात्मनो वर्णवादं च नानुपतति नानुसरतीत्यर्थः इत्यष्टमी ८, **नो सातसौख्यप्रतिबद्धश्चापि भवति, सातात्** सातवेदनीयादुदयप्राप्ताद् यत् सौख्यं तत्तथा, अनेन च प्रशमसुखस्य व्युदास इति नवमी ९ । इदं च व्याख्यानं **वाचनाद्वयानुसारेण** कृतम्, प्रत्येकवाचनयोरेवंविधसूत्राभावादिति।

तथा कुशलानुष्ठानं **ब्रह्मचर्यम्**, तत्प्रतिपादकान्यध्ययनानि **ब्रह्मचर्याणि**, तानि चाऽऽ**चाराङ्ग**प्रथमश्रुतस्कन्धप्रतिबद्धानीति ।

तथा **अभिजिन्नक्षत्रं साधिकान्नव** मुहूर्त्तांश्च**न्द्रेण सार्द्धं योगं** सम्बन्धं **योजयति** करोति, सातिरेकत्वं च तेषां चतुर्विंशत्या मुहूर्त्तस्य द्विषष्टिभागैः षट्षष्ट्या च द्विषष्टिभागस्य सप्तषष्टिभागानामिति । तथा **अभिजिदादीनि नव नक्षत्राणि चन्द्रस्योत्तरेण योगं योजयन्ति**, उत्तरस्यां दिशि स्थितानि दक्षिणाशास्थित**चन्द्रेण** सह योगमनुभवन्तीति भावः। **बहुसमरमणिज्जाओ** इत्यादि, अत्यन्तसमो **बहुसमो**ऽत एव **रमणीयो** रम्यस्तस्माद् **भूमिभागात्**, न पर्वतापेक्षया नापि श्वभ्रापेक्षयेति भावः, रुचकापेक्षयेति तात्पर्यम्, **अबाहाए** त्ति अन्तरे 'कृत्वे'ति शेषः, **उंवरिल्ले**[1] त्ति उपरितनं **तारारूपं** तारकजातीयं **चारं** भ्रमणं **चरति** करोति । **नवजोयणिय** त्ति नवयोजनायामा एव प्रविशन्ति, लवणसमुद्रे यद्यपि पञ्चयोजनशतिका मत्स्याः सम्भवन्ति तथापि नदीमुखेषु जगतीरन्ध्रौचित्येनैतावतामेव प्रवेश इति, लोकानुभावो वाऽयमिति । **विजयस्य** द्वारस्य जम्बूद्वीपसम्बन्धिनः पूर्वदिग्व्यवस्थितस्य **एगमेगाए** त्ति एकैकस्मिन् **बाहाए** त्ति बाहौ पार्श्वे **भौमानि** नगराणीत्येके, विशिष्टस्थानानीत्यन्ये । तथा **पक्ष्मादीनि** द्वादश **सूर्यादी**न्यपि द्वादशैव **रुचिरादी**न्येकादश च विमाननामानीति ॥९॥

---

१. अव° जे२ हे२ ॥

[सू० १०] [१] दसविहे समणधम्मे पण्णत्ते, तंजहा– खंती १, मुत्ती २, अज्जवे ३, मद्दवे ४, लाघवे ५, सच्चे ६, संजमे ७, तवे ८, चियाते ९, बंभचेरवासे १० । १।

[1]दस चित्तसमाहिट्ठाणा पण्णत्ता, तंजहा– धम्मचिंता वा से असमुप्पण्णपुव्वा समुप्पज्जेज्जा सव्वं धम्मं जाणित्तए १, सुमिणदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेज्जा अहातच्चं सुमिणं पासित्तए २, सण्णिनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेजा पुव्वभवे सुमरित्तए ३, देवदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेज्जा दिव्वं देविड्ढिं दिव्वं देवजुतिं दिव्वं देवाणुभावं पासित्तए ४, ओहिनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेज्जा ओहिणा लोगं जाणित्तए ५, ओहिदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेज्जा ओहिणा लोगं पासित्तए ६, मणपज्जवनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेज्जा मणोगए भावे जाणित्तए ७, केवलनाणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेज्जा केवलं लोगं जाणित्तए ८, केवलदंसणे वा से असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेज्जा केवलं लोयं पासित्तए ९, केवलिमरणं वा मरेज्जा सव्वदुक्खप्पहाणाए १० । २ ।

मंदरे णं पव्वते मूले दस जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं पण्णत्ते ३।

अरहा णं अरिट्ठनेमी दस धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ४।

कण्हे णं वासुदेवे दस धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ५।

रामे णं बलदेवे दस धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ६।

[२] दस नक्खत्ता नाणविड्ढिकरा पण्णत्ता, तंजहा–

मिगसिर अद्दा पूसो, तिण्णि य पुव्वाइं मूलमस्सेसा ।
हत्थो चित्ता य तहा, दस विड्ढिकराइं नाणस्स ॥३॥ १।

अकम्म[2]भूमियाणं मणुयाणं दसविहा रुक्खा उवभोगत्ताते उवत्थिया, तंजहा–

---

१. दशाश्रुतस्कन्धे चतुर्थेऽध्ययने [चतुर्थ्यां दशायां] तस्य निर्युक्तौ चूर्णौ च विस्तरेण दशानां चित्तसमाधिस्थानानां वर्णनमस्ति । विस्तरेण जिज्ञासुभिः तत्रैव द्रष्टव्यम् ॥ २. °भूमयाणं जे२ ॥

मत्तंगया य भिंगा, तुडियंगा दीव जोइ चित्तंगा ।
चित्तरसा मणियंगा, गेहागारा अनियणा य ॥४॥ २।

[३] इमीसे [णं] रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं जहण्णेणं दस वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता १।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं दस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

चउत्थीए पुढवीए दस निरयावाससतसहस्सा पण्णत्ता ३।

चउत्थीए पुढवीए [नेरइयाणं] उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

पंचमाए पुढवीए [नेरइयाणं] जहण्णेणं दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

असुरकुमाराणं देवाणं जहण्णेणं दस वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता ६।

असुरिंदवज्जाणं भोमेज्जाणं देवाणं जहण्णेणं दस वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता ७।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं दस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ८।

बादरवणप्फतिकाइयाणं उक्कोसेणं दस वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता ९।

वाणमंतराणं देवाणं जहण्णेणं दस वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता १०।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं दस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ११।

बंभलोए कप्पे देवाणं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता १२।

लंतए कप्पे देवाणं जहण्णेणं दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता १३।

जे देवा घोसं सुघोसं महाघोसं नंदिघोसं सुस्सरं मणोरमं रम्मं रम्मगं रमणिज्जं मंगलावत्तिं बंभलोगवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता १४।

[४] ते णं देवा दसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं दसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

अत्थेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे दसहिं भवग्गहणेहिं जाव करेस्संति ३।

[टी०] दशस्थानकं सुबोधमेव, तथापि किञ्चिल्लिख्यते । इह पञ्चविंशतिः सूत्राणि। तत्र **लाघवं** द्रव्यतोऽल्पोपधिता, भावतो गौरवत्यागः । **त्यागः** सर्वसङ्गानाम्, संविग्नमनोज्ञसाधुदानं वा । ब्रह्मचर्येण वसनम् अवस्थानं **ब्रह्मचर्यवास** इति । तथा **चित्तस्य** मनसः **समाधिः** समाधानं प्रशान्तता, तस्य **स्थानानि** आश्रया भेदा वा **चित्तसमाधिस्थानानि** । तत्र **धर्मा** जीवादिद्रव्याणामुपयोगोत्पादादयः स्वभावाः, तेषां **चिन्ता** अनुप्रेक्षा, **धर्मस्य** वा श्रुत-चारित्रात्मकस्य सर्वज्ञभाषितस्य 'हरि-हरादिनिगदितधर्मेभ्यः प्रधानोऽयम्' इत्येवं चिन्ता **धर्मचिन्ता**, **वा**शब्दो वक्ष्यमाणसमाधिस्थानान्तरापेक्षया विकल्पार्थः, **से** इति यः कल्याणभागी तस्य साधोर**समुत्पन्नपूर्वा** पूर्वस्मिन्ननादौ अतीते कालेऽनुपजाता, तदुत्पादे ह्युपार्द्धपुद्गलपरावर्त्तान्ते कल्याणस्यावश्यंभावात्, **समुत्पद्येत** जायेत, किंप्रयोजना चेयमत आह– **सर्वं** निरवशेषं **धर्मं** जीवादिद्रव्यस्वभावमुपयोगोत्पादादिकं श्रुतादिरूपं वा **जाणित्तए** ज्ञपरिज्ञया ज्ञातुं ज्ञात्वा च प्रत्याख्यानपरिज्ञया परिहरणीयधर्म्मं परिहर्तुम्, इदमुक्तं भवति– धर्मचिन्ता धर्मज्ञानकारणभूता जायत इति, इयं च[1] **समाधे**रुक्तलक्षणस्य **स्थान**मुक्तलक्षणमेव भवतीति प्रथमम् ।

तथा **स्वप्नस्य** निद्रावशविकल्पज्ञानस्य **दर्शनं** संवेदनं **स्वप्नदर्शनं** तद्वा कल्याणप्राप्तिसूचक**मसमुत्पन्नपूर्वं समुत्पद्येत**[2], यथा भगवतो **महावीरस्या**ऽ**स्थिक**ग्रामे **शूलपाणि**यक्षकृतोपसर्गावसाने, किंप्रयोजनं चेदम् ? इत्याह– [3]**अहातच्चं सुमिणं पासित्तए** त्ति, **यथा** येन प्रकारेण **तथ्यः** सत्यो **यथातथ्यः**, सर्वथा निर्व्यभिचार इत्यर्थः, तम्, **स्वप्नः** स्वप्नफलमुपचारात्, तं **द्रष्टुं** ज्ञातुम्, अवश्यंभाविनो मुक्त्यादेः शुभस्वप्नफलस्य दर्शनाय साधोः स्वप्नदर्शनमुपजायत इति भावः । क्वचित् **सुजाणं** ति पाठः, तत्रावितथमवश्यंभावि **सुयानं** सुगतिं **द्रष्टुं** ज्ञातुं **सुज्ञानं** वा भाविशुभार्थपरिच्छेदं संवेदितुमिति, कल्याणसूचकावितथस्वप्नदर्शनाच्च भवति चित्तसमाधिरिति चित्तसमाधिस्थानमिदं द्वितीयम् ।

---

१. च नास्ति खं० ॥ २. °त्पद्यते खं० ॥ ३. आहा° जे२ हे१,२ । आह° खं० ॥

तथा सञ्ज्ञानं[1] सञ्ज्ञा, सा च यद्यपि हेतुवाद-दृष्टिवाद-दीर्घकालिकोपदेशभेदेन क्रमेण विकलेन्द्रिय-सम्यग्दृष्टि-समनस्कसम्बन्धित्वात् त्रिधा भवति तथापीह दीर्घकालिकोपदेशसञ्ज्ञा ग्राह्येति, सा यस्यास्ति स सञ्ज्ञी समनस्कः, तस्य ज्ञानं **सञ्ज्ञिज्ञानम्**, तच्चेहाधिकृतसूत्रान्यथानुपपत्तेर्जातिस्मरणमेव, तद्वा **से** तस्या[2]ऽ**समुत्पन्नपूर्वं समुत्पद्येत**, कस्मै प्रयोजनाय ? इत्याह- **पुव्वभवे सुमरित्तए** त्ति पूर्वभवान् स्मर्तुम्, स्मृतपूर्वभवस्य च[3] संवेगात् समाधिरुत्पद्यते इति समाधिस्थानमेतत् तृतीयमिति ।

तथा **देवदर्शनं** वा **से** तस्याऽ**समुत्पन्नपूर्वं समुत्पद्येत**, देवा हि तस्य गुणित्वाद् दर्शनं ददति, किम्फलम् ? इत्याह– **दिव्यां देवर्द्धिं** प्रधानपरिवारादिरूपां **दिव्यां देवद्युतिं** विशिष्टां शरीरा-ऽऽभरणादिदीप्तिं **दिव्यं देवानुभावम्** उत्तमं वैक्रियकरणादिप्रभावं **द्रष्टुम्**, एतद्दर्शनायेत्यर्थः, देवदर्शनाच्चागमार्थेषु श्रद्धानदार्ढ्यं धर्मे बहुमानश्च भवति, ततश्चित्तसमाधिरिति भवति देवदर्शनं चित्तसमाधिस्थानमिति चतुर्थम्।

तथा **अवधिज्ञानं वा से** तस्याऽ**समुत्पन्नपूर्वं समुत्पद्येत**, किमर्थम् ? इत्याह– **अवधिना** मर्यादया नियतद्रव्य-क्षेत्र-काल-भावरूपेण **लोकं ज्ञातुम्**, लोकज्ञानायेत्यर्थः, भवति च विशिष्टज्ञानाच्चित्तसमाधिरिति पञ्चमं तदिति। एव**मवधिदर्शन**सूत्रमपीति षष्ठम् ।

तथा **मनःपर्यवज्ञानं वा से** तस्याऽ**समुत्पन्नपूर्वं समुत्पद्येत**, किमर्थम् ? अत आह– **मणोगते भावे जाणित्तए** अर्द्धतृतीयद्वीपसमुद्रेषु सञ्ज्ञिनां पञ्चेन्द्रियाणां पर्याप्तकानां मनोगतान् भावान् ज्ञातुम्, एतज्ज्ञानायेत्यर्थ इति सप्तमम् ।

तथा **केवलज्ञानं वा से** तस्याऽ**समुत्पन्नपूर्वं समुत्पद्येत**, **केवलं** परिपूर्णम्, **लोक्यते** दृश्यते केवलालोकेनेति **लोको** लोकालोकरूपं वस्तु, तं **ज्ञातुम्**, **केवलज्ञानस्य** च समाधिभेदत्वाच्चित्तसमाधिस्थानता, इह चामनस्कतया केवलिनश्चित्तं चैतन्यमवसेयमित्यष्टमम् । एवं **केवलदर्शन**सूत्रम्, नवरं **द्रष्टुमिति** विशेष इति नवमम्।

तथा **केवलिमरणं वा म्रियेत** कुर्यात् इत्यर्थः, किमर्थम् ? अत आह–

---

१. **सज्ञानं** खं० ॥ २. **तस्यानुत्पन्न°** हे२ विना ॥ ३. **च** नास्ति खं० जे१ ॥

सर्वदुःखप्रहाणायेति, इदं तु केवलिमरणं सर्वोत्तमसमाधिस्थानमेवेति दशममिति ।

तथा **अकर्मभूमिकानां**[1] भोगभूमिजन्मनां **मनुष्याणां दशविधा रुक्ख** त्ति कल्पवृक्षाः **उवभोगत्ताए** त्ति उपभोग्यत्वाय **उवत्थिय** त्ति उपस्थिता उपनता इत्यर्थः । तत्र **मत्ताङ्काः** मद्यकारणभूताः । **भिंग** त्ति भाजनदायिनः । **तुडियंग** त्ति तूर्याङ्गसम्पादकाः । **दीव** त्ति दीपशिखाः प्रदीपकार्यकारिणः । **जोइ** त्ति ज्योतिः अग्निः, तत्कार्यकारिण इति । **चित्तंग** त्ति चित्राङ्गाः पुष्पदायिनः । **चित्ररसा** भोजनदायिनः । **मण्यङ्गाः** आभरणदायिनः । **गेहाकाराः** भवनत्वेनोपकारिणः । **अणियण** त्ति, अनग्नत्वं सवस्त्रत्वम्, तद्धेतुत्वा**दनग्ना** इति । **घोषा**दीन्येकादश विमाननामानीति ॥१०॥

[सू० ११] [१] एक्कारस उवासगपडिमातो पण्णत्तातो, तंजहा– दंसणसावए १, कतव्वयकम्मे २, सामातियकडे ३, पोसहोववासणिरते ४, दिया बंभयारी, रत्तिं परिमाणकडे ५, दिआ वि राओ वि बंभयारी, असिणाती, विअडभोती, मोलिकडे ६, सचित्तपरिण्णाते ७, आरंभपरिण्णाते ८, पेसपरिण्णाते ९, उद्दिट्ठभत्तपरिण्णाते १०, समणभूते यावि भवति समणाउसो ११ । १।

[२] लोगंताओ णं एक्कारसहिं एक्कारेहिं जोयणसतेहिं अबाहाए जोतिसंते पण्णत्ते २।

जंबुद्दीवे दीवे मंदरस्स पव्वतस्स एक्कारसहिं एक्कवीसेहिं जोयणसतेहिं [अबाहाए] जोतिसे चारं चरति ३।

समणस्स णं भगवतो महावीरस्स एक्कारस गणहरा होत्था, तंजहा– इंदभूती अग्गिभूती वायुभूती वियत्ते सुहम्मे मंडिते मोरियपुत्ते अकंपिते अयलभाया मेतज्जे पभासे ४।

मूलनक्खत्ते एक्कारसतारे पण्णत्ते ५।

हेट्ठिमगेवेज्जगाणं देवाणं एक्कारसुत्तरं गेवेज्जविमाणसतं भवति त्ति मक्खायं ६।

मंदरे णं पव्वते धरणितलाओ सिहरतले एक्कारसभागपरिहीणे उच्चत्तेणं पण्णत्ते ७।

---

१. °भूमकानां जे२ हे१,२ ॥

[३] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

पंचमाए पुढवीए [अत्थेगतियाणं नेरइयाणं] एक्कारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं एक्कारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु [अत्थेगतियाणं देवाणं] एक्कारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

लंतए कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं एक्कारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा बंभं सुबंभं बंभावत्तं बंभप्पभं बंभकंतं बंभवण्णं बंभलेसं बंभज्झयं बंभसिंगं बंभसिट्ठं बंभकूडं बंभुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं [उक्कोसेणं] एक्कारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[४] ते णं देवा एकारसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं एक्कारसण्हं वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे एक्कारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथैकादशस्थानम्, तदपि गतार्थम्, नवरमिह प्रतिमाद्यर्थानि सूत्राणि सप्त, स्थित्याद्यर्थानि तु नवेति, तत्रोपा**सते** सेवन्ते श्रमणान् ये ते **उपासकाः** श्रावकाः, तेषां **प्रतिमाः** प्रतिज्ञाः अभिग्रहाः उपासकप्रतिमाः । तत्र दर्शनं सम्यक्त्वम्, तत् प्रतिपन्नः श्रावको **दर्शनश्रावकः**, इह च प्रतिमानां प्रक्रान्तत्वेऽपि प्रतिमा-प्रतिमावतोरभेदोपचारात् प्रतिमावतो निर्देशः कृतः, एवमुत्तरपदेष्वपि, अयमत्र भावार्थः– सम्यग्दर्शनस्य शङ्कादिशल्यरहितस्याणुव्रतादिगुणविकलस्य योऽभ्युपगमः सा प्रतिमा प्रथमेति । तथा **कृतम्** अनुष्ठितं **व्रतानाम्** अणुव्रतादीनां **कर्म** तच्छ्रवण-ज्ञान-वाञ्छा-प्रतिपत्तिलक्षणं येन प्रतिपन्नदर्शनेन स **कृतव्रतकर्मा** प्रतिपन्नाणुव्रतादिरिति भावः, इयं द्वितीया । तथा

सामायिकं सावद्ययोगपरिवर्जन-निरवद्ययोगासेवनस्वभावं **कृतं** विहितं देशतो येन स **सामायिककृतः**, आहिताग्न्यादिदर्शनात्[१] क्तान्तस्योत्तरपदत्वम्, तदेवमप्रतिपन्नपौषधस्य दर्शनव्रतोपेतस्य प्रतिदिनमुभयसन्ध्यं सामायिककरणं मासत्रयं यावदिति तृतीया प्रतिमेति । तथा **पोषं** पुष्टिं कुशलधर्माणां धत्ते यदाहारत्यागादिकमनुष्ठानं तत् **पौषधम्**, तेनो**पवसनम्** अवस्थानमहोरात्रं यावदिति **पौषधोपवास** इति, अथवा पौषधं पर्वदिनमष्टम्यादि तत्रोपवासः अभक्तार्थः **पौषधोपवास** इति, इयं व्युत्पत्तिरेव, प्रवृत्तिस्त्वस्य शब्दस्याहार--शरीरसत्कारा-ऽब्रह्मचर्य-व्यापारपरिवर्जनेष्विति, तत्र पौषधोपवासे **निरतः** आसक्तः **पौषधोपवासनिरतः** स एवंविधश्रावकश्चतुर्थी प्रतिमेति प्रक्रमः, अयमत्र भावः - पूर्वप्रतिमात्रयोपेत:(पेतस्य) अष्टमी-चतुर्दश्यमावास्या-पौर्णमासीष्वाहारपौषधादिचतुर्विधं पौषधं प्रतिपद्यमानस्य चतुरो[२] मासान् यावच्चतुर्थप्रतिमा भवतीति । तथा पञ्चमप्रतिमायामष्टम्यादिषु पर्वस्वेकरात्रिकप्रतिमाकारी भवतीति[३], एतदर्थं च सूत्रमधिकृतसूत्रपुस्तकेषु न दृश्यते, **दशादिषु** पुनरुपलभ्यते इति तदर्थ उपदर्शितः, तथा शेषदिनेषु **दिवा ब्रह्मचारी, रत्तिं** ति रात्रौ, किम् ? अत आह– परिमाणं स्त्रीणां तद्भोगानां वा प्रमाणं कृतं येन स **परिमाणकृत** इति, अयमत्र भावः– दर्शन-व्रत-सामायिका-ऽष्टम्यादिपौषधोपेतस्य पर्वस्वेकरात्रिकप्रतिमाकारिणः शेषदिनेषु दिवा ब्रह्मचारिणो रात्रावब्रह्मपरिमाणकृतोऽस्नानस्याऽरात्रिभोजिनः अबद्धकच्छस्य पञ्च मासान् यावत् पञ्चमी प्रतिमा भवतीति, उक्तं च–

अट्ठमिचउद्दसीसुं पडिमं ठाएगराईयं ॥ पश्चार्द्धम् ।
असिणाणवियडभोई मउलियडो दिवसबंभयारी य ।
रत्तिं परिमाणकडो पडिमावज्जेसु दियहेसु ॥ [पञ्चाशक० १०।१७-१८] त्ति ॥

तथा **दिवापि रात्रावपि ब्रह्मचारी, असिणाइ** त्ति **अस्नायी** स्नानपरिवर्जकः, क्वचित् पठ्यते- **अनिसाइ** त्ति न निशायामत्तीत्यनिशादी, **वियडभोइ** त्ति विकटे प्रकटे

१. "८९९ **निष्ठा** ।२।२।३६। निष्ठान्तं बहुव्रीहौ पूर्वं स्यात् । ... . ९०० **वाऽऽहिताग्न्यादिषु** ।२।२।३७। आहिताग्निः । अग्न्याहितः । आकृतिगणोऽयम् ।" इति पाणिनीयव्याकरणस्य व्याख्यायां **सिद्धान्तकौमुद्याम्** ॥ २. °**मान चतुरो** जे२ । **जे२** अनुसारेण तु 'पूर्वप्रतिमात्रयोपेतः अष्टमी-चतुर्दश्यमावास्या-पौर्णमासीष्वाहारपौषधादिचतुर्विधं पौषधं प्रतिपद्यमाना[:] चतुरो मासान् यावत् चतुर्थप्रतिमा भवतीति' इति पाठः संभवेदत्र ॥ ३. **भवत्येतदर्थं** खं० ॥

प्रकाशे दिवा न रात्रावित्यर्थः, दिवापि चाप्रकाशदेशे न भुङ्क्ते अशनाद्यभ्यवहरतीति **विकटभोजी, मोलिकडे** त्ति अबद्धपरिधानकच्छ इत्यर्थः, षष्ठप्रतिमेति प्रकृतम्, अयमत्र भावः- प्रतिमापञ्चकोक्तानुष्ठानयुक्तस्य ब्रह्मचारिणः षण्मासान् यावत् षष्ठी प्रतिमा भवतीति । तथा **सचित्त** इति सचेतनाहारः **परिज्ञातः**[१] तत्स्वरूपादिपरिज्ञानात् प्रत्याख्यातो येन स **सचित्ताहारपरिज्ञातः** श्रावकः सप्तमी प्रतिमेति प्रकृतम्, इयमत्र भावना– पूर्वोक्तप्रतिमाषट्कानुष्ठानयुक्तस्य प्रासुकाहारस्य सप्त मासान् यावत् सप्तमी प्रतिमा भवतीति । तथा **आरम्भः** पृथिव्याद्युपमर्दनलक्षणः **परिज्ञातः** तथैव प्रत्याख्यातो येनासावा**रम्भपरिज्ञातः** श्राद्धोऽष्टमी प्रतिमेति, इह भावना– समस्तपूर्वोक्तानुष्ठानयुक्तस्यारम्भवर्जनमष्टौ मासान् यावदष्टमी प्रतिमेति । तथा **प्रेष्याः** आरम्भेषु व्यापारणीयाः **परिज्ञाताः** तथैव प्रत्याख्याता येन स **प्रेष्यपरिज्ञातः** श्रावको नवमीति, भावार्थश्चेह पूर्वोक्तानुष्ठायिनः आरम्भं परैरप्यकारयतो नव मासान् यावन्नवमी प्रतिमेति । तथा **उद्दिष्टं** तमेव श्रावकमुद्दिश्य कृतं **भक्तम्** ओदनादि उद्दिष्टभक्तम्, तत् परिज्ञातं येनासावु**द्दिष्टभक्तपरिज्ञातः** प्रतिमेति प्रकृतम्, इहायं भावार्थः– पूर्वोदितगुणयुक्तस्याधाकर्मिकभोजनपरिहारवतः क्षुरमुण्डितशिरसः शिखावतो वा केनापि किञ्चिद् गृहव्यतिकरे पृष्टस्य तज्ज्ञाने सति जानामीति अज्ञाने च सति न जानामीति ब्रुवाणस्य दश मासान् यावदेवंविधविहारस्य दशमी प्रतिमेति । **तथा श्रमणो** निर्ग्रन्थस्तद्वद्यस्तदनुष्ठानकरणात् स **श्रमणभूतः** साधुकल्प इत्यर्थः, **च**कारः समुच्चये, **अपिः** सम्भावने, **भवति** श्रावक इति प्रकृतम्, हे **श्रमण** ! हे **आयुष्मन्** ! इति **सुधर्मस्वामिना जम्बूस्वामिन**मामन्त्रयतोक्तम् इत्येकादशीति । इह चेयं भावना– पूर्वोक्तसमग्रगुणोपेतस्य क्षुरमुण्डस्य कृतलोचस्य वा गृहीतसाधुनेपथ्यस्य ईर्यासमित्यादिकं साधुधर्ममनुपालयतो भिक्षार्थं गृहिकुलप्रवेशे सति श्रमणोपासकाय प्रतिमाप्रतिपन्नाय भिक्षां दत्तेति भाषमाणस्य कस्त्वमिति कस्मिंश्चित् पृच्छति प्रतिमाप्रतिपन्नः श्रमणोपासकोऽहमिति ब्रुवाणस्यैकादश मासान् यावदेकादशी प्रतिमा भवतीति ।

पुस्तकान्तरे त्वेवं वाचना– **दंसणसावए** प्रथमा, **कयवयकम्मे** द्वितीया,

---

१. °ज्ञातः स्वरूपा° खं० ॥

कयसामाइए तृतीया, **पोसहोववासनिरए**[१] चतुर्थी, **राइभत्तपरिण्णाए** पञ्चमी, **सचित्तपरिण्णाए** षष्ठी, **दिया बंभयारी राओ परिमाणकडे** सप्तमी, **दिया वि राओ वि बंभयारी असिणाणए यावि भवति वोसट्ठकेस-रोम-नहे** अष्टमी, **आरंभपरिण्णाए** [२] **पेसपरिण्णाए** नवमी, **उदिट्ठभत्तवज्जए** दशमी, **समणभूए यावि भवइ त्ति समणाउसो** एकादशीति, क्वचित्तु **आरम्भपरिज्ञात** इति नवमी, **प्रेष्यारम्भपरिज्ञात** इति दशमी, **उद्दिष्टभक्तवर्जकः श्रमणभूतश्चै**कादशीति ।

तथा **जम्बूद्वीपे** [३] द्वीपे मन्दरस्य पर्वतस्य **एकादश एगविंसे**[४] त्ति एकविंशति-योजनाधिक[५]ानि **योजनशतानि अबाहाए** त्ति अबाधया व्यवधानेन 'कृत्वे'ति शेषः, **ज्योतिषं** ज्योतिश्चक्रं **चारं** परिभ्रमणं **चरति** आचरति, तथा **लोकान्तात् ण**मित्यलङ्कारे **एकादश एक्कारे** त्ति एकादशयोजनाधिकानि [६] एकादश योजनशतानि **अबाधया** व्यवहिततया 'कृत्वे'ति शेषः, **जोतिसंते** त्ति ज्योतिश्चक्रपर्यन्तः **प्रज्ञप्त** इति, इदं च वाचनान्तरं व्याख्यातम्, उक्तं च–

[७] **एक्कारसेक्कवीसा सय एक्काराहिया य एक्कारा ।**
मेरुअलोगाबाहं जोइसचक्कं चरइ ठाइ ॥ [बृहत्सं० १०५] इति ।

अधिकृतवाचनायां पुनरिदमनन्तरं व्याख्यातमालापकद्वयं व्यत्ययेनापि दृश्यते । **विमाणसयं भवति त्ति मक्खायं** ति इह **म**कारस्यागमिकत्वादयमर्थः **विमानशतं भवतीति** कृत्वा **आख्यातं** प्ररूपितं भगवता अन्यैश्च केवलिभिरिति **सुधर्मस्वामि**-वचनम् ।

तथा **मंदरे णं पव्वए णं धरणितलाओ सिहरतले एक्कारसभागपरिहीणे उच्चत्तेणं पण्णत्ते**, अस्यायमर्थः– **मेरुर्भूतलादारभ्य शिखरतल**मुपरिभागं यावद्विष्कम्भापेक्षयाऽ-

---

१. °निरये जे१,२ खंमू० ॥ २. **पेसपरिण्णाए** खं० जे१ हे१ मध्ये नास्ति ॥ ३. **द्वीपे** नास्ति हे२ विना॥ ४. °**विंशे** हे२ विना ॥ ५. °**कानि एकादश योजनशतानि** जे२ खंसं० ॥ ६. **एकादश योजनशतानि** इति पाठः कुत्रापि नास्ति, केवलं खंसं० मध्ये पश्चात् पूरितः ॥ ७. "इह यथासङ्ख्येन पदानां योजना, सा चैवम्- एकादश योजनशतान्येकविंशत्यधिकानि मेरोरबाधामपान्तरालरूपां कृत्वा मनुष्यलोकवर्ति चरं ज्योतिश्चक्रं चरति । तथैकादश योजनशतान्येकादशाधिकान्यलोकाकाशस्याबाधामपान्तरालरूपां कृत्वा एतावद्भिर्योजनशतैरलोकाकाशादर्वाक् स्थित्वेत्यर्थः, स्थिरं ज्योतिश्चक्रं तिष्ठति" ॥१०५॥ इति **जिनभद्रगणिक्षमाश्रमणविरचितबृहत्संग्रहण्या** **म**लयगिरिसूरि-विरचितायां टीकायाम् ॥

ङ्गुलादेरेकादशभागेन परिहीणो हानिमुपगतः **उच्चत्वेन** उपर्युपरि **प्रज्ञप्तः**, इयमत्र भावना– **मन्दरो** भूतले दश योजनसहस्राणि विष्कम्भतः, ततश्चोच्चत्वेनाङ्गुले गतेऽङ्गुलस्यैकादशभागो विष्कम्भतो हीयते, एवमेकादशस्वङ्गुलेष्वङ्गुलं हीयते, एतेनैव न्यायेनैकादशसु योजनेषु योजनम् एवं सहस्रेषु सहस्रं ततो नवनवत्यां योजनसहस्रेषु नव सहस्राणि हीयन्ते, ततो भवति सहस्रं विष्कम्भः शिखरे इति, अथवा **धरणीतलात्** धरणीतलविष्कम्भात् सकाशा**च्छिखरतलं** शिखरविष्कम्भमाश्रित्य मेरुरेकादशभागेन परिहीणो भवति, कस्यैकादशभागेन ? इत्याह– **उच्चत्तेणं** ति उच्चत्वस्य, तथाहि– मेरोरुच्चत्वं नवनवतिः सहस्राणि, तदेकादशभागो नव, तैर्हीनो मूलविष्कम्भापेक्षया **शिखरतले**, शिखरस्य साहस्रिकत्वात्, दशसाहस्रिकत्वाच्च मूलविष्कम्भस्येति । **ब्रह्मादीनि** द्वादश विमाननामानि ॥११॥

[सू० १२] [१] बारस भिक्खुपडिमातो पण्णत्तातो, तंजहा– मासिया भिक्खुपडिमा, दोमासिया [भिक्खुपडिमा], तेमासिया [भिक्खुपडिमा], चाउम्मासिया [भिक्खुपडिमा], पंचमासिया [भिक्खुपडिमा], छम्मासिया [भिक्खुपडिमा], सत्तमासिया [भिक्खुपडिमा], पढमा सत्तरातिंदिया भिक्खुपडिमा, दोच्चा सत्तरातिंदिया भिक्खुपडिमा, तच्चा सत्तरातिंदिया भिक्खुपडिमा, अहोरातिया भिक्खुपडिमा, एक्करातिया भिक्खुपडिमा १।

[1]दुवालसविहे संभोगे पण्णत्ते, तंजहा–

---

१. संभोगासंभोगविषये विस्तृता विचारणा **निशीथस्य भाष्ये चूर्णौ** च [गा० २०६९-२१५८] विद्यते । विस्तरार्थिभिस्तत्र द्रष्टव्यम् । अत्र किञ्चिदुपन्यस्यते- ''एस संभोगो सप्पभेओ वण्णिओ । एस य पुव्वं सव्वसंविग्गाणं अड्ढभरहे एक्कसंभोगो आसी । पच्छा जाया- इमे संभोइया इमे असंभोइया ।.... ... सीसो पुच्छति- कति पुरिसजुगे एक्को संभोगो आसीत् ? कम्मि वा पुरिसे असंभोगो पवट्टो, केण वा कारणेण ? ततो भणति- **संपतिरण्णुप्पत्ती**... ... ॥ **[निशीथभा० २१५५]** । **वद्धमाण**सामिस्स सीसो **सोहम्मो** । तस्स **जंबु**णामा । तस्स वि **पभवो** । तस्स **सेज्जंभवो** । तस्स वि सीसो **जसभद्दो** । **जसभद्द**सीसो **संभूतो** । **संभूयस्स थूलभद्दो**। थूलभद्दं जाव सव्वेसिं एक्कसंभोगो आसी । थूलभद्दस्स जुगप्पहाणा दो सीसा-अज्जमहागिरी अज्जसुहत्थी य । **अज्जमहागिरी** जेट्ठो, **अज्जसुहत्थी** तस्स सड्ढि(हो?)यरो । थूलभद्दसामिणा अज्जसुहत्थिस्स गणो दिन्नो । तहावि अज्जमहागिरी अज्जसुहत्थी य प्रीतिवसेण एक्कओ विहरंति । अण्णया ते दोवि विहरंता **कोसंबा**हारं गता, तत्थ य दुब्भिक्खं... ... । तं **अज्जमहागिरी** जाणित्ता **अज्जसुहत्थिं** भणाति- अज्जो कीस रायपिंडं पडिसेवह ?

*उवहि सुय भत्तपाणे अंजलीपग्गहे ति य ।
[1]दायणे य निकाए य, अब्भुट्ठाणे त्ति[2] यावरे ॥५॥
कितिकम्मस्स य करणे, वेयावच्चकरणे ति य ।
समोसरण [3]सन्निसेज्जा य, कहाते य पबंधणे ॥६॥ २।

दुवालसावत्ते कितिकम्मे पण्णत्ते, तंजहा–
दुओणयं जहाजायं, कितिकम्मं बारसावयं ।
चउसिरं [4]तिगुत्तं, दुपवेसं एगनिक्खमणं ॥७॥ ३।

विजया णं रायधाणी दुवालस *जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ता ४।

रामे णं बलदेवे दुवालस वाससताइं सव्वाउयं पालइत्ता देवत्ति गए ५।

मंदरस्स णं पव्वतस्स चूलिया मूले दुवालस जोयणाइं विक्खंभेणं पण्णत्ता ६।

जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स वेतिया मूले दुवालस जोयणाइं विक्खंभेणं पण्णत्ता ७।

सव्वजहण्णिया राती दुवालसमुहुत्तिया पण्णत्ता ८। एवं दिवसो विणायव्वो ९।

सव्वट्ठसिद्धस्स णं महाविमाणस्स उवरिल्लातो थूभियग्गातो दुवालस जोयणाइं उड्ढं उप्पतित्ता ईसिंपब्भारा नामं पुढवी पण्णत्ता १०।

ईसिंपब्भाराए णं पुढवीए दुवालस नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा– ईसि त्ति वा, ईसिपब्भार त्ति वा, तणू ति वा, तणुयतरि त्ति वा, सिद्धी ति

तओ **अज्जसुहत्थिणा** भणियं- जहा राया तहा पया, ण एस रायपिंडो । तेल्लिया तेल्लं, घयगोलिया घयं, दोसिया वत्थाइं, पूइया भक्खभोज्जे देंति, एवं साहूणं सुभविहारे । **अज्जमहागिरी** माति त्ति काउं अज्जसुहत्थिस्स कसातितो। एस सिस्साणुरागेण ण पडिसेहेति । ततो अज्जमहागिरी अज्जसुहत्थिं भणाति- अज्जपभिति तुमं मम असंभोतिओ॥'' इति **निशीथचूर्णौ** गा० २१५०-२१५४ ॥

१. **दातणे** जे१ खं० । **दातणा** जे२ ॥ २. **ति** जे२ ॥ ३. **सण्णिसे°** जे१ खं० ॥ ४. **तिहि गुत्तं** अटी०। गाथेय**मावश्यकनिर्युक्ता**वपि [गा० १२१६] वर्तते । तत्र **तिगुत्तं च** इति पाठः ॥

वा, सिद्धालए ति वा, मुत्ती ति वा, मुत्तालए ति वा, बंभे ति वा, बंभवडेंसगे त्ति वा, लोकपडिपूरणे त्ति वा, लोगग्गचूलिआ ति वा ११।

[२] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतिआणं नेरइआणं बारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

पंचमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं बारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं बारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं बारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

लंतए कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं बारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा महिंदं महिंदज्झयं कंबुं कंबुग्गीवं पुंखं सुपुंखं महापुंखं पुंडं सुपुंडं महापुंडं नरिंदं नरिंदोकंतं नरिंदुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसिं णं देवाणं उक्कोसेणं बारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा बारसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं बारसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

अत्थेगतिया भवसिद्धिआ जीवा जे बारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] द्वादशस्थानमथ, तच्च सुगमम्, नवरं स्थितिसूत्रेभ्योऽर्वागेकादश सूत्राणीह, तत्र **भिक्षूणां** विशिष्टसंहनन-श्रुतवतां **प्रतिमाः** अभिग्रहा **भिक्षुप्रतिमाः**, तत्र मासिक्यादयः सप्तमासिक्यन्ताः सप्त मासेन मासेनोत्तरोत्तरं वृद्धा एकादिभिर्भक्त-पानदत्तिभिश्चेति, तथा सप्त रात्रिंदिवानि अहोरात्राणि यासु ताः **सप्तरात्रिंदिवास्ताश्च** तिस्रो भवन्तीति, सप्तानामुपर्यष्टमी प्रथमा सप्तरात्रिंदिवा, एवं नवमी द्वितीया, दशमी तृतीया, आसां च तिसृणामप्यनुष्ठानकृतो विशेषः, तथाहि– अष्टम्यां चतुर्थभक्तं

तपः ग्रामादेर्बहिरवस्थानमुत्तानादिकं च स्थानमिति, नवम्यां तु [१]उत्कुटुकाद्यासनेन विशेषः, दशम्यां वीरासनादिना, तथा अहोरात्रप्रमाणाऽ**होरात्रिकी** एकादशी, सा च षष्ठभक्तेन भवतीति विशेषः, **एकरात्रिकी** रात्रिप्रमाणा, सा चाष्टमभक्तेन रात्रौ[२] प्रलम्बभुजस्य संहतपादस्येषदवनतकायस्यानिमेषनयनस्येति ।

तथा **सम्** एकीभूय [३]समानसमाचाराणां साधूनां भोजनं **सम्भोगः**, स चोपध्यादिलक्षणविषयभेदात् द्वादशधा, तत्र **उवही**त्यादि रूपकद्वयम्, तत्रो**पधि**र्वस्त्र-पात्रादिस्तं सम्भोगिकः सम्भोगिकेन सार्द्धमुद्गमोत्पादनैषणादोषैर्विशुद्धं गृह्णन् शुद्धः, अशुद्धं गृह्णन् प्रेरितः प्रतिपन्नप्रायश्चित्तो वारात्रयं यावत् सम्भोगार्हश्चतुर्थवेलायां प्रायश्चित्तं प्रतिपद्यमानोऽपि विसम्भोगार्ह इति, विसम्भोगिकेन वा पार्श्वस्थादिना वा संयत्या वा सार्द्धमुपधिं शुद्धमशुद्धं वा निष्कारणं गृह्णन् प्रेरितः प्रतिपन्नप्रायश्चित्तोऽपि वेलात्रयस्योपरि न सम्भोग्यः, एवमुपधेः परिकर्म परिभोगं वा कुर्वन् सम्भोग्यो विसम्भोग्यश्चेति, उक्तं च–

एगं व दो व तिण्णि व आउट्टंतस्स होइ पच्छित्तं आलोचयत इत्यर्थः ।
आउट्टंते वि तओ परेण तिण्हं विसंभोगो ।। [निशीथभा० २०७५] त्ति ।

तथा **सुय** त्ति सम्भोगिकः सम्भोगिकस्य विसम्भोगिकस्य वोपसम्पन्नस्य श्रुतस्य वाचना-प्रच्छनादिकं विधिना कुर्वन् शुद्धः, तस्यैवाविधिनोपसम्पन्नस्यानुपसम्पन्नस्य वा पार्श्वस्थादेर्वा स्त्रिया वा वाचनादि कुर्वंस्तथैव वेलात्रयोपरि विसम्भोग्यः । तथा **भत्त-पाणे** त्ति उपधिद्वारवदवसेयम्, नवरमिह भोजनं दानं च परिकर्म-परिभोगयोः स्थाने वाच्यमिति ।

तथा **अंजलीपग्गहे[४] इ य** त्ति, इह **इति**शब्दा उपदर्शनार्थाः, **च**काराः समुच्चयार्थाः, तत्रोपलक्षणत्वादञ्जलिप्रग्रहस्य वन्दनादिकमपीह द्रष्टव्यम्, तथाहि– सम्भोगिकानामन्यसम्भोगिकानां वा संविग्नानां वन्दनकं प्रणाममञ्**जलिप्रग्रहं** 'नमः क्षमाश्रमणेभ्यः' इति भणनम्, आलोचना-सूत्रार्थनिमि[५]त्तं निषद्याकरणं च कुर्वन् शुद्धः,

---

१. उत्कुटका॰ जे१ ॥ २. ॰भक्तपर्यन्तरात्रौ हे२ ॥ ३. **सामनसमा॰** खंमू॰ । **समभावेन समा॰** खंसं॰ ॥
४. **पग्गहे इ त्ति इह** खं॰ ॥ ५. ॰**त्तनिष॰** जे१,२ ॥

पार्श्वस्थादेरेतानि कुर्वंस्तथैव सम्भोग्यो विसम्भोग्यश्चेति ।

तथा [1]**दायणा य** त्ति दानम्, तत्र, सम्भोगिकः सम्भोगिकाय वस्त्रादिभिः शिष्यगणोपग्रहासमर्थे सम्भोगिकेऽन्यसम्भोगिकाय वा शिष्यगणं यच्छन् शुद्धः, निष्कारणं विसम्भोगिकस्य पार्श्वस्थादेर्वा संयत्या वा तं यच्छंस्तथैव सम्भोग्यो विसम्भोग्यश्चेति।

तथा [2]**निकाये य** त्ति निकाचनं छन्दनं निमन्त्रणमित्यनर्थान्तरम्, तत्र शय्योपध्याहारैः शिष्यगणप्रदानेन स्वाध्यायेन च [3]सम्भोगिकः सम्भोगिकं निमन्त्रयन् शुद्धः, शेषं तथैव।

तथा **अब्भुट्ठाणे त्ति यावरे** त्ति **अभ्युत्थान**मासनत्यागरूप**मित्यपरं** सम्भोगाऽसम्भोगस्थानमित्यर्थः, तत्राभ्युत्थानं पार्श्वस्थादेः कुर्वंस्तथैवासम्भोग्यः, उपलक्षणत्वाच्चाभ्युत्थानस्य किङ्करतां च प्राघूर्णक-ग्लानाद्यवस्थायां 'किं विश्रामणादि करोमि' इत्येवंप्रश्नलक्षणां तथाऽभ्यासकरणं पार्श्वस्थादिधर्मा[4]च्च्युतस्य पुनस्तत्रैव [5]संस्थापनलक्षणम्, तथा अविभक्तिं च अपृथग्भावलक्षणां कुर्वन्नशुद्धोऽसम्भोग्यश्च, एतान्येव यथाऽऽगमं कुर्वन् शुद्धः सम्भोग्यश्चेति ।

तथा **किइकम्मस्स य करणे** त्ति **कृतिकर्म** वन्दनकं तस्य **करणं** विधानम्, तद् विधिना कुर्वन् शुद्धः, इतरथा तथैवासम्भोग्यः, तत्र चायं विधिः - यः साधुर्वातेन स्तब्धदेह उत्थानादि कर्तुमशक्तः स सूत्रमेवास्खलितादिगुणोपेतमुच्चारयति, एवमावर्त्त-शिरोनमनादि यच्छक्नोति तत् करोत्येवं चाशठप्रवृत्तिर्वन्दनकविधिरिति भावः ।

तथा **वेयावच्चकरणे इ य** त्ति **वैयावृत्यम्** आहारोपधिदानादिना प्रश्रवणादि-मात्रकार्प्पणादिनाऽधिकरणोपशमनेन [6]सहायदानेन वोपष्टम्भकरणं तस्मिंश्च विषये सम्भोगासम्भोगौ भवत इति ।

तथा **समोसरणं** ति जिनस्नपन-रथानुयान-पटया[7]त्रादि यत्र बहवः साधवो मिलन्ति तत् समवसरणम्, इह च क्षेत्रमाश्रित्य साधूनां साधारणोऽवग्रहो भवति, वसतिमाश्रित्य साधारणोऽसाधारणो वेति, अनेन चान्येऽप्यवग्रहा उपलक्षिताः, ते चानेके, तद्यथा-वर्षावग्रह ऋतुबद्धावग्रहो वृद्धवासावग्रहश्चेति, एकैकश्चायं साधारणावग्रहः

---

१ **दायण** जे२ ॥ २ **निःकाये य त्ति निःकाचनं** जे१ ॥ ३. **संभोगिकः** जेसं२ हे२ मध्ये एव वर्तते॥ ४. **पार्श्वस्थत्वादिधर्माच्युतस्य** जे२ । **पार्श्वस्थादिधर्माच्युतस्य** हे१,२ ॥ ५. **संस्थानलक्षणम्** खं० जे१,२ हे१ ॥ ६. **सहायदानेन** नास्ति खं० । ७. °**त्रादिषु यत्र** हे२ ॥

प्रत्येकावग्रहश्चेति द्विधा, तत्र यत् क्षेत्रं वर्षाकल्पाद्यर्थं युगपद् द्व्यादिभिः साधुभिर्भिन्नगच्छस्थैरनुज्ञाप्यते स साधारणो यत्तु क्षेत्रमेके साधवोऽनुज्ञाप्याश्रिताः स प्रत्येकावग्रह इति, एवं चैतेष्ववग्रहेषु आकुट्ट्या अनाभाव्यं सचित्तं शिष्यमचित्तं वा वस्त्रादि गृह्णन्तोऽनाभोगेन च गृहीतं तदनर्पयन्तः समनोज्ञा अमनोज्ञाश्च प्रायश्चित्तिनो भवन्त्यसंभोग्याश्च, पार्श्वस्थादीनां चावग्रह एव नास्ति तथापि यदि तत् क्षेत्रं क्षुल्लकमन्यत्रैव च संविग्ना निर्वहन्ति ततस्तत् क्षेत्रं परिहरन्त्येव, अथ पार्श्वस्थादिक्षेत्रं विस्तीर्णं सविग्नाश्चान्यत्र न निर्वहन्ति ततस्तत्रापि प्रविशन्ति सचित्तादि च गृह्णन्ति प्रायश्चित्तिनोऽपि न भवन्तीति, आह च–

समणुन्नमणुन्ने वा अदिंत अणाभव्व गिण्हमाणे वा ।[1]

संभोग वीसुकरणं पृथक्करणमित्यर्थः **इयरे य अलंभि पेल्लिंति**[2] ।। [निशीथभा० २१२४]

इतरान् पार्श्वस्थादीनित्यर्थः ।

तथा **सन्निसिज्जा य**[3] त्ति[4] सन्निषद्या आसनविशेषः, सा च सम्भोगासम्भोगकारणं भवति, तथाहि– संनिषद्यागत आचार्यो निषद्यागतेन सम्भोगिकाचार्येण सह श्रुतपरिवर्त्तनां करोति शुद्धः, अथामनोज्ञ-पार्श्वस्थादि-साध्वी-गृहस्थैः सह तदा प्रायश्चित्ती भवति, तथा अक्षनिषद्यां विनाऽनुयोगं कुर्वतः शृण्वतश्च प्रायश्चित्तम्, तथा निषद्यायामुपविष्टः सूत्रार्थौ पृच्छति अतीचारान् वाऽऽलोचयति यदि तदा तथैवेति ।

तथा **कहाए य पबंधणे** त्ति **कथा** वादादिका पञ्चधा तस्याः **प्रबन्धनं** प्रबन्धेन करणं **कथाप्रबन्धनम्**, तत्र सम्भोगा-ऽसम्भोगौ भवतः, तत्र मतमभ्युपगम्य पञ्चावयवेन त्र्यवयवेन वा वाक्येन यत्तत्समर्थनं स छल-जातिविरहितो भूतार्थान्वेषणपरो वादः, स एव छल-जाति-निग्रहस्थानपरो जल्पः, यत्रैकस्य पक्षपरिग्रहोऽस्ति नापरस्य सा दूषणमात्रप्रवृत्ता वितण्डा, तथा प्रकीर्णकथा चतुर्थी, सा चोत्सर्गकथा द्रव्यास्तिकनयकथा

---

१. "**समणुण्णमणुण्णे** वा, **अदिंतऽणाभव्वगेण्हमाणे** वा । **संभोग वीसु करणं, इतरे य अलंभे पेल्लंति** ।।२१२४।। संभोतितो जो अणाभव्वं गेण्हंति गहियं वा ण देति सो संभोगा तो वीसुं पृथक् क्रियते । असंभोइओ वि अणाहव्वं गेण्हति, गहियं वा ण देति, जेसिं सो संभोइओ ते तं विसंभोगं करेंति । **इयरे** त्ति पासत्थाती तेसिं णत्थि उग्गहो, अणुग्गहे वि पासत्थाइयाण जाति खुड्डगं खेत्तं अण्णओ य संविग्गा संथरंता पेल्लंति तत्थ सचित्ताचित्तणिप्फण्णं । अह पासत्थादियाण वित्थिण्णं खेत्तं, ते य ण देंति, अण्णतो य असंथरता, ताहे संविग्गा पेल्लंति, सचित्ताइयं च गेण्हंता सुद्धा ।।२१२४।।" - इति **निशीथ चूर्णौ** ।। २. **अलंभे रोल्लिंति** जे२ ।। ३-४. **संनि** जे२ ।।

वा, तथा निश्चयकथा पञ्चमी, सा चापवादकथा पर्यायास्तिकनयकथा वेति, तत्राद्यास्तिस्रः कथाः श्रमणीवर्जैः सह करोति, श्रमणीभिस्तु सह कुर्वन् प्रायश्चित्ती, चतुर्थवेलायां चालोचयन्नपि विसम्भोगार्ह इति रूपकद्वयस्य संक्षेपार्थः, विस्तरार्थस्तु **निशीथपञ्चमोद्देशकभाष्या**[1]दवसेय इति ।

तथा **दुवालसा**[2]**यते किइकम्मे** त्ति **द्वादशावर्त्तं कृतिकर्म** वन्दनकं **प्रज्ञप्तम्** । द्वादशावर्त्ततामेवास्यानुवदन् शेषांश्च तद्धर्मानभिधित्सुः रूपकमाह– **दुओणए**त्यादि । अवनतिरवनतम् उत्तमाङ्गप्रधानं प्रणमनमित्यर्थः, द्वे अवनते यस्मिंस्तद् द्व्यवनतम्, तत्रैकं यदा प्रथममेव 'इच्छामि खमासमणो ! वंदिउं जावणिज्जाए निसीहियाए' त्ति अभिधायावग्रहानुज्ञापनायावनमति, द्वितीयं पुनर्यदाऽवग्रहानुज्ञापनायैवावनमतीति । **यथाजातं** श्रमणत्वभवनलक्षणं जन्माश्रित्य योनिनिष्क्रमणलक्षणं च, तत्र रजोहरण-मुखवस्त्रिका-चोलपट्टमात्रया श्रमणो जातो रचितकरपुटस्तु योन्या निर्गतः, एवंभूत एव वन्दते, तदव्यतिरेकाच्च यथाजातं भण्यते **कृतिकर्म** वन्दनकम्, **बारसाव**[3]**यं** ति द्वादशाऽऽवर्त्ताः सूत्राभिधानगर्भाः कायव्यापारविशेषाः यतिजनप्रसिद्धा यस्मिंस्तद् द्वादशावर्त्तम् । तथा **चउसिरं** ति चत्वारि शिरांसि यस्मिंस्तच्चतुःशिरः, प्रथमप्रविष्टस्य क्षामणाकाले शिष्याचार्यशिरोद्वयं पुनरपि निष्क्रम्य प्रविष्टस्य द्वयमेवेति भावना । तथा **तिहि गुत्तं** ति तिसृभिर्गुप्तिभिर्गुप्तम्, पाठान्तरे[4]ऽपि **तिसृभिः शुद्धं** गुप्तिभिरेवेति । तथा

---

१. संभोगविषये **निशीथभाष्ये** पञ्चमे उद्देशके २०६९ तः २१५८ पर्यन्तासु गाथासु विस्तरेण वर्णनमस्ति ॥ २. °**सावते** खं० ॥ ३. °**सायं** जे२ हे१,२ ॥ ४. °**न्तरे तु** जे२ हे१,२ । "**दोणदं तु जधाजादं बारसावत्तमेव य। चदुस्सिरं तिसुद्धं च किदियम्मं पउंजदे ॥६०३॥ दोणदं**०- द्वे अवनती पञ्चनमस्कारादावेकावनतिर्भूमिसंस्पर्शस्तथा चतुर्विंशतिस्तवादौ द्वितीयाऽवनतिः शरीरनमनम्, द्वे अवनती, **जहाजादं**- यथाजातं जातरूपसदृशं क्रोधमानमायासंगादिरहितम् । **बारसावत्तमेव य** द्वादशावर्त्ता एवं च पञ्चनमस्कारोच्चारणादौ मनोवचनकायानां संयमनानि शुभयोगवृत्तयस्त्रय आवर्त्तास्तथा पञ्चनस्कारसमाप्तौ मनोवचनकायानां शुभवृत्तयस्त्रीण्यन्यान्यावर्त्तनानि तथा चतुर्विंशतिस्तवादौ मनोवचनकायाः शुभवृत्तयस्त्रीण्यपराण्यावर्त्तनानि तथा चतुर्विंशतिस्तवसमाप्तौ शुभमनोवचनकायवृत्तयस्त्रीण्यावर्त्तनान्येवं द्वादशधा मनोवचनकायवृत्तयो द्वादशावर्त्ता भवंति, अथवा चतसृषु दिक्षु चत्वारः प्रणामा एकस्मिन् भ्रमणे एवं त्रिषु भ्रमणेषु द्वादश भवन्ति, **चदुस्सिरं** चत्वारि शिरांसि पञ्चनमस्कारस्यादावन्ते च करमुकुलाङ्कितशिरःकरणं तथा चतुर्विंशतिस्तवस्यादावन्ते च करमुकुलाङ्कितशिरःकरणमेवं चत्वारि शिरांसि भवन्ति, त्रिशुद्धं मनोवचनकायशुद्धं क्रियाकर्म प्रयुङ्क्ते करोति । द्वे अवनती यस्मिंस्तत् द्व्यवनति क्रियाकर्म, द्वादशावर्त्ताः यस्मिंस्तत् द्वादशावर्त्तम्, मनोवचनकायशुद्ध्या चत्वारि शिरांसि यस्मिन् तत् चतुःशिरः क्रियाकर्मैवं विशिष्टं यथाजातं क्रियाकर्म प्रयुञ्जीतेति ॥६०३॥" - इति **मूलाचारस्य वसुनन्दिटीकायाम्** ॥

दुपवेसं ति द्वौ प्रवेशौ यस्मिंस्तद् द्विप्रवेशम्, तत्र प्रथमोऽवग्रहमनुज्ञाप्य प्रविशतो द्वितीयः पुनर्निर्गत्य प्रविशत इति । **एगनिक्खमणं** ति एकनिष्क्रमणमवग्रहादावश्यिक्या निर्गच्छतः, द्वितीयवेलायां ह्यवग्रहान्न निर्गच्छति, पादपतित एव सूत्रं समापयतीति ।

तथा **विजया राजधानी** असङ्ख्याततमे **जम्बूद्वीपे** आद्यजम्बूद्वीपविजयाभिधानपूर्वद्वाराधिपस्य **विजयाभिधानस्य** पल्योपमस्थितिकस्य देवस्य सम्बन्धिनीति । तथा रामो नवमो बलदेवः **देवत्तिं गए**[1] त्ति देवत्वं पञ्चमदेवलोकदेवत्वं गतः । तथा सर्वजघन्या रात्रिरुत्तरायणपर्यन्ताहोरात्रस्य रात्रिः, सा च द्वादशमौहूर्त्तिका चतुर्विंशतिघटिकाप्रमाणा[2], एवं **दिवसो वि** त्ति सर्वजघन्यो द्वादशमौहूर्त्तिक एवेत्यर्थः, स च दक्षिणायनपर्यन्तदिवस इति ।

महेन्द्र-महेन्द्रध्वज-कम्बु-कम्बुग्रीवादीनि त्रयोदश विमानानीति ॥१२॥

[सू० १३] [१] तेरस किरियट्ठाणा पण्णत्ता, तंजहा– अट्ठादंडे, अणट्ठादंडे, हिंसादंडे, अकम्हादंडे, दिट्ठिविपरियासियादंडे, मुसावायवत्तिए, अदिन्नादाणवत्तिए, अज्झत्थिए, माणवत्तिए, मित्तदोसवत्तिए, मायावत्तिए, लोभवत्तिए, इरिआवहिए णामं तेरसमे १।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु तेरस विमाणपत्थडा पण्णत्ता २।

सोहम्मवडेंसगे णं विमाणे णं अद्धतेरस जोयणसतसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ३। एवं ईसाणवडेंसगे वि ४।

जलयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं अद्धतेरस जातिकुलकोडीजोणिपमुहसतसहस्सा पण्णत्ता ५।

पाणाउस्स णं पुव्वस्स तेरस वत्थू पण्णत्ता ६।

गब्भवक्कंतिअपंचेंदिअतिरिक्खजोणिआणं तेरसविहे पओगे पण्णत्ते, तंजहा– सच्चमणपओगे मोसमणपओगे सच्चामोसमणपओगे असच्चामोसमणपओगे सच्चवतिपओगे मोसवतिपओगे सच्चामोसवतिपओगे असच्चामोसवतिपओगे

---

१. देवत्तिगय त्ति जे१,२ ॥ २. इतः परं **लोकप्रसिद्ध्या सातिरेक** इति खंमू० मध्येऽधिकः पाठः । जे२ मध्ये तु '**लोकप्रसिद्धा सातिरेका साऽन्या**' इति पत्रस्य अन्तराले [=Margin मध्ये] पूरितः पाठः ॥

ओरालियसरीरकायपओगे ओरालियमीससरीरकायपओगे वेउव्वियसरीर-कायपओगे वेउव्वियमीससरीरकायपओगे कम्मसरीरकायपओगे ७।

सूरमंडले जोयणेणं तेरसहिं एक्कसट्ठिभागेहिं जोयणस्स ऊणे पण्णत्ते ८।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं तेरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

पंचमाए णं पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं तेरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं तेरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं तेरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

लंतए कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं तेरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा वज्जं सुवज्जं वज्जावत्तं वज्जप्पभं वज्जकंतं वज्जवण्णं वज्जलेसं वज्जज्झयं वज्जसिंगं वज्जसिट्ठं वज्जकूडं वज्जुत्तरवडेंसगं वइरं वइरावत्तं जाव वइरुत्तरवडेंसगं लोगं लोगावत्तं लोगप्पभं जाव लोगुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तेरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा तेरसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं तेरसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

अत्थेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे तेरसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथ त्रयोदशस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, इह स्थितिसूत्रेभ्योऽर्वागष्ट सूत्राणि, तत्र करणं **क्रिया** कर्मबन्धनिबन्धनचेष्टा, तस्याः **स्थानानि** भेदाः पर्यायाः **क्रियास्थानानि**। तत्राऽ**र्थाय** शरीर-स्वजन-धर्मादिप्रयोजनाय **दण्डः** त्रस-स्थावरहिंसा **अर्थदण्डः** क्रियास्थानमिति प्रक्रमः १, तद्विलक्षणोऽ**नर्थदण्डः** २। तथा **हिंसा**माश्रित्य

'हिंसितवान् हिनस्ति हिंसिष्यति वा अयं वैरिकादिर्माम्' इत्येवं प्रणिधानेन **दण्डो** विनाशनं **हिंसादण्डः** ३ । तथाऽ**कस्माद्** अनभिसंधिनाऽन्यवधार्थप्रवृत्त्या **दण्डः** अन्यस्य विनाशोऽ**कस्माद्दण्डः** ४ । तथा **दृष्टेः** बुद्धेर्विपर्यासिका विपर्यासिता वा दृष्टिविपर्यासिका दृष्टिविपर्यासिता वा मतिभ्रम इत्यर्थः, तया **दण्डः** प्राणिवधो **दृष्टिविपर्यासिकादण्डो दृष्टिविपर्यासितादण्डो** वा, मित्रादेरमित्रादिबुद्ध्या हननमिति भावः ५ । तथा **मृषावादः** आत्मपरोभयार्थमलीकवचनम्, तदेव **प्रत्ययः** कारणं यस्य दण्डस्य स **मृषावादप्रत्ययः** ६ । एवम**दत्तादानप्रत्ययो**ऽपि ७। तथा अध्यात्मनि मनसि भव **आध्यात्मिको** बाह्यनिमित्तानपेक्षः शोकाभिभव इति[1] भावः ८ । तथा **मानप्रत्ययो** जात्यादिमदहेतुकः ९ । तथा **मित्रद्वेषप्रत्ययः** माता-पित्रादीनामल्पेऽप्यपराधे महादण्डनिर्वर्त्तनमिति भावः १० । **मायाप्रत्ययो** मायानिबन्धनः ११ । एवं **लोभप्रत्ययो**ऽपि १२ । **ऐर्यापथिकः** केवलयोगप्रत्ययः कर्मबन्धः उपशान्तमोहादीनां सातवेदनीयबन्धः १३ ।

तथा **विमाणपत्थड** त्ति विमानप्रस्तटा औत्तराधर्यव्यवस्थिताः । तथा **सोहम्मवडेंसए** त्ति **सौधर्मस्य** देवलोकस्यार्द्धचन्द्राकारस्य पूर्वापरायतस्य दक्षिणोत्तरविस्तीर्णस्य मध्यभागे त्रयोदशप्रस्तटे शक्रावासभूतं विमानं **सौधर्मावतंसकं** सौधर्मदेवलोकस्यावतंसकः शेखरकः स इव प्रधानत्वात् इत्येवं यथार्थनामकमिति, **णं**कारौ वाक्यालङ्कारे, अर्द्धं त्रयोदशं येषु तान्यर्द्ध**त्रयोदशानि** तानि च तानि **योजनशतसहस्राणि** चेति विग्रहः, सार्द्धानि द्वादशेत्यर्थः । तथाऽर्द्ध**त्रयोदशानि जातौ** जलचरपञ्चेन्द्रियतिर्यग्जातौ **कुलकोटीनां योनिप्रमुखानि** उत्पत्तिस्थानप्रभवानि यानि **शतसहस्राणि** तानि तथोच्यन्त इति । तथा **पाणाउस्स** त्ति, यत्र प्राणिनामायुर्विधानं सभेदमभिधीयते तत् **प्राणायु**र्द्वादशं पूर्वम्, तस्य **त्रयोदश वस्तूनि** अध्ययनवद्विभागविशेषाः ।

तथा **गर्भे** गर्भाशये **व्युत्क्रान्तिः** उत्पत्तिर्येषां ते **गर्भव्युत्क्रान्तिकाः**, ते च ते **पञ्चेन्द्रियतिर्यग्योनिका**श्चेति विग्रहः । प्रयोजनं मनोवाक्कायानां व्यापारणं **प्रयोगः**, स **त्रयोदशविधः**, पञ्चदशानां प्रयोगाणां मध्ये आहारका-ऽऽहारकमिश्रलक्षणकाय-प्रयोगद्वयस्य तिरश्चामभावात्, तौ हि संयमिनामेव स्तः, संयमश्च संयतमनुष्याणामेव

१. भावः नास्ति जे२ ॥

न तिरश्चामिति, तत्र सत्यासत्योभयानुभयस्वभावाश्चत्वारो मनःप्रयोगाः वाक्प्रयोगाश्चेति अष्टौ, पञ्च पुनरौदारिकादयः कायप्रयोगाः, एवं त्रयोदशेति । तथा **सूरमण्डलस्य** आदित्यविमानवृत्तस्य योजनं **सूरमण्डलयोजनं** तत् **ण**मित्यलङ्कारे **त्रयोदशभिरेकषष्टिभागै**र्येषां भागानामेकषष्ट्या योजनं भवति तैर्भागैर्योजनस्य सम्बन्धिभि**रूनं** न्यूनं **प्रज्ञप्तम्**, अष्टचत्वारिंशद् योजनभागा इत्यर्थः ।

वज्राभिलापेन द्वादश **वइरा**भिलापेन **लोका**भिलापेन चैकादश विमानानीति ॥१३॥

[सू० १४] [१] **चोद्दस भूयग्गामा पण्णत्ता, तंजहा– सुहुमा अपज्जत्तया, सुहुमा पज्जत्तया, बादरा अपज्जत्तया, बादरा पज्जत्तया, बेइंदिया अपज्जत्तया, बेइंदिया पज्जत्तया, तेइंदिया अपज्जत्तया, तेइंदिया पज्जत्तया, चउरिंदिया अपज्जत्तया, चउरिंदिया पज्जत्तया, पंचिंदिया असन्निअपज्जत्तया, पंचिंदिया असन्निपज्जत्तया, पंचिंदिया सन्निअपज्जत्तया, पंचिंदिया सन्निपज्जत्तया** १।

चोद्दस पुव्वा पण्णत्ता, तंजहा–

उप्पायपुव्वमग्गेणियं च ततियं च वीरियं पुव्वं ।
अत्थीणत्थिपवायं तत्तो नाणप्पवायं च ॥८॥
सच्चप्पवायपुव्वं तत्तो आयप्पवायपुव्वं च ।
कम्मप्पवायपुव्वं पच्चक्खाणं भवे नवमं ॥९॥
विज्जाअणुप्पवायं अवंझ पाणाउ बारसं पुव्वं ।
तत्तो किरियविसालं पुव्वं तह बिंदुसारं च ॥१०॥ २।

अग्गेणीयस्स णं पुव्वस्स चोद्दस वत्थू पण्णत्ता ३।

समणस्स णं भगवतो महावीरस्स चोद्दस समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपदा होत्था ४।

कम्मविसोहिमग्गणं पडुच्च चोद्दस जीवट्ठाणा पण्णत्ता, तंजहा– मिच्छदिट्ठी, सासायणसम्मदिट्ठी, सम्मामिच्छदिट्ठी, अविरतसम्मदिट्ठी, विरताविरतसम्मदिट्ठी, पमत्तसंजते, अप्पमत्तसंजते, नियट्टि-अनियट्टिबायरे, सुहुमसंपराए उवसामए

वा खमए वा, उवसंतमोहे, खीणमोहे, सजोगी केवली, अजोगी केवली ५।

भरहेरवयाओ णं जीवाओ चोद्दस चोद्दस जोयणसहस्साइं चत्तारि य एक्कुत्तरे जोयणसते छच्च एकूणवीसइभागे जोयणस्स आयामेणं पण्णत्ते ६।

एगमेगस्स णं रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स चोद्दस रयणा पण्णत्ता, तंजहा– इत्थीरयणे, सेणावतिरयणे, गाहावतिरयणे, पुरोहितरयणे, वड्ढइरयणे, आसरयणे, हत्थिरयणे, असिरयणे, दंडरयणे, चक्करयणे, छत्तरयणे, चम्मरयणे, मणिरयणे, कागणिरयणे ७।

जंबुद्दीवे णं दीवे चोद्दस महानदीओ पुव्वावरेणं लवणं समुद्दं समप्पेंति, तंजहा– गंगा, सिंधू, रोहिया, रोहियंसा, हरी, हरिकंता, सीता, सीतोदा, णरकंता, णारिकंता, सुवण्णकूला, रुप्पकूला, रत्ता, रत्तवती ८।

[२] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं चोद्दस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

पंचमाए णं पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं चोद्दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं चोद्दस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं चोद्दस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

लंतए कप्पे देवाणं उक्कोसेणं चोद्दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

महासुक्के कप्पे देवाणं जहण्णेणं चोद्दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

जे देवा सिरिकंतं सिरिमहिअं सिरिसोमणसं लंतयं काविट्ठं महिंदं महिंदोकंतं महिंदुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं चोद्दस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

[३] ते णं देवा चोद्दसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं चोद्दसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे चोद्दसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथ चतुर्दशस्थानकं सुबोधं च, नवरमिहाष्टौ सूत्राण्यर्वाक् स्थितिसूत्रादिति, तत्र चतुर्दश **भूतग्रामाः, भूतानि** जीवाः, तेषां **ग्रामाः** समूहाः **भूतग्रामाः**, तत्र **सूक्ष्माः** सूक्ष्मनामकर्मोदयवर्त्तित्वात् पृथिव्यादय एकेन्द्रियाः, किंभूताः ? **अपर्याप्तकाः** तत्कर्मोदयादपरिपूर्णस्वकीयपर्याप्तय इत्येको ग्रामः, एवमेते एव **पर्याप्तकाः** तथैव परिपूर्णस्वकीयपर्याप्तय इति द्वितीयः, एवं **बादरा** बादरनामोदयात् पृथिव्यादय एव, तेऽपि पर्याप्तेतरभेदाद् द्विधा, एवं द्वीन्द्रियादयोऽपि, नवरं पञ्चेन्द्रियाः **सञ्ज्ञिनो** मनः-पर्याप्त्युपेताः, इतरे त्वसञ्ज्ञिन इति ।

तथा **उप्पायपुव्वे**त्यादि गाथात्रयम्, तत्र **उप्पायपुव्वमग्गेणियं च** त्ति यत्रोत्पादमाश्रित्य द्रव्य-पर्यायाणां प्ररूपणा कृता तदु**त्पादपूर्वम्**, यत्र तु तेषामेवाऽग्रं परिमाणमाश्रित्य तद**ग्रेणीयम्, तइयं च वीरियं पुव्वं** ति यत्र जीवादीनां वीर्यं प्रोद्यते प्ररूप्यते तद्वीर्यप्रवादम्, **अत्थीनत्थिपवायं** ति यद्यथा लोके अस्ति नास्ति च तद्यत्र प्रोद्यते तद**स्तिनास्तिप्रवादम्, तत्तो नाणप्पवायं च** त्ति यत्र ज्ञानं मत्यादिकं स्वरूप-भेदादिभिः प्रोद्यते तज्ज्ञानप्रवादमिति, **सच्चप्पवायपुव्वं** ति यत्र **सत्यः** संयमः सत्यवचनं वा सभेदं सप्रतिपक्षं प्रोद्यते तत् **सत्यप्रवादपूर्वम्, तत्तो आयप्पवायपुव्वं च** त्ति यत्रात्मा जीवोऽनेकनयैः प्रोद्यते त**दात्मप्रवाद**मिति, **कम्मप्पवायपुव्वं** ति यत्र ज्ञानावरणादि कर्म प्रोद्यते तत् **कर्मप्रवाद**मिति, **पच्चक्खाणं भवे नवमं** ति यत्र प्रत्याख्यानस्वरूपं वर्ण्यते तत् **प्रत्याख्यान**मिति । **विज्जाअणुप्पवायं** ति यत्रानेकविधा विद्यातिशया वर्ण्यन्ते **तद्विद्यानुप्रवादम्, अवंझपाणाउ बारसं पुव्वं** ति यत्र सम्यग्ज्ञानादयोऽ**वन्ध्याः** सफला वर्ण्यन्ते तदवन्ध्यमेकादशम्, यत्र प्राणा जीवा आयुश्चानेकधा [१]वर्ण्यन्ते तत् **प्राणायु**रिति द्वादशं पूर्वम्, **तत्तो किरियविसालं** ति यत्र **क्रियाः** कायिक्यादिकाः **विशाला** विस्तीर्णाः सभेदत्वादभिधीयन्ते तत् **क्रियाविशालम्, पुव्वं तह बिंदुसारं च** त्ति लोकशब्दोऽत्र लुप्तो द्रष्टव्यः, ततश्च लोकस्य बिन्दुरिवाक्षरस्य

१. वर्ण्यंते खं० जे२ हे२ ॥

सारं सर्वोत्तमं यत्तल्लोकबिन्दुसारमिति । तथा **चोद्दस वत्थूणि** त्ति द्वितीयपूर्वस्य **वस्तूनि** विभागविशेषाः, तानि च चतुर्दश मूलवस्तूनि, चूलावस्तूनि तु द्वादशेति, तथा **साहस्सिओ** त्ति सहस्राण्येव साहस्र्यः ।

तथा **कम्मविसोहीत्यादि, कर्मविशोधिमार्गणां प्रतीत्य** ज्ञानावरणादिकर्मविशुद्धिगवेषणामाश्रित्य **चतुर्दश जीवस्थानानि** जीवभेदाः **प्रज्ञप्ताः**, तद्यथा– **मिथ्या** विपरीता दृष्टिर्यस्यासौ **मिथ्यादृष्टिः** उदितमिथ्यात्वमोहनीयविशेषः, तथा **सासायणसम्मदिट्ठि** त्ति **सह** ईषत्तत्त्वश्रद्धानरसाऽऽ**स्वादेन** वर्त्तते इति **सास्वादनः**, घण्टालालान्यायेन प्रायः परित्यक्तसम्यक्त्वः तदुत्तरकालं षडावलिकः, तथा चोक्तम्–

उवसमसंमत्ताओ चयओ मिच्छं अपावमाणस्स ।
सासायणसंमत्तं तदंतरालम्मि छावलियं ॥ [विशेषाव० भा० ५३१] ति, **सास्वादन**श्चासौ **सम्यग्दृष्टि**श्चेति विग्रहः, **सम्मामिच्छदिट्ठि** त्ति सम्यक् च मिथ्या च दृष्टिरस्येति **सम्यग्मिथ्यादृष्टिः** उदितदर्शनमोहनीयविशेषः, तथाऽ**विरतसम्यग्दृष्टि**र्देशविरतिरहितः, **विरताविरतो** देशविरतः श्रावक इत्यर्थः, **प्रमत्तसंयतः** किञ्चित्प्रमादवान् सर्वत्र विरतः, **अप्रमत्तसंयतः** सर्वप्रमादरहितः स एव, **नियट्टि** त्ति इह क्षपकश्रेणिमुपशमश्रेणिं वा प्रतिपन्नो जीवः क्षीणदर्शनसप्तक उपशान्तदर्शनसप्तको वा निवृत्तिबादर उच्यते, तत्र **निवृत्तिः** तद् गुणस्थानकं समकालं प्रतिपन्नानां जीवानामध्यवसायभेदः, तत्प्रधानो **बादरो** बादरसम्परायो **निवृत्तिबादरः, अणियट्टिबायरे** त्ति अनिवृत्तिबादरः, स च कषायाष्टकक्षपणारम्भान्नपुंसकवेदोपशमनारम्भाच्चारभ्य बादरलोभखण्डक्षपणोपशमने यावद् भवतीति, **सुहुमसंपराए** त्ति **सूक्ष्मः** सञ्ज्वलनलोभासङ्ख्येयखण्डरूपः **सम्परायः** कषायो यस्य स **सूक्ष्मसंपरायः**, लोभाणुवेदक इत्यर्थः, अयं च द्विविध इत्याह– **उपशमको वा** उपशमश्रेणीप्रतिपन्नः **क्षपको वा** क्षपकश्रेणीप्रतिपन्न इति दशमं जीवस्थानमिति, तथा **उपशान्तः** सर्वथानुदयावस्थो **मोहो** मोहनीयं कर्म यस्य स

---

१. **का**ः जे२ ॥ २. "इहान्तरकरणे औपशमिकसम्यक्त्वाद्धायां जघन्यतः समयशेषायाम्, उत्कृष्टतस्तु षडावलिकावशेषायां वर्तमानस्य कस्यचिदनन्तानुबन्धिकषायोदयेनौपशमिकसम्यक्त्वाच्च्यवमानस्य मिथ्यात्वमद्याप्यप्राप्नुवतोऽत्रान्तरे जघन्यतः समयम्, उत्कृष्टतस्तु षडावलिकाः सास्वादनसम्यक्त्वं पूर्वोक्तशब्दार्थं भवतीति ॥५३१॥" - इति **विशेषावश्यकभाष्यस्य** मलधारि**हेमचन्द्रसूरि**विरचितायां टीकायाम् ॥ ३. **सर्ववरितः** हे२ ॥ ४. **नियट्टि त्ति** नास्ति खं० ॥

उपशान्तमोहः, उपशमवीतराग इत्यर्थः, अयं चोपशमश्रेणिसमाप्तावन्तर्मुहूर्तं भवति, ततः प्रच्यवत एवेति, तथा **क्षीणो** निःसत्ताकीभूतो **मोहो** यस्य स तथा, क्षयवीतराग इत्यर्थः, अयमप्यन्तर्मुहूर्त्तमेवेति, तथा **सयोगी केवली** मनःप्रभृतिव्यापारवान् केवलज्ञानीति, तथाऽ**योगी केवली** निरुद्धमनःप्रभृतियोगः शैलेशीगतो ह्रस्वपञ्चाक्षरोद्गिरणमात्रं कालं यावदिति चतुर्दशं जीवस्थानमिति ।

भरहेत्यादि, **भारतैरवत्यौ जीवे**, इह **भरतमैरवतं** चारोपितगुणकोदण्डाकारमतस्तयोर्जीवे भवतः, तत्र **भरतस्य हिमवतो**ऽर्वागनन्तरा प्रदेशश्रेणी जीवा **ऐरवतस्य** च **शिखरिणः** परतोऽनन्तरप्रदेशश्रेणीति ।

चातुरंतचक्कवट्टिस्स त्ति चत्वारोऽन्ता विभागा यस्यां सा चतुरन्ता भूमिः, तत्र भवः स्वामितयेति **चातुरन्तः**, स चासौ **चक्रवर्ती** चेति विग्रहः। **रत्नानि** स्वजातीयमध्ये समुत्कर्षवन्ति वस्तूनीति, यदाह– **रत्नं निगद्यते तज्जातौ जातौ यदुत्कृष्टम्** [ ] इति ।

गाहावइ त्ति गृहपतिः कोष्ठागारिकः, **पुरोहिय** त्ति पुरोहितः शान्तिकर्मादिकारी, **वड्ढइ** त्ति वर्द्धकिः रथादिनिर्मापयिता, **मणिः** पृथिवीपरिणामः, **काकणी** सुवर्णमयी अधिकरणीसंस्थानेति, इह सप्ताद्यानि पञ्चेन्द्रियाणि शेषाण्येकेन्द्रियाणीति । **श्रीकान्त**मित्यादीन्यष्टौ विमानानीति ॥१४॥

[सू० १५] [१] पण्णरस परमाहम्मिया पण्णत्ता, तंजहा–

अंबे अंबरिसी चेव, सामे सबले त्ति यावरे ।
रुद्दोवरुद्द काले य, महाकाले त्ति यावरे ॥११॥
असिपत्ते धणु कुम्भे वालुए वेयरणी ति य ।
खरस्सरे महाघोसे एते पण्णरसाहिया ॥१२॥ १।

णमी णं अरहा पण्णरस धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था २।

धुवराहू णं बहुलपक्खस्स पाडिवयं पन्नरसतिभागं पन्नरसतिभागेणं चंदस्स लेसं आवरेत्ता णं चिट्ठति, तंजहा– पढमाए पढमं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं

---

१. °क्षवीत° खंमू०, क्षपकवी° खंसं० ॥

भागं । तं चेव सुक्कपक्खस्स उवदंसेमाणे उवदंसेमाणे चिट्ठति, तंजहा– पढमाए पढमं भागं जाव पन्नरसेसु पन्नरसमं भागं ३।

[२] छण्णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता पण्णत्ता, तंजहा–

सतभिसय भरणि अद्दा, असिलेसा साइ तह य जेट्ठा य ।
एते छण्णक्खत्ता, पण्णरसमुहुत्तसंजुत्ता ॥१३॥ ४।

चेत्तासोएसु मासेसु पन्नरसमुहुत्तो दिवसो भवति, सइ पण्णरसमुहुत्ता राती भवति ५।

अणुप्पवायस्स णं पुव्वस्स पन्नरस वत्थू पण्णत्ता ६।

मणूसाणं पण्णरसविहे पओगे पण्णत्ते, तंजहा– सच्चमणपओगे, एवं मोसमणपओगे, सच्चामोसमणपओगे, असच्चामोसमणपओगे, एवं सच्चवतीपओगे, मोसवतीपओगे, सच्चामोसवतीपओगे, असच्चामोसवतीपओगे, ओरालियसरीरकायपओगे, ओरालियमीससरीरकायपओगे, वेउव्वियसरीरकायपओगे, वेउव्वियमीससरीरकायपओगे, आहारयसरीरकायपओगे, आहारयमीससरीरकायपओगे कम्मयसरीरकायपओगे ७।

[३] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए [अत्थेगतियाणं नेरइआणं] पण्णरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

पंचमाए णं पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं पण्णरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं पण्णरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं पण्णरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

महासुक्के कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं पण्णरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा णंदं सुणंदं णंदावत्तं णंदप्पभं णंदकंतं णंदवण्णं णंदलेसं जाव णंदुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताए उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं पण्णरस

सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[४] **ते णं देवा पण्णरसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं पण्णरसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।**

अत्थेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे पन्नरसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करिस्संति ३।

[**टी०**] अथ पञ्चदशस्थानके सुगमेऽपि किञ्चिल्लिख्यते, इह स्थितेरर्वाक् सप्त सूत्राणि, तत्र परमाश्च तेऽधार्मिकाश्च संक्लिष्टपरिणामत्वात् **परमाधार्मिकाः** असुरविशेषाः, ये तिसृषु पृथिवीषु नारकान् कदर्थयन्तीति, तत्र **अंबे**त्यादि श्लोकद्वयम्, एते च व्यापारभेदेन पञ्चदश भवन्ति, तत्र **अंबे** त्ति यः परमाधार्मिकदेवो नारकान् हन्ति पातयति बध्नाति नीत्वा चाम्बरतले विमुञ्चति सोऽ**म्ब** इत्यभिधीयते १, **अंबरिसी चेव** त्ति यस्तु नारकान् निहत्य कल्पनिकाभिः खण्डशः कल्पयित्वा भ्राष्ट्रपाकयोग्यान् करोति सोऽ**म्बरिषी**ति २, **सामे** त्ति यस्तु रज्जु-हस्तप्रहारादिना शातन-पातनादि करोति वर्णतश्च श्यामः स **श्याम** इति ३, **सबले त्ति यावरे** त्ति **शबल इति चापरः** परमाधार्मिक इति प्रक्रमः, स चान्त्र-वसा-हृदय-कालेज्जकादीन्युत्पाटयति वर्णतश्च **शबलः** कर्बुर इत्यर्थः ४, **रुद्दोवरुद्दे** त्ति यः शक्ति-कुन्तादिषु नारकान् प्रोतयति स रौद्रत्वा**द्रौद्र** इति ५, यस्तु तेषामङ्गोपाङ्गानि भनक्ति सोऽत्यन्तरौद्रत्वा**दुपरौद्र** इति ६, **काले** त्ति यः कण्ड्वादिषु पचति वर्णतः कालश्च स **कालः** ७, **महाकाले त्ति यावरे** त्ति **महाकाल इति चापरः** परमाधार्मिक इति प्रक्रमः, स च श्लक्ष्णमांसानि खण्डयित्वा खादयति वर्णतश्च **महाकाल** इति ८, **असिपत्ते** त्ति **असिः** खड्गस्तदाकारपत्रवद्वनं विकुर्व्य यस्तत्समाश्रित्य नारकानसिपत्रपातनेन तिलशश्छिनत्ति सो**ऽसिपत्रः** ९, **धणु** त्ति यो धनुर्विमुक्तार्द्धचन्द्रादिबाणैः कर्णादीनां छेदन-भेदनादि करोति स **धनु**रिति १०, **कुंभे** त्ति यः कुम्भादिषु तान् पचति स **कुम्भः** ११, **वालु** त्ति यः कदम्बपुष्पाकारासु

१. **निहतान् क°** जे१ हे२ । **निहितान् क°** हे१ । **निहतान्व क°** जे२ ॥ २. **कर्त्तयित्वा** जे२ ॥ ३. °**म्बत्रऋषी**° खं० जे१ । °**म्बरीषी**° जे२ हे१ ॥ ४. °**कालेयका**° खंसं० ॥ ५. °**श्रितान्नारका**° खं० जे१ विना ॥

वज्राकारासु वा वैक्रियवालुकासु तप्तासु चन(ण?)कानिव तान् पचति स **वालुक** इति १२, **वेयरणी ति य** त्ति **वैतरणीति च** परमाधार्मिकः, स च पूय-रुधिर-त्रपु-ताम्रादिभिरतितापात् कलकलायमानैर्भृतां विरूपं तरणं प्रयोजनमस्या इति वैतरणीति यथार्थां नदीं विकुर्व्य तत्तारणेन कदर्थयति नारकानिति १३, **खरस्सरे** त्ति यो वज्रकण्टकाकुलं शाल्मलीवृक्षं नारकमारोप्य खरं स्वरं कुर्वन्तं कुर्वन् वा कर्षति स **खरस्वर** इति १४, **महाघोसे** त्ति यो भीतान् पलायमानान् नारकान् पशूनिव वाटकेषु महाघोषं कुर्वन्निरुणद्धि स **महाघोष** इति १५, **एमेए पन्नरसाहिय** त्ति **एव**-मित्यम्बादिक्रमेणै**ते** परमाधार्मिकाः **पञ्चदशाख्याताः** कथिता जिनैरिति ।

धुवराहू णमित्यादि, द्विविधो राहुः भवति ध्रुवराहुः पर्वराहुश्च, तत्र यः पर्वणि पौर्णमास्याममावास्यायां वा चन्द्रा-ऽऽदित्ययोरुपरागं करोति स पर्वराहुः, यस्तु चन्द्रस्य सदैव सन्निहितः सञ्चरति स ध्रुवराहुः, आह च–

किण्हं राहुविमाणं निच्चं चंदेण होइ अविरहिअं ।
चउरंगुलमप्पत्तं हेट्ठा चंदस्स तं चरइ ।। [बृहत्सं० ११६] त्ति ।

ततोऽसौ **ध्रुवराहुः णमि**त्यलङ्कारे **बहुलपक्षस्य** प्रतीतस्य **पाडिवयं** ति प्रतिपदं प्रथमतिथिमादौ कृत्वेति वाक्यशेषः **पञ्चदशभागं पञ्चदशभागेने**ति वीप्सायां द्विर्वचनादि यथा पदं पदेन गच्छतीत्यादिषु, प्रतिदिनं पञ्चदशभागं पञ्चदशभागमिति भावः, **चन्द्रस्य** प्रतीतस्य **लेश्यामि**ति लेश्या दीप्तिस्तत्कारणत्वात् मण्डलं लेश्या तामा**वृत्य** आच्छाद्य **तिष्ठति**, एतदेव दर्शयन्नाह– **तद्यथे**त्यादि, **पढमाए** त्ति प्रथमायां तिथ्यां **प्रथमं भागं** पञ्चदशांशलक्षणं 'चन्द्रलेश्याया आवृत्य तिष्ठती'ति प्रक्रमः, अनेन क्रमेण **यावत्**

---

१. **वाटेषु** जे२ ।। २. **एए** जेसं२ ।। ३. ''इह द्विविधो राहुस्तद्यथा- पर्वराहुर्नित्यराहुश्च । तत्र पर्वराहुः स उच्यते यः कदाचिदकस्मात् समागत्य निजविमानेन चन्द्रविमानं सूर्यविमानं वाऽन्तरितं करोति । अन्तरिते च कृते लोके ग्रहणमिति प्रसिद्धिः । स च पर्वराहुर्जघन्यत उत्कर्षतो वा यावता कालेन चन्द्रसूर्याणामुपरागं करोति तदेतत् **क्षेत्रसमास**[३९५ तमगाथा]**टीका**यामभिहितमिति नेह भूयोऽभिधीयते । यस्तु नित्यराहुस्तस्य विमानं कृष्णम्, तच्च तथाजगत्स्वाभाव्याच्चन्द्रेण सह नित्यं सर्वकालमविरहितं तथा चतुरङ्गुलेन चतुर्भिरङ्गुलैरप्राप्तं सच्चन्द्रस्य चन्द्रविमानस्याधस्ताच्चरति, तच्च कृष्णपक्षे प्रतिपद आरभ्य प्रतिदिवसमेकैकां कलामात्मीयेन पञ्चदशेन भागेनोपरितनभागादारभ्यावृणोति । शुक्लपक्षे तु प्रतिपद आरभ्य तेनैव क्रमेण प्रतिदिवसमेकैकां कलां प्रकटीकरोति, तेन जगति चन्द्रमण्डलस्य वृद्धिहानी प्रतिभासेते, यावता पुनः स्वरूपेणावस्थितमेव चन्द्रमण्डलमिति ।।११६।।'' - इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरि**सूरिविरचितायां टीकायाम् ।।

पन्नरसेसु त्ति पञ्चदशसु दिनेषु **पञ्चदशं[1] भागमावृत्य** तिष्ठति. **तं चेव** त्ति तमेव पञ्चदशभागं **शुक्लपक्षस्य** प्रतिपदादिषु चन्द्रलेश्याया **उपदर्शयन् उपदर्शयन्** पञ्चदशभागतः स्वयमपसरणतः प्रकटयन् प्रकटयन् **तिष्ठति** ध्रुवराहुरिति. इह चायं भावार्थः– षोडशभागीकृतस्य चन्द्रस्य षोडशो भागोऽवस्थित एवास्ते, ये चान्ये भागास्तान् राहुः प्रतितिथि एकैकं भागं कृष्णपक्षे आवृणोति शुक्ले तु विमुञ्चतीति. उक्तं च- **ज्योतिष्करण्डके**–

सोलस[2] भागे काऊण उडुवई हायएत्थ पन्नरसं ।
तत्तियमेत्ते भागे पुणो विपरिवड्ढई जोण्हं[3] ॥ [ज्योतिष्क० १११] ति.

ननु चन्द्रविमानस्य पञ्चैकषष्टिभागन्यूनयोजनप्रमाणत्वात् राहुविमानस्य च ग्रहविमानत्वेनार्द्धयोजनप्रमाणत्वात् कथं पञ्चदशे[4] दिने चन्द्रविमानस्य महत्त्वेनेतरस्य च लघुत्वेन सर्वावरणं स्यात् ? इति. अत्रोच्यते, यदिदं ग्रहविमानानामर्द्धयोजनमिति प्रमाणं तत् प्रायिकमिति राहोर्ग्रहस्य योजनप्रमाणमपि विमानं सम्भाव्यते. लघीयसोऽपि वा राहुविमानस्य महता तमिस्ररश्मिजालेन तस्यावरणान्न दोष इति ।

तथा **षड् नक्षत्राणि** पञ्चदश मुहूर्त्तान् यावच्चन्द्रेण सह संयोगो येषां तानि **पञ्चदशमुहूर्त्तसंयोगानि**, तद्यथा–

सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जेट्ठा य ।
एए छन्नक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजुत्ता ॥ [जम्बू० ७।१६०], **संयुक्तं** संयोग इति ।

---

१. **पंचदशं पंचदशभागमावृत्य** खं० विना ॥ २. ``सोलसभागे काऊण उडुवइं हायतेऽत्थ पन्नरस । तत्तियमेत्ते भागे पुणो वि परिवड्ढई जुण्हे ॥१०३॥ कियत्संख्याकास्तास्तिथयः ?, इति तत्संख्यानिरूपणार्थमुपपत्तिमाह- इह यावता कालेनैकश्चन्द्रमण्डलस्य षोडशो भागो द्वाषष्टिभागसत्कचतुर्भागात्मकः परिहीयते वर्द्धते वा तावत्कालक्रमेण शुक्लपक्षे परिवर्द्धयति तावत्यः तावत्प्रमाणाः शुक्लपक्षे कृष्णपक्षे च तिथयो भवन्ति । तत्र पञ्चदश भागान् कृष्णपक्षे हापयति पञ्चदशैव च भागान् शुक्लपक्षे परिवर्द्धयति, ततः पञ्चदश कृष्णपक्षे तिथयः पञ्चदश शुक्लपक्षे ॥१०३॥'' - इति श्री**मलयगिरिसूरि**विरचितायां **ज्योतिष्करण्डकवृत्तौ** । पुनरपि समवायाङ्गवृत्तौ पृ० १५२ मध्ये उद्धृतेयं गाथा। अत्रेदमवधेयम्- श्रीमहावीरजैनविद्यालयेन विक्रमसं० २०४५ [ईसवीये १९८९] वर्षे प्रकाशिते **ज्योतिष्करण्डके** 'परिवड्ढते **जोण्हे**' इति पाठो मुद्रितः, किन्तु तत्रैव '**परिवड्ढई जुन्हा**' इति '**परिवड्ढए जोण्हं**' इति च पाठद्वयमपि पाठान्तररूपेण पादटिप्पने उपन्यस्तम् ॥ ३. **जोण्हत्ति** जे२ हे२ ॥ ४. °**दशैर्दिनैः** खंसं० ॥

तथा **चेत्तासोएसु मासेसु** त्ति स्थूलन्यायमाश्रित्य चैत्रेऽश्वयुजि च मासे **पञ्चदशमुहूर्त्तो दिवसो भवति रात्रिश्च**, निश्चयतस्तु मेषसङ्क्रान्तिदिने तुलासङ्क्रान्तिदिने चैवं दृश्यमिति ।

पओगे त्ति प्रयोजनं **प्रयोगः** परिस्पन्द आत्मनः क्रियापरिणामो व्यापार इत्यर्थः, अथवा प्रकर्षेण युज्यते सम्बध्यतेऽनेन क्रियापरिणामेन कर्मणा सहात्मेति प्रयोगः, तत्र सत्यार्थालोचननिबन्धनं मनः **सत्यमनस्तस्य प्रयोगो** व्यापारः **सत्यमनःप्रयोगः**, एवं शेषेष्वपि, नवर**मौदारिकशरीरकायप्रयोग** औदारिकशरीरमेव पुद्गलस्कन्ध-समुदायरूपत्वेनोपचीयमानत्वात् कायस्तस्य प्रयोग इति विग्रहः, अयं च पर्याप्तकस्यैव वेदितव्यः, **तथौदारिकमिश्रशरीरकायप्रयोगः**, अयं चापर्याप्तकस्येति, इह चोत्पत्तिमाश्रित्यौदारिकस्य प्रारब्धस्य प्रधानत्वादौदारिकः कार्मणेन मिश्रः, यदा तु मनुष्यः पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्बादरवायुकायिको वा वैक्रियं करोति तदौदारिकस्य प्रारम्भकत्वेन प्रधानत्वादौदारिको वैक्रियेण मिश्रो यावद्वैक्रियपर्याप्त्या न पर्याप्तिं गच्छति, एवमाहारकेणाप्यौदारिकस्य मिश्रताऽवसेयेति, तथा **वैक्रियशरीरकायप्रयोगो** वैक्रियपर्याप्तकस्य, तथा **वैक्रियमिश्रशरीरकायप्रयोग**स्तदपर्याप्तकस्य देवस्य नारकस्य वा कार्मणेनैव लब्धिवैक्रियपरित्यागे वा औदारिकप्रवेशाद्धायामौदारिकोपादानाय प्रवृत्तेर्वैक्रियप्राधान्यादौदारिकेणापि मिश्रतेत्येके, तथा **आहारकशरीरकाय-प्रयोग**स्तदभिनिर्वृत्तौ सत्यां तस्यैव प्रधानत्वात्, तथा **आहारकमिश्रशरीरकायप्रयोगः** औदारिकेण सहाऽऽहारकपरित्यागेनेतरग्रहणायोद्यतस्य, एतदुक्तं भवति– यदा-ऽऽहारकशरीरी भूत्वा कृतकार्यः पुनरप्यौदारिकं गृह्णाति तदाऽऽहारकस्य प्रधानत्वादौदारिकप्रवेशं प्रति व्यापारभावाद्यावत् सर्वथैव न परित्यजत्याहारकं तावदौदारिकेण सह मिश्रतेति, आह– न तत्तेन सर्वथा मुक्तं पूर्वनिर्वर्त्तितं तिष्ठत्येव, तत् कथं गृह्णाति ?, सत्यम्, तथाप्यौदारिकशरीरोपादानार्थं प्रवृत्त इति गृह्णात्येव, तथा **कार्मणशरीरकायप्रयोगो** विग्रहे समुद्घातगतस्य च केवलिनस्तृतीय-चतुर्थ-पञ्चमसमयेषु भवतीति ॥१५॥

[सू० १६] [१] सोलस य गाहासोलसगा पण्णत्ता, तंजहा– समए १, वेयालिए २, उवसग्गपरिण्णा ३, इत्थिपरिण्णा ४, निरयविभत्ती ५, महावीरथुई ६, कुसीलपरिभासिए ७, वीरिए ८, धम्मे ९, समाही १०, मग्गे ११, समोसरणे १२, अहातहिए १३, गंथे १४, जमतीते १५, गाहा १६, १।

सोलस कसाया पण्णत्ता, तंजहा– अणंताणुबंधी कोहे, एवं माणे, माया, लोभे। अपच्चक्खाणकसाए कोहे, एवं माणे, माया, लोभे। पच्चक्खाणावरणे कोहे, एवं माणे, माया, लोभे। संजलणे कोहे, एवं माणे, माया, लोभे २।

[१]मंदरस्स णं पव्वतस्स सोलस नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा–

मंदर १ मेरु २ मणोरम ३ सुदंसण ४ सयंपभे ५ य गिरिराया ६ ।
रयणुच्चय ७ पियदंसण ८ मज्झे लोगस्स ९ नाभी १० य ॥१४॥
अत्थे य ११ सूरियावत्ते १२ सूरियावरणे १३ ति य ।
उत्तरे य १४ दिसाई य १५ वडेंसे १६ इ य सोलसे ॥१५॥ ३।

[२] पासस्स णं अरहतो पुरिसादाणीयस्स सोलस समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपदा होत्था ४।

आयप्पवायस्स णं पुव्वस्स सोलस वत्थू पण्णत्ता ५।

चमर-बलीणं ओवारियालेणे सोलस जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ६।

लवणे णं समुद्दे सोलस जोयणसहस्साइं उस्सेहपरिवुड्ढीए पण्णत्ते ७।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं सोलस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

पंचमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं सोलस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

---

१. "मंदर १ मेरु २ मनोरम ३ सुदंसण ४ सयंपभे य ५ गिरिराया ६। रयणोच्चय ७ सिलोच्चए ८ मज्झे लोगस्स ९ नाभी य १० ॥ अच्छे य ११ सूरियावत्ते १२ सूरियावरणे ति या १३ । उत्तमे य १४ दिसादी य १५ वडेंसे १६ ति य सोलस ॥" इति **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ** चतुर्थे वक्षस्कारे सू० १०९ ॥

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं सोलस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं सोलस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

महासुक्के कप्पे अत्थेगतियाणं देवाणं सोलस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा आवत्तं वियावत्तं नंदियावत्तं महाणंदियावत्तं अंकुसं अंकुसपलंबं भद्दं सुभद्दं महाभद्दं सव्वओभद्दं भद्दुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं सोलस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा सोलसण्हं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं सोलसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे सोलसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथ षोडशस्थानकमुच्यते सुगमं चेदम्, नवरं **गाथाषोडशका**दीनि स्थितिसूत्रेभ्य आरात् सप्त सूत्राणि, तत्र **सूत्रकृताङ्ग**स्य प्रथमे श्रुतस्कन्धे षोडशाध्ययनानि तेषां च गाथाभिधानं षोडशमिति गाथाभिधानमध्ययनं षोडशं येषां तानि **गाथाषोडशकानि**, तत्र **समये** त्ति नास्तिकादिसमयप्रतिपादनपरमध्ययनं **समय** एवोच्यते, वैतालीयच्छन्दोजातिबद्धं **वैतालीय**मेव, शेषाणां यथाभिधेयं नामानि, **समोसरणे** त्ति समवसरणं त्रयाणां त्रिषष्ट्यधिकानां प्रवादिशतानां मतपिण्डनरूपम्, **अहातहिए** त्ति यथा वस्तु तथा प्रतिपाद्यते यत्र **तद्यथातथिकम्**, ग्रन्थाभिधायकं **ग्रन्थः**, **जमइए** त्ति **यमकीयं** यमकनिबद्धसूत्रम्, **गाहे**ति प्राक्तनपञ्चदशाध्ययनार्थस्य गानाद्गाथा, **गाधा** वा तत्प्रतिष्ठाभूतत्वादिति ।

मेरुनामसूत्रे गाथा श्लोकश्च, **मज्झे लोगस्स नाभी य** त्ति लोकमध्ये लोकनाभिश्चेत्यर्थः । **उत्तरे य** त्ति **भरतादीना**मुत्तरदिग्वर्त्तित्वाद्, यदाह– **सव्वेसिं उत्तरो मेरु** [ ] त्ति, **दिसाई य** त्ति दिशामादिर्दिगादिरित्यर्थः, **वडेंसे इ य** त्ति **अवतंसः** शेखरः स इवावतंस **इति चेति** । **पुरिसादाणीयस्स** त्ति पुरुषाणां मध्ये

आदेयस्येत्यर्थः । तथा **आत्मप्रवादपूर्वस्य** सप्तमस्य । तथा **चमर-बल्योर्दक्षिणोत्तरयो-** रसुरकुमारराजयोः । **ओवारियालेणे** त्ति **चमरचञ्चा-बलिचञ्चा**भिधानराज-धान्योर्मध्यभागे तद्भवनयोर्मध्योन्नताऽवतरत्पार्श्वपीठरूपे [१]**अवतारिकलयने षोडश योजनसहस्राण्यायामविष्कम्भाभ्यां** वृत्तत्वात्तयोरिति । तथा **लवणसमुद्रे** मध्यमेषु दशसु सहस्रेषु नगरप्राकार इव जलमूर्ध्वं गतम्, तस्य चोत्सेधवृद्धिः षोडश योजनसहस्राणि, अत उच्यते– **लवणः समुद्रः षोडश योजनसहस्राण्युत्सेधपरिवृद्ध्या प्रज्ञप्त** इति । **आवर्त्तादीन्येकादश** विमाननामानि ॥१६॥

[सू० १७] [१] [२]सत्तरसविहे असंजमे पण्णत्ते, तंजहा– पुढविकाइयअसंजमे, आउकाइयअसंजमे, तेउकाइयअसंजमे, वाउकाइयअसंजमे, वणस्सइकाइयअसंजमे, बेइंदियअसंजमे, तेइंदियअसंजमे, चउरिंदियअसंजमे, पंचिंदियअसंजमे, अजीवकायअसंजमे, पेहाअसंजमे, उपेहाअसंजमे, अवहट्टु-असंजमे, अपमज्जणाअसंजमे, मणअसंजमे, वतिअसंजमे, कायअसंजमे १।

सत्तरसविहे संजमे पण्णत्ते, तंजहा– पुढवीकायसंजमे एवं जाव कायसंजमे २।

माणुसुत्तरे णं पव्वते सत्तरस एक्कवीसे जोयणसते उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ते ३।

सव्वेसिं पि णं वेलंधर-अणुवेलंधरणागराईणं आवासपव्वया सत्तरस एक्कवीसाइं जोयणसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ४।

लवणे णं समुद्दे सत्तरस जोयणसहस्साइं सव्वग्गेणं पण्णत्ते ५।

इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जातो भूमिभागातो सातिरेगाइं सत्तरस जोयणसहस्साइं उड्ढं उप्पतित्ता ततो पच्छा चारणाणं तिरियं गती पवत्तती ६।

चमरस्स णं असुरिंदस्स असुररण्णो तिगिंछिकूडे उप्पातपव्वते सत्तरस एक्कवीसाइं जोयणसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ते ७।

---

१. **आव**॰ जं२ हे१.२ ॥ २. **आवश्यकसूत्रे** चतुर्थे प्रतिक्रमणाध्ययने 'सत्तरसविहे असंजमे' इति सूत्रस्य **हारिभद्र्यां** वृत्तौ सप्तदशविधस्य असंयमस्य विस्तरेण वर्णनमस्ति ॥

बलिस्स णं असुरिंदस्स असुररण्णो रुयगिंदे उप्पातपव्वते सत्तरस जोयणसयाइं सातिरेगाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ते ८।

[१] सत्तरसविहे मरणे पण्णत्ते, तंजहा– आवीइमरणे, ओहिमरणे, आयंतियमरणे, वलातमरणे, वसट्टमरणे, अंतोसल्लमरणे, तब्भवमरणे, बालमरणे, पंडितमरणे, बालपंडितमरणे, छउमत्थमरणे, केवलिमरणे, वेहासमरणे, गद्धपट्ठमरणे, भत्तपच्चक्खाणमरणे, इंगिणिमरणे, पाओवगमणमरणे ९।

सुहुमसंपराए णं भगवं सुहुमसंपरायभावे वट्टमाणे सत्तरस कम्मपगडीओ णिबंधति, तंजहा– आभिणिबोहियणाणावरणे, एवं सुतोहि-मण-केवल [णाणावरणे] । चक्खुदंसणावरणं, एवं अचक्खु-ओही-केवलदंसणावरणं । सायावेयणिज्जं, जसोकित्तिनामं, उच्चागोतं । दाणंतराइयं, एवं लाभ-भोग-उवभोग-वीरियअंतराइयं १०।

[२] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं सत्तरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

पंचमाए पुढवीए नेरइयाणं उक्कोसेणं सत्तरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

छट्ठीए पुढवीए नेरइयाणं जहण्णेणं सत्तरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं सत्तरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं सत्तरस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

महासुक्के कप्पे देवाणं उक्कोसेणं सत्तरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

सहस्सारे कप्पे देवाणं जहण्णेणं सत्तरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

जे देवा सामाणं सुसामाणं महासामाणं पउमं महापउमं कुमुदं महाकुमुदं नलिणं महाणलिणं पोंडरीयं महापोंडरीयं सुक्कं महासुक्कं सीहं सीहोकंतं

---

१. तुलना- **उत्तराध्ययने** पञ्चमेऽध्ययने निर्युक्तिगाथाः २११-२२४। **भगवतीसूत्रे** त्रयोदशे शतके सप्तमे उद्देशके॥

सीहवियं भावियं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं सत्तरस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ८।

[३] ते णं देवा सत्तरसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं सत्तरसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे सत्तरसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथ सप्तदशस्थानकम्, तच्च व्यक्तम्, नवरमिह स्थितिसूत्रेभ्योऽन्यानि दश। तथा **अजीवकायासंयमो** विकटसुवर्णबहुमूल्यवस्त्र-पात्र-पुस्तकादिग्रहणम्, **प्रेक्षायामसंयमो** यः स तथा, स च स्थानोपकरणादीनामप्रत्युपेक्षणमविधिप्रत्युपेक्षणं वा, **उपेक्षाऽसंयमो**ऽसंयमयोगेषु व्यापारणं संयमयोगेष्वव्यापारणं वा, तथा **अपहृत्यासंयमः** अविधिनोच्चारादीनां परिष्ठापनतो यः[१], तथा **अप्रमार्जनाऽसंयमः** पात्रादेरप्रमार्जनयाऽविधिप्रमार्जनया वेति, **मनोवाक्कायानामसंयमा**स्तेषामकुशलानामुदीरणानीति। असंयमविपरीतः **संयमः**। **वेलन्धरानुवेलन्धरा**वासपर्वतस्वरूपं **क्षेत्रसमास**गाथाभिरवगन्तव्यम्, एताश्चैताः—

दस जोयणसाहस्सा[२] लवणसिहा चक्कवालओ रुंदा ।
सोलस सहस्स उच्चा सहस्समेगं तु ओगाढा ॥
देसूणमद्धजोयण लवणसिहोवरि दगं तु कालदुगे ।
अतिरेगं अतिरेगं परिवड्ढइ हायए वावि ॥
अब्भंतरियं वेलं धरंति लवणोदहिस्स नागाणं ।
बायालीस सहस्सा दुसत्तरि सहस्स बाहिरियं ॥
सट्ठिं नागसहस्सा धरेंति अग्गोदगं समुद्दस्स ।
वेलंधर आवासा लवणे य चउद्दिसिं चउरो ॥
पुव्वादिअणुक्कमसो गोथुभ १ दगभास २ संख ३ दगसीमा ४ ।
गोथुभ १ सिवए २ संखे ३ मणोसिले ४ नागरायाणो ॥

---

१. यः स तथा खंसं० ॥ २. °सहस्सा जे२ खंसं० विना ॥

अणुवेलंधरवासा लवणे विदिसासु संठिआ चउरो ।
कक्कोडे १ विज्जुप्पभे २ केलास ३ ऽरुणप्पभे ४ चेव ॥
कक्कोडय कद्दमए केलासऽरुणप्पभेऽत्थ रायाणो ।
बायालीस सहस्से गंतुं उयहिम्मि सव्वे वि ॥
चत्तारि जोयणसए तीसे कोसं च उवगया[1] भूमिं ।
सत्तरस जोयणसए इगवीसे ऊसिया सव्वे ॥ [बृहत्क्षेत्र० ४१५-४२२] त्ति ।

चारणाणं ति जङ्घाचारणानां विद्याचारणानां च **तिरियं** ति तिर्यग् रुचकादिद्वीपगमनायेति, **तिगिञ्छि**कूट उत्पातपर्वतो यत्रागत्य मनुष्यक्षेत्रागमनायोत्पतति, स चेतोऽसङ्ख्याततमेऽ**रुणोद**समुद्रे दक्षिणतो द्विचत्वारिंशतं योजनसहस्राण्यतिक्रम्य भवति, **रुचकेन्द्रो**त्पातपर्वतस्त्व**रुणोद**समुद्र एव उत्तरत एवमेव भवतीति । **आवीइमरणे**[2] त्ति **आ** समन्ताद्वीचय इव वीचयः आयुर्दलिकविच्युतिलक्षणावस्था यस्मिंस्त**दावीचि**, अथवा वीचिः विच्छेदस्तदभावा**दवीचि**, दीर्घत्वं तु प्राकृतत्वात्, तदेवंभूतं मरण**मावीचिमरणं** प्रतिक्षणमायुर्द्रव्यविचटनलक्षणम्, तथाऽ**वधिः** मर्यादा, तेन मरण**मवधिमरणम्**, यानि हि नारकादिभवनिबन्धनतयाऽऽयुःकर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते यदि पुनस्तान्येवानुभूय मरिष्यति तदा तदवधिमरणमुच्यते, तद्द्रव्यापेक्षया पुनस्तद्ग्रहणावधिं यावज्जीवस्य मृतत्वादिति, तथा **आयंतियमरणे** त्ति आत्यन्तिकमरणं यानि नारकाद्यायुष्कतया कर्मदलिकान्यनुभूय म्रियते मृतश्च न पुनस्तान्यनुभूय मरिष्यतीति, एवं यन्मरणं तद् द्रव्यापेक्षया अत्यन्तभावित्वादात्यन्तिकमिति, **वलायमरणे** त्ति संयमयोगेभ्यो वलतां भग्नव्रतपरिणतीनां व्रतिनां मरणं **वलन्मरणम्**, तथा **वशेन** इन्द्रियविषयपारतन्त्र्येण **ऋता** बाधिता वशार्त्ताः स्निग्धदीपकलिकावलोकनाकुलशलभवत्, तथाऽ**न्तः** मध्ये मनसीत्यर्थः शल्यमिव **शल्य**मपराधपदं यस्य सोऽ**न्तःशल्यो** लज्जा-ऽभिमानादिभिरनालोचितातिचारस्तस्य मरणम् **अन्तःशल्यमरणम्**, तथा यस्मिन् भवे तिर्यग्-मनुष्यभवलक्षणे वर्त्तते जन्तुस्तद्भवयोग्यमेवायुर्बद्ध्वा पुनः तत्क्षयेण म्रियमाणस्य यद्भवति तत् **तद्भवमरणम्**, एतच्च तिर्यग्मनुष्याणामेव न देव-नारकाणाम्,

---

१. हे२ मध्ये बृहत्क्षेत्रसमासे चायं पाठः । **उगया भूमीं** जे२ । **उगया भूमी** हे२ जे२ विना ॥

२. आवीमरणं जे२ ॥

तेषां तेष्वेवोत्पादाभावादिति, तथा **बाला** इव बालाः अविरतास्तेषां मरणं **बालमरणम्**, तथा **पण्डिताः** सर्वविरतास्तेषां मरणं **पण्डितमरणम्**, **बालपण्डिताः** देशविरतास्तेषां मरणं **बालपण्डितमरणम्**, तथा **छद्मस्थमरणम्** अकेवलिमरणम्, **केवलिमरणं** तु प्रतीतम्, **वेहासमरणं** ति विहायसि व्योम्नि भवं वैहायसम्, विहायोभवत्वं च तस्य वृक्षशाखाद्युद्बद्धत्वे सति भावात्, तथा **गृध्रैः** पक्षिविशेषैरुपलक्षणत्वाच्छकुनिका-शिवादिभिश्च **स्पृष्टं** स्पर्शनं यस्मिंस्तद् **गृध्रस्पृष्टम्**, अथवा **गृध्राणां** भक्ष्यं **पृष्ठ**-मुपलक्षणत्वादुदरादि च यत्र तद् **गृध्रपृष्ठम्**, इदं च करि-करभादिशरीरमध्यपातादिना गृध्रादिभिरात्मानं भक्षयतो महासत्त्वस्य भवतीति, तथा **भक्तस्य** भोजनस्य यावज्जीवं **प्रत्याख्यानं** यस्मिंस्तत्तथा, इदं च त्रिविधाहारस्य चतुर्विधाहारस्य वा नियमरूपं सप्रतिकर्म च भक्तपरिज्ञेति यद्रूढम्, तथा इङ्ग्यते प्रतिनियतदेश एव चेष्ट्यतेऽस्याम-नशनक्रियायामितीङ्गिनी, तया मरण**मिङ्गिनीमरणम्**, तद्धि चतुर्विधाहारप्रत्याख्यातु-र्निष्प्रतिकर्मशरीरस्येङ्गितदेशाभ्यन्तरवर्त्तिन एवेति, तथा पादपस्येवोपगमनम् अवस्थानं यस्मिन् तत् **पादपोपगमनम्**, तदेव **मरण**मिति विग्रहः, इदं च यथा पादपः क्वचित् कथञ्चिद् निपतितः सममसममिति चाऽविभावयन्निश्चलमेवाऽऽस्ते तथा यो वर्त्तते तस्य भवतीति ।

तथा **सूक्ष्मसंपरायः** उपशमकः क्षपको वा सूक्ष्मलोभकषायकिट्टिकावेदको **भगवान्** पूज्यत्वात् **सूक्ष्मसंपरायभावे वर्त्तमानः** तत्रैव गुणस्थानकेऽवस्थितः नातीतानागतसूक्ष्मसंपरायपरिणाम इत्यर्थः **सप्तदश कर्मप्रकृतीर्निबध्नाति** विंशत्युत्तरे बन्धप्रकृतिशतेऽन्या न बध्नातीत्यर्थः, पूर्वतरगुणस्थानकेषु बन्धं प्रतीत्य तासां व्यवच्छिन्नत्वात्, तथोक्तानां सप्तदशानां मध्यादेका शातप्रकृतिरुपशान्तमोहादिषु बन्धमाश्रित्यानुयाति, शेषाः षोडशेहैव व्यवच्छिद्यन्ते, यदाह–

नाणं ५ तराय ५ दसगं दंसण चत्तारि ४ उच्च १५ जसकित्ती १६ ।
एया सोलस पयडी सुहुमकसायम्मि वोच्छिन्ना ।। [कर्मस्तव० २।२३]

१. सात° खंसं० ।।

सूक्ष्मसम्परायात् परे न बध्नन्त्येता इत्यर्थः । **सामानादीनि** सप्तदश विमाननामानीति ॥१७॥

[सू० १८] [१] अट्ठारसविहे बंभे पण्णत्ते, तंजहा– ओरालिए कामभोगे णेव सयं मणेणं सेवइ, नो वि अण्णं मणेणं सेवावेइ, मणेणं सेवंतं पि अण्णं न समणुजाणइ, ओरालिए कामभोगे णेव सयं वायाए सेवति, नो वि अण्णं वायाए सेवावेइ, वायाए सेवंतं पि अण्णं न समणुजाणइ, ओरालिए कामभोगे णेव सयं कायेणं सेवइ, णो वि अण्णं काएणं सेवावेइ, काएणं सेवंतं पि अण्णं न समणुजाणति, दिव्वे कामभोगे णेव सयं मणेणं सेवति, तह चेव णव आलावगा १।

अरहतो णं अरिट्ठनेमिस्स अट्ठारस समणसाहस्सीओ उक्कोसिया समणसंपदा होत्था २।

समणेणं भगवता महावीरेणं समणाणं णिग्गंथाणं सखुड्डय-वियत्ताणं अट्ठारस ठाणा पण्णत्ता, तंजहा–

[1]वयछक्कं ६ कायछक्कं १२, अकप्पो १३ गिहिभायणं १४ ।
पलियंक १५ निसिज्जा य १६, सिणाणं १७ सोभवज्जणं १८ ॥१६॥ ३।

आयारस्स णं भगवतो सचूलियागस्स अट्ठारस पयसहस्साइं पयग्गेणं पण्णत्ताइं ४।

बंभीए णं लिवीए अट्ठारसविहे लेखविहाणे पण्णत्ते, तंजहा– बंभी, जवणालिया, दासऊरिया, खरोट्ठिया, पुक्खरसाविया, पहाराइया, उच्चत्तरिया, अक्खरपुट्ठिया, भोगवयता, वेयणतिया, णिण्हइया, अंकलिवि, गणियलिवि, गंधव्वलिवि, आदंसलिवी, माहेसरलिवि, दमिडलिवि, पोलिंदि[लिवि] ५।

अत्थिणत्थिप्पवायस्स णं पुव्वस्स अट्ठारस वत्थू पण्णत्ता ६।

धूमप्पभा णं पुढवी अट्ठारसुत्तरं जोयणसयसहस्सं बाहल्लेणं पण्णत्ता ७।

---

१. दशवैकालिकनिर्युक्तौ षष्ठेऽध्ययनेऽपि गाथेयं वर्तते २६८ तमी ॥

पोसासाढेसु णं मासेसु सइ[1] उक्कोसेणं अट्ठारसमुहुत्ते दिवसे भवति, सइ[1] उक्कोसेणं अट्ठारसमुहुत्ता राती [भवइ] ८।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं अट्ठारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

छट्ठीए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं अट्ठारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं अट्ठारस पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

सहस्सारे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पण्णता ५।

आणए कप्पे देवाणं जहण्णेणं अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

जे देवा कालं सुकालं महाकालं अंजणं रिट्ठं सालं समाणं दुमं महादुमं विसालं सुसालं पउमं पउमगुम्मं कुमुदं कुमुदगुम्मं नलिणं नलिणगुम्मं पुंडरीयं पुंडरीयगुम्मं सहस्सारवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं [उक्कोसेणं] अट्ठारस सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

[३] ते णं देवा अट्ठारसहिं अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं अट्ठारसहिं वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया [भवसिद्धिया जीवा जे अट्ठारसहिं भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति] जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथाष्टादशस्थानकम्, इह चाष्टौ सूत्राणि स्थितिसूत्रेभ्योऽर्वाक् सुगमानि च. नवरं **बंभे** त्ति ब्रह्मचर्यम्, तथौ**दारिककामभोगान्** मनुष्य-तिर्यक्सम्बन्धिविषयान्, तथा **दिव्यकामभोगान्** देवसम्बन्धिन इत्यर्थः । तथा **सखुड्डग-वियत्ताणं** ति सह

---

१. मइं अटी० ॥

क्षुद्रकैर्व्यक्तैश्च ये ते **सक्षुद्रक-व्यक्ता:**, तेषाम्, तत्र **क्षुद्रका** वयसा श्रुतेन चाऽव्यक्ता:, व्यक्तास्तु ये वय:-श्रुताभ्यां परिणता:, **स्थानानि** परिहारासेवाश्रयवस्तूनि । **व्रतषट्कं** महाव्रतानि रात्रिभोजनविरतिश्च, **कायषट्कं** पृथिवीकायादि, **अकल्प:** अकल्पनीयपिण्ड-शय्या-वस्त्र-पात्ररूप: पदार्थ:, **गृहिभाजनं** स्थालादि, **पर्यङ्को** मञ्चकादि:, **निषद्या** स्त्रिया सहाऽऽसनम्, **स्नानं** शरीरक्षालनम्, **शोभावर्जनं** प्रतीतम्। तथा **आचारस्य** प्रथमाङ्गस्य **सचूलिकाकस्य** चूडासमन्वितस्य, तस्य हि पिण्डैषणाद्या: पञ्च चूला: द्वितीयश्रुतस्कन्धात्मिका:, स च नवब्रह्मचर्याभिधानाध्ययनात्मकप्रथम-श्रुतस्कन्धरूप:, तस्यैव चेदं पदप्रमाणं न चूलानाम्, यदाह–

नवबंभचेरमइओ अट्ठारसपयसहस्सिओ वेओ ।

हवइ य सपंचचूलो बहुबहुतरओ पयग्गेणं ।। [आचाराङ्गनि० ११] ति ।

यच्च **सचूलिकाकस्ये**ति विशेषणं तत्तस्य चूलिकासत्ताप्रतिपादनार्थम्, न तु पदप्रमाणाभिधानार्थम्, यतोऽवाचि **नन्दीटीका**कृता- **अट्ठारसपयसहस्साणि पुण पढमसुयखंधस्स नवबंभचेरमइयस्स पमाणं, विचित्तत्थाणि य सुत्ताणि गुरूवएसओ तेसिं अत्थो जाणियव्वो** [नन्दीटी०] त्ति, **पदसहस्राणी**ह यत्रार्थोपलब्धिस्तत् पदम्, **पदाग्रेणे**ति पदपरिमाणेनेति। तथा **बंभि** त्ति **ब्राह्मी आदिदेवस्य** भगवतो दुहिता, **ब्राह्मी** वा संस्कृतादिभेदा वाणी, तामाश्रित्य तेनैव या दर्शिता अक्षरलेखनप्रक्रिया सा ब्राह्मीलिपि: अतस्तस्या **ब्राह्म्या लिपे:, ण**मित्यलङ्कारे, **लेखो** लेखनम्, तस्य **विधानं** भेदो **लेखविधानं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा– बंभी**त्यादि, एतत्स्वरूपं च न दृष्टमिति न दर्शितम्।

---

१. "किं पुनरस्याध्ययनत: पदतश्च परिमाणमित्यत आह- नवबंभ.... ... ... **वृ०**- तत्राध्ययनतो नवब्रह्मचर्य्याभिधानाध्ययनात्मकोऽयं पदतोऽष्टादशपदसहस्रात्मक:, **वेद** इति विदन्त्यस्माद्धेयोपादेयपदार्थानिति **वेद:** क्षायोपशमिकभाववर्त्ययमाचार इति । सह पञ्चभिश्चूडाभिर्वर्त्तत इति सपञ्चचूडश्च भवति, उक्तशेषानुवादिनी चूडा, तत्र प्रथमा 'पिंडेसण सेज्जिरिया भासज्जाया य वत्थपाएसा उग्गहपडिम'त्ति सप्ताध्ययनात्मिका, द्वितीया सत्तसत्तिक्कया, तृतीया भावना, चतुर्थी विमुक्ति:, पञ्चमी निशीथाध्ययनम्, **बहुबहुयरओ पदग्गेणं** ति तत्र चतुश्चूलिकात्मकद्वितीय-श्रुतस्कन्धप्रक्षेपाद् बहु:, निशीथाख्यपञ्चमचूलिकाप्रक्षेपाद् बहुतरोऽनन्तगमपर्यायात्मकतया बहुतमश्च, **पदाग्रेण** पदपरिमाणेन भवतीति ॥११॥" - इति **शीलाचार्य**विरचितायाम**आचाराङ्ग**टीकायां प्रथमेऽध्ययने प्रथमे उद्देशके ॥

२. "से किं तं आयारे..." [सू० ८७] इति **नन्दीसूत्रस्य हरिभद्र**सूरिविरचितायां **टीका**यामेतदस्ति । **जिनदास**गणिमहत्तरविरचितायां **नन्दीसूत्रस्य चूर्णा**वपि एतादृशं वर्णनमस्ति ॥

तथा यल्लोके यथास्ति यथा वा नास्ति अथवा स्याद्वादाभिप्रायतस्तदेवास्ति नास्ति चेत्येवं प्रवदतीत्य**स्तिनास्तिप्रवादम्**, तच्च चतुर्थं **पूर्वम्**, तस्य । तथा **धूमप्रभा** पञ्चमी, **अष्टादशोत्तरं** अष्टादशयोजनसहस्राधिकमित्यर्थः, **बाहल्येन** पिण्डेन । **पोसासाढे**त्यादेरेवं योजना आषाढे मासे **सइं** ति सकृदेकदा **कर्कसङ्क्रान्ता**वित्यर्थः **उत्कर्षेण** उत्कर्षतोऽ**ष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति**, षट्त्रिंशद् घटिका इत्यर्थः, तथा पौषे मासे **सकृदिति मकरसङ्क्रान्तौ** रात्रिरेवंविधेति । **काल-सुकाला**दीनि विंशतिर्विमाननामानि ॥१८॥

[सू० १९] [१] एकूणवीसं णायज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा—

उक्खित्तणाए १ संघाडे २, अंडे ३ कुम्मे य ४ सेलये ५ ।

तुंबे य ६ रोहिणी ७ मल्ली ८, मागंदी ९ चंदिमा ति य १० ॥१७॥

दावद्दवे ११ उदगणाते १२ मंडुक्के १३ तेतली १४ इ य ।

नंदिफले १५ अवरकंका १६ आइण्णे १७ सुंसमा ति य १८ ॥ १८॥

अवरे य पुंडरीए णाए एगूणवीसइमे १९। १।

जंबुद्दीवे णं दीवे सूरिया उक्कोसेणं एगूणवीसं जोयणसताइं उड्ढमहो तवंति २।

सुक्के णं महग्गहे अवरेणं उदिए समाणे एगूणवीसं णक्खत्ताइं समं चारं चरित्ता अवरेणं अत्थमणं उवागच्छति ३।

जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स कलाओ एगूणवीसं छेयणाओ पण्णत्ताओ ४।

एगूणवीसं तित्थयरा अगारमज्झावसित्ता मुंडे भवित्ता णं अगाराओ अणगारियं पव्वइया ५।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एगूणवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

छट्ठीए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एगूणवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं एगूणवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं एगूणवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

आणयकप्पे देवाणं उक्कोसेणं एगूणवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

पाणए कप्पे देवाणं जहण्णेणं एगूणवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

जे देवा आणतं पाणतं णतं विणतं घणं सुसिरं इंदं इंदोकंतं इंदुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं एगूणवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

[३] ते णं देवा एगूणवीसाए अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं एगूणवीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

अत्थेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे एगूणवीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अथैकान्नविंशतितमस्थानम्, तत्रा स्थितिसूत्रेभ्यः पञ्च सूत्राणि सुगमानि च, नवरं **ज्ञातानि** दृष्टान्ताः, तत्प्रतिपादकान्यध्ययनानि **ज्ञाताध्ययनानि** षष्ठाङ्गप्रथमश्रुतस्कन्धवर्त्तीनि, **उक्खित्ते**त्यादि सार्द्धं रूपकद्वयम्, इदं च षष्ठाङ्गाधिगमावसेयमिति।

तथा **जंबुद्दीवे णं** इत्यादौ भावना– सूर्यौ स्वस्थानादुपरि योजनशतं तपतोऽधश्चाष्टादश शतानि, तत्र च समभूतलेऽष्टौ भवन्ति, दश चापरविदेह-जगतीप्रत्यासन्नदेशे, जम्बूद्वीपापरविदेहे हि निम्नीभवत् क्षेत्रमन्तिमविजयद्वयस्य देशे अधोलोकदेशमतिगतमिति, द्वीपान्तरसूर्यास्तूर्ध्वं शतमधोऽष्ट शतानि, क्षेत्रस्य समत्वादिति। तथा शुक्रसूत्रे **नक्खत्ताइं** ति विभक्तिपरिणामान्नक्षत्रैः **समं** सह **चारं** चरणं **चरित्वा** विधायेति।

१. 'तमं स्थानं खं० ॥ २. 'तत्र आ स्थितिसूत्रेभ्यः' इति पदच्छेदः ॥ ३. **ज्ञाताध्ययनानि** नास्ति जे२ विना ॥

तथा **कलाओ** त्ति पंच सए छव्वीसे छच्च कला वित्थडं भरहवासं[बृहत्क्षेत्र० २९]इत्यादिषु जम्बूद्वीपगणितेषु याः कला उच्यन्ते ता योजनस्यैकोनविंशतिभागच्छेदनाः, एकोनविंशतिभागरूपा इति भावः । **अगारमज्झावसित्त** त्ति **अगारं** गेहम् **अधि** आधिक्येन चिरकालं राज्यपरिपालनतः **आ** मर्यादया नीत्या **वसित्वा** उषित्वा तत्र वासं विधायेति, अध्योष्य प्रव्रजिताः, शेषास्तु पञ्च कुमारभाव एवेति, आह च–

वीरं अरिट्ठनेमिं पासं मल्लिं च वासुपुज्जं च ।
एए मोत्तूण जिणे अवसेसा आसि रायाणो ॥ [आव० नि० २२१] त्ति ॥१९॥

[सू० २०] [१] **वीसं[3] असमाहिट्ठाणा पण्णत्ता, तंजहा– दवदवचारि यावि भवति १, अपमज्जितचारि यावि भवति २, दुप्पमज्जितचारि यावि भवति ३, अतिरित्तसेज्जासणिए ४, रातिणियपरिभासी ५, थेरोवघातिए ६, भूओवघातिए ७, संजलणे ८, कोधणे ९, पिट्ठिमंसिए १०, अभिक्खणं अभिक्खणं ओधारइत्ता भवति ११, णवाणं अधिकरणाणं अणुप्पण्णाणं उप्पाएत्ता भवति १२, पोराणाणं अधिकरणाणं खामितविओसवियाणं पुणो उदीरेत्ता भवति १३, ससरक्खपाणिपाए १४, अकालसज्झायकारए यावि भवति १५, कलहकरे १६, सद्दकरे १७, झंझकरे १८, सूरप्पमाणभोई १९, एसणाऽसमिते यावि भवति २० । १।**

मुणिसुव्वते णं अरहा वीसं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था २।

सव्वे वि णं घणोदही वीसं जोयणसहस्साइं बाहल्लेणं पण्णत्ता ३।

पाणयस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वीसं सामाणियसाहस्सीओ पण्णत्ताओ ४।

---

१. ``पंच सए छव्वीसे, छच्च कला वित्थडं भरहवासं । दस सय बावन्नहिया, बारस य कलाउ हिमवंते ॥२९॥ **व्या०**- सुगमम् ॥ तथा जम्बूद्वीपस्य विष्कम्भो योजनलक्षप्रमाणः क्षुल्लहिमवद्विष्कम्भानयनाय द्विकेन गुण्यते, जाते द्वे लक्षे, तयोर्नवत्यधिकेन शतेन भागो ह्रियते, लब्धानि दश योजनशतानि द्विपञ्चाशदधिकानि कलाश्चैकोनविंशतिभागरूपा द्वादश १०५२ क० १२ । एतावान् हिमवद्वर्षधरपर्वतस्य विष्कम्भः ।....... ॥२९॥'' इति **बृहत्क्षेत्रसमासस्य मलयगिरिसूरि**विरचितायां वृत्तौ ॥ २. "**कालराज्य**" खं० ॥ ३. **दशाश्रुतस्कन्धे** प्रथमेऽध्ययने [=प्रथमायां दशायां] तस्य निर्युक्तौ चूर्णौ च विस्तरेण विंशतेः असमाधिस्थानानां वर्णनमस्ति । विस्तरार्थिभिस्तत्र द्रष्टव्यम् ॥ **आवश्यकसूत्रे** चतुर्थेऽध्ययने 'वीसाए असमाहिट्ठाणेहिं' इति सूत्रस्य हारिभद्र्यां वृत्तावपि द्रष्टव्यम् ॥

णपुंसयवेयणिज्जस्स णं कम्मस्स वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ बंधओ बंधट्ठिती पण्णत्ता ५।

पच्चक्खाणस्स णं पुव्वस्स वीसं वत्थू पण्णत्ता ६।

उसप्पिणि-ओसप्पिणिमंडले वीसं सागरोवमकोडाकोडीओ काले पण्णत्ते ७।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं वीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

छट्ठीए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं वीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं वीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं वीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

पाणते कप्पे देवाणं उक्कोसेणं वीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

आरणे कप्पे देवाणं जहण्णेणं वीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

जे देवा सातं विसातं सुविसायं सिद्धत्थं उप्पलं रुतिलं तिगिच्छं दिसासोवत्थियं वद्धमाणयं पलंबं पुप्फं पुप्फावत्तं पुप्फपभं पुप्फकंतं पुप्फवण्णं पुप्फलेसं पुप्फज्झयं पुप्फसिंगं पुप्फसिट्ठं पुप्फकूडं पुप्फुत्तरवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं वीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

[३] ते णं देवा वीसाए अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं वीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे वीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति [जाव सव्वदुक्खाणमंतं करेस्संति] ३।

[टी०] अथ विंशतितमस्थाने किञ्चिल्लिख्यते । तत्र स्थितिसूत्रेभ्योऽर्वाक् सप्त सूत्राणि, तत्र समाधानं **समाधिः** चेतसः स्वास्थ्यम्, मोक्षमार्गेऽवस्थानमित्यर्थः, न

समाधिर**समाधि**स्तस्याः **स्थानानि** आश्रया भेदा वा **असमाधिस्थानानि** । तत्र **दवदवचारि** त्ति यो हि द्रुतं द्रुतं चरति गच्छति सोऽनुकरणशब्दतो **दवदवचारी**त्युच्यते, **चापी**त्युत्तरासमाधिस्थानापेक्षया समुच्चयार्थः, **भवतीति**[1] प्रसिद्धम्, स च द्रुतं द्रुतं संयमा-ऽऽत्मनिरपेक्षो व्रजन्नात्मानं प्रपतनादिभिरसमाधौ योजयति अन्यांश्च सत्त्वान् घ्नन्नसमाधौ योजयति, सत्त्ववधजनितेन च कर्म्मणा परलोकेऽप्यात्मानमसमाधौ योजयति, अतो द्रुतगन्तृत्वमसमाधिकारणत्वादसमाधिस्थानम्, एवमन्यत्रापि यथायोगमवसेयम् १, तथा **अप्रमार्जितचारी** २ **दुष्प्रमार्जितचारी** च ३ स्थान-निषीदन-त्वग्वर्तनादिष्वात्मादिविराधनां लभते, तथाऽ**तिरिक्ता** अतिप्रमाणा **शय्या** वसति**रासनानि** च पीठकादीनि यस्य सन्ति **सोऽतिरिक्तशय्यासनिकः**, स च अतिरिक्तायां शय्यायां घङ्घशालादिरूपायामन्येऽपि कार्पटिकादय आवासयन्ति इति तैः सहाधिकरणसम्भवादात्म-परावसमाधौ योजयतीति, एवमासनाधिक्येऽपि वाच्यमिति ४, तथा **रात्निकपरिभाषी** आचार्यादिपूज्यपुरुषपरिभवकारी, स चात्मानमन्यांश्चासमाधौ योजयत्येव ५, तथा **स्थविरा** आचार्यादिगुरवः, तानाचारदोषेण शीलदोषेण च ज्ञानादिभिर्वोपहन्तीत्येवंशीलः स एव चेति **स्थविरोपघातिकः** ६, तथा **भूतानि** एकेन्द्रियास्ताननर्थत उपहन्तीति **भूतोपघातिकः** ७, तथा सञ्ज्वलतीति **सञ्ज्वलनः** प्रतिक्षणं रोषणः ८, तथा **क्रोधनः** सकृत् क्रुद्धोऽत्यन्तक्रुद्धो भवति ९, तथा **पृष्ठिमांसिकः** पराङ्मुखस्य परस्यावर्णवादकारी १०, **अभिक्खणं अभिक्खणं ओहारयित्त** त्ति अभीक्ष्णमभीक्ष्णमवधारयिता शङ्कितस्याप्यर्थस्य निःशङ्कितस्य[2] 'एवमेवायम्' इत्येवं वक्ता, अथवाऽ**वहारयिता** परगुणानामपहारकारी, यथा अदासादिकमपि परं भणति– दासस्त्वं चौरस्त्वमित्यादि ११, तथाऽ**धिकरणानां** कलहानां यन्त्रादीनां वो**त्पादयिता** १२, **पोराणाणं** ति पुरातनानां कलहानां **क्षमित-व्यवशमितानां** मर्षितत्वेनोपशान्तानां **पुनरुदीरयिता भवति** १३, तथा **सरजस्कपाणि-पादो** यः सचेतनादिरजोगुण्डितेन हस्तेन दीयमानां भिक्षां गृह्णाति, तथा योऽस्थण्डिलादेः स्थण्डिलादौ सङ्क्रामन्न[3] पादौ प्रमार्ष्टि, अथवा

१. **भवतीति** जे२ ॥ २. (निःशङ्कितस्येव ?) ॥ ३. °**मयन्न** जे२ ॥

यस्तथाविधे कारणे सचित्तादिपृथिव्यां कल्पादिनाऽनन्तरितायामासनादि करोति स **सरजस्कपाणि-पाद** इति १४, तथा **अकालस्वाध्यायकारकः** प्रतीतः १५, तथा **कलहकरः** कलहहेतुभूतकर्तव्यकारी १६, तथा **शब्दकरः** रात्रौ महता शब्देनोल्लाप-स्वाध्यायादिकारको गृहस्थभाषाभाषको वा १७, तथा **झञ्झाकरो** येन येन गणस्य भेदो भवति तत्तत्कारी, येन च गणस्य मनोदुःखमुत्पद्यते तद्भाषी १८, तथा **सूरप्रमाणभोजी** सूर्योदयादस्तमयं यावदशन-पानाद्यभ्यवहारी १९, **एषणाअसमितश्चापि भवति**, अनेषणां न परिहरति, प्रेरितश्चासौ साधुभिः कलहायते, तथाऽनेषणीयमपरिहरन् जीवोपरोधे वर्त्तते, एवं चात्म-परयोरसमाधिकरणादसमाधिस्थानमिदं विंशतितममिति २० । तथा **घनोदधयः** सप्तपृथिवीप्रतिष्ठानभूताः । **सामानिकाः** इन्द्रसमानर्द्धयः । **साहस्र्यः** सहस्राणि । **बन्धतो** बन्धसमयादारभ्य **बन्धस्थितिः** स्थितिबन्ध इत्यर्थः । **प्रत्याख्यान**नामकं पूर्वं नवमम् । **सातादीनि** चैकविंशतिर्विमानानीति ॥२०॥

[सू० २१] [१] **एक्कवीसं[1] सबला पण्णत्ता, तंजहा– हत्थकम्मं करेमाणे सबले १, मेहुणं पडिसेवमाणे सबले २, रातीभोयणं भुंजमाणे [सबले] ३, आहाकम्मं भुंजमाणे [सबले] ४, सागारियं पिंडं भुंजमाणे [सबले] ५, उद्देसियं**

१. **दशाश्रुतस्कन्धे** द्वितीयेऽध्ययने [=द्वितीयदशायां] तस्य निर्युक्तौ चूर्णौ च विस्तरेण एकविंशतेः शबलानां वर्णनमस्ति । विस्तरार्थिभिस्तत्रैव द्रष्टव्यम् ॥ अत्र तु **दशाश्रुतस्कन्ध**सूत्रमेव उपन्यस्यते- ``थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पन्नत्ता, तंजहा- हत्थकम्मं करेमाणे सबले ॥१॥ मेहुणं पडिसेवमाणे सबले ॥२॥ रातीभोयणं भुंजमाणे सबले ॥४॥ रायपिंडं भुंजमाणे सबले ॥५॥ कीयं पामिच्चं अच्छेज्जं अणिसट्ठं आहट्टु दिज्जमाणं भुंजमाणे सबले ॥६॥ अभिक्खणं पडियाइक्खित्ताणं भुंजमाणे सबले ॥७॥ अंतो छण्हं मासाणं गणातो गणं संकममाणे सबले ॥८॥ अंतो मासस्स तयो दगलेवे करेमाणे सबले ॥९॥ अंतो मासस्स ततो माइट्ठाणे करेमाणे सबले ॥१०॥ सागारियपिंडं भुंजमाणे सबले ॥११॥ आउट्टियाए पाणाइवायं करेमाणे सबले ॥१२॥ आउट्टियाए मुसावाए वदमाणे सबले ॥१३॥ आउट्टियाए अदिन्नादाणं गेण्हमाणे सबले ॥१४॥ आउट्टियाए अणंतरहियाए पुढवीए ठाणं वा सेज्जं वा निसीहियं वा चेतमाणे सबले ॥१५॥ एवं ससणिद्धाए पुढवीए ससरक्खाए पुढवीए ॥१६॥ एवं आउट्टियाए मूलभोयणं वा फलभोयणं वा बीयभोयणं वा हरियभोयणं वा भुंजमाणे सबले ॥१८॥ अंतो संवच्छरस्स दस उदगलेवे करेमाणे सबले ॥१९॥ अंतो संवच्छरस्स दस माइट्ठाणाइं करेमाणे सबले ॥२०॥ आउट्टियाए सीतोदगवग्घारिएण हत्थेण वा मत्तेण वा दव्विए भायणेण वा असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गहित्ता भुंजमाणे सबले । एते खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पन्नत्ता ॥२१॥`` **आवश्यकसूत्रे**ऽपि चतुर्थेऽध्ययने `एक्कवीसाए सबलेहिं' इति सूत्रस्य **हारिभद्र्यां** वृत्तौ विस्तरेण वर्णनमस्ति ॥

कीतमाहट्टु जाव अभिक्खणं अभिक्खणं सीतोदयवियडवग्घारियपाणिणा असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिगाहेत्ता भुंजमाणे सबले १।

णियट्टिबादरस्स णं खवितसत्तयस्स मोहणिज्जस्स एक्कवीसं कम्मंसा संतकम्मं[1] पण्णत्ता, तंजहा– अपच्चक्खाणकसाए कोहे, एवं माणे माया लोभे। पच्चक्खाणकसाए कोहे, एवं माणे माया लोभे। संजलणे कोधे, एवं माणे माया लोभे। इत्थिवेदे, पुमवेदे, णपुंसयवेदे, हासे, अरति, रति, भय, सोके, दुगुंछा २।

एक्कमेक्काए णं ओसप्पिणीए पंचम-छट्ठीतो समातो एक्कवीसं एक्कवीसं वाससहस्साइं कालेणं पण्णत्तातो, तंजहा– दूसमा, दूसमदूसमा य ३।

एगमेगाए णं उस्सप्पिणीए पढम-बितियातो समातो एक्कवीसं एक्कवीसं वाससहस्साइं कालेणं पण्णत्तातो, तंजहा– दूसमदूसमा, दूसमा य ४।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एक्कवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

छट्ठीए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एक्कवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं एक्कवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं एक्कवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

आरणे कप्पे देवाणं उक्कोसेणं एक्कवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

अच्चुते कप्पे देवाणं जहण्णेणं एक्कवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

जे देवा सिरिवच्छं सिरिदामगंडं मल्लं किट्ठिं चावोण्णतं आरणवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं एक्कवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

---

१. संतकम्मा पण्णत्ता खं०हे२ ॥

[३] ते णं देवा एक्कवीसाए अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं एक्कवीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया [जीवा जे एक्कवीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति] जाव [सव्वदुक्खाणमंतं] करेस्संति ३॥२१॥

[**टी०**] अथैकविंशतितमस्थानकम्, तत्र चत्वारि सूत्राणि स्थितिसूत्रैर्विना सुगमानि च, नवरं **शबलं** कर्बुरं चारित्रं यैः क्रियाविशेषैर्भवति ते शबलास्तद्योगात् साधवोऽपि त एव, तत्र हस्तकर्म वेदविकारविशेषं कुर्वन्नुपलक्षणत्वात् कारयन् वा **शबलो** भवतीत्येकः १, एवं **मैथुनं प्रतिसेवमानो**ऽतिक्रमादिभिस्त्रिभिः प्रकारैः २, तथा **रात्रिभोजनं** दिवागृहीतं दिवाभुक्तमित्यादिभिश्चतुर्भिर्भङ्गकैरतिक्रमादिभिश्च **भुञ्जानः** ३, तथा **आधाकर्म** ४, **सागारिकः** स्थानदाता तत्पिण्डम् ५, **औद्देशिकं क्रीतमाहृत्य दीयमानं भुञ्जानः**, उपलक्षणत्वात् पामिच्चाऽऽच्छेद्याऽनिसृष्टग्रहणमपीह द्रष्टव्यमिति ६, **यावत्करणो**पात्तपदान्येवमर्थतोऽवगन्तव्यानि, [अभीक्ष्णम् ?] अभीक्ष्णं प्रत्याख्याया-ऽशनादि भुञ्जानः ७, अन्तः षण्णां मासानामेकतो गणाद् गणमन्यं सङ्क्रामन् ८, अन्तर्मासस्य त्रीनुदकलेपान् कुर्वन्, उदकलेपश्च नाभिप्रमाणजलावगाहनमिति ९, अन्तर्मासस्य त्रीणि मायास्थानानि, स्थानमिति भेदः १०, राजपिण्डं भुञ्जानः ११, आकुट्ट्या प्राणातिपातं कुर्वन्, उपेत्य पृथिव्यादिकं हिंसन्नित्यर्थः १२, आकुट्ट्या मृषावादं वदन् १३, अदत्तादानं गृह्णन् १४, आकुट्ट्यैवानन्तर्हितायां पृथिव्यां स्थानं वा नैषेधिकीं वा चेतयन्, कायोत्सर्गं स्वाध्यायभूमिं वा कुर्वन्नित्यर्थः १५, एवमाकुट्ट्या सस्निग्धसरजस्कायां पृथिव्यां चित्तवत्यां शिलायां लेष्टौ च, कोलावासे दारुणि, **कोला** घुणाः तेषामावासः १६, अन्यस्मिंश्च तथाप्रकारे सप्राणे सबीजादौ स्थानादि कुर्वन् १७, आकुट्ट्या मूलकन्दादि भुञ्जानः १८, अन्तः संवत्सरस्य दशोदकलेपान् कुर्वन् १९, तथाऽन्तः संवत्सरस्य दश मायास्थानानि च २०, तथा **अभीक्ष्णं** पौनःपुण्येन **शीतोदक**लक्षणं **यद्विकटं** जलं तेन **व्याघारितो** व्याप्तो यः **पाणिः** हस्तः स तथा, तेनाशनादि **प्रगृह्य भुञ्जानः शबलः** इत्येकविंशतितमः २१ । तथा **निवृत्तिबादरस्य**

अपूर्वकरणस्याष्टमगुणस्थानकवर्त्तिन इत्यर्थः, **णं** वाक्यालङ्कारे, **क्षीणं सप्तकम्** अनन्तानुबन्धिचतुष्टय-दर्शनत्रयलक्षणं यस्य स तथा, तस्य **मोहनीयस्य** कर्मणः **एकविंशतिः कर्मांशा** अप्रत्याख्यानादिकषायद्वादशक-नोकषायनवकरूपा उत्तरप्रकृतयः **सत्कर्म** सत्तावस्थं कर्म **प्रज्ञप्तमिति** । तथा **श्रीवत्सं श्रीदामकाण्डं माल्यं कृष्टिं चापोन्नतम् आरणावतंसकं** चेति षड् विमानानि ॥२१॥

[सू० २२] **बावीसं[1] परीसहा पण्णत्ता, तंजहा– दिगिंछापरीसहे[2] १, पिवासापरीसहे २, सीतपरीसहे ३, उसिणपरीसहे ४, दंसमसगफासपरीसहे ५, अचेलपरीसहे ६, अरतिपरीसहे ७, इत्थिपरीसहे ८, चरियापरीसहे ९, णिसीहियापरीसहे १०, सेज्जापरीसहे ११, अक्कोसपरीसहे १२, वधपरीसहे १३, जायणपरीसहे १४, अलाभपरीसहे १५, रोगपरीसहे १६, तणपरीसहे १७, जल्लपरीसहे १८, सक्कारपुरक्कारपरीसहे १९, अण्णाणपरीसहे २०, दंसणपरीसहे २१, पण्णापरीसहे २२ । १।**

दिट्ठिवायस्स णं बावीसं सुत्ताइं छिन्नच्छेयणयियाइं ससमयसुत्तपरिवाडीए २, बावीसं सुत्ताइं अच्छिन्नच्छेयणयियाइं आजीवियसुत्तपरिवाडीए ३, बावीसं सुत्ताइं तिकणइयाइं तेरासियसुत्तपरिवाडीए ४, बावीसं सुत्ताइं चउक्कणइयाइं ससमयसुत्तपरिवाडीए ५।

बावीसतिविधे पोग्गलपरिणामे पण्णत्ते, तंजहा– कालयवण्णपरिणामे, नीलवण्णपरिणामे, लोहियवण्णपरिणामे, हालिद्दवण्णपरिणामे, सुक्किलवण्णपरिणामे । सुब्भिगंधपरिणामे, एवं दुब्भिगंधे वि । तित्तरसपरिणामे, एवं पंच वि रसा । कक्खडफासपरिणामे, मउयफासपरिणामे, गुरुफासपरिणामे, लहुफासपरिणामे, सीतफासपरिणामे, उसिणफासपरिणामे, णिद्धफासपरिणामे, लुक्खफासपरिणामे, गरुयलहुयपरिणामे, अगरुयलहुयपरिणामे ६।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं बावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

---

१. विस्तरार्थिभिः उत्तराध्ययनसूत्रस्य द्वितीये परिषहाध्ययने द्रष्टव्यम् ॥

छट्ठीए पुढवीए णेरइयाणं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

अहेसत्तमाए णं पुढवीए नेरइयाणं जहण्णेणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं बावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं बावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

अच्चुते कप्पे देवाणं उक्कोसेणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

हेट्ठिमहेट्ठिमगेवेज्जाणं देवाणं जहण्णेणं बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

जे देवा महितं विस्सुतं विमलं पभासं वणमालं अच्चुतवडेंसगं विमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं [उक्कोसेणं] बावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ८।

[३] ते णं देवा बावीसं अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं बावीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे बावीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।।

[टी०] द्वाविंशतितमं तु स्थानं प्रसिद्धार्थमेव, नवरं सूत्राणि षट् स्थितेरर्वाक्, तत्र मार्गाच्यवन-निर्जरार्थं परिषह्यन्ते इति **परीषहाः** । **दिगिंछ** त्ति बुभुक्षा, सैव परीषहो **दिगिञ्छापरीषह** इति, सहनं चास्य साधुमर्यादानुल्लङ्घनेन, एवमन्यत्रापि १, तथा **पिपासा** तृट् २, **शीतोष्णे** प्रतीते ३-४, तथा दंशाश्च मशकाश्च **दंश-मशकाः**, उभयेऽप्येते चतुरिन्द्रियाः, महत्त्वामहत्त्वकृतश्चैषां विशेषः, अथवा **दंशो** दशनं भक्षणमित्यर्थः, तत्प्रधाना **मशका दंशमशकाः**, एते च यूका-मत्कुण-मत्कोटक-

१. तुलना- ''मार्गाच्यवन-निर्जरार्थं परिषोढव्याः परीषहाः'' - तत्त्वार्थ० ९।८ ॥

मक्षिकादीनामुपलक्षणमिति ५, तथा **चेला**नां वस्त्राणां बहुधननवीनावदातसुप्रमाणानां सर्वेषां वाऽभावः **अचेलम्** अचेलत्वमित्यर्थः ६, **अरतिः** मानसो विकारः ७, **स्त्री** प्रतीता ८, **चर्या** ग्रामादिष्वनियतविहारिता ९, **नैषेधिकी** सोपद्रवेतरा च स्वाध्यायभूमिः १०, **शय्या** मनोज्ञाऽमनोज्ञा वसतिः संस्तारको वा ११, **आक्रोशो** दुर्वचनम् १२, **वधो** यष्ट्यादिताडनम् १३, **याच्ञा** भिक्षणं तथाविधे प्रयोजने मार्गणं वा १४, **अलाभ-रोगौ** प्रतीतौ १५-१६, **तृणस्पर्शः** संस्तारकाभावे तृणेषु शयानस्य १७, [१]**जल्लः** शरीरवस्त्रादिमलः १८, **सत्कारपुरस्कारौ** वस्त्रादिपूजना-ऽभ्युत्थानादिसंपादने, [२]सत्कारेण वा पुरस्करणं सन्माननं **सत्कारपुरस्कारः** १९, **ज्ञानं** सामान्येन मत्यादि, क्वचि**दज्ञान**मिति श्रूयते २०, **दर्शनं** सम्यग्दर्शनम्, सहनं चास्य क्रियादिवादिनां विचित्रमतश्रवणेऽपि निश्चलचित्ततया धारणम् २१, **प्रज्ञा** स्वयं विमर्शपूर्वको वस्तुपरिच्छेदो मतिज्ञानविशेषभूत इति २२ ।

दृष्टिवादो द्वादशमङ्गम्, स च पञ्चधा - परिकर्म १ सूत्र २ पूर्वगत ३ प्रथमानुयोग ४ चूलिका ५ भेदात्, तत्र **दृष्टिवादस्य** द्वितीये प्रस्थाने **द्वाविंशतिः सूत्राणि**, [३]तत्र सर्वद्रव्य-पर्यायनयाद्यर्थसूचनात् सूत्राणि, **छिन्नच्छेयणइयाइं** ति इह यो नयः सूत्रं छिन्नं छेदेनेच्छति स छिन्नच्छेदनयः, यथा [४]**धम्मो मंगलमुक्कट्ठं** [दशवै० १।१] इत्यादिश्लोकः सूत्रार्थतः छेदेन स्थितो न द्वितीयादिश्लोकानपेक्षते, इत्येवं यानि सूत्राणि छिन्नच्छेदनयवन्ति तानि **छिन्नच्छेदनयिकानि**, तानि च **स्वसमया** जिनमताश्रिता या सूत्राणां **परिपाटिः** पद्धतिस्तस्यां स्वसमयसूत्रपरिपाट्यां भवन्ति तया वा भवन्तीति, तथा **अच्छिन्नच्छेयणयियाइं** ति इह यो नयः सूत्रमच्छिन्नं छेदेनेच्छति सोऽच्छिन्नच्छेदनयो यथा **धम्मो मंगलमुक्कट्ठं**[दशवै० १।१] इत्यादिश्लोकोऽर्थतो द्वितीयादिश्लोकमपेक्षमाण इत्येवं यान्यच्छिन्नच्छेदनयवन्ति तान्य**च्छिन्नच्छेदनयिकानि** तानि चाऽऽ-**जीविकसूत्रपरिपाट्यां** गोशालकमतप्रतिबद्धसूत्रपद्धत्यां तया वा भवन्ति, अक्षररचनाविभागस्थितान्यप्यर्थतोऽन्योन्यमपेक्षमाणानि भवन्तीति भावना, तथा

---

१. यल्लं जे२ ॥ २. **सत्कारे वा** खं० ॥ ३. **तत्र सर्वत्र सर्व** जे२ ॥ ४. "धम्मो मंगलमुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो । देवा वि तं नमसंति, जस्स धम्मे सया मणो ॥१।१॥ **व्या०** धर्मः मङ्गलम् उत्कृष्टम् अहिंसा संयमः तपः देवाः अपि तं नमस्यन्ति यस्य धर्मे सदा मनः ॥" इति **दशवैकालिक**सूत्रे **हरिभद्रसूरि**विरचितायां वृत्तौ॥

तिकणयियाइं ति नयत्रिकाभिप्रायाच्चिन्त्यन्ते यानि तानि नयत्रिकवन्तीति **त्रिकनयिकानी**त्युच्यन्ते, **त्रैराशिकसूत्रपरिपाट्याम्**, इह त्रैराशिका गोशालकमतानुसारिणोऽभिधीयन्ते, यस्मात्ते सर्वं त्र्यात्मकमिच्छन्ति, तद्यथा– जीवोऽजीवो जीवाजीवश्चेति, तथा लोकोऽलोको लोकालोकश्चेत्यादि, नयचिन्तायामपि ते त्रिविधं नयमिच्छन्ति, तद्यथा-द्रव्यास्तिकः पर्यायास्तिकः उभयास्तिकश्चेति, एतदेव नयत्रयमाश्रित्य **त्रिकनयिकानी**त्युक्तमिति, तथा **चउक्कनयियाइं** ति नयचतुष्काभिप्रायतश्चिन्त्यन्ते यानि तानि **चतुष्कनयिकानि**, नयचतुष्कं चैवम्, नैगमनयो द्विविधः सामान्यग्राही विशेषग्राही च, तत्र यः सामान्यग्राही स सङ्ग्रहेऽन्तर्भूतो विशेषग्राही तु व्यवहारे, तदेवं सङ्ग्रह-व्यवहार-र्जुसूत्राः शब्दादित्रयं चैक एवेति चत्वारो नया इति, **स्वसमये**त्यादि तथैवेति ।

तथा **पुद्गलानाम्** अण्वादीनां **परिणामो** धर्मः **पुद्गलपरिणामः**, स च वर्णपञ्चक-गन्धद्वय-रसपञ्चक-स्पर्शाष्टकभेदाद्विंशतिधा, तथा गुरुलघु अगुरुलघु इति भेदद्वयक्षेपाद् द्वाविंशतिः, तत्र गुरुलघु द्रव्यं यत्तिर्यग्गामि वाय्वादि, अगुरुलघु यत् स्थिरं सिद्धिक्षेत्रं घण्टाकारव्यवस्थितज्योतिष्कविमानादीनि । तथा **महितादीनि** षड् विमानानि ॥२२॥

[सू० २३] [१] तेवीसं सूयगडज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा– समए १, वेतालिए २, उवसग्गपरिण्णा ३, थीपरिण्णा ४, नरयविभत्ती ५, महावीरथुई ६, कुसीलपरिभासिते ७, वीरिए ८, धम्मे ९, समाही १०, मग्गे ११, समोसरणे १२, आहत्तहिए १३, गंथे १४, जमतीते १५, गाथा १६, पुंडरीए १७, किरियट्ठाणे १८, आहारपरिण्णा १९, पच्चक्खाणकिरिया २०, अणगारसुतं २१, अद्दइज्जं २२, णालंदतिज्जं २३ । १।

[२] जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए तेवीसाए जिणाणं सूरुग्गमणमुहुत्तंसि केवलवरनाणदंसणे समुप्पण्णे २।

---

१. (दीति ?) ॥ २. ''तए णं समणे भगवं **महावीरे** अणगारे जाए... । तस्स णं भगवंतस्स.. वइसाहसुद्धस्स दसमीपक्खेणं पाईणगामिणीए छायाए पोरिसीए अभिनिवट्टाए पमाणपत्ताए... केवलवरनाणदंसणे समुप्पन्ने'' इति **पर्युषणाकल्पसूत्रे महावीर**चरित्रे । ''अन्ने भणंति- बावीसाए पुव्वण्हे, मल्लि-वीराणं अवरण्हे'' इति **आवश्यकचूर्णौ** पृ० १५८ ॥

जंबुद्दीवे णं दीवे इमीसे ओसप्पिणीए तेवीसं तित्थकरा पुव्वभवे एक्कारसंगिणो होत्था, तंजहा– अजित संभव अभिणंदण जाव पासो वद्धमाणो य । उसभे णं अरहा कोसलिए चोद्दसपुव्वी होत्था ३।

जंबुद्दीवे णं दीवे इमीसे ओसप्पिणीए तेवीसं तित्थकरा पुव्वभवे मंडलियरायाणो होत्था, तंजहा– अजित संभव जाव वद्धमाणो य । उसभे णं अरहा कोसलिए चक्कवट्टी होत्था ४।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं तेवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए णं पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं तेवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं तेवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं तेवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

हेट्ठिममज्झिमगेवेज्जाणं देवाणं जहण्णेणं तेवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा हेट्ठिमहेट्ठिमगेवेज्जयविमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तेवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा तेवीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं तेवीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया [जीवा जे तेवीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति] जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।।

[टी०] त्रयोविंशतिस्थानकं सुगममेव, नवरं चत्वारि सूत्राणि अर्वाक् स्थितिसूत्रेभ्यः, तत्र **सूत्रकृताङ्गस्य** प्रथमे श्रुतस्कन्धे षोडशाऽध्ययनानि, द्वितीये सप्त, तेषां चान्वर्थस्तदधिगमाधिगम्य इति ।।२३।।

[सू० २४] चउवीसं देवाहिदेवा पण्णत्ता, तंजहा– उसभ अजित जाव वद्धमाणे १।

चुल्लहिमवंत-सिहरीणं वासहरपव्वयाणं जीवाओ चउवीसं चउवीसं जोयणसहस्साइं णव बत्तीसे जोयणसते एगं च अट्ठत्तीसभागं जोयणस्स किंचिविसेसाहिताओ आयामेणं पण्णत्ताओ २।

चउवीसं देवट्ठाणा सइंदया पण्णत्ता। सेसा अहमिंदा अणिंदा अपुरोहिता ३।

उत्तरायणगते णं सूरिए चउवीसंगुलियं पोरिसीयं छायं णिव्वत्तइत्ता णं णियट्टति ४।

गंगा-सिंधूओ णं महाणदीओ पवहे सातिरेगे चउवीसं कोसे वित्थारेणं पण्णत्ताओ ५।

रत्त-रत्तवतीओ णं महाणदीओ पवहे सातिरेगे चउवीसं कोसे वित्थारेणं पण्णत्ताओ ६।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं णेरइयाणं चउवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं चउवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं चउवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं चउवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

हेट्ठिमउवरिमगेवेज्जाणं देवाणं जहण्णेणं चउवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा हेट्ठिममज्झिमगेवेज्जयविमाणेसु देवत्ताए उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं चउवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा चउवीसाए अद्धमासाणं आणमंति वा पाणमंति वा

ऊससंति वा णीससंति वा १। तेसि णं देवाणं चउवीसाए वाससहस्साणं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे चउवीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति [जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति] ३।

[टी०] चतुर्विंशतिस्थानके षट् सूत्राणि स्थितेः प्राक्, सुगमानि च। नवरं **देवानाम्** इन्द्रादीना**मधिका देवाः** पूज्यत्वाद् **देवाधिदेवा** इति। तथा **जीवाओ** त्ति जम्बूद्वीपलक्षणवृत्तक्षेत्रस्य वर्षाणां वर्षधराणां च ऋज्वी सीमा जीवोच्यते, आरोपितज्यधनुर्जीवाकल्पत्वात्, तयोश्च लघुहिमवच्छिखरिसत्कयोः प्रमाणम् २४९३२ अष्टत्रिंशद्भागश्च योजनस्य किञ्चिद्विशेषाधिकः, अत्र गाथा–

> चउवीस[1] सहस्साइं नव य सए जोयणाण बत्तीसे।
> चुल्लहिमवंतजीवा आयामेणं कलद्धं च॥ [बृहत्क्षेत्र० ५२] त्ति,

कलार्द्धमिति एकोनविंशतिभागस्यार्द्धम्, तच्चाष्टत्रिंशद्भाग एव भवतीति।

चतुर्विंशतिर्देवस्थानानि देवभेदाः, दश भवनपतीनाम्, अष्टौ व्यन्तराणाम्, पञ्च ज्योतिष्काणाम्, एकं कल्पोपपन्नवैमानिकानाम्, एवं चतुर्विंशतिः, **सेन्द्राणि** चमरादीन्द्राधिष्ठितानि, **शेषाणि** ग्रैवेयका-ऽनुत्तरसुरलक्षणानि 'अहम् अहम्' इत्येवमिन्द्रा येषु तान्य**हमिन्द्राणि**, प्रत्यात्मेन्द्रकाणीत्यर्थः, अत एव **अनिन्द्राणि** अविद्यमाननायकानि **अपुरोहितानि** अविद्यमानशान्तिकर्मकारीणि, उपलक्षणपरत्वादस्याविद्यमान-सेवकजनानीति।

---

१. **व्या०-** ''योजनानां चतुर्विंशतिसहस्राणि नव शतानि द्वात्रिंशानि द्वात्रिंशदधिकानि एकं च कलार्धमित्येतावत्परिमाणायामेन पूर्वापरतया दैर्घ्येण क्षुल्लहिमवतो जीवा। तथाहि- जम्बूद्वीपविष्कम्भः कलारूप एकोनविंशतिलक्षप्रमाणोऽवगाहेन क्षुल्लहिमवतः संबन्धिना त्रिंशत्सहस्रपरिमाणेन ३०००० इषुणा हीनः क्रियते, ततो जातं शेषमिदम्- अष्टादश लक्षाः सप्ततिसहस्राणि १८७०००० । एतद्यथोक्तपरिमाणेन ३०००० अवगाहेन गुण्यते, जातः पञ्चकः षट्कः एककः अष्टौ शून्यानि ५६१००००००००। एष राशिर्भूयश्चतुर्भिर्गुण्यते, जातो द्विकः द्विकः चतुष्कः चतुष्कः अष्टौ शून्यानि २२४४००००००००। अस्य वर्गमूलानयने लब्धः चतुष्कः सप्तकः त्रिकः सप्तकः शून्य अष्टकः ४७३७०८। शेषस्तु राशिरुद्धरति सप्तकः त्रिकः शून्यं सप्तकः त्रिकः षट्कः ७३०७३६। छेदराशिः नवकः चतुष्कः सप्तकः चतुष्कः एककः षट्कः ९४७४१६। ततः कलार्धानयनार्थमुद्धरितो राशिर्द्विकेन गुण्यते छेदराशिना च भज्यते, ततो लब्धमेकं कलार्धं। वर्गमूललब्धस्य तु कलाराशेर्योजनानयनार्थमेकोनविंशत्या भागो ह्रियते, लब्धानि योजनानां चतुर्विंशतिसहस्राणि नव शतानि द्वात्रिंशदधिकानि २४९३२ एकं च कलार्धम् १॥९२॥'' इति **बृहत्क्षेत्रसमासस्य मलयगिरि**सूरिविरचितायां वृत्तौ॥

तथोत्त**रायणगतः** सर्वाभ्यन्तरमण्डलप्रविष्टः **सूर्यः** कर्कसङ्क्रान्तिदिन इत्यर्थः, **चतुर्विंशत्यङ्गुलिकां पौरुष्यां** प्रहरे भवा छाया **पौरुषीया** तां **छायां** हस्तप्रमाणशङ्कोरिति गम्यते, **निर्वर्त्त्य** कृत्वा **णं** वाक्यालङ्कारे **निवर्तते** सर्वाभ्यन्तरमण्डलात् द्वितीयमण्डलमागच्छति, आह च– **आसाढे मासे दुपया**[1] [उत्तरा० २६।१३, ओघनि० २८३] इत्यादि । **प्रवह**[2] इति यतः स्थानान्नदी प्रवहति वोढुं प्रवर्त्तते, स च पद्महृदात्तोरणेन निर्गम इह सम्भाव्यते, न पुनर्योऽन्यत्र प्रवहशब्देन मकरमुखप्रणालनिर्गमः प्रपातकुण्डनिर्गमो वा विवक्षितः, तत्र हि *[3] **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्या**मिह च पञ्चविंशतिक्रोशप्रमाणा **गङ्गादिनद्यो** विस्तारतोऽभिहिता इति ॥२४॥

[सू० २५] [१] पुरिमपच्छिमताणं तित्थगराणं पंचजामस्स पणुवीसं भावणाओ पण्णत्ताओ, तंजहा– इरियासमिति, मणगुत्ती, वइगुत्ती, आलोयभायणभोयणं, आदाणभंडनिक्खेवणासमिति ५, अणुवीतिभासणया, कोहविवेगे, लोभविवेगे, भयविवेगे, हासविवेगे १०, उग्गहअणुण्णवणता, उग्गहसीमजाणणता, सयमेव [4] उग्गहं अणुगेण्हणता, साहम्मियउग्गहं अणुण्णविय परिभुंजणता, साहारणभत्तपाणं अणुण्णविय परिभुंजणता १५, इत्थी-पसु-पंडगसंसत्तसयणासणवज्जणता, इत्थीकहविवज्जणया, इत्थीए इंदियाणमालोयणवज्जणता, पुव्वरत-पुव्वकीलियाणं अणणुसरणता, पणीताहारविवज्जणता २०, सोइंदियरागोवरती, एवं पंच वि इंदिया २५। १।

मल्ली णं अरहा पणुवीसं धणूतिं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था २।

सव्वे वि णं दीहवेयड्ढपव्वया पणुवीसं पणुवीसं जोयणाणि उड्ढंउच्चत्तेणं, पणुवीसं पणुवीसं गाउयाणि उव्वेधेणं पण्णत्ता ३।

दोच्चाए णं पुढवीए पणुवीसं णिरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ४।

आयारस्स णं भगवतो सचूलियायस्स पणुवीसं अज्झीणा पण्णत्ता ५।

---

१. "**अषाढ मासे दोपया पोसे मासे चउप्पया । चित्तासोएसु मासेसु तिपया हवइ पोरिसी ॥२८३॥** व्या०- आषाढे मासे पौर्णमास्यां द्विपदा पौरुषी भवति, पदं च द्वादशाङ्गुलं ग्राह्यम्, पौषे मासे पौर्णमास्यां चतुष्पदा पौरुषी भवति, तथा चैत्राश्वयुजपौर्णमास्यां त्रिपदा पौरुषी भवति ॥२८३॥" इति **ओघनिर्युक्तेः द्रोणाचार्य**विरचितायां वृत्तौ ॥ २. **प्रवहयंति** जे२ ॥ ३. दृश्यतां पृ०८८ पं० ११ ॥ ४. **उग्गह अणु°** जे१,२ खं० ।

मिच्छादिट्ठिविगलिंदिए णं अपज्जत्तए संकिलिट्ठपरिणामे णामस्स कम्मस्स पणुवीसं उत्तरपगडीओ णिबंधति, तंजहा– तिरियगतिणामं, वियलिंदियजातिणामं, ओरालियसरीरणामं, तेयगसरीरणामं, कम्मगसरीरणामं, हुंडसंठाणणामं, ओरालियसरीरंगोवंगणामं, सेवट्टसंघयणणामं, वण्णनामं, गंधणामं, रसणामं, फासणामं, तिरियाणुपुव्विणामं, अगरुलहुनामं, उवघातणामं, तसणामं, बादरणामं, अपज्जत्तयणामं, पत्तेयसरीरणामं, अथिरणामं, असुभणामं, दुभगणामं, अणादेज्जणामं, अजसोकित्तीणामं, निम्माणणामं २५ । ६।

गंगा-सिंधूओ णं महाणदीओ पणुवीसं गाउयाणि पुहत्तेणं दुहतो घडमुहपवत्तिएणं मुत्तावलिहारसंठितेणं पवातेणं पवडंति ७।

रत्ता-रत्तवतीओ णं महाणदीओ पणुवीसं गाउयाणि पुहत्तेणं जाव पवातेणं पवडंति ८।

लोगबिंदुसारस्स णं पुव्वस्स पणुवीसं वत्थू पण्णत्ता ९।

[२] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं पणुवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं पणुवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं पणुवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं पणुवीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

मज्झिमहेट्ठिमगेवेज्जाणं देवाणं जहण्णेणं पणुवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा हेट्ठिमउवरिमगेवेज्जगविमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं [उक्कोसेणं] पणुवीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा पणुवीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं पणुवीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे पणुवीसाए [भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति] जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] पञ्चविंशतिस्थानकमपि सुबोधम्, नवरमिह स्थितेरर्वाग् नव सूत्राणि, तत्र **पंचजामस्स** त्ति पञ्चानां **यामानां** महाव्रतानां समाहारः **पञ्चयामम्**, तस्य **भावणाओ** त्ति प्राणातिपातादिनिवृत्तिलक्षणमहाव्रतसंरक्षणाय भाव्यन्ते इति भावनाः, ताश्च प्रतिमहाव्रतं पञ्च पञ्चेति, तत्रेर्यासमित्याद्याः पञ्च प्रथमस्य महाव्रतस्य, तत्रा**लोकभाजनभोजनम्** आलोकनपूर्वं **भाजने** पात्रे **भोजनं** भक्तादेरभ्यवहरणम्, अनालोक्य भोजने हि प्राणिहिंसा सम्भवतीति, तथा **अनुविचिन्त्यभाषणता**दिका द्वितीयस्य, तत्र **विवेकः** परित्यागः, तथा **अवग्रहानुज्ञापनादि**कास्तृतीयस्य, तत्रा**वग्रहानुज्ञापना** १ तत्र चानुज्ञाते सीमापरिज्ञानम् २, ज्ञातायां च सीमायां स्वयमेव **उग्गह**मिति अवग्रहस्या**नुग्रहणता** पश्चात्स्वीकरणमवस्थानमित्यर्थः ३, **साधर्मिकाणां** गीतार्थसमुदायविहारिणां संविग्नाना**मवग्रहो** मासादिकालमानेन पञ्चक्रोशादिक्षेत्ररूपः साधर्मिकावग्रहः, तं ताने**वानुज्ञाप्य** तस्यैव **परिभोजनता** अवस्थानम्, साधर्मिकाणां क्षेत्रे वसतौ वा तैरनुज्ञाते एव वस्तव्यमिति भावः ४, **साधारणं** सामान्यं यद्भक्तादि तद**नुज्ञाप्या**चार्यादिकं तस्य **परिभोजनते**ति ५, तथा **स्त्र्यादिसंसक्तशयनादिवर्जना**दिकाश्चतुर्थस्य, **प्रणीताहारः** अतिस्नेहवानिति, तथा **श्रोत्रेन्द्रियरागोपरत्या**दिकाः पञ्चमस्य, अयमभिप्रायः– यो यत्र सजति तस्य तत् परिग्रहेऽवतरति, ततश्च शब्दादौ रागं कुर्वता ते परिगृहीता भवन्तीति परिग्रहविरतिर्विराधिता भवति, अन्यथा त्वाराधितेति, **वाचनान्तरे** त्वेता *****आवश्यका**नुसारेण दृश्यन्ते ।

तथा **मिच्छादिट्ठी**त्यादि, मिथ्यादृष्टिरेव तिर्यग्गत्यादिकाः कर्म्मप्रकृतीर्बध्नाति न सम्यग्दृष्टिः, तासां मिथ्यात्वप्रत्ययत्वादिति मिथ्यादृष्टिग्रहणम्, **विकलेन्द्रियो** द्वित्रिचतुरिन्द्रियाणामन्यतमः, **ण**मित्यलङ्कारे, पर्याप्तोऽन्या अपि

बध्नातीत्य**पर्याप्त**ग्रहणम्, अपर्याप्तक एव ह्येता अप्रशस्तपरिवर्त्तमानतद्द्वयेतररूपा बध्नाति, सोऽप्येताः सङ्क्लिष्टपरिणामो बध्नातीति **सङ्क्लिष्टपरिणाम** इत्युक्तम्, अयमपि द्वीन्द्रियाद्यपर्याप्तकप्रायोग्यं बध्नाति, तत्र **विगलिंदियजाइनामं** ति कदाचित् द्वीन्द्रियजात्या सह पञ्चविंशतिः कदाचिद् त्रीन्द्रियजात्या एवमितरथाऽपीति । **गंगेत्यादि,** **पञ्चविंशतिर्गव्यूतानि पृथुत्वेन** यः **प्रपात**स्तेनेति शेषः, **दुहयो** त्ति द्वयोर्दिशोः पूर्वतो **गङ्गा** अपरतः **सिन्धु**रित्यर्थः, पद्महृदाद्विनिर्गते पञ्च पञ्च योजनशतानि पर्वतोपरि गत्वा दक्षिणाभिमुखे प्रवृत्ते, **घडमुहपवत्तिएणं** ति घटमुखादिव पञ्चविंशतिक्रोशपृथुल जिह्विकात् मकरमुखप्रणालात् प्रवृत्तेन **मुक्तावलीनां** मुक्तासरीणां यो **हार**स्तत्**संस्थितेन प्रपातेन** प्रपतज्जलसंतानेन योजनशतोच्छ्रितस्य हिमवतोऽधोवर्त्तिनोः स्वकीययोः प्रपातकुण्डयोः प्रपततः, एवं **रक्ता-रक्तवत्यौ**, नवरं **शिखरिवर्षधरोपरिप्रतिष्ठितपुण्डरीक**हृदात् प्रपतत इति । तथा **लोकबिन्दुसारं** चतुर्दशपूर्वमिति ॥२५॥

[सू० २६] [१] **छव्वीसं दस-कप्प-ववहाराणं उद्देसणकाला पण्णत्ता, तंजहा– दस दसाणं, छ कप्पस्स, दस ववहारस्स १।**

अभवसिद्धियाणं जीवाणं मोहणिज्जस्स कम्मस्स छव्वीसं कम्मंसा संतकम्मा पण्णत्ता, तंजहा– मिच्छत्तमोहणिज्जं, सोलस कसाया, इत्थीवेदे, पुरिसवेदे, नपुंसकवेदे, हासं, अरति, रति, भयं, सोगो, दुगुंछा २।

[२] **इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं छव्वीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।**

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं छव्वीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं छव्वीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं छव्वीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

---

१. **जिह्विकात्** जे२ हे१,२ ॥

मज्झिममज्झिमगेवेज्जयाणं देवाणं जहण्णेणं छव्वीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा मज्झिमहेट्ठिमगेवेज्जयविमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं छव्वीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा छव्वीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। [तेसि णं देवाणं छव्वीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे छव्वीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति] जाव अंतं करेस्संति ३।

[टी०] षड्विंशतिस्थानकं व्यक्तमेव, नवरम् उद्देशनकाला यत्र श्रुतस्कन्धेऽध्ययने च यावन्त्यध्ययनान्युद्देशका वा तत्र तावन्त एव **उद्देशनकाला** उद्देशावसराः श्रुतोपचाररूपा इति । तथा अभव्यानां त्रिपुञ्जीकरणाभावेन सम्यक्त्वमिश्ररूपं प्रकृतिद्वयं सत्तायां न भवतीति षड्विंशतिः सत्कर्मांशा भवन्तीति ॥२६॥

[सू० २७] [१] सत्तावीसं अणगारगुणा पण्णत्ता, तंजहा– पाणातिवातवेरमणे, एवं पंच वि । सोतिंदियनिग्गहे जाव फासिंदियनिग्गहे। कोधविवेगे जाव लोभविवेगे । भावसच्चे, करणसच्चे, जोगसच्चे । खमा, विरागता, मणसमाहरणता, वतिसमाहरणता, कायसमाहरणता, णाणसंपण्णया, दंसणसंपण्णया, चरित्तसंपण्णया, वेयणअधियासणता, मारणंतियअहियासणया १।

जंबुद्दीवे दीवे अभिइवज्जेहिं सत्तावीसाए णक्खत्तेहिं संववहारे वट्टति २।

एगमेगे णं णक्खत्तमासे सत्तावीसं रातिंदियाइं रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु विमाणपुढवी सत्तावीसं जोयणसताइं बाहल्लेणं पण्णत्ता ४।

वेयगसम्मत्तबंधोवरयस्स णं मोहणिज्जस्स कम्मस्स सत्तावीसं उत्तरपगडीओ संतकम्मंसा पण्णत्ता ५।

सावणसुद्धसत्तमीए णं सूरिए सत्तावीसंगुलियं पोरिसिच्छायं णिव्वत्तइत्ता

णं दिवसखेत्तं निवड्ढेमाणे रयणिखेत्तं अभिणिवड्ढेमाणे चारं चरति ६।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं सत्तावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं सत्तावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं सत्तावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं सत्तावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

मज्झिमउवरिमगेवेज्जयाणं देवाणं जहण्णेणं सत्तावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा मज्झिममज्झिमगेवेज्जयविमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं सत्तावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा सत्तावीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं सत्तावीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे सत्तावीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव अंतं करेस्संति ३ ।

[टी०] सप्तविंशतिस्थानकमपि व्यक्तमेव, केवलं षट् सूत्राणि स्थितेरर्वाक्, तत्र अनगाराणां साधूनां गुणाः चरित्रविशेषा **अनगारगुणाः**, तत्र महाव्रतानि पञ्च, इन्द्रियनिग्रहाश्च पञ्च, क्रोधादिविवेकाश्चत्वारः, सत्यानि त्रीणि १७, तत्र **भावसत्यं** शुद्धान्तरात्मता, **करणसत्यं** यत् प्रतिलेखनादिक्रियां यथोक्तां सम्यगुपयुक्तः कुरुते, **योगसत्यं** योगानां मनःप्रभृतीनामवितथत्वम् १७। **क्षमा** अनभिव्यक्तक्रोधमानस्वरूपस्य द्वेषसञ्ज्ञितस्याप्रीतिमात्रस्याभावः, अथवा क्रोधमानयोरुदयनिरोधः, क्रोधमानविवेकशब्दाभ्यां तूदयप्राप्तयोस्तयोर्निरोधः प्रागभिहित इति न पुनरुक्तताऽपीति १८।

विरागता अभिष्वङ्गमात्रस्याभावः, अथवा मायालोभयोरनुदयः, मायालोभविवेकशब्दाभ्यां तूदयप्राप्तयोस्तयोर्निरोधः प्रागभिहित इतीहापि न पुनरुक्ततेति १९ । **मनोवाक्कायानां समाहरणता**, पाठान्तरतः **समन्वाहरणता** अकुशलानां निरोधास्त्रयः २२ । **ज्ञानादिसम्पन्नतास्तिस्रः** २५ । **वेदनातिसहनता** शीताद्यतिसहनम् २६ । **मारणान्तिकातिसहनता** कल्याणमित्रबुद्ध्या मारणान्तिकोपसर्गसहनमिति २७।

तथा **जम्बूद्वीपे** न धातकीखण्डादौ **अभिजिद्वर्जैः सप्तविंशत्या नक्षत्रैर्व्यवहारः प्रवर्त्तते**, अभिजिन्नक्षत्रस्योत्तराषाढचतुर्थपादानुप्रवेशनादिति । तथा मासो नक्षत्र-चन्द्रा-ऽभिवर्द्धित-ऋत्वा-ऽऽदित्यमासभेदात् पञ्चविधोऽन्यत्रोक्तः, तत्र **नक्षत्रमासः** चन्द्रस्य नक्षत्रमण्डलभोगकाललक्षणः **सप्तविंशतिः रात्रिंदिवानि** अहोरात्राणि **रात्रिंदिवाग्रेणे**ति अहोरात्रपरिमाणापेक्षयेदं परिमाणं न तु सर्वथा, तस्याधिकतरत्वाद्, आधिक्यं चाहोरात्रसप्तषष्टिभागानामेकविंशत्येति । **विमाणपुढवि** त्ति विमानानां पृथिवी भूमिका ।

तथा **वेदकसम्यक्त्वबन्धः**, क्षायोपशमिकसम्यक्त्वहेतुभूतशुद्धदलिकपुञ्जरूपा दर्शनमोहनीयप्रकृतिस्तस्य, **उवरओ** त्ति प्राकृतत्वादुद्वलको वियोजको यो जन्तुस्तस्य मोहनीयकर्मणोऽष्टाविंशतिविधस्य मध्ये **सप्तविंशतिरुत्तरप्रकृतयः सत्कर्मांशाः** सत्तायामित्यर्थः, एकस्योद्वलितत्वादिति ।

तथा **श्रावण**मासस्य **शुद्धसप्तम्यां सूर्यः सप्तविंशत्यङ्गुलिकां** हस्तप्रमाण-शङ्कोरिति गम्यते **पौरुषीं छायां** प्रहरच्छायां **निर्वर्त्य दिवसक्षेत्रं** रविकरप्रकाशमाकाशं **निवर्द्धयन्** प्रकाशहान्या हानिं नयन् **रजनीक्षेत्रम्** अन्धकाराक्रान्तमाकाश**मभिनिवर्द्धयन्** प्रकाशहान्या वृद्धिं नयन् **चारं चरति** व्योममण्डले भ्रमणं करोति, अयमत्र भावार्थः– इह किल स्थूलन्यायमाश्रित्य आषाढ्यां चतुर्विंशत्यङ्गुलप्रमाणा पौरुषीच्छाया भवति, दिनसप्तके च सातिरेके छायाऽङ्गुलं वर्द्धते, ततश्च श्रावणशुद्धसप्तम्यामङ्गुलत्रयं वर्द्धते, सातिरेकैकविंशतितमदिनत्वात्तस्याः, तदेवमाषाढ्याः सत्कैरङ्गुलैः सह सप्तविंशति-रङ्गुलानि भवन्ति, निश्चयतस्तु कर्कसङ्क्रान्तेरारभ्य यत् सातिरेकैकविंशतितमं दिनं तत्रोक्तरूपा पौरुषीच्छाया भवति ॥२७॥

---

१. °द्यधिम° जे२ हे१,२ ॥

[सू० २८] अट्ठावीसतिविहे आयारपकप्पे पण्णत्ते, तंजहा– मासिया आरोवणा, सपंचरायमासिया आरोवणा, सदसरातमासिया आरोवणा, सपण्णरसरातमासिया आरोवणा, सवीसतिरायमासिया आरोवणा, सपंचवीसरातमासिया आरोवणा, एवं चेव दोमासिया आरोवणा, सपंचरातदोमासिया आरोवणा, एवं तेमासिया आरोवणा, चउमासिया आरोवणा, उग्घातिया आरोवणा, अणुग्घातिया आरोवणा, कसिणा आरोवणा, अकसिणा आरोवणा । इत्ताव ताव आयारपकप्पे, इत्ताव ताव आयरियव्वे १।

भवसिद्धियाणं जीवाणं अत्थेगतियाणं मोहणिज्जस्स कम्मस्स अट्ठावीसं कम्मंसा संतकम्मं पण्णत्ता, तंजहा– सम्मत्तवेयणिज्जं, मिच्छत्तवेयणिज्जं सम्ममिच्छत्तवेयणिज्जं, सोलस कसाया, णव णोकसाया २।

आभिणिबोहियणाणे अट्ठावीसतिविहे पण्णत्ते, तंजहा– सोतिंदियत्थोग्गहे, चक्खिंदियत्थोग्गहे, घाणिंदियत्थोग्गहे, जिब्भिंदियत्थोग्गहे, फासिंदियत्थोग्गहे, णोइंदियत्थोग्गहे, सोतिंदियवंजणोग्गहे, घाणिंदियवंजणोग्गहे, जिब्भिंदियवंजणोग्गहे, फासिंदियवंजणोग्गहे, सोतिंदियईहा जाव फासिंदियईहा, णोइंदियईहा, सोतिंदियावाते जाव णोइंदियअवाते, सोइंदियधारणा जाव णोइंदियधारणा ३।

ईसाणे णं कप्पे अट्ठावीसं विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता ।

जीवे णं देवगतिं निबंधमाणे नामस्स कम्मस्स अट्ठावीसं उत्तरपगडीओ णिबंधति, तंजहा– देवगतिनामं, पंचेंदियजातिनामं, वेउव्वियसरीरनामं, तेययसरीरनामं, कम्मयसरीरनामं, समचउरंससंठाणणामं, वेउव्वियसरीरंगोवंगणामं, वण्णणामं, गंधणामं, रसणामं, फासणामं,

१. आवश्यकसूत्रस्य चतुर्थे प्रतिक्रमणाध्ययने 'अट्ठावीसविहे आयारकप्पे' इति सूत्रस्य **हरिभद्रसूरि**विरचितायां वृत्तौ त्वेवम्- ''अष्टाविंशतिविध आचार एवाऽऽचारप्रकल्पः, क्रिया पूर्ववत्, अष्टाविंशतिभेदान् दर्शयति- ''सत्थपरिण्णा १ लोगो विजओ य २ सीओसणिज्ज ३ संमत्तं ४ । आवंति ५ धुवविमोहो ६-७ उवहाणसुय ८ महापरिण्णा ९ य ॥१॥ पिंडेसणसिज्जिरिया भासज्जाया १०-१३ य वत्थपाएसा १४-१५ । उग्गहपडिमा १६ सत्तेक्कतयं २३ भावणविमुत्तीओ २४-२५ ॥२॥ उग्घायमणुग्घायं आरुवणा तिविहमो णिसीहं तु २६-२७-२८ । इय अट्ठावीसविहो आयारपकप्पणामोऽयं ॥३॥''

देवाणुपुव्वीणामं, अगुरुयलहुअनामं, उवघायनामं, पराघायनामं, ऊसासनामं, पसत्थविहायगइणामं, तसनामं, बायरणामं, पज्जत्तनामं, पत्तेयसरीरनामं, थिराथिराणं दोण्हं अण्णयरं एगनामं णिबंधति, सुभासुभाणं दोण्हमण्णयरं एगनामं निबंधइ, सुभगणामं, सुस्सरणामं, आएज्ज-अणाएज्जनामाणं दोण्हमण्णयरं एगनामं निबंधइ, जसकित्तिनामं, निम्माणनामं । एवं चेव नेरइए वि, णाणत्तं अपसत्थविहायगइणामं, हुंडसंठाणनामं, अथिरणामं, दुब्भगणामं, असुभनामं, दुस्सरनामं, अणादेज्जणामं, अजसोकित्तीणामं, निम्माणनामं ५।

[२] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं अट्ठावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं अट्ठावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं अट्ठावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु देवाणं अत्थेगतियाणं अट्ठावीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

उवरिमहेट्ठिमगेवेज्जयाणं देवाणं जहण्णेणं अट्ठावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा मज्झिमउवरिमगेवेज्जएसु विमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं अट्ठावीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा अट्ठावीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। [तेसि णं देवाणं अट्ठावीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे अट्ठावीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति] जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] अष्टाविंशतिस्थानकमपि व्यक्तम्, नवरमिह पञ्च स्थितेः प्राक् सूत्राणि, तत्र **आचारः** प्रथमाङ्गं तस्य **प्रकल्पः** अध्ययनविशेषो **निशीथ**मित्यपराभिधान **आचारस्य**

वा साध्वाचारस्य ज्ञानादिविषयस्य **प्रकल्पो** व्यवस्थापनमित्याचारप्रकल्पः, तत्र क्वचिद् ज्ञानाद्याचारविषये अपराधमापन्नस्य किञ्चित् प्रायश्चित्तं दत्तम्, पुनरन्यमपराधविशेषमापन्नस्ततस्तत्रैव प्राक्तने प्रायश्चित्ते मासवहनयोग्यं मासिकं प्रायश्चित्तमारोपितमित्येवं मासिक्यारोपणा भवति, तथा पञ्चरात्रिकशुद्धियोग्यं मासिकशुद्धियोग्यं चापराधद्वयमापन्नस्ततः पूर्वदत्तप्रायश्चित्ते सपञ्चरात्रमासिकप्रायश्चित्तारोपणात् **सपञ्चरात्रमासिक्यारोपणा** भवति, एवं मासिक्यारोपणाः षट् ६, एवं द्विमासिक्यः ६, त्रिमासिक्यः ६, चतुर्मासिक्योऽपीति ६ चतुर्विंशतिरारोपणाः, तथा सार्द्धदिनद्वयस्य पक्षस्य चोद्घातनेन लघूनां मासादीनां प्राचीनप्रायश्चित्ते आरोपणा औद्घातिक्यारोपणा, यदाह–

अद्धेण छिन्नसेसं पुव्वद्धेणं तु संजुयं काउं ।
देज्जा य लहुयदाणं गुरुदाणं तत्तियं चेव ।। [ ] त्ति ।

यथा मासार्द्धं १५ पञ्चविंशतिकार्द्धं च सार्द्धद्वादश, सर्वमीलने सार्द्धसप्तविंशतिरिति लघुमासः, तथा मासद्वयार्द्धं मासो मासिकस्यार्द्धं पक्ष उभयमीलने सार्द्धो मास इति लघुद्वैमासिकम् २५, तथा तेषामेव सार्द्धदिनद्वयाद्यनुद्घातनेन गुरूणामारोपणा अनौद्घातिक्यारोपणा २६, तथा यावतोऽपराधानापन्नस्तावतीनां तच्छुद्धीनामारोपणा कृत्स्नारोपणा २७, तथा बहूनपराधानापन्नस्य षण्मासान्तं तप इति कृत्वा षण्मासाधिकं तपःकर्म तेष्वेवान्तर्भाव्य शेषमारोप्यते यत्र सा अकृत्स्नारोपणेत्यष्टाविंशतिः २८, एतच्च सम्यग् **निशीथविंशतितमोद्देशका**वगम्यम् । अत्रैव निगमनमाह- **एतावांस्ताव**दाचारप्रकल्पः, इह स्थानके आरोपणामाश्रित्य विवक्षितोऽन्यथा तद्व्यतिरेकेणापि तस्योद्घातिकानुद्घातिकरूपस्य भावात्, अथवैतावानेवायं तावदाचारप्रकल्पः, शेषस्यात्रैवान्तर्भावात्, तथा **एतावत्तावदा**चरितव्यमित्यपि तथैव । **देवगति**सूत्रे स्थिरास्थिरयोः शुभाशुभयोरादेयानादेययोश्च परस्परं विरोधित्वेनैकदा बन्धाभावादन्यतरद्बध्नातीत्युक्तम्, तत्र चैकशब्दग्रहणं भाषामात्र एवावसेयमिति.

१. "**रात्रिकमासिक**" जे२ ।। २. **स्थानाङ्ग**टीकायामुद्धृतमेतत् पृ० २७६, ५५८ ।। ३. जे२ मध्ये "**षण्मासान्तं तप इति कृत्वा**" इति पाठः पतितः ।। ४. **कृत्वा** नास्ति खं० ।।

नारकसूत्रे विंशतिस्ता एव प्रकृतयोऽष्टानां तु स्थाने अष्टावन्या बध्नाति, एतदेवाह- **एवं चेवेत्यादि, नानात्वं** विशेषः ॥२८॥

[सू० २९] [१] एगूणतीसतिविहे [१]पावसुतपसंगे पण्णत्ते, तंजहा– भोमे, उप्पाए, सुमिणे, अंतलिक्खे, अंगे, सरे, वंजणे, लक्खणे । भोमे तिविहे पण्णत्ते, तंजहा– सुत्तं, वित्ती, वत्तिए । एवं एक्केक्कं तिविहं । विकहाणुयोगे, विज्जाणुजोगे, मंताणुजोगे, जोगाणुजोगे, अण्णतित्थियपवत्ताणुजोगे १।

आसाढे णं मासे एगूणतीसं रातिंदियाइं रातिंदियाइं पण्णत्ते २।

भद्दवते णं मासे [एगूणतीसं रातिंदियाइं रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते] ३।

कत्तिए णं [मासे एगूणतीसं रातिंदियाइं रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते] ४।

पोसे णं मासे [एगूणतीसं रातिंदियाइं रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते] ५।

फग्गुणे णं [मासे एगूणतीसं रातिंदियाइं रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते] ६।

वइसाहे णं मासे [एगूणतीसं रातिंदियाइं रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते] ७।

चंददिणे णं एकूणतीसं मुहुत्ते सातिरेगे मुहुत्तग्गेणं पण्णत्ते ८।

जीवे णं पसत्थज्झवसाणजुत्ते भविए सम्मद्दिट्ठी तित्थकरनामसहिताओ णामस्स णियमा एगूणतीसं उत्तरपगडीओ निबंधित्ता वेमाणिएसु देवेसु देवत्ताए उववज्जति ९।

[२] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एगूणतीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एगूणतीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं एगूणतीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

---

१. **आवश्यकसूत्रस्य** चतुर्थे प्रतिक्रमणाध्ययने 'एगूणतीसाए पावसुयपसंगेहिं' इति सूत्रस्य **हरिभद्र**सूरिविरचितायां वृत्तावपि किञ्चिद्भेदेन पापश्रुतप्रसङ्गानां वर्णनं वर्तते ॥

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं एगूणतीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

उवरिममज्झिमगेवेज्जयाणं देवाणं जहण्णेणं एगूणतीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा उवरिमहेट्ठिमगेवेज्जयविमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं एगूणतीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा एगूणतीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं एगूणतीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे एगूणतीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति [जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति] ३।

[टी०] एकोनत्रिंशत्स्थानकमपि व्यक्तमेव, नवरं नवेह सूत्राणि स्थितेः प्राक्, तत्र पापोपादानानि श्रुतानि **पापश्रुतानि**, तेषां **प्रसङ्गः** तथाऽऽसेवनारूपः **पापश्रुतप्रसङ्गः**, स च पापश्रुतानामेकोनत्रिंशद्विधत्वात् तद्विध उक्तः, पापश्रुतविषयतया पापश्रुतान्येव वोच्यन्ते, अत एवाह– **भोमे**त्यादि, तत्र **भौमं** भूमिविकारफलाभिधानप्रधानं निमित्तशास्त्रम्, तथा **उत्पातं** सहजरुधिरवृष्ट्यादिलक्षणोत्पातफलनिरूपकं निमित्तशास्त्रम्, एवं **स्वप्नं** स्वप्नफलाविर्भावकम्, **अन्तरिक्षम्** आकाशप्रभवग्रहयुद्ध-भेदादिभावफलनिवेदकम्, **अङ्गं** शरीरावयवप्रमाणस्पन्दितादिविकारफलोद्भावकम्, **स्वरं** जीवाजीवाश्रितस्वरस्वरूपफलाभिधायकम्, **व्यञ्जनं** मषादिव्यञ्जनफलोपदर्शकम्, **लक्षणं** लाञ्छनाद्यनेकविधलक्षणव्युत्पादकमित्यष्टौ । एतान्येव सूत्र-वृत्ति-वार्त्तिकभेदाच्चतुर्विंशतिः २४, तत्राङ्गवर्जितानामन्येषां **सूत्रं** सहस्रप्रमाणम्, **वृत्ति**र्लक्षप्रमाणा, **वार्त्तिकं** वृत्तिव्याख्यानरूपं कोटीप्रमाणम्, अङ्गस्य तु **सूत्रं** लक्षम्, वृत्तिः कोटी, **वार्त्तिक**मपरिमितमिति, तथा **विकथानुयोगः** अर्थ-कामोपायप्रतिपादनपराणि **कामन्दक-वात्स्यायनादीनि भारतादीनि** वा शास्त्राणि २५, तथा **विद्यानुयोगो** रोहिणीप्रभृतिविद्यासाधनाभिधायीनि शास्त्राणि २६,

मन्त्रानुयोगश्चेटकादिमन्त्रसाधनोपायशास्त्राणि २७, **योगानुयोगो** वशीकरणादियोगाभिधायिकानि **हरमेखला**दिशास्त्राणि २८, **अन्यतीर्थिकेभ्यः** कपिलादिभ्यः सकाशाद्यः **प्रवृत्तः** स्वकीयाचारवस्तुतत्त्वाना**मनुयोगो** विचारः तत्पुरस्करणार्थं शास्त्रसन्दर्भ इत्यर्थः सोऽ**न्यतीर्थिकप्रवृत्तानुयोग** इति २९ । तथाऽऽषाढादय एकान्तरिता षण्मासा **एकोनत्रिंशद्रात्रिंदिवानि** रात्रिंदिवपरिमाणेन भवन्ति स्थूलन्यायेन, कृष्णपक्षे प्रत्येकं रात्रिंदिवस्यैकस्य क्षयात्, आह च–

आसाढबहुलपक्खे भद्दवए कत्तिए य पोसे य ।
फग्गुण-वइसाहेसु य बोधव्वा ओमरत्ताओ ॥ [उत्तरा० २६।१५] त्ति ।

इयमत्र भावना- चन्द्रमासो हि एकोनत्रिंशद् दिनानि दिनस्य च द्विषष्टिभागानां द्वात्रिंशत्, ऋतुमासश्च त्रिंशदेव दिनानि भवतीति चन्द्रमासापेक्षया ऋतुमासोऽहोरात्रद्विषष्टिभागानां त्रिंशता समधिको भवति, ततश्च प्रत्यहोरात्रं चन्द्रदिनमेकैकेन द्विषष्टिभागेन हीयते इत्यवसीयते, एवं द्विषष्ट्या चन्द्रदिवसानामेकषष्टिरहोरात्राणां भवतीत्येवं सातिरेके मासद्वये एकमवमरात्रं भवतीति, विशेषस्त्विह **चन्द्रप्रज्ञप्ते**रवसेय इति ।

तथा **चंददिणे णं** ति **चन्द्रदिनं** प्रतिपदादिका तिथिः, तच्चैकोनत्रिंशद् मुहूर्त्ताः सातिरेका मुहूर्त्तपरिमाणेनेति, कथम् ? यतः किल चन्द्रमास एकोनत्रिंशद् दिनानि द्वात्रिंशच्च दिनद्विषष्टिभागा भवन्ति, ततश्चन्द्रदिनं चन्द्रमासस्य त्रिंशता गुणनेन मुहूर्त्तराशीकृतस्य त्रिंशता भागहारे एकोनत्रिंशन्मुहूर्त्ता द्वात्रिंशच्च मुहूर्त्तस्य द्विषष्टिभागा लभ्यन्त इति ।

---

१. °णार्थः हे२ ॥ २. **रात्रिदिवसपरि**° खं० । **रात्रिंदिवप्रमाणेन** हे२ ॥ ३. **रात्रिंदिवसस्यै**° खं० ॥ ४. "**आसाढ** त्ति आषाढे बहुलपक्षे भाद्रपदादिषु च बहुलपक्षे **ओम** त्ति **अवमा** न्यूना एकेनेति शेषः, **रत्त** त्ति पदैकदेशेऽपि पदप्रयोगदर्शनादहोरात्राः, एवं चैकदिनापहारे दिनचतुर्दशकेनैव कृष्णपक्ष एतेष्विति भावः ॥२६।१५॥" इति **उत्तराध्ययनसूत्रस्य शान्तिसूरि**विरचितायां पाईयटीकायाम् । तथा **ओघनिर्युक्तौ** गा० २८५॥ ५. **बोद्धव्वा** जे२ ॥ ६. प्रतिषु पाठाः- °**रत्ताओ** हे१,२ । °**रणाओ** जे१ । °**राओ त्ति** जे२ । °**रवाओ त्ति** खं० ॥ ७. **भवंतीति** हे१,२ ॥ ८. **चन्द्रप्रज्ञप्तेः द्वादशे प्राभृते** विशेषजिज्ञासुभिर्विलोकनीयम् ॥

तथा जीवः प्रशस्ताध्यवसानादिविशेषणो वैमानिकेषूत्पत्तुकामो नामकर्मण एकोनत्रिंशदुत्तरप्रकृतीर्बध्नाति, ताश्चेमाः- देवगतिः १ पञ्चेन्द्रियजातिः २ वैक्रियद्वयं ४ तैजसकार्मणशरीरे ६ समचतुरस्रं संस्थानं ७ वर्णादिचतुष्कं ११ देवानुपूर्वी १२ अगुरुलघु १३ उपघातं १४ पराघातम् १५ उच्छ्वासं १६ प्रशस्तविहायोगतिः १७ त्रसं १८ बादरं १९ पर्याप्तं २० प्रत्येकं २१ स्थिरास्थिरयोरन्यतरत् २२ शुभाशुभयोरन्यतरत् २३ सुभगं २४ सुस्वरम् २५ आदेयानादेययोरन्यतरत् २६ [1]यशःकीर्त्ययशःकीर्त्योरेकतरं २७ निर्माणं २८ तीर्थकरं चेति २९ ।

[सू० ३०] [१] **तीसं मोहणिज्जठाणा पण्णत्ता, तंजहा–**

[2]जे यावि तसे पाणे वारिमज्झे विगाहिया ।
उदएणक्कम्म मारेति महामोहं पकुव्वति ।।[3]१९।। १।
सीसावेढेण जे केई आवेढेति अभिक्खणं ।
[4]तिव्वे असुभसमायारे महामोहं पकुव्वति ।।२०।। २।
पाणिणा संपिहित्ताणं सोयमावरिय पाणिणं ।
अंतो नदंतं मारेइ महामोहं [5]पकुव्वइ ।।२१।। ३।
जायतेयं समारब्भ बहुं ओरुंभिया जणं ।
अंतोधूमेण मारेइ महामोहं पकुव्वइ ।।२२।। ४।
सीसम्मि जे पहणइ उत्तमंगम्मि चेयसा ।
विभज्ज मत्थयं फाले महामोहं पकुव्वति ।।२३।। ५।
पुणो पुणो पणिहीए हणित्ता उवहसे जणं ।
फलेणं अदुव दंडेणं महामोहं पकुव्वइ ।।२४।। ६।
गूढायारी निगूहेज्जा मायं मायाए छायए ।
असच्चवाई णिण्हाई महामोहं पकुव्वइ ।।२५।। ७।

---

१. **यशःकीर्तिः** २७ हे२ विना ।। २. **दशाश्रुतस्कन्धे** नवम्यां दशायां सर्वा अप्येता गाथा वर्तन्ते ।। ३. प्रथमोऽङ्कः आदितो गाथाङ्कस्य सूचकः । द्वितीयस्तु मोहनीयस्थानक्रमाङ्कः।। ४. **तिव्वासुभ**° जे१ ।। ५. इत आरभ्य अटी०खं० जे१ मध्ये प्रायः सर्वत्र °**व्वई** इति पाठः ।।

धंसेइ जो अभूएणं अकम्मं अत्तकम्मुणा ।
अदुवा तुममकासि त्ति महामोहं पकुव्वइ ॥२६॥ ८।
जाणमाणो परिसओ सच्चामोसाणि भासति[1] ।
अज्झीणझंझे पुरिसे महामोहं पकुव्वति ॥२७॥ ९।
अणायगस्स नयवं दारे तस्सेव धंसिया ।
विउलं विक्खोभइत्ताणं किच्चा णं पडिबाहिरं ॥२८॥
उवगसंतं पि झंपिता पडिलोमाहिं वग्गूहिं ।
भोगभोगे वियारेति महामोहं पकुव्वति ॥२९॥ १०।
अकुमारभूए जे केइ कुमारभूए त्ति हं वए ।
इत्थीहिं गिद्धे वसए महामोहं पकुव्वति ॥३०॥ ११।
अबंभयारी जे केइ बंभयारि त्ति हं वए ।
गद्दभे व्व गवं मज्झे विस्सरं नदई नदं ॥३१॥
अप्पणो अहिए बाले मायामोसं बहुं भसे ।
इत्थीविसयगेहीए महामोहं पकुव्वइ ॥३२॥ १२।
जं निस्सिए उव्वहती जससा अहिगमेण वा ।
तस्स लुब्भइ वित्तम्मि महामोहं पकुव्वइ ॥३३॥ १३।
इस्सरेण अदुवा गामेणं अणिस्सरे इस्सरीकए ।
तस्स संपग्गहीयस्स सिरी अतुलमागया ॥३४॥
ईसादोसेण आइट्ठे कलुसाविलचेयसे ।
जे अंतरायं चेएइ महामोहं पकुव्वति ॥३५॥ १४।
सप्पी जहा अंडउडं भत्तारं जो विहिंसइ ।
सेणावइं पसत्थारं महामोहं पकुव्वइ ॥३६॥ १५।
जे नायगं व रट्ठस्स नेयारं निगमस्स वा ।
सेट्ठिं बहुरवं हंता महामोहं पकुव्वति ॥३७॥ १६।

---

१. भामई अटो० ॥

बहुजणस्स णेयारं दीवं ताणं च पाणिणं ।
एयारिसं नरं हंता महामोहं पकुव्वति ॥३८॥ १७।
उवट्ठियं पडिविरयं संजयं सुतवस्सियं ।
वोकम्म धम्मओ भंसे महामोहं पकुव्वति ॥३९॥ १८।
तहेवाणंतणाणीणं जिणाणं वरदंसिणं ।
तेसिं अवण्णिमं बाले महामोहं पकुव्वति ॥४०॥ १९।
नेयाउयस्स मग्गस्स दुट्ठे अवयरई बहुं ।
तं तिप्पयंतो भावेति महामोहं पकुव्वति ॥४१॥ २०।
आयरियउवज्झाएहिं सुयं विणयं च गाहिए ।
ते चेव खिंसती बाले महामोहं पकुव्वति ॥४२॥ २१।
आयरियउवज्झायाणं सम्मं नो पडितप्पइ ।
अप्पडिपूयए थद्धे महामोहं पकुव्वति ॥४३॥ २२।
अबहुस्सुए य जे केइ सुएण पविकंथई ।
सज्झायवायं वयति महामोहं पकुव्वति ॥४४॥ २३।
अतवस्सिए य जे केइ तवेण पविकंथइ ।
सव्वलोयपरे तेणे महामोहं पकुव्वति ॥४५॥ २४।
साहारणट्ठा जे केइ गिलाणम्मि उवट्ठिए ।
पभू ण कुणई किच्चं मज्झं पि से न कुव्वति ॥४६॥
सढे नियडिपण्णाणे कलुसाउलचेयसे ।
अप्पणो य अबोहीए महामोहं पकुव्वति ॥४७॥ २५।
जे कहाहिगरणाइं संपउंजे पुणो पुणो ।
सव्वतित्थाण भेयाय महामोहं पकुव्वति ॥४८॥ २६।
जे य आहम्मिए जोए संपउंजे पुणो पुणो ।
साहाहेउं सहीहेउं महामोहं पकुव्वति ॥४९॥ २७।

जे य माणुस्सए भोए अदुवा पारलोइए ।
तेऽतिप्पयंतो आसयति महामोहं पकुव्वति ॥५०॥ २८।
इड्डी जुती जसो वण्णो देवाणं बलवीरियं ।
तेसिं अवण्णिमं बाले महामोहं पकुव्वति ॥५१॥ २९।
अपस्समाणो पस्सामि देवे जक्खे य गुज्झगे ।
अण्णाणी जिणपूयट्ठी महामोहं पकुव्वति ॥५२॥ ३०।१।

थेरे णं मंडियपुत्ते तीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता सिद्धे बुद्धे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे २।

एगमेगे णं अहोरत्ते तीसं मुहुत्ता मुहुत्तग्गेणं पण्णत्ते ।

एतेसि णं तीसाए मुहुत्ताणं तीसं नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा– रोद्दे, सेते, मित्ते, वाऊ, सुपीए ५, अभियंदे, माहिंदे, बलवं, बंभे, सच्चे १०, आणंदे, विजए, वीससेणे, पायावच्चे, उवसमे १५, ईसाणे, तट्ठे, भावियप्पा, वेसमणे, वरुणे २०, सतरिसभे, गंधव्वे, अग्गिवेसायणे, आतवं, आवत्तं २५, तट्ठवं, भूमहं, रिसभे, सव्वट्ठसिद्धे, रक्खसे ३० । ३।

अरे णं अरहा तीसं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ४।

सहस्सारस्स णं देविंदस्स देवरण्णो तीसं सामाणियसाहस्सीतो पण्णत्ताओ ५।

पासे णं अरहा तीसं वासाइं अगारमज्झावसित्ता अगारातो अणगारियं पव्वतिते ६।

समणे भगवं महावीरे तीसं वासाइं अगार जाव पव्वतिते ७।

रयणप्पभाए णं पुढवीए तीसं निरयावाससतसहस्सा पण्णत्ता ८।

[२] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

[सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ?] ४।

उवरिम[उवरिम]गेवेज्जयाणं देवाणं जहण्णेणं तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा उवरिममज्झिमगेवेज्जएसु विमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा तीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १, जाव तीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे [समुप्पज्जति] २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे तीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] त्रिंशत्स्थानकं सुगमम्, नवरं स्थितेरर्वागष्टौ सूत्राणि, तत्र **मोहनीयं** सामान्येनाष्टप्रकारं कर्म विशेषतश्चतुर्थी प्रकृतिः, तस्य **स्थानानि** निमित्तानि **मोहनीयस्थानानि**, तथा **जे आवि तसे** इत्यादिश्लोकः, **यश्चापि त्रसान् प्राणान्** स्त्र्यादीन् **वारिमध्ये विगाह्य** प्रविश्योद**केन** शस्त्रभूतेन **मारयति**, कथम् ?, **आक्रम्य** पादादिना, स इति गम्यते, मार्यमाणस्य महामोहोत्पादकत्वात् सङ्क्लिष्टचित्तत्वाच्च भवशतदुःखवेदनीयमात्मनो **महामोहं प्रकरोति** जनयति, तदेवंभूतं त्रसमारणमेकं मोहनीयस्थानमेवं सर्वत्रेति १।

सीसा श्लोकः, **शीर्षावेष्टेन** आर्द्रचर्मादिमयेन **यः कश्चिद्वेष्टयति** स्त्र्यादित्रसानिति गम्यते **अभीक्ष्णं** भृशं **तीव्रोऽशुभसमाचारः** स इत्यस्य गम्यमानत्वात् स मार्यमाणस्य महामोहोत्पादकत्वेन आत्मनो **महामोहं प्रकुरुत** इति २।

यावत्करणात् केषुचित् सूत्रपुस्तकेषु शेषमोहनीयस्थानाभिधानपराः श्लोकाः सूचिताः, केषुचित् दृश्यन्त एवेति ते व्याख्यायन्ते–

पाणिणा संपिहित्ताणं सोयमावरिय पाणिणं ।
अंतो नदंतं मारेइ महामोहं पकुव्वइ ॥३॥

पाणिना हस्तेन **संपिधाय** स्थगयित्वा, किं तत् ? **श्रोतो** रन्ध्रं मुखमित्यर्थः, तथा **आवृत्य** अवरुध्य प्राणिनं ततः **अन्तर्नदन्तं** गलमध्ये रवं कुर्वन्तं घुरघुरायमाणमित्यर्थः, **मारयति** यः स इति गम्यते, **महामोहं प्रकरोतीति** तृतीयम् ३ ।

जायतेयं समारब्भ बहुं ओरुंभिया जणं ।
अंतोधूमेण मारेति महामोहं पकुव्वइ ॥४॥

जाततेजसं वैश्वानरं **समारभ्य** प्रज्वाल्य **बहुं** प्रभूतम् **अवरुध्य** महामण्डप-वाडादिषु[१] प्रक्षिप्य **जनं** लोकम् **अन्तः** मध्ये मण्डपादेः **धूमेन** वह्निलिङ्गेन, अथवा अन्तर्धूमो[२] यस्य सोऽन्तर्धूमस्तेन जाततेजसा विभक्तिपरिणामात् **मारयति** योऽसौ **महामोहं प्रकरोतीति** चतुर्थम् ४ ।

सीसम्मि जे पहणइ उत्तमंगम्मि चेयसा ।
विभज्ज मत्थयं फाले महामोहं पकुव्वति ॥५॥

शीर्षे शिरसि **यः प्रहन्ति** खड्ग-मुद्गरादिना प्रहरति 'प्राणिन'मिति गम्यते, किंभूते स्वभावतः ? **शिरसि उत्तमाङ्गे** सर्वावयवानां प्रधानावयवे तद्विघातेऽवश्यं मरणात् **चेतसा** सङ्क्लिष्टेन मनसा, न यथाकथञ्चिदित्यर्थः, तथा **विभाज्य मस्तकं** प्रकृष्टप्रहारदानेन **स्फाटयति** विदारयति ग्रीवादिकं कायमपीति गम्यते, स इत्यस्य गम्यमानत्वात् स[३] **महामोहं प्रकरोतीति** पञ्चमम् ५ ।

पुणो पुणो पणिहीए हणित्ता उवहसे जणं ।
फलेणं अदुव दंडेणं महामोहं पकुव्वइ ॥६॥

पौनःपुण्येन प्रणिधिना मायया-यथा वाणिजकादिवेषं विधाय गलकर्त्तकाः[४] पथि गच्छता सह गत्वा विजने मारयन्ति, तथा[५] **हत्वा** विनाश्य य इति गम्यते **उपहसेत्** आनन्दातिरेकात् **जनं** मुग्धलोकं हन्यमानम्, केन हत्वा ? **फलेन** योगविभावितेन[६] मातुलिङ्गादिना, **अदुव** तथा **दण्डेन** प्रसिद्धेन, स इति गम्यते, **महामोहं प्रकरोतीति** षष्ठम् ६ ।

---

१. °वाहादिषु खं० ॥ २. **यस्यासावन्त**° खं० जे२ ॥ ३. **स** नास्ति जे२ विना ॥ ४. **गलाक**° जे१,२, हे१ ॥ ५. **तथा** नास्ति जे२ । जे१ मध्येऽत्र पाठः पतितः ॥ ६. **योगभावितेन** जे२ हे१,२ ॥

गूढायारी निगूहेज्जा मायं मायाए छायए ।
असच्चवाई णिण्हाई महामोहं पकुव्वइ ॥७॥

गूढाचारी प्रच्छन्नाचारवान् **निगूहयते** गोपयेत्, स्वकीयं प्रच्छन्नं दुष्टमाचारम्, तथा **मायां** परकीयां **मायया** स्वकीयया **छादयेत्** जयेत्, यथा शकुनिमारकाश्छदैरात्मानमावृत्य शकुनीन् गृह्णन्तः स्वकीयमायया शकुनिमायां छादयन्ति, तथा **असत्यवादी निह्नवी** अपलापकः स्वकीयाया मूलगुणोत्तरगुणप्रतिसेवायाः सूत्रार्थयोर्वा **महामोहं प्रकरोती**ति सप्तमम् ७ ।

धंसेइ जो अभूएणं अकम्मं अत्तकम्मुणा ।
अदुवा तुममकासि त्ति महामोहं पकुव्वइ ॥८॥

ध्वंसयति छायया भ्रंशयति **यः** पुरुषोऽ**भूतेन** असद्भूतेन, कम् ? **अकर्मकम्** अविद्यमानदुश्चेष्टितम् **आत्मकर्मणा** आत्मकृतऋषिघातादिना दुष्टव्यापारेण **अदुवा** अथवा यदन्येन कृतं तदाश्रित्य परस्य समक्षमेव **त्वमकार्षी**रितन्महापापमिति वदति, वदिक्रियायाः गम्यमानत्वात् स इत्यस्यापि गम्यमानत्वात् स **महामोहं प्रकरोती**त्यष्टमम् ८ ।

जाणमाणो परिसओ सच्चामोसाणि भासति ।
अक्खीणझंझे पुरिसे महामोहं पकुव्वति ॥९॥

जानानः यथा अनृतमेतत्, **परिषदः** सभाया बहुजनमध्ये इत्यर्थः, **सत्यामृषाणि** किञ्चित्सत्यानि बह्वसत्यानि वस्तूनि वाक्यानि वा **भाषते अक्षीणझञ्झः** अनुपरतकलहः यः स इति गम्यते, **महामोहं प्रकरोती**ति नवमम् ९ ।

अणायगस्स नयवं दारे तस्सेव धंसिया ।
विउलं विक्खोभइत्ताणं किच्चा णं पडिबाहिरं ॥
उवगसंतं पि झंपिता पडिलोमाहिं वग्गूहिं ।
भोगभोगे वियारेति महामोहं पकुव्वति ॥१०॥

अनायकः अविद्यमाननायको राजा, तस्य, **नयवान्** नीतिमानमात्यः, स **तस्यैव**

---

१. **स** नास्ति खं० हे१ ॥ २. प्रतिषु पाठः- **सत्यामृषाणि किंचित्स**' हे२ । **सत्यमृषा किंचित्स**' हे२ विना ॥ ३. **बहन्यसत्यानि** जे२ । **बह्वसत्यानि** नास्ति खं० ॥

राज्ञो **दारान्** कलत्रं **द्वारं** वा अर्थागमस्योपायं **ध्वंसयित्वा भोगभोगान्** विदारयतीति सम्बन्धः, किं कृत्वा ? **विपुलं** प्रचुरमत्यर्थमित्यर्थः, **विक्षोभ्य** सामन्तादिपरिकरभेदेन संक्षोभ्य नायकम्, तस्य क्षोभं जनयित्वेत्यर्थः, **कृत्वा** विधाय **ण**मित्यलङ्कारे **प्रतिबाह्यम्** अनधिकारिणं दारेभ्योऽर्थागमद्वारेभ्यो वा, दारान् राज्यं वा स्वयमधिष्ठायेत्यर्थः । तथा **उपकसन्तमपि** समीपमागच्छन्तमपि, सर्वस्वापहारे कृते प्राभृतेनानुलोमैः करुणैश्च वचनैरनुकूलयितुमुपस्थितमित्यर्थः, **झम्पयित्वा** नष्टवचनावकाशं कृत्वा **प्रतिलोमाभिः** तस्य प्रतिकूलाभि**र्वाग्भिः** वचनैरेतादृशस्तादृशस्त्वमित्यादिभिरित्यर्थः, **भोगभोगान्** [1]विशिष्टान् शब्दादीन् **विदारयति** हरति योऽसौ **महामोहं प्रकरोतीति** दशमम् १० ।

अकुमारभूए जे केइ कुमारभूए त्तऽहं वए ।
इत्थीहिं गिद्धे वसए महामोहं पकुव्वति ॥११॥

अकुमारभूतः अकुमारब्रह्मचारी सन् **यः कश्चित् कुमारभूतोऽहं** कुमारब्रह्मचारी अहमिति **वदति**, अथ च **स्त्रीषु गृद्धो** वशकश्च स्त्रीणामेवायत्त इत्यर्थः, अथवा **वसति** आस्ते स **महामोहं प्रकरोती**त्येकादशम् ११ ।

अबंभयारी जे केइ बंभयारि त्तऽहं वए ।
गद्दभे व्व गवं मज्झे विस्सरं नदई नदं ॥
अप्पणो अहिए बाले मायामोसं बहुं भसे ।
इत्थीविसयगेहीए महामोहं पकुव्वइ ॥१२॥

अब्रह्मचारी मैथुनादनिवृत्तो **यः कश्चित्** तत्काल एवाऽऽसेव्याब्रह्मचर्यं **ब्रह्मचारी** साम्प्रतमहमित्यतिधूर्त्ततया [2]परप्रवञ्चनाय वदति, तथा य एवमशोभावहं सतामनादेयं भणन् **गर्दभ इव गवां मध्ये विस्वरं** न वृषभवन्मनोज्ञं **नदति** मुञ्चति **नदं** नादं शब्दमित्यर्थः, तथा य एवं भणन्नात्**मनोऽहितो** न हितकारी **बालो** मूढो [3]**मायामृषां**

---

१. विशिष्टशब्दादीन् जे२ हे१,२ ॥ २. **परप्रपंचनाय** हे२ विना ॥ ३. **मायामृषा** खं० जे१ हे१ । **मायां मृषां** जे२ ॥

बहु शाठ्यानृतं प्रभूतं **भषते**, श्वेव निन्दितं भाषते, कया ? **स्त्रीविषयगृद्ध्या** हेतुभूतया, स इत्थंभूतो **महामोहं प्रकरोतीति** द्वादशम् १२ ।

जं निस्सिए उव्वहती जससा अहिगमेण वा ।
तस्स लुब्भइ वित्तम्मि महामोहं पकुव्वइ ॥१३॥

यं राजानं राजामात्यादिकं वा निश्रित आश्रित **उद्वहते** जीविकालाभेनात्मानं धारयति, कथम् ? **यशसा** तस्य राजादेः सत्कोऽयमिति प्रसिद्ध्या **अभिगमनेन वा** सेवया आश्रितराजादेस्**तस्य** निर्वाहकारणस्य राजादेर्**लुभ्यति** वित्ते द्रव्ये यः स **महामोहं प्रकरोतीति** त्रयोदशम् १३ ।

इस्सरेण अदुवा गामेणं अणिस्सरे इस्सरीकए ।
तस्स संपग्गहीयस्स सिरी अतुलमागया ॥
ईसादोसेण आइट्ठे कलुसाविलचेयसे ।
जे अंतरायं चेएइ महामोहं पकुव्वति ॥१४॥

ईश्वरेण प्रभुणा **अदुवा** अथवा **ग्रामेण** जनसमूहेन **अनीश्वर ईश्वरीकृतः तस्य** पूर्वावस्थायामनीश्वरस्य **सम्प्रगृहीतस्य** पुरस्कृतस्य प्रभ्वादिना **श्रीः** लक्ष्मीर**तुला** असाधारणा **आगता** प्राप्ता, **अतुलं** वा यथा भवतीत्येवं **श्रीः** सम**आगता** आगतश्रीकश्च प्रभ्वाद्युपकारकविषये **ईर्ष्यादोषेणाविष्टो** युक्तः **कलुषेण** द्वेष-लोभादिलक्षणपापेनाऽऽ**विलं** गडुलमाकुलं वा **चेतो** यस्य स तथा **योऽन्तरायं** व्यवच्छेदं जीवित-श्री-भोगानां **चेतयते** करोति प्रभ्वादेरसौ **महामोहं प्रकरोतीति** चतुर्दशम् १४ ।

सप्पी जहा अंडउडं भत्तारं जो विहिंसइ ।
सेणावइं पसत्थारं महामोहं पकुव्वइ ॥१५॥

सप्पी नागी **यथा अंडउडं** अण्डककूटं स्वकीयमण्डकसमूहमित्यर्थः, अण्डस्य वा **पुटं** सम्बद्धदलद्वयरूपं हिनस्ति, एवं **भर्त्तारं** पोषयितारं **यो विहिनस्ति सेनापतिं** राजानं **प्रशास्तारम्** अमात्यं धर्मपाठकं वा स **महामोहं प्रकरोतीति**, तन्मरणे बहुजनदुःस्थता भवतीति पञ्चदशम् १५ ।

जे नायगं व रट्ठस्स नेयारं निगमस्स वा ।
सेट्ठिं बहुरवं हंता महामोहं पकुव्वति ॥१६॥

यो नायकं वा प्रभुं राष्ट्रस्य राष्ट्रमहत्तरादिकमिति भावः, तथा **नेतारं** प्रवर्तयितारं प्रयोजनेषु **निगमस्य** वाणिजकसमूहस्य, कम् ? **श्रेष्ठिनं** श्रीदेवताङ्कितपट्टबद्धम्, किंभूतम् ? **बहुरवं** भूरिशब्दं प्रचुरयशसमित्यर्थः **हत्वा महामोहं प्रकुरुत** इति षोडशम् १६।

बहुजणस्स णेयारं दीवं ताणं च पाणिणं ।
एयारिसं नरं हंता महामोहं पकुव्वति ॥१७॥

बहुजनस्य पञ्चषादीनां लोकानां **नेतारं** नायकं द्वीप इव **द्वीपः** संसारसागरगतानामाश्वासस्थानम्, अथवा दीप इव **दीपो**ऽज्ञानान्धकारावृत-बुद्धिदृष्टिप्रसराणां शरीरिणां हेयोपादेयवस्तुस्तोमप्रकाशकत्वात्, तम्, अत एव **त्राणम्** आपद्रक्षणं प्राणिना**मेतादृशं** यादृशा गणधरादयो भवन्ति, **नरं** प्रावचनिकादिपुरुषं **हत्वा महामोहं** प्रकरोतीति सप्तदशम् १७ ।

उवट्ठियं पडिविरयं संजयं सुतवस्सियं ।
वोकम्म धम्मओ भंसे महामोहं पकुव्वति ॥१८॥

उपस्थितं प्रव्रज्यायाम्, प्रविव्रजिषुमित्यर्थः, **प्रतिविरतं** सावद्ययोगेभ्यो निवृत्तम्, प्रव्रजितमेवेत्यर्थः, **संयतं** साधुम्, **सुतपस्विनं** तपांसि कृतवन्तं शोभनं वा **तपः** श्रितम् आश्रितम्, क्वचित् **जे भिक्खुं जगजीवणं** ति पाठः, तत्र **जगन्ति** जङ्गमानि अहिंसकत्वेन जीवयतीति **जगज्जीवनस्तं विविधैः** प्रकारै**रुपक्रम्या**क्रम्य व्युपक्रम्य[1], बलादित्यर्थः, **धर्मात्** श्रुत-चारित्रलक्षणाद् **भ्रंशयति** यः स **महामोहं प्रकरोतीति** अष्टादशम् १८ ।

तहेवाणंतणाणीणं जिणाणं वरदंसिणं ।
तेसिं अवण्णिमं बाले महामोहं पकुव्वति ॥१९॥

यथैव प्राक्तनं मोहनीयस्थानं **तथैवेदमपि**, **अनन्तज्ञानिनां** ज्ञानस्यानन्तविषयत्वेन

---

१. **व्युपाक्रम्य** जे२ । **व्युपक्रम्य** नास्ति जे१, हे१,२ ॥

अक्षयत्वेन वा **जिनानाम्** अर्हतां **वरदर्शिनां** क्षायिकदर्शनित्वात् **तेषां** ये ज्ञानाद्यनेकातिशयसम्पदुपेतत्वेन भुवनत्रये प्रसिद्धाः **अवर्णः** अवर्णवादो वक्तव्यत्वेन यस्यास्ति सोऽ**वर्णवान्**, यथा– नास्ति कश्चित् सर्वज्ञः, ज्ञेयस्यानन्तत्वात्, उक्तं च–

अज्ज वि धावइ नाणं अज्ज वि य अणंतओ अलोगो[1] वि ।
अज्ज वि न कोइ विउहं पावति सव्वन्नुयं जीवो ॥
अह पावति तो संतो होइ अलोओ न चेयमिट्ठं ति । [ ] त्ति ।

अदूषणं चैतद्, उत्पत्तिसमय एव केवलज्ञानं युगपल्लोकालोकौ प्रकाशयदुपजायते, यथाऽपवरकान्तर्वर्त्तिदीपकलिका अपवरकमध्यमित्यभ्युपगमादिति, **बालः** अज्ञो **महामोहं प्रकरोतीति** एकोनविंशतितमम् १९ ।

नेयाउयस्स मग्गस्स दुट्ठे अवयरई बहुं ।
तं तिप्पयंतो भावेति महामोहं पकुव्वति ॥२०॥

नैयायिकस्य न्यायमनतिक्रान्तस्य **मार्गस्य** सम्यग्दर्शनादेः मोक्षपथस्य **दुष्टो द्विष्टो** वा **अपकरोति** अपकारं करोतीति, **बहु** अत्यर्थम्, पाठान्तरेण **अपहरति** बहुजनं विपरिणमयतीति[2] भावः, **तं** मार्गं **तिप्पयंतो** त्ति निन्दन् **भावयति** निन्दया द्वेषेण वा वासयति आत्मानं परं च यः स **महामोहं प्रकरोतीति** विंशतितमम् २० ।

आयरियउवज्झाएहिं सुयं विणयं च गाहिए ।
ते चेव खिंसती बाले महामोहं पकुव्वति ॥२१॥

आचार्योपाध्यायैः श्रुतं स्वाध्यायं **विनयं च** चरित्रं **ग्राहितः** शिक्षितः तानेव **खिंसति** निन्दति 'अल्पश्रुता एते' इत्यादि ज्ञानतः, 'अन्यतीर्थिकसंसर्गकारिणः' इत्यादि दर्शनतः, 'मन्दधर्माणः पार्श्वस्थादिस्थानवर्त्तिनः' इत्यादि चरित्रतः, यः स एवंभूतो **बालो महामोहं प्रकरोती**त्येकविंशतितमम् २१ ।

आयरियउवज्झायाणं सम्मं नो पडितप्पइ ।
अप्पडिपूयए थद्धे महामोहं पकुव्वति ॥२२॥

---

१. *अलोगो त्ति । जे२ हे१,२ ॥* २. *°णामयतीति खं० ॥*

आचार्यादीन् श्रुतदान-ग्लानावस्थाप्रतिचरणादिभिस्तर्प्पितवतः उपकृतवतः सम्यक् न **प्रतितर्प्पयति** विनयाहारोपध्यादिभिर्न प्रत्युपकरोति, तथा **अप्रतिपूजको** न पूजाकारी, तथा **स्तब्धो** मानवान् स **महामोहं प्रकरोती**ति द्वाविंशतितमम् २२ ।

अबहुस्सुए य जे केइ सुएण पविकंथई ।
सज्झायवायं वयति महामोहं पकुव्वति ॥२३॥

अबहुश्रुतश्च **यः कश्चित् श्रुतेन प्रविकत्थते** आत्मानं श्लाघते श्रुतवानहमनुयोगधरोऽहमित्येवम्, अथवा कस्मिंश्चित् 'स त्वमनुयोगाचार्यो वाचको वा' इति पृच्छति प्रतिभणति– आमम्, **स्वाध्यायवादं वदति** विशुद्धपाठकोऽहमित्यादिकं यः स **महामोहं** श्रुतालाभहेतुं **प्रकरोती**ति त्रयोविंशतितमम् २३ ।

अतवस्सिए य जे केइ तवेण पविकंथइ ।
सव्वलोयपरे तेणे महामोहं पकुव्वति ॥२४॥

सुगमम्, नवरं **सर्वलोकात्** सर्वजनात् सकाशात् **परः** प्रकृष्टः **स्तेनः** चौरो भावचौरत्वात् **महामोहम्** अतपस्विताहेतुं **प्रकरोती**ति चतुर्विंशतितमम् २४ ।

साहारणट्ठा जे केइ गिलाणम्मि उवट्ठिए ।
पभू ण कुव्वई किच्चं मज्झं पि से न कुव्वति ॥
सढे नियडिपण्णाणे कलुसाउलचेयसे ।
अप्पणो य अबोहीए महामोहं पकुव्वति ॥२५॥

साधारणार्थमुपकारार्थं यः कश्चिदाचार्यादि**ग्लाने** रोगवति **उपस्थिते** प्रत्यासन्नीभूते **प्रभुः** समर्थ उपदेशनौषधादिदानेन च स्वतोऽन्यतश्चोपकारे **न करोति कृत्य**मुपेक्षते इत्यर्थः, केनाभिप्रायेणेत्याह– **ममाप्येष न करोति** किंचनापि कृत्यं समर्थोऽपि सन्निति द्वेषेण, असमर्थो वाऽयं बालत्वादिना, किं कृतेनास्य ? पुनरुपकर्तुमशक्तत्वादिति लोभेनेति, **शठः** कैतवयुक्तः शक्तिलोपनात्, **निकृतिः** माया तद्विषये **प्रज्ञानं** यस्य स तथा, ग्लानः प्रतिचरणीयो मा भवत्विति ग्लानवेषमहं करोमीति विकल्पवानित्यर्थः, अत एव **कलुषाकुलचेताः आत्मनश्चाबोधिको** भवान्तराप्राप्तव्यजिनधर्मको

ग्लानाप्रतिजागरणेनाऽऽज्ञाविराधनात्, **चशब्दात्** परेषां चाऽ**बोधिकः** अविद्यमाना बोधिरस्मादिति व्युत्पादनात्, ये हि तदीयं ग्लानाप्रतिचरणमुपलभ्य जिनधर्मपराङ्मुखा भवन्ति तेषामबोधिस्तत्कृतेति स एवम्भूतो **महामोहं प्रकरोतीति** पञ्चविंशतितमम् २५।

जो कहाहिगरणाइं संपउंजे पुणो पुणो ।
सव्वतित्थाण भेयाय महामोहं पकुव्वति ॥२६॥

यः **कथा** वाक्यप्रबन्धः, शास्त्रमित्यर्थः, तद्रूपाण्यधिकरणानि **कथाधिकरणानि कौटिल्यशास्त्रादीनि** प्राण्युपमर्दनप्रवर्त्तकत्वेन तेषामात्मनो दुर्गतावधिकारित्वकरणात्, **कथया** वा 'क्षेत्राणि कृषत, गा नस्तयत' इत्यादिकया **अधिकरणानि** तथाविधप्रवृत्तिरूपाणि, अथवा **कथा** राजकथादिका **अधिकरणानि** च यन्त्रादीनि कलहा वा **कथाधिकरणानि** तानि **सम्प्रयुङ्क्ते पुनः पुनः**, एवं **सर्वतीर्थानां भेदाय** संसारसागरतरणकारणत्वात् **तीर्थानि** ज्ञानादीनि तेषां सर्वथा नाशाय प्रवर्त्तमानः स **महामोहं प्रकरोतीति** षड्विंशतितमम् २६ ।

जे य आहम्मिए जोए संपउंजे पुणो पुणो ।
साहाहेउं सहीहेउं महामोहं पकुव्वति ॥२७॥

कण्ठ्यम्, नवरम् **अधार्मिका योगा** निमित्त-वशीकरणादिप्रयोगाः, किमर्थम् ? **श्लाघाहेतोः, सखिहेतोः** मित्रनिमित्तमित्यर्थः, इति सप्तविंशतितमम् २७ ।

जे य माणुस्सए भोए अदुवा पारलोइए ।
तेऽतिप्पयंतो आसयति महामोहं पकुव्वति ॥२८॥

यश्च मानुष्यकान् भोगान् अथवा पारलौकिकान् ते त्ति विभक्तिपरिणामात्तेष्वतृप्यन् वा **अतृप्यन्** तृप्तिमगच्छन् **आस्वदते** अभिलषति **आश्रयति** वा स **महामोहं प्रकरोतीति** अष्टविंशतितमम् २८ ।

इड्ढी जुती जसो वण्णो देवाणं बलवीरियं ।
तेसिं अवण्णिमं बाले महामोहं पकुव्वति ॥२९॥

ऋद्धिः विमानादिसम्पत्, **द्युतिः** शरीराभरणदीप्तिः, **यशः** कीर्तिः, **वर्णः** शुक्लादिः शरीरसम्बन्धी, **देवानां** वैमानिकादीनां **बलं** शारीरं **वीर्यं** जीवप्रभवम्, अस्तीत्यध्याहारः,

तेषामिह अपेर्गम्यमानत्वात् तेषामपि देवानामनेकातिशायिगुणवता**मवर्णवान्** अश्लाघाकारी, अथवा **अवर्णवान्**, केनोल्लापेन ? देवानामृद्धिर्देवानां द्युतिरित्यादि काक्वा व्याख्येयम्, न किञ्चिद् देवानामृद्ध्यादिकमस्तीत्यवर्णवादवाक्यभावार्थः, य एवम्भूतः स **महामोहं प्रकरोती**ति एकोनत्रिंशत्तमम् २९ ।

अपस्समाणो पस्सामि देवे जक्खे य गुज्झगे ।
अण्णाणी जिणपूयट्ठी महामोहं पकुव्वति ॥३०॥

अपश्यन्नपि यो ब्रूते **पश्यामि देवा**नित्यादिस्वरूपेण, **अज्ञानी**, जिनस्येव पूजामर्थयते यः स **जिनपूजार्थी**, गोशालकवत्, स **महामोहं प्रकरोती**ति त्रिंशत्तमम् ३० ।

रौद्रादयो मुहूर्त्ता आदित्योदयादारभ्य क्रमेण भवन्ति, एतेषां च मध्ये मध्यमाः षट् कदाचिद् दिनेऽन्तर्भवन्ति कदाचिद्रात्राविति ॥३०॥

[सू० ३१] [१] एक्कतीसं सिद्धाइगुणा पण्णत्ता, तंजहा– खीणे आभिणिबोहियणाणावरणे, सुयणाणावरणे, ओहिणाणावरणे, मणपज्जवणाणावरणे, खीणे केवलणाणावरणे । खीणे चक्खुदंसणावरणे, एवं अचक्खुदंसणावरणे, ओहिदंसणावरणे, केवलदंसणावरणे, निद्दा, णिद्दाणिद्दा, पयला, पयलापयला, खीणे थिणगिद्धी । खीणे सातावेयणिज्जे, खीणे असायावेयणिज्जे । खीणे दंसणमोहे, खीणे चरित्तमोहणिज्जे । खीणे नेरइयाउए, तिरियाउए, माणुसाउए, देवाउए । खीणे उच्चागोए, खीणे निच्चागोए, एवं सुभणामे, असुभणामे । खीणे दाणंतराए, एवं लाभ-भोग-उवभोग-वीरियंतराए ३१ ।

मंदरे णं पव्वते धरणितले एक्कतीसं जोयणसहस्साइं छच्च तेवीसे जोयणसते किंचिदेसूणे परिक्खेवेणं पण्णत्ते ।

जया सूरिए सव्वबाहिरयं मंडलं उवसंकमित्ता णं चारं चरति तया णं इहगयस्स मणूसस्स एक्कतीसाए जोयणसहस्सेहिं अट्ठहि य एक्कतीसेहिं जोयणसतेहिं तीसाए सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सूरिए चक्खुफासं हव्वमागच्छति ।

अभिवड्ढिए णं मासे एक्कतीसं सातिरेगाणि रातिंदियाणि रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते ।

आइच्चे णं मासे एक्कतीसं रातिंदियाणि किंचिविसेसूणाणि रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते ।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एक्कतीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं एक्कतीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं एक्कतीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं एक्कतीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजिताणं देवाणं जहण्णेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

जे देवा उवरिमउवरिमगेवेज्जयविमाणेसु देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं उक्कोसेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

[३] ते णं देवा एक्कतीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं एक्कतीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे एक्कतीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] एकत्रिंशत्स्थानकं सुगमम्, नवरं सिद्धानामादौ सिद्धत्वप्रथमसमय एव गुणाः **सिद्धादिगुणाः**, ते चाभिनिबोधिकावरणादिक्षयस्वरूपा इति ।

मन्दरो मेरुः, स च धरणीतले दशसहस्रविष्कम्भ इति कृत्वा यथोक्तपरिधिप्रमाणो भवतीति ।

जया णं सूरिए इत्यादि, किल सूर्यस्य चतुरशीत्यधिकं मण्डलशतं भवति, मण्डलं च ज्योतिष्कमार्गोऽभिधीयते, तत्र **जम्बूद्वीपस्यान्तः** अशीत्यधिके योजनशते पञ्चषष्टिः सूर्यमण्डलानि भवन्ति, तथा **लवणसमुद्रे** त्रीणि त्रिंशदधिकानि योजनशतान्यवगाह्यैकोनविंशत्यधिकं सूर्यमण्डलशतं भवति, तत्र च **सर्वबाह्यं** समुद्रान्तर्गतमण्डलानां पर्यन्तिमम्, तस्य चायामवि[1]ष्कम्भौ लक्षं षट् शतानि च योजनानां षष्ट्यधिकानि, परिधिस्तु वृत्तक्षेत्रगणितन्यायेन त्रीणि लक्षाणि अष्टादश सहस्राणि त्रीणि शतानि पञ्चदशोत्तराणि ३१८३१५, एतावच्च क्षेत्रमादित्योऽहोरात्रद्वयेन गच्छति, तत्र च षष्टिर्मुहूर्त्ता भवन्तीति षष्ट्या भागापहारे यल्लब्धं तन्मुहूर्त्तगम्यक्षेत्रप्रमाणं भवति, तच्च पञ्च सहस्राणि त्रीणि च पञ्चोत्तराणि शतानि पञ्चदश च योजनषष्टिभागाः ५३०५ $\frac{१५}{६०}$, एतच्च दिवसार्द्धेन गुण्यते, यदा च सर्वबाह्ये मण्डले सूर्यश्चरति तदा दिनप्रमाणं द्वादश मुहूर्त्ताः, तदर्द्धं च षट्, अतः षड्भिर्मुहूर्त्तैर्गुणितं मुहूर्त्तगतिप्रमाणं चक्षुःस्पर्शप्रमाणं भवति, तत्र एकत्रिंशत् सहस्राणि अष्टौ च शतान्येकत्रिंशदधिकानि त्रिंशच्च योजनषष्टिभागाः ३१८३१ $\frac{३०}{६०}$।

अभिवर्द्धितमासः अभिवर्द्धितसंवत्सरस्य चतुश्चत्वारिंशदहोरात्रद्विषष्टिभागाधिकत्र्यशीत्यधिकशतत्रयरूपस्य ३८३ $\frac{४४}{६२}$ द्वादशो भागः, अभिवर्द्धितसंवत्सरश्चासौ [2]यत्राधिकमासको भवति त्रयोदशचन्द्रमासात्मकत्वाच्चन्द्रमासश्च एकोनत्रिंशता दिनानां द्वात्रिंशता च दिनद्विषष्टिभागानां भवतीति। **साइरेगाइं** ति अहोरात्रस्य चतुर्विंशत्युत्तरशतभागानामेकविंशत्युत्तरशतेनाधिकानीति।

आदित्यमासो येन कालेनादित्यो राशिं भुङ्क्ते, **किंचिविसेसूणाइं** ति अहोरात्रार्द्धेन न्यूनानीति ॥३१॥

[सू० ३२] [१] [3]बत्तीसं जोगसंगहा पण्णत्ता, तंजहा–

---

१. 'विष्कम्भो खं० हे१,२ ॥ २. **यत्राधिमासको** जे२ । यत्राधिकमासो हे१ ॥ ३. **आवश्यकसूत्रे** चतुर्थेऽध्ययने 'बत्तीसाए जोगसंगहेहिं' इति सूत्रस्य **हारिभद्र्यां** वृत्तौ विस्तरेण द्वात्रिंशतो योगसंग्रहानां वर्णनं वर्तते, विशेषजिज्ञासुभिस्तत्र द्रष्टव्यम् ॥

आलोयणा १ निरवलावे २, आवतीसु दढधम्मया ३ ।
अणिस्सितोवहाणे य ४, सिक्खा ५ निप्पडिकम्मया ६ ॥५३॥
अण्णातता ७ अलोभे य ८, तितिक्खा ९ अज्जवे १० सुई ११ ।
सम्मद्दिट्ठी १२ समाही य १३, आयारे १४ विणओवए १५ ॥५४॥
धितीमती य १६ संवेगे १७, पणिही १८ सुविहि १९ संवरे २० ।
अत्तदोसोवसंहारे २१, सव्वकामविरत्तया २२ ॥५५॥
पच्चक्खाणे २३-२४ विओसग्गे २५, अप्पमादे २६ लवालवे २७ ।
झाणसंवरजोगे य २८, उदए मारणंतिए २९ ॥५६॥
संगाणं च परिण्णा य ३०, पायच्छित्तकरणे ति य ३१ ।
आराहणा य मरणंते ३२, बत्तीसं जोगसंगहा ॥५७॥

बत्तीसं देविंदा पण्णत्ता, तंजहा– चमरे, बलि, धरणे, भूयाणंदे जाव घोसे, महाघोसे, चंदे, सूरे, सक्के, ईसाणे, सणंकुमारे जाव पाणते, अच्चुते।

कुंथुस्स णं अरहओ बत्तीसं जिणा बत्तीसं जिणसया होत्था ।

सोहम्मे कप्पे बत्तीसं विमाणावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

रेवतिणक्खत्ते बत्तीसतितारे पण्णत्ते ।

बत्तीसतिविहे णट्टे पण्णत्ते ।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं बत्तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं बत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं बत्तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं बत्तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

जे देवा विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजितविमाणेसु देवत्ताते उववण्णा

तेसि णं देवाणं अत्थेगतियाणं बत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

[३] ते णं देवा बत्तीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। [तेसि णं देवाणं बत्तीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे बत्तीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति] जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति ३।

[टी०] द्वात्रिंशत्स्थानकमपि व्यक्तम्, नवरं युज्यन्ते इति **योगाः** मनोवाक्कायव्यापाराः ते चेह प्रशस्ता एव विवक्षितास्तेषां शिष्याचार्यगतानामालोचना-निरपलापादिना प्रकारेण सङ्ग्रहणानि सङ्ग्रहाः प्रशस्त**योगसङ्ग्रहाः** प्रशस्तयोगसङ्ग्रहनिमित्तत्वादालोचनादय एव तथोच्यन्ते, ते च द्वात्रिंशद्भवन्ति, तदुपदर्शकं श्लोकपञ्चकम् **आलोयणे**त्यादि, अस्य गमनिका– तत्र **आलोयण** त्ति मोक्षसाधकयोगसङ्ग्रहाय शिष्येणाचार्यायाऽऽलोचना दातव्या १, **निरवलावे** त्ति आचार्योऽपि मोक्षसाधकयोगसङ्ग्रहायैव दत्तायामाऽऽलोचनायां **निरपलापः** स्यात्, नान्यस्मै कथयेदित्यर्थः २, **आवईसु दढधम्मय** त्ति प्रशस्तयोगसङ्ग्रहाय साधुनाऽऽ**पत्सु** द्रव्यादिभेदासु **दृढधर्मता** कार्या, सुतरां तासु दृढधर्मणा भाव्यमित्यर्थः ३, **अणिस्सिओवहाणे य** त्ति शुभयोगसङ्ग्रहायैवाऽ**निश्रितं** च तदन्यनिरपेक्ष**मुपधानं** च तपोऽ**निश्रितोपधानं** परसाहाय्यानपेक्षं तपो विधेयमित्यर्थः ४, **सिक्खा** त्ति योगसङ्ग्रहाय **शिक्षा**ऽऽसेवितव्या, सा च सूत्रार्थग्रहणरूपा प्रत्युपेक्षाद्यासेवनात्मिका चेति द्विधा ५, **निप्पडिकम्मय** त्ति तथैव निष्प्रतिकर्मता शरीरस्य विधेया ६, **अण्णायय** त्ति तपसोऽ**ज्ञातता** कार्या, यशः- पूजाद्यर्थित्वेनाऽप्रकाशयद्भिस्तपः कार्यमित्यर्थः ७, **अलोभे य** त्ति **अलोभता** विधेया ८, **तितिक्खा** त्ति **तितिक्षा** परीषहादिजयः ९, **अज्जवे** त्ति **आर्जवम्** ऋजुभावः १०, **सुइ** त्ति **शुचिः** सत्यं संयम इत्यर्थः ११, **सम्मद्दिट्ठि** त्ति **सम्यग्दृष्टिः** सम्यग्दर्शनशुद्धिः १२, **समाही य** त्ति **समाधिश्च** चेतःस्वास्थ्यम् १३, **आयारे विणओवए** त्ति द्वारद्वय तत्राचारोपगतः स्यात्, न मायां कुर्यादित्यर्थः १४, विनयोपगतो भवेत्, न मानं कुर्यादित्यर्थः १५, **धिईमई य** त्ति धृतिप्रधाना मतिर्**धृतिमतिः** अदैन्यम्

१६, **संवेगे** त्ति **संवेगः** संसारभयं मोक्षाभिलाषो वा १७, **पणिहि** त्ति **प्रणिधिः** माया, सा न कार्येत्यर्थः १८, **सुविहि** त्ति **सुविधिः** सदनुष्ठानम् १९, **संवरः** आश्रवनिरोधः २०, **अत्तदोसोवसंहारे** त्ति स्वकीयदोषस्य निरोधः २१, **सव्वकामविरत्तय** त्ति समस्तविषयवैमुख्यम् २२, **पच्चक्खाणे** त्ति प्रत्याख्यानं मूलगुणविषयम् २३ उत्तरगुणविषयं च २४, **विओसग्गे** त्ति **व्युत्सर्गो** द्रव्य-भावभेदभिन्नः २५, **अप्पमाये** त्ति प्रमादवर्जनम् २६, **लवालवे** त्ति कालोपलक्षणम्, तेन क्षणे क्षणे सामाचार्य्यनुष्ठानं कार्यम् २७, **झाणसंवरजोगे य** त्ति ध्यानमेव संवरयोगो **ध्यानसंवरयोगः** २८, **उदए मारणंतिए** त्ति मारणान्तिकेऽपि वेदनोदये न क्षोभः कार्यः २९, **संगाणं च परिण्ण** त्ति सङ्गानां ज्ञपरिज्ञा-प्रत्याख्यानपरिज्ञाभेदभिन्ना परिज्ञा कार्या ३०, **पायच्छित्तकरणे इ य** त्ति **प्रायश्चित्तकरणं च** कार्यम् ३१, आराधना च **मरणान्ते** मरणरूपोऽन्तो मरणान्तस्तत्र इत्येते द्वात्रिंशद्योगसङ्ग्रहा इति ३२ ।

इन्द्रसूत्रे **यावत्**करणात् 'वेणुदेवे वेणुदाली हरिकंते हरिस्सहे अग्गिसीहे अग्गिमाणवे पुण्णे वसिट्ठे जलकंते जलप्पहे अमियगई अमियवाहणे वेलंबे पहंजणे' इति दृश्यम्, पुनः **यावत्**करणात् 'माहिंदे बंभे लंतए सुक्के सहस्सारे' त्ति द्रष्टव्यम्, इह च षोडशानां व्यन्तरेन्द्राणां षोडशानामेव चाणपण्णिकादीन्द्राणामल्पर्द्धिकत्वेनाविवक्षितत्वादसङ्ख्यातानामपि च चन्द्र-सूर्याणां जातिग्रहणेन द्वयोरेव विवक्षितत्वाद् द्वात्रिंशदिन्द्रा उक्ता इति । **कुन्थुनाथस्य** द्वात्रिंशदधिकानि द्वात्रिंशत् केवलिशतान्यभूवन् । **द्वात्रिंशद्विधं नाट्य**मभिनयविषयवस्तुभेदाद्यथा **राजप्रश्नकृता**भिधानद्वितीयोपाङ्ग इति सम्भाव्यते, द्वात्रिंशत्पात्रप्रतिबद्धमिति केचित् ॥३२॥

[सू० ३३] [१] **तेत्तीसं आसायणातो[१] पण्णत्तातो, तंजहा– सेहे रातिणियस्स आसन्नं गंता भवति, [आसायणा सेहस्स] १, सेहे राइणियस्स पुरतो गंता भवति, [आसायणा सेहस्स] २, सेहे राइणियस्स [स ?]पक्खं गंता भवति, आसायणा सेहस्स ३, सेहे रातिणियस्स आसन्नं ठिच्चा भवति, आसायणा**

---

१. **आवश्यकसूत्रस्य** चतुर्थेऽध्ययने 'तेत्तीसाए आसायणाहिं' इति सूत्रस्य **हारिभद्र्यां** वृत्तावपि विस्तरेण वर्णनमस्ति॥

सेहस्स ४, जाव रातिणियस्स आलवमाणस्स तत्थगते चिय पडिसुणेति, [आसायणा सेहस्स] ३३, इति खलु एतातो तेत्तीसं आसायणातो ।

चमरस्स णं असुरिंदस्स असुररण्णो चमरचंचाए रायहाणीए एक्कमेक्के बारे तेत्तीसं तेत्तीसं भोमा पण्णत्ता ।

महाविदेहे णं वासे तेत्तीसं जोयणसहस्साइं सातिरेगाइं विक्खंभेणं पण्णत्ताइं।

जया णं सूरिए बाहिराणंतरं तच्चं मंडलं उवसंकमित्ता णं चारं चरति तया णं इहंगतस्स पुरिसस्स तेत्तीसाए जोयणसहस्सेहिं किंचिविसेसूणेहिं चक्खुफासं हव्वमागच्छति ।

[२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए अत्थेगतियाणं नेरइयाणं तेत्तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता १।

अहेसत्तमाए पुढवीए काल-महाकाल-रोरुय-महारोरुएसु नेरइयाणं उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता २।

अप्पतिट्ठाणे नरए नेरइयाणं अजहण्णमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ३।

असुरकुमाराणं देवाणं अत्थेगतियाणं तेत्तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ४।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु अत्थेगतियाणं देवाणं तेत्तीसं पलिओवमाइं ठिती पण्णत्ता ५।

विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजितेसु विमाणेसु, तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ६।

जे देवा सव्वट्ठसिद्धं महाविमाणं देवत्ताते उववण्णा तेसि णं देवाणं अजहण्णमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ७।

[३] ते णं देवा तेत्तीसाए अद्धमासेहिं आणमंति वा पाणमंति वा ऊससंति वा नीससंति वा १। तेसि णं देवाणं तेत्तीसाए वाससहस्सेहिं आहारट्ठे समुप्पज्जति २।

संतेगतिया भवसिद्धिया जीवा जे तेत्तीसाए भवग्गहणेहिं सिज्झिस्संति

[जाव सव्वदुक्खाणं अंतं करेस्संति] ३।

[टी०] अथ त्रयस्त्रिंशत्स्थानकम्, तत्र **आयः** सम्यग्दर्शनाद्यवाप्तिलक्षणः, तस्य **शातनाः** खण्डनाः निरुक्ता**दाशातनाः**, तत्र **शैक्षः** अल्पपर्यायो **रात्निकस्य** बहुपर्यायस्य **आसन्नम्** आसत्त्या यथा रजोऽञ्चलादि तस्य लगति तथा **गन्ता भवतीत्ये**वमाशातना शैक्षस्येत्येवं सर्वत्र १, **पुरओ** त्ति अग्रतो गन्ता भवति २, **सपक्खे** त्ति **समानपक्षं** समपार्श्वं यथा भवति, समश्रेण्या गच्छतीत्यर्थः ३, **ठिच्च** त्ति **स्थाता** आसिता भवति, **यावत्करणाद् दशाश्रुतस्कन्धा**नुसारेणान्या इह द्रष्टव्याः, ताश्चैवमर्थतः- **आसन्नं पुरः पार्श्वतः** स्थानेन तिस्रो ३ निषदनेन च तिस्रः ३, तथा विचारभूमौ गतयोः पूर्वतरमाचमतः शैक्षस्याशातना १०, एवं पूर्वं गमनागमनमालोचयतः ११, तथा रात्रौ को जागर्त्तीति पृष्टे रात्निकेन तद्वचनमप्रतिशृण्वतः १२, रात्निकस्य पूर्वमालपनीयं कंचन अवमस्य पूर्वतरमालपतः १३, अशनादि लब्धमपरस्य पूर्वमालोचयतः १४, एवमन्यस्योपदर्शयतः १५, एवं निमन्त्रयतः १६, रात्निकमनापृच्छ्यान्यस्मै भक्तादि ददतः १७, स्वयं प्रधानतरं भुञ्जानस्य १८, क्वचित् प्रयोजने व्याहरतो रात्निकस्य वचोऽप्रतिशृण्वतः १९, रात्निकं प्रति तत्समक्षं वा बृहता शब्देन बहुधा भाषमाणस्य २०, व्याहृतेन 'मस्तकेन वन्दे' इति वक्तव्ये किं भणसीति ब्रुवाणस्य २१, प्रेरयति रात्निके कस्त्वं प्रेरणायामिति वदतः २२, आर्य ! ग्लानं किं न प्रतिचरसीत्याद्युक्ते त्वं किं न तं प्रतिचरसीत्यादि भणतः २३, धर्मं कथयति गुरावन्यमनस्कतां भजतोऽननुमोदयत इत्यर्थः २४, कथयति गुरौ न स्मरसीति वदतः २५, धर्मकथामाच्छिन्दतः २६, भिक्षावेला वर्त्तते इत्यादिवचनतः पर्षदं भिन्दानस्य २७, गुरुपर्षदोऽनुत्थितायास्तथैव व्यवस्थिताया धर्मं कथयतः २८, गुरोः संस्तारकं पादेन घट्टयतः २९, गुरोः संस्तारके निषीदतः ३०, उच्चासने निषीदतः

१. °स्यैव **सर्वत्र** जे२ ॥ २. **द्रष्टव्या इह** जे२ ॥ ३. **आसन्नपुरः** जे१,२. हे१,२ ॥ ४. **च** नास्ति जे२ हे१ ॥ ५. **प्रवचनसारोद्धारे**ऽपि द्वितीये वन्दनकद्वारे १२९-१४९ गाथासु त्रयस्त्रिंशदाशातनास्वरूपं विस्तरेण वर्णितमस्ति। तत्र द्वादशी आशातना **अप्रतिश्रवणम्**, एकोनविंशतितम्याशातनापि **अप्रतिश्रवणम्**, अतः **प्रवचनसारोद्धारटीकायां** स्पष्टीकरणमित्थं विहितम्- "**इदानीमेकोनविंशतितमी**माह- **एवं अप्पडिसुणणे** त्ति सूरेः शब्दं कुर्वतोऽप्रतिश्रवणे आशातना, नन्वियं **अप्पडिसुणणे** त्ति [१२] द्वारे पूर्वव्याख्यातेव किमर्थं पुनर्भण्यते ? इत्यत्राह- **नवरमिणं दिवसविसयं** ति इदमप्रतिश्रवणं दिवसे सामान्येनोक्तम्, पाश्चात्त्यं तु विलसदन्धकारायां रात्रौ न कोऽपि जाग्रतं सुप्तं वा मां ज्ञास्यतीत्यप्रतिश्रवणमिति द्वयोरनयोर्भेदः १९ ॥११४॥"

३१, समासनेऽप्येवं ३२, त्रयस्त्रिंशत्तमा(मी?) सूत्रोक्तैव, **रात्निकस्यालपतस्तत्रगत एव** आसनादिस्थित एव **प्रतिशृणोति**, आगत्य हि प्रत्युत्तरं देयमिति शैक्षस्याशातनेति ३३।

तेत्तीसं तेत्तीसं भोम त्ति **भौमानि** नगराकाराणि, विशिष्टस्थानानीत्यन्ये ।

तथा **जया णं सूरिए** इत्यादि, इह सूर्यस्य मण्डलयोरन्तरं द्वे द्वे योजनेऽष्टचत्वारिंशच्चैकषष्टिभागाः, एतद्द्विगुणं पञ्च योजनानि पञ्चत्रिंशच्चैकषष्टिभागाः, एतावता हीनं विष्कम्भतः सर्वबाह्यमण्डलाद् द्वितीयं मण्डलं भवति, ततश्च वृत्तक्षेत्रपरिधिगणितन्यायेन परिधितः सप्तदशभिर्योजनैरष्टत्रिंशता चैकषष्टिभागैर्न्यूनं द्वितीयमण्डलं सर्वबाह्यमण्डलाद्भवति, एवं तृतीयमण्डले एतद्द्विगुणेन हीनं भवति, तथाहि– तद्विष्कम्भत एकादशभिर्योजनैर्नवभिश्चैकषष्टिभागैः पर्यन्तिमाद्धीनं भवति, परिधितस्तु पञ्चत्रिंशता योजनैः पञ्चदशभिश्चैकषष्टिभागैर्न्यूनं भवति, तच्च त्रीणि लक्षाणि अष्टादश सहस्राणि द्वे शते एकोनाशीत्युत्तरे षट्चत्वारिंशच्चैकषष्टिभागा इति, तथा अन्तिममण्डलान्मण्डले मण्डले द्वाभ्यां मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागाभ्यां दिनवृद्धिर्भवति, तथा च तृतीये मण्डले यदा सूर्यश्चरति तदा द्वादश मुहूर्ताश्चत्वारश्चैकषष्टिभागा मुहूर्त्तस्य दिनप्रमाणं भवति, तदर्द्धे चैकषष्टिभागीकृतेनाष्टषष्ट्यधिकशतत्रयलक्षणेन, स्थूलगणितस्य विवक्षितत्वात् परित्यक्तांशे ३१८२७९ तृतीयमण्डलपरिधौ गुणिते सति एकषष्ट्या च षष्टिगुणितया भागे हृते यल्लभ्यते तत्तृतीयमण्डले चक्षुःस्पर्शप्रमाणं भवति, तच्च द्वात्रिंशत् सहस्राण्येकोत्तराणि ३२००१ अंशानामेकषष्ट्या भागलब्धाश्चैकोनपञ्चाशत् षष्टिभागा योजनस्य $\frac{४९}{६०}$ त्रयोविंशतिश्चैकषष्टिभागा योजनषष्टिभागस्य $\frac{२३}{६१}$, एतत्तृतीयमण्डले चक्षुःस्पर्शस्य प्रमाणं **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्या**मुपलभ्यते, इह तु यदुक्तं त्रयस्त्रिंशत् किञ्चिन्न्यूना, तत्र सातिरेकस्य योजनस्यापि न्यूनसहस्रता विवक्षितेति सम्भाव्यते, चतुर्दशे मण्डले

---

१. "जया णं भंते सूरिए बाहिरतच्चं मंडलं उवसंकमित्ता चारं चरइ तया णं एगमेगेणं मुहुत्तेणं केवइयं खेत्तं गच्छइ ? गोयमा ! पंच पंच जोयणसहस्साइं तिण्णि य चउरुत्तरे जोयणसए इगुणालीसं च सट्ठिभाए जोयणस्स एगमेगेण मुहुत्तेणं गच्छइ तया णं इहगयस्स मणूसस्स एगाहिएहिं बत्तीसाए जोयणसहस्सेहिं एगूणपन्नाए य सट्ठिभाएहिं जोयणस्स सट्ठिभागं च एगसट्ठिहा छेत्ता तेवीसाए चुण्णियाभाएहिं सूरिए चक्खुप्फासं हव्वमागच्छइ ।" इति **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ** सप्तम वक्षस्कारे ॥ २. **सातिरेकयोजनस्यापि** जे२ ॥

पुनरिदं यथोक्तमेव प्रमाणं भवति, प्रतिमण्डलं योजनचतुरशीत्याः साधिकायाः प्रथममण्डलमाने प्रक्षेपणादिति ॥३३॥

[सू० ३४] चोत्तीसं बुद्धातिसेसा पण्णत्ता, तंजहा– अवट्ठिते केस-मंसु-रोम-णहे १, निरामया निरुवलेवा गायलट्ठी २, गोखीरपंडुरे मंससोणिते ३, पउमुप्पलगंधिए उस्सासनिस्सासे ४, पच्छन्ने आहारनीहारे अदिस्से मंसचक्खुणा ५, आगासगयं चक्कं ६, आगासगं छत्तं ७, आगासियाओ सेयवरचामराओ ८, आगासफालियामयं सपायपीढं सीहासणं ९, आगासगतो कुडभीसहस्सपरिमंडियाभिरामो इंदज्झओ पुरतो गच्छति १०, जत्थ जत्थ वि य णं अरहंता भगवंतो चिट्ठंति वा निसीयंति वा तत्थ तत्थ वि य णं तक्खणादेव संछन्नपत्त-पुप्फ-पल्लवसमाउलो सच्छत्तो सज्झओ सघंटो सपडातो असोगवरपायवो अभिसंजायति ११, ईसि पिट्ठओ मउडट्ठाणम्मि तेयमंडलं अभिसंजायति, अंधकारे वि य णं दस दिसातो पभासेति १२, बहुसमरमणिज्जे भूमिभागे १३, अहोसिरा कंटया भवंति १४, उडु अविवरीया सुहफासा भवंति १५, सीतलेणं सुहफासेणं सुरभिणा मारुएणं जोयणपरिमंडलं सव्वओ समंता संपमज्जिज्जइ त्ति १६, जुत्तफुसिएण य मेहेण निहयरयरेणुयं कज्जति १७, जलथलयभासुरपभूतेणं विंटट्ठाइणा दसद्धवण्णेणं कुसुमेणं जाणुस्सेहप्पमाणमेत्ते पुप्फोवयारे कज्जति १८, अमणुण्णाणं सद्द-फरिस-रस-रूव-गंधाणं अवकरिसो भवति १९, मणुण्णाणं सद्द-फरिस-रस-रूव-गंधाणं पाउब्भावो भवति २०, पच्चाहरतो वि य णं हिययगमणीओ जोयणनीहारी सरो २१, भगवं च णं अद्धमागधाए भासाए धम्ममातिक्खति २२, सा वि य णं अद्धमागधा भासा भासिज्जमाणी तेसिं सव्वेसिं आरियमणारियाणं दुप्पय-चउप्पय-मिय-पसु-पक्खि-सिरीसिवाणं अप्पप्पणो हितसिवसुहदा भासत्ताए परिणमति २३, पुव्वबद्धवेरा वि य णं देवासुर-नाग-सुवण्ण-जक्ख-रक्खस-किंनर-किंपुरिस-गरुल-गंधव्व-महोरगा अरहतो पायमूले पसंतचित्तमाणसा धम्मं निसामेंति २४, अण्णतित्थियपावयणी वि य णं आगया वंदंति २५, आगया समाणा

अरहओ पायमूले निप्पडिवयणा भवंति २६, जतो जतो वि य णं अरहंता भगवंतो विहरंति ततो ततो वि य णं जोयणपणुवीसाएणं ईती न भवति २७, मारी न भवति २८, सचक्कं न भवति २९, परचक्कं न भवति ३०, अतिवुट्ठी न भवति ३१, अणावुट्ठी न भवति ३२, दुब्भिक्खं न भवति ३३, पुव्वुप्पण्णा वि य णं उप्पातिया वाही खिप्पामेव उवसमंति ३४ ।

जंबुद्दीवे णं दीवे चउत्तीसं चक्कवट्टिविजया पण्णत्ता, तंजहा– बत्तीसं महाविदेहे, भरहे, एरवए ।

जंबुद्दीवे णं दीवे चोत्तीसं दीहवेयड्ढा पण्णत्ता ।

जंबुद्दीवे णं दीवे उक्कोसपदे चोत्तीसं तित्थकरा समुप्पज्जंति ।

चमरस्स णं असुरिंदस्स असुररण्णो चोत्तीसं भवणावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

पढम-पंचम-छट्ठी-सत्तमासु चउसु पुढवीसु चोत्तीसं निरयावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

[टी०] अथ चतुस्त्रिंशत्स्थानके किमपि लिख्यते– **बुद्धाइसेस** त्ति **बुद्धानां** तीर्थकृताम**तिशेषाः** अतिशया **बुद्धातिशेषाः**, **अवस्थितम्** अवृद्धिस्वभावं **केशाश्च** शिरोजाः **श्मश्रूणि** च कूर्चरोमाणि **रोमाणि** च शेषशरीरलोमानि **नखाश्च** प्रतीता इति द्वन्द्वैकत्वमित्येकः १, **निरामया** नीरोगा **निरुपलेपा** निर्मला **गात्रयष्टिः** तनुलतेति द्वितीयः २, **गोक्षीरपाण्डुरं मांसशोणित**मिति तृतीयः ३, तथा **पद्मं** च कमलं गन्धद्रव्यविशेषो वा यत् पद्मकमिति रूढम् **उत्पलं** च नीलोत्पलमुत्पलकुष्ठं वा गन्धद्रव्यविशेषस्तयोर्यो **गन्धः** स यत्रास्ति तत्तथो**च्छ्वासनिःश्वास**मिति चतुर्थः ४, **प्रच्छन्नमाहारनिर्हारम्** अभ्यवहरण-मूत्रपुरीषोत्सर्गौ, प्रच्छन्नत्वमेव स्फुटतरमाह- **अदृश्यं मांसचक्षुषा**[1] न पुनरवध्यादिलोचनेन पुंसा इति पञ्चमः ५, एतच्च द्वितीयादिकमतिशयचतुष्कं जन्मप्रत्ययम् । तथा **आगासगयं**[2] ति **आकाशगतं** व्योमवर्त्ति **आकाशकं**[3] वा प्रकाशकमित्यर्थः, **चक्रं** धर्मचक्रमिति षष्ठः ६, एव**माकाशगं छत्रं**

१. °चक्षुषां जे२ हे२ ॥ २. आगासयं ति जे१,२ ॥ ३. आगासगं वाकाशकं वा प्रकाशमित्यर्थः जे२ हे१,२ । आकाशकं वा प्रकाशमित्यर्थः जे१ ॥

छत्रत्रयमित्यर्थ इति सप्तमः ७, **आकाशके** प्रकाशे **श्वेतवरचामरे** प्रकीर्णके इत्यष्टमः ८, **आगासफालियामयं** ति **आकाश**मिव यदत्यन्तमच्छं **स्फटिकं** तन्मयं **सिंहासनं** सह पादपीठेन **सपादपीठ**मिति नवमः ९, **आयासगओ**[1] त्ति आकाशगतोऽत्यर्थं तुङ्ग इत्यर्थः, **कुडभि** त्ति लघुपताकाः संभाव्यन्ते, तत्सहस्रैः **परिमण्डितश्चासावभिरामश्च** अभिरमणीय इति विग्रहः, **इंदज्झओ** त्ति शेषध्वजापेक्षयाऽतिमहत्त्वादिन्द्रश्चासौ ध्वजश्च **इन्द्रध्वज** इति विग्रहः, इन्द्रत्वसूचको ध्वज इति वा, **पुरओ** त्ति जिनस्याग्रतो **गच्छती**ति दशमः १०, **चिट्ठंति वा निसीयंति व** त्ति **तिष्ठन्ति** गतिनिवृत्त्या **निषीदन्ति** उपविशन्ति, **तक्खणादेव** त्ति तत्क्षणमेव अकालहीनमित्यर्थः, पत्रैः संछन्नः पत्रसंछन्न इति वक्तव्ये प्राकृतत्वात् **संछन्नपत्र** इत्युक्त स चासौ **पुष्पपल्लवसमाकुल**श्चेति विग्रहः, **पल्लवाः** अङ्कुराः, **सच्छत्रः सध्वजः सघण्टः सपताकोऽशोकवरपादप** इत्येकादशः ११, **ईसि** त्ति **ईषद्** अल्पं **पिट्ठओ** त्ति पृष्ठतः पश्चाद्भागे **मउडट्ठाणम्मि** त्ति मस्तकप्रदेशे **तेजोमण्डलं** प्रभापटलमिति द्वादशः १२, **बहुसमरमणीयो भूमिभाग** इति त्रयोदशः १३, **अहोसिर** त्ति अधोमुखाः **कण्टका भवन्ती**ति चतुर्दशः १४, **ऋतवोऽविपरीताः**, कथमित्याह- **सुखस्पर्शा भवन्ती**ति पञ्चदशः १५, योजनं यावत् क्षेत्रशुद्धिः संवर्त्तकवातेनेति षोडशः १६, **जुत्तफुसिएणं** ति उचितबिन्दुपातेन **निहयरय-रेणुयं** ति वातोत्खातमाकाशवर्त्ति **रजो** भूवर्त्ती तु रेणुरिति गन्धोदकवर्षाभिधानः सप्तदशः १७, **जलस्थलजं** यद् **भास्वरं प्रभूतं** च **कुसुमं** तेन **वृन्तस्थायिना** उदर्ध्वमुखेन **दशार्द्धवर्णेन** पञ्चवर्णेन, जानुनोरुत्सेधस्य उच्चत्वस्य यत् प्रमाणं तदेव प्रमाणं यस्य स **जानूत्सेधप्रमाणमात्रः पुष्पोपचारः** पुष्पप्रकर इत्यष्टादशः १८, तथा **कालागरु**[2]**पवरकुंदुरुक्कतुरुक्कधूवमघमघेंतगंधुद्धु-याभिरामे भवइ** त्ति **कालागरुश्च**[3] गन्धद्रव्यविशेषः **प्रवरकुन्दुरुक्कं** च चीडाभिधानं गन्धद्रव्यं **तुरुक्कं**[4] च शिल्हकाभिधानं गन्धद्रव्यमिति द्वन्द्वस्तत एतल्लक्षणो यो **धूप**स्तस्य **मघमघायमानो** बहलसौरभ्यो यो **गन्ध उद्धूत**[5] उद्धूतस्तेना**भिरामम्** अभिरमणीयं

---

१. **आयासओ त्ति** जे१ हे१,२ । **असओ त्ति** जे२ ॥ २. **कालागुरु** जे१ हे१,२ ॥ ३. **कालागुरु** जे१ हे१,२ ॥ ४. **तुरुष्कं** जे२ ॥ ५. हे१ विना- **उद्धत्त** खं० जे१ । **उधूत** हे२ ॥

यत्तत्तथा **स्थानं** निषदनस्थानमिति प्रक्रम इत्येकोनविंशतितमः १९, तथा **उभयो पासिं च णं अरहंताणं भगवंताणं दुवे जक्खा कडयतुडियथंभियभुया चामरुक्खेवं करेंति** त्ति **कटकानि** प्रकोष्ठाभरणविशेषाः **त्रुटितानि** बाह्वाभरणविशेषाः तैरतिबहुत्वेन स्तम्भिताविव **स्तम्भितौ** भुजौ ययोस्तौ तथा **यक्षौ** देवाविति विंशतितमः २०, बृहद्वाचनायामनन्तरोक्तमतिशयद्वयं नाधीयते, अतस्तस्यां पूर्वेऽष्टादशैव, **अमनोज्ञानां शब्दादीनामपकर्षः** अभाव इत्येकोनविंशतितमः १९, **मनोज्ञानां प्रादुर्भाव** इति विंशतितमः २०, **पच्चाहरओ** त्ति **प्रत्याहरतो** व्याकुर्वतो भगवतः **हिययगमणीओ** त्ति हृदयङ्गमः **जोयणनीहारि** त्ति योजनातिक्रामी **स्वर** इत्येकविंशः २१, **अद्धमागहाए** त्ति प्राकृतादीनां षण्णां भाषाविशेषाणां मध्ये या मागधी नाम भाषा **रसोर्लशौ मागध्याम्** [ ] इत्यादिलक्षणवती सा असमाश्रितस्वकीयसमग्रलक्षणाऽर्द्धमागधीत्युच्यते, तया **धर्ममाख्याति**, तस्या एवातिकोमलत्वादिति द्वाविंशः २२, **भासिज्जमाणी**ति भगवताऽभिधीयमाना **आरियमणारियाणं** ति आर्यानार्यदेशोत्पन्नानां **द्विपदा** मनुष्याश्चतुष्पदा गवादयः **मृगा** आटव्याः **पशवो** ग्राम्याः **पक्षिणः** प्रतीताः **सरीसृपा** उरःपरिसर्प्पा भुजपरिसर्प्पाश्चेति, तेषां किम् ? **आत्मन आत्मनः** आत्मीयया आत्मीययेत्यर्थः, **भाषातया** भाषाभावेन **परिणमती**ति सम्बन्धः, किम्भूताऽसौ **भाषा** ? इत्याह– **हितम्** अभ्युदयं **शिवं** मोक्षं **सुखं** श्रवणकालोद्भवमानन्दं ददातीति **हितशिवसुखदे**ति त्रयोविंशः २३, **पुव्वबद्धवेरे** त्ति **पूर्वं** भवान्तरेऽनादिकाले वा जातिप्रत्ययं **बद्धं** निकाचितं **वैरम्** अमित्रभावो यैस्ते तथा, **तेऽपि च**, आसतामन्ये, **देवा** वैमानिका **असुरा नागाश्च** भवनपतिविशेषाः **सुवर्णाः** शोभनवर्णोपेतत्वाज्ज्योतिष्का **यक्ष-राक्षस-किन्नर-किंपुरुषाः** व्यन्तरभेदाः **गरुडा** गरुडलाञ्छनत्वात् सुपर्णकुमारा भवनपतिविशेषाः, **गन्धर्वा महोरगाश्च** व्यन्तरविशेषा एव, एतेषां द्वन्द्वः, **पसंतचित्तमाणसा, प्रशान्तानि** शमं गतानि **चित्राणि** राग-द्वेषाद्यनेकविधविकारयुक्ततया विविधानि **मानसानि** अन्तःकरणानि येषां ते

---

१. "अत एत् सौ पुंसि मागध्याम् ॥४।२८७॥ रसोर्लशौ ॥४।२८८॥" इति **हेमचन्द्रसूरिविरचिते प्राकृतव्याकरणे**॥

२. °दयः हे१ विना ॥ ३. **मोक्षः सुखं** खं० हे१,२ । **मोक्षसुखं** जे१ ॥

प्रशान्तचित्रमानसा धर्मं निशामयन्ति इति[1] चतुर्विंशः २४, बृहद्वाचनायामिदमन्यदतिशयद्वयमधीयते, यदुत- **अन्यतीर्थिकप्रावचनिका अपि च णं वन्दन्ते** भगवन्तमिति गम्यते इति पञ्चविंशः २५, आगताः सन्तोऽर्हतः पादमूले निष्प्रतिवचना भवन्ति इति षड्विंशः २६, **जओ जओ वि य णं** ति यत्र यत्रापि च देशे, **तओ तओ** त्ति **तत्र तत्रापि च** पञ्चविंशतौ योजनेषु, **ईतिः** धान्याद्युपद्रवकारी प्रचुरमूषिकादिप्राणिगण इति सप्तविंशः २७, **मारिः** जनमरक इत्यष्टाविंशः २८, **स्वचक्रं** स्वकीयराजसैन्यम्, तदुपद्रवकारि न भवतीति एकोनत्रिंशः २९, एवं **परचक्रं** परराजसैन्यमिति त्रिंशः ३०, **अतिवृष्टिः** अधिकवर्ष इत्येकत्रिंशः ३१, **अनावृष्टिः** वर्षणाभाव इति द्वात्रिंशः ३२, **दुर्भिक्षं** दुष्काल इति त्रयस्त्रिंशः ३३, **उप्पाइया वाहि** त्ति उत्पाताः अनिष्टसूचका रुधिरवृष्ट्यादयस्तद्धेतुका येऽनर्थास्ते **औत्पातिकास्तथा व्याधयो** ज्वराद्यास्त**दुपशमः** अभाव इति चतुस्त्रिंशत्तमः ३४ । अत्र च **पच्चाहरओ** इत आरभ्य येऽभिहितास्ते प्रभामण्डलं च कर्मक्षयकृताः, शेषा भवप्रत्ययेभ्योऽन्ये देवकृता इति, एते च यदन्यथापि दृश्यन्ते तन्मतान्तरमवगन्तव्यमिति ।

चक्कवट्टिविजय त्ति चक्रवर्त्तिविजेतव्यानि क्षेत्रखण्डानि । **उक्कोसपए चोत्तीसं तित्थगरा समुप्पज्जंति** त्ति **समुत्पद्यन्ते** सम्भवन्तीत्यर्थः, न त्वेकसमये जायन्ते, चतुर्णामेवैकदा जन्मसम्भवात्, तथाहि - मेरौ पूर्वापरशिलातलयोर्द्वे द्वे एव सिंहासने भवतोऽतो द्वावेव द्वावेवाभिषिच्येते अतो द्वयोर्द्वयोरेव जन्मेति, दक्षिणोत्तरयोस्तु क्षेत्रयोस्तदानीं दिवससद्भावात् न भरतैरवतयोर्जिनोत्पत्तिरर्द्धरात्र एव जिनोत्पत्तेरिति । **पढमे**त्यादि प्रथमायां पृथिव्यां त्रिंशन्नरकावासानां लक्षाणि, पञ्चम्यां त्रीणि षष्ठ्यां पञ्चोनं लक्षं सप्तम्यां पञ्च नरकाः, एवं सर्वमीलने चतुस्त्रिंशल्लक्षाणि भवन्तीति ॥३४॥

[सू० ३५] पणतीसं सच्चवयणाइसेसा पण्णत्ता ।

कुंथू णं अरहा पणतीसं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

दत्ते णं वासुदेवे पणतीसं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

नंदणे णं बलदेवे पणतीसं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

---

१. इति नास्ति जे१ खं० ॥

सोहम्मे कप्पे सभाए सोहम्माए माणवए चेतियक्खंभे हेट्ठा उवरिं च अद्धतेरस अद्धतेरस जोयणाणि वज्जेत्ता मज्झे पणतीसाए जोयणेसु वतिरामएसु गोलवट्टसमुग्गतेसु जिणसकहातो पण्णत्तातो ।

बितिय-चउत्थीसु दोसु पुढवीसु पणतीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

[टी०] पञ्चत्रिंशत्स्थानकं सुगमम्, नवरं सत्यवचनातिशया आगमे न दृष्टाः, एते तु ग्रन्थान्तरदृष्टाः सम्भाविताः, वचनं हि गुणवद्वक्तव्यम्, तद्यथा - संस्कारवत् १, उदात्तम् २, उपचारोपेतम् ३, गम्भीरशब्दम् ४, अनुनादि ५, दक्षिणम् ६, उपनीतरागम् ७, महार्थम् ८, अव्याहतपौर्वापर्यम् ९, शिष्टम् १०, असन्दिग्धम् ११, अपहृतान्योत्तरम् १२, हृदयग्राहि १३, देशकालाव्यतीतम् १४, तत्त्वानुरूपम् १५, [1]अप्रकीर्णप्रसृतम् १६, अन्योन्यप्रगृहीतम् १७, अभिजातम् १८, अतिस्निग्धमधुरम् १९, अपरमर्मविद्धम् २०, अर्थधर्माभ्यासानपेतम् २१, उदारम् २२, परनिन्दात्मोत्कर्षविप्रयुक्तम् २३, उपगतश्लाघम् २४, अनपनीतम् २५, उत्पादिताच्छिन्नकौतूहलम् २६, अद्रुतम् २७, अनतिविलम्बितम् २८, विभ्रम-विक्षेप-किलिकिञ्चितादिवियुक्तम् २९, अनेकजातिसंश्रयाद्विचित्रम् ३०, आहितविशेषम् ३१, साकारम् ३२, सत्त्वपरिग्रहम् ३३, अपरिखेदितम् ३४, अव्युच्छेदम् ३५ [2]चेति । तत्र संस्कारवत्त्वं संस्कृतादिलक्षणयुक्तत्वम् १, उदात्तत्वम् उच्चैर्वृत्तिता २, उपचारोपेतत्वम् अग्राम्यता ३, गम्भीर[3]शब्दत्वं मेघस्येव ४, अनुनादित्वं प्रतिरवोपेतता ५, **दक्षिणत्वं** सरलत्वम् ६, उपनीतरागत्वं [4]मालवेशिकादिग्रामरागयुक्तता ७ एते सप्त शब्दा[5]पेक्षा अतिशयाः, अन्ये त्वर्थाश्रयाः, तत्र महार्थत्वं बृहदभिधेयता ८, अव्याहतपौर्वापर्यत्वं पूर्वापरवाक्याविरोधः ९, शिष्टत्वम् अभिमतसिद्धान्तोक्तार्थता वक्तुः शिष्टतासूचकत्वं वा १०, असन्दिग्धत्वम् असंशयकारिता ११, अपहृतान्योत्तरत्वं परदूषणाविषयता १२, हृदयग्राहित्वं श्रोतृमनोहरता १३, देशकालाव्यतीतत्वं प्रस्तावोचितता १४, तत्त्वानुरूपत्वं विवक्षितवस्तुस्वरूपानुसारिता १५, अप्रकीर्णप्रसृतत्वं

१. अप्रकीर्णे प्रसृतम् जे२ । **अप्रकीर्णं प्रसृतम्** जे१ हे२ ॥ २. **च ३५ वचनं महानुभावैर्वक्तव्यमिति** ।छा तथा दत्तः सप्तमवासुदेवः हे२ ॥ ३. °शब्दं जे२ ॥ ४. **मालवकेशिकादि**° जेसं०१। **मालवकैशिक्यादि** हे१ ॥ ५. °**पेक्षया** जे२ हे१ ॥

सुसम्बन्धस्य सतः प्रसरणम्, अथवाऽसम्बद्धाधिकारित्वा-ऽतिविस्तरयोरभावः १६, अन्योन्यप्रगृहीतत्वं परस्परेण पदानां वाक्यानां वा सापेक्षता १७, अभिजातत्वं वक्तुः प्रतिपाद्यस्य वा भूमिकानुसारिता १८, अतिस्निग्ध-मधुरत्वं घृत-गुडादिवत् सुखकारित्वम् १९, अपरमर्मवेधित्वं परमर्मानुद्घट्टनस्वरूपत्वम् २०, अर्थ-धर्माभ्यासानपेतत्वम् अर्थ-धर्मप्रतिबद्धत्वम् २१, उदारत्वम् अभिधेयार्थस्यातुच्छत्वं गुम्फगुणविशेषो वा २२, परनिन्दात्मोत्कर्षविप्रयुक्तत्वमिति प्रतीतमेव २३, उपगतश्लाघत्वम् उक्तगुणयोगात् प्राप्तश्लाघता २४, अनपनीतत्वं कारक-काल-वचन-लिङ्गादिव्यत्ययरूपवचनदोषापेतता २५, उत्पादिताच्छिन्नकौतूहलत्वं स्वविषये श्रोतॄणां जनितमविच्छिन्नं कौतुकं येन तत्तथा तद्भावस्तत्त्वम् २६, अद्रुतत्वम् अनतिविलम्बितत्वं[1] च प्रतीतम् २७-२८, विभ्रम-विक्षेप-किलिकिञ्चितादिवियुक्तत्वम्[2], **विभ्रमो** वक्तृमनसो भ्रान्तता, **विक्षेपः** तस्यैवाभिधेयार्थं प्रत्यनासक्तता, **किलिकिञ्चितं** रोषभयाभिलाषादिभावानां युगपद-सकृत्करणमादिशब्दान्मनोदोषान्तरपरिग्रहस्तैर्विमुक्तं यत्तत्तथा, तद्भावस्तत्त्वम् २९, अनेकजातिसंश्रयाद्विचित्रत्वम्, इह जातयो वर्णनीयवस्तु[3]स्वरूपवर्णनानि ३०, आहितविशेषत्वं वचनान्तरापेक्षया ढौकितविशेषता ३१, साकारत्वं विच्छिन्नवर्ण-पद-वाक्यत्वेनाकारप्राप्तत्वम् ३२, सत्त्वपरिगृहीतत्वं साहसोपेतता ३३, अपरिखेदितत्वम् अनायाससम्भवः ३४, अव्युच्छेदित्वं विवक्षितार्थसम्यक्सिद्धिं यावदव्यवच्छिन्न-वचनप्रमेयतेति ३५ ।

तथा **दत्तः** सप्तमवासुदेवः, **नन्दनः** सप्तमबलदेवः, एतयोश्चा[4]**वश्यका**भिप्रायेण षड्विंशतिर्धनुषामुच्चत्वं भवति, सुबोधं च तत्, यतोऽ**रनाथ-मल्लिस्वामिनोरन्तरे** तावभिहितौ, यतोऽवाचि– **अर-मल्लिअंतरे दोण्णि केसवा पुरिसपुंडरीय-दत्त**[5] [आव० नि० ४२०] त्ति, **अरनाथ-मल्लिनाथयो**श्च क्रमेण त्रिंशत् पञ्चविंशतिश्च धनुषामुच्चत्वम्,

---

१. °**विलम्बित्वं** हे१ विना ॥ २. °**वियुक्तं वि**° जे१ ॥ ३. °**वस्तुरूप**° खं० ॥ ४. वण्णेण वासुदेवा सव्वे नीला बला य सुक्किलया । एएसिं देहमाणं वुच्छामि अहाणुपुव्वीए ॥४०२॥ पढमो धणूणऽसीई सत्तरी सट्ठी य पन्न पणयाला । अउणतीसं च धणू छव्वीस सोलसा दसेव ॥४०३॥ - इति **आवश्यकहारिभद्र्यां** वृत्तौ ॥ ५. ``अरश्च मल्लिश्च अरमल्ली तयो**रन्तरम्** अपान्तरालं तस्मिन्, द्वौ केशवौ भविष्यतः, कौ द्वौ इत्याह- पुरुष-पुण्डरीकदत्तौ ॥'' - इति **आवश्यकस्य हारिभद्र्यां** वृत्तौ ॥

एतदन्तरालवर्त्तिनोश्च वासुदेवयोः षष्ठ-सप्तमयोरेकोनत्रिंशत् षड्विंशतिश्च धनुषां युज्यत इति, इहोक्ता तु पञ्चत्रिंशत् स्यात् यदि दत्त-नन्दनौ **कुन्थुनाथ**तीर्थकाले भवतो न चैतदेवं जिनान्तरेष्वधीयत इति दुरवबोधमिदमिति ।

सौधर्मे कल्पे सौधर्मावतंसकादिषु विमानेषु सर्वेषु पञ्च पञ्च सभा भवन्ति । सुधर्मसभा १, उपपातसभा २, अभिषेकसभा ३, अलङ्कारसभा ४, व्यवसायसभा ५ च । तत्र सुधर्मसभामध्यभागे मणिपीठिकोपरि षष्टियोजनमानो **माणवको** नाम चैत्यस्तम्भोऽस्ति, तत्र **वइरामएसु** त्ति **वज्रमयेषु** तथा गोलवद्वृत्ता वर्तुला ये **समुद्गका** भाजनविशेषास्तेषु **जिणसकहाओ** त्ति **जिनसक्थीनि** तीर्थकराणां मनुजलोकनिर्वृत्ता(?ता)नां **सक्थीनि** अस्थीनि **प्रज्ञप्तानीति** । **बीय-चउत्थी**त्यादि द्वितीयपृथिव्यां पञ्चविंशतिर्नरकलक्षाणि चतुर्थ्यां तु दशेति पञ्चत्रिंशत्तानीति ॥३५॥

[सू० ३६] **छत्तीसं उत्तरज्झयणा पण्णत्ता, तंजहा– विणयसुयं १, परीसहा २, चाउरंगिज्जं ३, असंखयं ४, अकाममरणिज्जं ५, पुरिसविज्जा ६, उरब्भिज्जं ७, काविलिज्जं ८, नमिपव्वज्जा ९, दुमपत्तयं १०, बहुसुतपुज्जा ११, हरितेसिज्जं १२, चित्तसंभूयं १३, उसुकारिज्जं १४, सभिक्खुगं १५, समाहिट्ठाणाइं १६, पावसमणिज्जं १७, संजइज्जं १८, मियचारिता १९, अणाहपव्वज्जा २०, समुद्दपालिज्जं २१, रहनेमिज्जं २२, गोतमकेसिज्जं २३, समितीओ २४, जण्णतिज्जं २५, सामायारी २६, खलुंकिज्जं २७, मोक्खमग्गगती २८, अप्पमातो २९, तवोमग्गो ३०, चरणविही ३१, पमायट्ठाणाइं ३२, कम्मपगडि ३३, लेसज्झयणं ३४, अणगारमग्गे ३५, जीवाजीवविभत्ती य ३६ ।**

चमरस्स णं असुरिंदस्स असुररण्णो सभा सुधम्मा छत्तीसं जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

समणस्स णं भगवतो महावीरस्स छत्तीसं अज्जाणं साहस्सीतो होत्था ।

चेत्तासोएसु णं मासेसु सति छत्तीसंगुलियं सूरिए पोरिसिच्छायं निव्वत्तति।

[टी०] षट्त्रिंशत्स्थानकं स्पष्टमेव, नवरं चैत्राश्वयुजोर्मासयोः **सकृद्** एकदा पूर्णिमायामिति व्यवहारो निश्चयतस्तु मेषसङ्क्रान्तिदिने तुलासङ्क्रान्तिदिने चेत्यर्थः ।

षट्त्रिंशदङ्गुलिकां पदत्रयमानाम्, आह च–

[1]चेत्तासोएसु मासेसु, तिपया होइ पोरुसी [उत्तरा० २६।१३] ति ॥३६॥

[सू० ३७] कुंथुस्स णं अरहओ सत्तत्तीसं गणा सत्तत्तीसं गणहरा होत्था।

हेमवय-हेरण्णवतियातो णं जीवातो सत्तत्तीसं सत्तत्तीसं जोयणसहस्साइं छच्च चोवत्तरे जोयणसते सोलस य एकूणवीसइभाए जोयणस्स किंचिविसेसूणातो आयामेणं पण्णत्तातो ।

सव्वासु णं विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजितासु रायधाणीसु पागारा सत्तत्तीसं सत्तत्तीसं जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

खुड्डियाए णं विमाणप्पविभत्तीए पढमे वग्गे सत्तत्तीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता।

कत्तियबहुलसत्तमीए णं सूरिए सत्तत्तीसंगुलियं पोरिसिच्छायं निव्वत्तइत्ता णं चारं चरति ।

[टी०] सप्तत्रिंशत्स्थानकमपि व्यक्तम्, नवरं **कुन्थुनाथ**स्येह सप्तत्रिंशद् गणधरा [2]उक्ताः, **आवश्यके** तु पञ्चत्रिंशत् श्रूयन्त इति मतान्तरम् । तथा **हैमवतादि**जीवयोरुक्तप्रमाणसंवादगाथा–

सत्तत्तीस सहस्सा छ च्च सया जोयणाण चउसयरा ।
हेमवयवासजीवा किंचूणा सोलस कला य ॥ *[बृहत्क्षेत्र० ५४] त्ति ।

कला एकोनविंशतिभागो योजनस्येति। तथा **विजयादीनि** पूर्वादीनि **जम्बूद्वीप**द्वाराणि तन्नायकास्तन्नामानो देवास्तेषां राजधान्यस्तन्नामिका एव पूर्वादिदिक्षु इतोऽसङ्ख्येयतमे जम्बूद्वीप इति । **क्षुद्रिकायां विमानप्रविभक्तौ** कालिकश्रुतविशेषे, तत्र किल बहवो वर्गा अध्ययनसमुदायात्मका भवन्ति । तत्र प्रथमे वर्गे प्रत्यध्ययनमुद्देशस्य ये कालास्त **उद्देशनकाला** इति । [3]यदि अश्वयुजः पौर्णमास्यां षट्त्रिंशदङ्गुलिका पौरुषीच्छाया भवति [4]तदा कार्तिकस्य कृष्णसप्तम्यामङ्गुलस्य वृद्धिं गतत्वात् सप्तत्रिंशदङ्गुलिका भवतीति ॥३७॥

---

१. दृश्यतां पृ० ८७ टि०१ ॥ २. दृश्यता पृ० १४२ टि०१ ॥ ३. **यदि चैत्रस्य पौर्ण**° हे२ ॥ ४. **तदा वैशाखस्य कृष्ण**° हे२ ॥

[सू० ३८] पासस्स णं अरहतो पुरिसादाणीयस्स अट्ठत्तीसं अज्जिआसाहस्सीतो उक्कोसिया अज्जियासंपया होत्था ।

हेमवतेरण्णवतियाणं जीवाणं धणूवट्ठा अट्ठत्तीसं अट्ठत्तीसं जोयणसहस्साइं सत्त य चत्ताले जोयणसते दस एगूणवीसतिभागे जोयणस्स किंचिविसेसूणा परिक्खेवेणं पण्णत्ता ।

अत्थस्स णं पव्वयरण्णो बितिए कंडे अट्ठत्तीसं जोयणसहस्साइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ते ।

खुड्डियाए णं विमाणपविभत्तीए बितिए वग्गे अट्ठत्तीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

[टी०] अष्टत्रिंशत्स्थानकं व्यक्तमेव, नवरं **धणुपट्ठं** ति **जम्बूद्वीप**लक्षणवृत्तक्षेत्रस्य **हैमवत-हैरण्यवताभ्यां** द्वितीय-षष्ठवर्षाभ्यामवच्छिन्नस्यारोपितज्यधनुःपृष्ठाकारे परिधिखण्डे धनुःपृष्ठे इव धनुःपृष्ठे उच्येते, तत्पर्यन्तभूते ऋजुप्रदेशपङ्क्ती तु जीवे इव **जीवे** इति । एतत्सूत्रसंवादिगाथार्द्धं चत्ताला सत्त सया अडतीस सहस्स दस कला य धणु [बृहत्क्षेत्र० ५५]* त्ति। तथा **अत्थस्स** त्ति **अस्तो** मेरुर्यतस्तेनान्तरितो रविरस्तं गत इति व्यपदिश्यते तस्य **पर्वतराजस्य** गिरिप्रधानस्य **द्वितीयं काण्डं** विभागोऽ**ष्टत्रिंशद्योजनसहस्राण्युच्चत्वेन** भवतीति, मतान्तरेण तु त्रिषष्टिः सहस्राणि, यदाह–

मेरुस्स तिन्नि कंडा पुढवोवलवइरसक्करा पढमं ।
रयए य जायरूवे अंके फलिहे य बीयं तु ॥
एक्कागारं तइयं तं पुण जंबूणयामयं होइ ।
जोयणसहस्स पढमं बाहल्लेणं च [1]बीयं तु ॥
तेवट्ठि सहस्साइं तइयं छत्तीस जोयणसहस्सा ।
मेरुस्सुवरिं चूला उव्विद्धा जोयणदुवीसं ॥ [बृहत्क्षेत्र० ३१२-१४]* ति ॥३८॥

[सू० ३९] नमिस्स णं अरहतो एगूणचत्तालीसं आहोहियसया होत्था ।

---

१. बिइयं तु खं० । बितियं च हे२ ॥

समयखेत्ते णं एकूणचत्तालीसं कुलपव्वया पण्णत्ता, तंजहा– तीसं वासहरा, पंच मंदरा, चत्तारि उसुकारा ।

दोच्च-चउत्थ-पंचम-छट्ठ-सत्तमासु णं पंचसु पुढवीसु एकूणचत्तालीसं निरयावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

नाणावरणिज्जस्स मोहणिज्जस्स गोत्तस्स आउस्स वि एतासि णं चउण्हं कम्मपगडीणं एकूणचत्तालीसं उत्तरपगडीतो पण्णत्ताओ ।

[टी०] एकोनचत्वारिंशत्स्थानकं व्यक्तमेव, नवरम् **आहोहिय** त्ति नियतक्षेत्रविषयावधिज्ञानिनस्तेषां शतानीति । **कुलपव्वय** त्ति क्षेत्रमर्यादाकारित्वेन कुलकल्पाः पर्वताः **कुलपर्वताः**, कुलानि हि लोकानां मर्यादानिबन्धनानि भवन्तीतीह तैरुपमा कृता, तत्र **वर्षधरास्त्रिंशद्** जम्बूद्वीपे धातकीखण्ड-पुष्करार्द्धपूर्वापरार्द्धेषु च प्रत्येकं **हिमवदादीनां** षण्णां षण्णां भावात्, **मन्दराः पञ्च**, **इषुकारा** धातकीखण्ड-पुष्करार्द्धयोः पूर्वेतरविभागकारिणश्चत्वारः, एवमेते **एकोनचत्वारिंशदिति** । **दोच्चे**-त्यादि द्वितीयायां पञ्चविंशतिश्चतुर्थ्यां दश पञ्चम्यां त्रीणि षष्ठ्यां पञ्चोनं[1] लक्षं सप्तम्यां पञ्चेति यथोक्तसंख्या नरकाणामिति । **नाणावरणिज्जे**त्यादि, **ज्ञानावरणीयस्य** पञ्च **मोहनीयस्याष्टाविंशतिः गोत्रस्य द्वे आयुषश्चतस्रः** इत्येवमेकोनचत्वारिंशदिति ॥३९॥

[सू० ४०] अरहतो णं अरिट्ठनेमिस्स चत्तालीसं अज्जियासाहस्सीतो होत्था ।

मंदरचूलिया णं चत्तालीसं जोयणाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

संती अरहा चत्तालीसं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

भूयाणंदस्स णं [णागिंदस्स ?] नागरण्णो चत्तालीसं भवणावाससयसहस्सा पण्णत्ता ।

खुड्डियाए णं विमाणपविभत्तीए ततिए वग्गे चत्तालीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

फग्गुणपुण्णिमासिणीए णं सूरिए चत्तालीसंगुलियं पोरिसिच्छायं निव्वट्टइत्ता

---

१. पंचोनलक्षं खं० ॥

णं चारं चरति । एवं कत्तियाए वि पुण्णिमाए ।

महासुक्के कप्पे चत्तालीसं विमाणावाससहस्सा पण्णत्ता ।

[टी०] चत्वारिंशत्स्थानकं व्यक्तम्, नवरं **वइसाहपुण्णिमासिणीए** त्ति यत् केषुचित् पुस्तकेषु दृश्यते सोऽपपाठः, **फग्गुणपुण्णिमासिणीए** त्ति अत्राध्येयम्, कथम् ?, उच्यते, **पोसे मासे चउप्पया** [उत्तरा० २६।१३] इति वचनात् पौषपौर्णमास्यामष्टचत्वारिंशदङ्गुलिका सा भवति, ततो माघे चत्वारि फाल्गुने च चत्वारि अङ्गुलानि पतितानीत्येवं फाल्गुनपौर्णमास्यां चत्वारिंशदङ्गुलिका पौरुषीच्छाया भवति, **कार्त्तिक्यामप्येवमेव**, यतः [1] **चेत्तासोएसु मासेसु तिपया होइ पोरुसी** [उत्तरा० २६।१३] इत्युक्तम्, ततः पदत्रयस्य षट्त्रिंशदङ्गुलप्रमाणस्य **कार्त्तिक**मासातिक्रमे चतुरङ्गुलवृद्धौ चत्वारिंशदङ्गुलिका सा भवतीति ॥४०॥

[सू० ४१] **नमिस्स णं अरहतो एक्कचत्तालीसं अज्जियासाहस्सीओ होत्था।**

चउसु पुढवीसु एक्कचत्तालीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता, तंजहा– रयणप्पभाए पंकप्पभाए तमाए तमतमाए ।

महल्लियाए णं विमाणपविभत्तीए पढमे वग्गे एक्कचत्तालीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

[टी०] एकचत्वारिंशत्स्थानकं सुगमम्, नवरं **चउसु** इत्यादि क्रमेण सूत्रोक्तासु चतसृषु प्रथम-चतुर्थ-षष्ठ-सप्तमीषु पृथिवीषु त्रिंशतो दशानां च नरकलक्षाणां पञ्चोनस्य चैकस्य [लक्षस्य] पञ्चानां च नरकाणां भावाद्यथोक्तसंख्यास्ते भवन्तीति ॥४१॥

[सू० ४२] **समणे भगवं महावीरे बायालीसं वासाइं साहियाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता सिद्धे जाव प्पहीणे ।**

जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स पुरत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ गोथुभस्स णं आवासपव्वतस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं बातालीसं जोयणसहस्साइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते । एवं चउद्दिसिं पि दओभासे संखे दयसीमे य ।

कालोए णं समुद्दे बायालीसं चंदा जोतिंसु वा जोइंति वा जोतिस्संति

१. दृश्यतां पृ०८७ टी०१ ॥

वा । बायालीसं सूरिया पभासिंसु वा पभासिंति वा पभासिस्संति वा ।

संमुच्छिमभुयपरिसप्पाणं उक्कोसेणं बायालीसं वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता।

नामे णं कम्मे बायालीसविहे पण्णत्ते, तंजहा– गतिणामे जातिणामे सरीरणामे सरीरंगोवंगणामे सरीरबंधणणामे सरीरसंघायणणामे संघयणणामे संठाणणामे वण्णणामे गंधणामे रसनामे फासणामे अगरुलहुयणामे उवघायणामे पराघातणामे आणुपुव्वीणामे उस्सासणामे आतवणामे उज्जोयणामे विहगगतिणामे तसणामे थावरणामे सुहुमणामे बादरणामे पज्जत्तणामे अपज्जत्तणामे साधारणसरीरणामे पत्तेयसरीरणामे थिरणामे अथिरणामे सुभणामे असुभणामे सुभगणामे दुब्भगणामे सुसरणामे दुस्सरणामे आदेज्जणामे अणादेज्जणामे जसोकित्तिणामे अजसोकित्तिणामे निम्माणणामे तित्थकरणामे।

लवणे णं समुद्दे बायालीसं नागसाहस्सीओ अब्भिंतरियं वेलं धारेंति ।

महालियाए णं विमाणपविभत्तीए बितिए वग्गे बायालीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

एगमेगाए णं ओसप्पिणीए पंचम-छट्ठीतो समातो बायालीसं वाससहस्साइं कालेणं पण्णत्तातो ।

एगमेगाए णं उस्सप्पिणीए पढम-बितियातो समातो बायालीसं वाससहस्साइं कालेणं पण्णत्तातो ।

[टी०] द्विचत्वारिंशत्स्थानकं व्यक्तमेव, नवरं **बायालीसं** ति छद्मस्थपर्याये द्वादश वर्षाणि षण्मासा अर्द्धमासश्चेति, केवलिपर्यायस्तु देशोनानि त्रिंशद्वर्षाणीति **पर्युषणाकल्पे**[1] द्विचत्वारिंशदेव वर्षाणि **महावीरपर्यायो**ऽभिहितः, इह तु साधिक उक्तः, तत्र **पर्युषणाकल्पे** यदल्पमधिकं तन्न विवक्षितमिति सम्भाव्यत इति, **जाव** त्ति करणात् 'बुद्धे मुत्ते अंतकडे परिनि[2]व्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे' त्ति दृश्यम् । [3]**जंबुद्दीवस्से**त्यादि.

१. ''तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे तीसं वासाइं अगारवासमज्झे वसित्ता, साइरेगाइं दुवालस वासाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता, देसूणाइं तीसं वासाइं केवलिपरियागं पाउणित्ता बायालीसं वासाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता, बावत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता; ... . सिद्धे बुद्धे मुत्ते अंतगडे परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे ॥१४७॥'' इति **पर्युषणाकल्पे** ॥ २. हे२ विना- °**निव्वुडे त्ति सव्वदुक्खप्पहीणे त्ति दृश्यं** जे१,२ हे१ । °**निव्वुडे त्ति दृश्यं** खं०॥ ३. **जंबूदीव**° जे१ खं० ॥

[1]**पुरित्थिमिल्लचरिमंताओ** त्ति जगतीबाह्यपरिधेरपसृत्य गोस्तुभस्याऽऽवासपर्वतस्य **वेलंधरनागराज**सम्बन्धिनः [2]पाश्चात्त्यश्चरमान्तः चरमविभागो यावताऽन्तरेण भवति **एस णं** ति एतदन्तरं द्विचत्वारिंशद्योजनसहस्राणि प्रज्ञप्तम्, अन्तरशब्देन विशेषोऽप्यभिधीयते इत्यत आह– **आबाहाए** त्ति व्यवधानापेक्षया यदन्तरं तदित्यर्थः। **कालायणे** त्ति **धातकीखण्ड**परिवेष्टके **कालोदाभि**धाने समुद्रे ।

गइनामेत्यादि, **गतिनाम** यदुदयान्नारकादित्वेन जीवो व्यपदिश्यते, **जातिनाम** यदुदयादेकेन्द्रियादिर्भवति, **शरीरनाम** यदुदयादौदारिकादिशरीरं करोति, यदुदयादङ्गानां शिरःप्रभृतीनाम् उपाङ्गानां च अङ्गुल्यादीनां विभागो भवति त**च्छरीराङ्गोपाङ्गनाम**, तथा औदारिकादिशरीरपुद्गलानां पूर्वबद्धानां बध्यमानानां च सम्बन्धकारणं **शरीरबन्धननाम**, तथा औदारिकादिशरीरपुद्गलानां गृहीतानां यदुदयाच्छरीररचना भवति त**च्छरीरसङ्घातनाम**, तथाऽस्थ्नां यतस्तथाविधशक्तिनिमित्तभूतो रचनाविशेषो भवति तत् **संहनननाम**, संस्थानं समचतुरस्रादिलक्षणं यतो भवति तत् **संस्थाननाम**, तथा यदुदयाद्वर्णादिविशेषवन्ति शरीराणि भवन्ति तद् **वर्णा**दिनाम, तथा यदुदयादगुरुलघु [3]स्वं स्वं शरीरं जीवानां भवति तद**गुरुलघुनाम**, तथा यतोऽङ्गावयवः प्रतिजिह्विकादिरात्मोपघातको जायते **तदुपघातनाम**, तथा यतोऽङ्गावयव एव विषात्मको दंष्ट्रा-त्वगादिः परेषामुपघातको भवति तत् **पराघात**नाम, तथा यदु[4]दयादन्तरालगतौ जीवो याति तद**ानुपूर्वीनाम**, तथा यदुदयादुच्छ्वासनिःश्वासनिष्पत्तिर्भवति तदु**च्छ्वासनाम**, तथा यदुदयाज्जीवस्तापवच्छरीरो भवति तद**ातपनाम**, यथाऽऽदित्यबिम्बपृथिवीकायिकानाम्, तथा यतोऽनुष्णोद्द्योतवच्छरीरो भवति तदु**द्द्योतनाम**, तथा यतः शुभेतरगमनयुक्तो भवति त**द्विहायोगतिनाम**, **त्रसनामा**दीन्यष्टौ प्रतीतार्थानि, तथा यतः स्थिराणां दन्ताद्यवयवानां निष्पत्तिर्भवति तत् **स्थिर**नाम, यतश्च भ्रू-जिह्वादीनामस्थिराणां निष्पत्तिर्भवति तद**स्थिरनाम**, [5]एवं शिरःप्रभृतीनां शुभानां त**च्छुभनाम**, पादादीनामशुभाना**मशुभनाम** इति, शेषाणि प्रतीतानि, नवरं यदुदयाज्जातौ

---

१. **पुरित्थमि**° हे२ विना ॥ २. **पाश्चात्यचर**° खं० हे२ ॥ ३. **स्वं शरीरं** जे२ ॥ ४. °**दयान्तराल**° हे१,२ विना ॥ ५. **तथा शिरःप्र**° हे२ ॥

जातौ जीवदेहेषु स्त्र्यादिलिङ्गाकारनियमो भवति तत् सूत्रधारसमानं **निर्माणनामे**ति, **पञ्चम-छट्ठीओ समाओ** त्ति दुःषमा एकान्तदुःषमा चेत्यर्थः, **पढम-बीयाउ** त्ति एकान्तदुःषमा दुःषमा चेति ॥४२॥

[सू० ४३] **तेतालीसं कम्मविवागज्झयणा पण्णत्ता ।**

पढम-चउत्थ-पंचमासु तीसु पुढवीसु तेतालीसं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ।

जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स पुरत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ गोथुभस्स णं आवासपव्वतस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं तेयालीसं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं चउद्दिसिं पि दओभासे संखे दयसीमे ।

महालियाए णं विमाणपविभत्तीए ततिए वग्गे तेतालीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

[टी०] त्रिचत्वारिंशत्स्थानकेऽपि किञ्चिल्लिख्यते, **कम्मविवागज्झयण** त्ति **कर्म्मणः** पुण्य-पापात्मकस्य **विपाकः** फलं तत्प्रतिपादकान्यध्ययनानि **कर्मविपाकाध्ययनानि**, एतानि च एकादशाङ्ग-द्वितीयाङ्गयोः सभाव्यन्त इति । **जंबुद्दीवस्स ण**मित्यादि, **जम्बूद्वीपस्य** पौरस्त्यान्ताद् गोस्तुभपर्वतो द्विचत्वारिंशद्योजनानां सहस्राणि तद्विष्कम्भश्च सहस्रं तदधिकाया द्वाविंशतेरल्पत्वेनाविवक्षणादेवं च त्रिचत्वारिंशत् सहस्राणि भवन्तीति, **एवं चउद्दिसिं पि** त्ति उक्तदिगन्तर्भावेन चतस्रो दिश उक्ताः, अन्यथा **एवं तिदिसिं पि** त्ति वाच्यं स्यात्, तत्र चैवमभिलापः 'जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स दाहिणिल्लाओ चरिमताओ दओभासस्स णं आवासपव्वयस्स दाहिणिल्ले चरिमंते एस णं तेयालीसं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते', एवमन्यत् सूत्रद्वयम्, नवरं पश्चिमायां शङ्ख आवासपर्वत उत्तरस्यामुदकसीम[1] इति ॥४३॥

[सू० ४४] **चोत्तालीसं अज्झयणा इसिभासिया दियलोगचुताभासिया पण्णत्ता ।**

---

१. °स्यां तु दक° हे२ ॥

विमलस्स णं अरहतो चोत्तालीसं पुरिसजुगाइं अणुपद्धिसिद्धाइं जाव प्पहीणाइं ।

धरणस्स णं नागिंदस्स नागरण्णो चोत्तालीसं भवणावाससयसहस्सा पण्णत्ता।

महालियाए णं विमाणपविभत्तीए चउत्थे वग्गे चोत्तालीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

[टी०] चतुश्चत्वारिंशत्स्थानकेऽपि किञ्चिल्लिख्यते, चतुश्चत्वारिंशत् **इसिभासिय** त्ति **ऋषिभाषिताध्ययनानि** कालिकश्रुतविशेषभूतानि **दियलोयचुयाभासिय** त्ति देवलोकाच्च्युतैः ऋषीभूतैराभाषितानि **देवलोकच्युताभाषितानि**, क्वचित्पाठः **देवलोयचुयाणं इसीणं चोयालीसं इसिभासियज्झयणा पण्णत्ता ।**

पुरिसजुगाइं ति **पुरुषाः** शिष्य-प्रशिष्यादिक्रमव्यवस्थिता **युगानीव** कालविशेषा इव क्रमसाधर्म्यात् पुरुषयुगानि, **अणुपद्धि** त्ति आनुपूर्व्या **अणुबन्धं** ति पाठान्तरे तृतीयादर्शनादनुबन्धेन सातत्येन **सिद्धानि जाव** त्ति करणाद् 'बुद्धाइं मुत्ताइं अंतकडाइं सव्वदुक्खप्पहीणाइं' ति दृश्यम् । **महालियाए णं विमाणपविभत्तीए चतुर्थे वर्गे चतुश्चत्वारिंशदुद्देशनकालाः प्रज्ञप्ताः** ॥४४॥

[सू० ४५] **समयखेत्ते णं पणतालीसं जोयणसतसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।**

सीमंतए णं नरए पणतालीसं जोयणसतसहस्साइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते। एवं उडुविमाणे पण्णत्ते । ईसिपब्भारा णं पुढवी पण्णत्ता एवं चेव ।

धम्मे णं अरहा पणतालीसं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

मंदरस्स णं पव्वतस्स चउद्दिसिं पि पणतालीसं पणतालीसं जोयणसहस्साइं अबाधाते अंतरे पण्णत्ते ।

सव्वे वि णं दिवड्ढखेत्तिया नक्खत्ता पणतालीसं मुहुत्ते चंदेण सद्धिं जोगं जोएंसु वा जोएंति वा जोइस्संति वा–

---

१. जाव त्ति खंसं० विना ॥

तिन्नेव उत्तराइं, पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य ।
एते छन्नक्खत्ता, पणतालमुहुत्तसंजोगा ।।५८।।

महालियाए णं विमाणपविभत्तीए पंचमे वग्गे पणतालीसं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

[टी०] पञ्चचत्वारिंशत्स्थानके त्विदं लिख्यते, **समयखेत्ते** त्ति कालोपलक्षितं क्षेत्रम्, मनुष्यक्षेत्रमित्यर्थः । **सीमंतए णं** ति प्रथमपृथिव्यां प्रथमप्रस्तटे मध्यभागवर्त्ती वृत्तो नरकेन्द्रः **सीमन्तक** इति । **उडुविमाणे** त्ति सौधर्मेशानयोः प्रथमप्रस्तटवर्त्ति चतसृणां विमानावलिकानां मध्यभागवर्त्ति वृत्तं विमानेन्द्रक**मुडुविमान**मिति । [1]**ईसिपब्भार** त्ति सिद्धिपृथिवी । **मंदरस्स णं पव्वयस्से**त्यादि सूत्रे लवणसमुद्राभ्यन्तरपरिध्यपेक्षयान्तरं द्रष्टव्यमिति । **सव्वे वि ण**मित्यादि, चन्द्रस्य त्रिंशन्मुहूर्त्तभोग्यं नक्षत्रक्षेत्रं समक्षेत्रमुच्यते, तदेव सार्द्धं **द्व्यर्द्धम्**, द्वितीयमर्द्धमस्येति द्व्यर्द्धमित्येवं व्युत्पादनात्, तथाविधं क्षेत्रं येषामस्ति तानि **द्व्यर्द्धक्षेत्रि[2]काणि नक्षत्राणि** अत एव **पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्तान् चन्द्रेण सार्द्धं योगं**, सम्बन्धं **योजितवन्ति** । **तिन्नेव** गाहा, **त्रीण्युत्तराणि** उत्तरफाल्गुन्य उत्तराषाढा उत्तरभद्रपदाः ।।४५।।

[सू० ४६] **दिट्ठिवायस्स णं छायालीसं माउयापया पण्णत्ता ।**
बंभीए णं लिवीए छायालीसं माउयक्खरा पण्णत्ता ।
पभंजणस्स णं वातकुमारिंदस्स छायालीसं भवणावाससतसहस्सा पण्णत्ता।

[टी०] अथ षट्चत्वारिंशत्स्थानके किञ्चिल्लिख्यते, **दिट्ठिवायस्स** त्ति द्वादशाङ्गस्य **माउयापय** त्ति सकलवाङ्मयस्य अकारादिमा[3]तृकाः पदानीव दृष्टिवादार्थप्रसवनिबन्धनत्वेन मातृकापदानि उत्पाद-विगम-ध्रौव्यलक्षणानि, तानि च सिद्धश्रेणि-मनुष्यश्रेण्यादिना विषयभेदेन कथमपि भिद्यमानानि षट्चत्वारिंशद् भवन्तीति सम्भाव्यते । तथा **बंभीए णं लिवीए** त्ति लेख्यविधौ षट्चत्वारिंशन्मातृकाक्षराणि, तानि चाऽकारादीनि हकारान्तानि

१. इसी° जे२ ।। २. °क्षेत्रकाणि खं० ।। ३. मातृकापदानीव खं० जे२ विना ।।

सक्षकाराणि ऋ ॠ लृ ॡ लं[1](ळ) इत्येतदक्षरपञ्चक[2]वर्जितानि सम्भाव्यन्ते[3] । तथा **पभंजणस्स** त्ति औदीच्यस्येति ॥४६॥

[सू० ४७] जया णं सूरिए सव्वब्भंतरं मंडलं उवसंकमित्ता णं चारं चरति तया णं इहगतस्स मणूसस्स सत्तचत्तालीसं जोयणसहस्सेहिं दोहि य तेवट्ठेहिं जोयणसतेहिं एक्कवीसाए य सट्ठिभागेहिं जोयणस्स सूरिए चक्खुफासं हव्वमागच्छति ।

थेरे णं अग्गिभूती सत्तचत्तालीसं वासाइं अगारमज्झावसित्ता मुंडे भवित्ता णं अगारातो अणगारियं पव्वइते ।

[**टी०**] अथ सप्तचत्वारिंशत्स्थानके किमप्युच्यते, **जया णमि**त्यादि, इह लक्षप्रमाणस्य जम्बूद्वीपस्योभयतोऽशीत्युत्तरे योजनशते ३६० अपनीते सर्वाभ्यन्तरस्य सूर्यमण्डलस्य विष्कम्भो भवति ९९६४०, तत्परिधिस्त्रीणि लक्षाणि पञ्चदश सहस्राणि एकोननवत्यधिकानि ३१५०८९, एतच्च सूर्यो मुहूर्त्तानां षष्ट्या गच्छतीति षष्ट्याऽस्य भागहारे मुहूर्त्तगतिर्लभ्यते, सा च पञ्च योजनसहस्राणि द्वे चैकपञ्चाशदुत्तरे योजनशते एकोनत्रिंशच्च षष्टिभागा योजनस्य ५२५१ $\frac{२९}{६०}$, यदा चाभ्यन्तरमण्डले सूर्यश्चरति तदाऽष्टादश मुहूर्त्ता दिवसप्रमाणम्, तदर्द्धेन नवभिर्मुहूर्त्तैः मुहूर्त्तगतिर्गुण्यते, ततश्च यथोक्तं चक्षुःस्पर्शप्रमाणमागच्छतीति । **अग्गिभूइ** त्ति **वीरनाथस्य** द्वितीयो गणधरस्तस्य चेह सप्तचत्वारिंशद्वर्षाण्यगारवास उक्तः, **आवश्यके**[4] तु षट्चत्वारिंशत्, तत्र

१. सर्वेषु हस्तलिखितादर्शेषु **लं** इति पाठो दृश्यते, किन्तु **ळ** इति शुद्धः पाठः संभाव्यते ॥ २. **पंचवर्त्तितानि** जे२ ॥ ३. 'अ आ इ ई उ ऊ ए ऐ ओ औ अं अः, क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, य र ल व श ष स ह, क्ष' इति षट्चत्वारिंशद् मातृकाक्षराणि अत्र संभाव्यन्ते ॥ ४. "अगारपर्यायद्वारव्याचिख्यासयाऽऽह- **पण्णा छायालीसा बायाला होइ पण्ण पण्णा य । तेवण्ण पंचसट्ठी अडयालीसा य छायाला ॥६५०॥ व्या०** पञ्चाशत् षट्चत्वारिंशत् द्विचत्वारिंशत् भवति पञ्चाशत् पञ्चाशच्च त्रिपञ्चाशत् पञ्चषष्टिः अष्टचत्वारिंशत् षट्चत्वारिंशत् इति गाथार्थः ॥ **छत्तीसा सोलसगं अगारवासो भवे गणहराणं। छउमत्थयपरियागं अहक्कमं कित्तइस्सामि ॥६५१॥ व्या०-** षट्त्रिंशत् षोडशकम् **अगारवासो** गृहवासो यथासङ्ख्यम् एतावान् गणधराणाम् ।... छद्मस्थपर्यायं **यथाक्रमं** यथायोगं कीर्त्तयिष्यामि इति गाथार्थः ॥ **तीसा बारस दसगं बारस बायाल चोद्दसदुगं च । णवगं बारस दस अट्ठगं च छउमत्थपरियाओ ॥६५२॥** गाथेयं निगदसिद्धा॥ केवलिपर्यायपरिज्ञानोपायप्रतिपादनायाह- **छउमत्थपरीयागं अगारवासं च वोगसित्ता णं । सव्वाउगस्स सेसं जिणपरियागं वियाणाहि ॥६५३॥ व्या०** छद्मस्थपर्यायम् अगारवासं च व्यवकलय्य सर्वायुष्कस्य

सप्तचत्वारिंशत्तमवर्षस्यासम्पूर्णत्वादविवक्षा, इह त्वपूर्णस्यापि पूर्ण[त्व?]विवक्षेति सम्भावनया न विरोध इति ॥४७॥

[सू० ४८] एगमेगस्स णं रन्नो चाउरंतचक्कवट्टिस्स अडयालीसं पट्टणसहस्सा पण्णत्ता ।

धम्मस्स णं अरहतो अडयालीसं गणा अडयालीसं गणहरा होत्था ।

सूरमंडले णं अडयालीसं एकसट्ठिभागे जोयणस्स विक्खंभेणं पण्णत्ते ।

[टी०] अष्टचत्वारिंशत्स्थानकेऽपि[1] किमपि लिख्यते, **पट्टण**[2] त्ति, विविधदेशपण्यान्यागत्य यत्र पतन्ति तत् **पत्तनं** नगरविशेषः । **पत्तनं** रत्नभूमिरित्याहुरेके । **धम्मस्स** त्ति पञ्चदशतीर्थकरस्य, इहाऽ**ष्टचत्वारिंशद् गणा गणधराश्चोक्ताः**, **आवश्यके**[3] तु त्रिचत्वारिंशत् पठ्यन्ते तदिदं मतान्तरमिति । **सूरमंडले** त्ति सूर्यविमानं येषां भागानामेकषष्ट्या योजनं भवति तेषामष्टचत्वारिंशत्, त्रयोदशभिस्तैर्न्यूनं योजनमित्यर्थः ॥४८॥

[सू० ४९] सत्तसत्तमिया णं भिक्खुपडिमा एकूणपण्णाए रातिंदिएहिं छण्णउएणं भिक्खासतेणं अहासुत्तं आराहिया भवइ ।

देवकुरु-उत्तरकुरासु णं मणुया एकूणपण्णाए रातिंदिएहिं संपत्तजोव्वणा भवंति ।

तेइंदियाणं उक्कोसेणं एकूणपण्णं रातिंदिया ठिती पण्णत्ता ।

शेषं जिनपर्यायं विजानीहीति गाथार्थः ॥ स चायं जिनपर्यायः- **बारस सोलस अट्ठारसेव अट्ठारसेव अट्ठेव । सोलस सोल तहेकवीस चोद्द सोले य सोले य ॥६५४॥** निगदसिद्धा । सर्वायुष्कप्रतिपादनायाह- **बाणउइ चउहत्तरि सत्तरि तत्तो भवे असीई य । एगं च सयं तत्तो तेसीई पंचणउई य ॥६५५॥ अट्ठत्तरीं च वासा तत्तो बावत्तरीं च वासाइं । बावट्ठी चत्ता खलु सव्वगणहराउयं एयं ॥६५६॥** गाथाद्वयं निगदसिद्धमेव ॥" इति **आवश्यकसूत्रनिर्युक्तेः हरिभद्रसूरिविरचितायां** वृत्तौ ॥

१. °**नके किमपि** हे१ ॥ २. **पट्टणं ति** जे२ ॥ ३. "चुलसीइ १, पंचनउई २, बिउत्तरं ३, सोलसुत्तर ४, सय च ५ । सत्तहिअं ६, पणनउई ७, तेणउई ८, अङ्कसीई अ ९ ॥२६६॥ इक्कासीई १०, छावत्तरी अ ११, छावट्ठि १२, सत्तवण्णा य १३ । पण्णा १४, तेयालीसा १५, छत्तीसा १६ चेव, पणतीसा १७ ॥२६७॥ तित्तीस १८, अट्ठवीसा १९, अट्ठारस २० चेव, तहय सत्तरस २१ । इक्कारस २२, दस २३, नवगं २४, गणाण माणं जिणिंदाणं १७ ॥२६८॥" इति **आवश्यकनिर्युक्तौ** ॥

[टी०] अथैकोनपञ्चाशत्स्थानके लिख्यते, **सत्तसत्तमिया णं** सप्त सप्तमानि दिनानि यस्यां सा **सप्तसप्तमिका**, सप्त च सप्तमदिनानि भवन्ति सप्तसु सप्तकेषु, अतः सा सप्तदिनसप्तकमयत्वादेकोनपञ्चाशता दिनैर्भवतीति । **पडिम** त्ति अभिग्रहः । **छन्नउएणं भिक्खासएणं** ति प्रथमे दिनसप्तके प्रतिदिनमेकोत्तरया भिक्षावृद्ध्या अष्टाविंशतिर्भिक्षा भवन्ति, एवं च सप्तस्वपि षण्णवतं भिक्षाशतं भवति, अथवा प्रतिसप्तकमेकोत्तरया वृद्ध्या यथोक्तं भिक्षामानं भवति, तथाहि– प्रथमे सप्तके प्रतिदिनमेकैकभिक्षाग्रहणात् सप्त भिक्षा भवन्ति, द्वितीये द्वयोर्द्वयोर्ग्रहणाच्चतुर्दश, एवं सप्तमे सप्तानां ग्रहणादेकोनपञ्चाशदित्येवं सर्वसङ्कलने यथोक्तं मानं भवतीति, **अहासुत्तं** ति **यथासूत्रं** यथागमं '[1]सम्यक् कायेन स्पृष्टा भवति' इति शेषो द्रष्टव्यः । **संपत्तजोव्वणा भवंति** त्ति न मातापितृपरिपालनामपेक्षन्त इत्यर्थः । **ठिइ** त्ति आयुष्कम् ॥४९॥

[सू० ५०] **मुणिसुव्वयस्स णं अरहतो पंचासं अज्जियासाहस्सीतो होत्था।**

अणंतती णं अरहा पण्णासं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

पुरिसोत्तमे णं वासुदेवे पण्णासं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

सव्वे वि णं दीहवेयड्ढा मूले पण्णासं पण्णासं जोयणाणि विक्खंभेणं पण्णत्ता।

लंतए कप्पे पण्णासं विमाणावाससहस्सा पण्णत्ता ।

सव्वातो णं तिमिसगुहा-खंडगप्पवातगुहातो पण्णासं पण्णासं जोयणाइं आयामेणं पण्णत्तातो ।

सव्वे वि णं कंचणगपव्वया सिहरतले पण्णासं पण्णासं जोयणाइं विक्खंभेणं पण्णत्ता ।

[टी०] अथ पञ्चाशत्स्थानकम्, तत्र **पुरिसोत्तिम** त्ति चतुर्थ-वासुदेवोऽनन्तजिनकालभावी । तथा **कंचणग** त्ति **उत्तरकुरुषु** नीलवदादीनां पञ्चानामानुपूर्व्यव्यवस्थितानां महाह्रदानां पूर्वापरपार्श्वयोः प्रत्येकं दश दश काञ्चनपर्वता भवन्ति, ते च सर्वे शतम्, एवं **देवकुरुषु** निषधादीनां महाह्रदानां पार्श्वतः शतं भवति,

---

१. सम्यग् न्यायेन हे२ विना । दृश्यतामेकाशीतिस्थानकटीकायाम् ॥

सर्व एव च ते जम्बूद्वीपे द्विशतमाना भवन्ति, ते योजनशतोच्छ्रिताः शतमूलविष्कम्भास्तन्नामकदेवनिवासभूतभवनालङ्कृतशिखरतलाः ॥५०॥

[सू० ५१] नवण्हं बंभचेराणं एकावण्णं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

चमरस्स णं असुरिंदस्स असुररन्नो सभा सुधम्मा एकावण्णखंभसतसन्निविट्ठा पण्णत्ता । एवं चेव बलिस्स वि ।

सुप्पभे णं बलदेवे एकावण्णं वाससतसहस्साइं परमाउं पालइत्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

दंसणावरण-नामाणं दोण्हं कम्माणं एकावण्णं उत्तरपगडीतो पण्णत्तातो ।

[टी०] अथैकपञ्चाशत्स्थानकम्, तत्र **बंभचेराणं** ति **आचार**प्रथमश्रुतस्कन्धाध्ययनानां **शस्त्रपरिज्ञा**दीनाम्, तत्र प्रथमे सप्तोद्देशका इति सप्तैवोद्देशनकालाः, एवं द्वितीयादिषु क्रमेण षट्, चत्वारः, चत्वारः, एवं षट्, पञ्च, अष्टौ, चत्वारः, सप्त चेत्येवमेकपञ्चाशदिति । **सुप्पहे** त्ति चतुर्थो बलदेवः **अनन्तजि**ज्जिननायककालभावी, तस्येहैकपञ्चाशद्वर्षलक्षाण्यायुरुक्तम्, [1]**आवश्यके** तु पञ्चपञ्चाशदुच्यते तदिदं मतान्तरमिति । **एकावण्णं उत्तरपगडीओ** त्ति **दर्शनावरणस्य** नव **नाम्नो** द्विचत्वारिंशदित्येकपञ्चाशदिति ॥५१॥

[सू० ५२] मोहणिज्जस्स णं कम्मस्स बावण्णं नामधेज्जा पण्णत्ता, तंजहा– कोहे कोवे रोसे दोसे अखमा संजलणे कलहे चंडिक्के भंडणे विवाए १०, माणे मदे दप्पे थंभे [2]अत्तुक्कासे गव्वे परपरिवाए [3]उक्कासे [4]अवकासे [5]उण्णते उण्णामे २१, माया उवही नियडी वलए गहणे णूमे कक्के कुरुते दंभे कूडे झिम्मे किब्बिसिए आवरणया गूहणया वंचणया पलिकुंचणया सातिजोगे ३८, लोभे इच्छा मुच्छा कंखा गेही तण्हा [6]भिज्झा अभिज्झा कामासा भोगासा जीवितासा मरणासा नंदी रागे ५२ ।

---

१. ''पंचासीई १ पन्नत्तरी अ २ पन्नट्ठि ३ पंचवन्ना य ४ । सत्तरस सयसहस्सा पंचमए आउअं होइ ५ ॥४०६॥ पंचासीइ सहस्सा ६ पण्णट्ठी ७ तहय चेव पण्णरस ८ । बारस सयाइं आउं ९ बलदेवाणं जहासंखं ॥४०७॥'' इति **आवश्यकनिर्युक्तौ** ॥ २. **अत्तुकासे** खं० । अटी० मध्ये **अत्तुकासे** जे१ ॥ ३. **उक्कोसे** जे२ खं० । अटी० मध्येऽपि जे१ ॥ ४. **अवक्कासे** खं० जे१ । अटी० मध्येऽपि जे२ ॥ ५. **उण्णत्ते** जे१ खं० । अटी० मध्ये **उन्नाय** खं० ॥ ६. **भिज्जा अभिज्जा** जे२ । **भिज्झा अभिज्झा** अटी० मध्ये खं० जे१,२ ॥

गोथुभस्स णं आवासपव्वतस्स पुरत्थिमिल्लातो चरिमंतातो वलयामुहस्स महापायालस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं बावण्णं जोयणसहस्साइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते ।

दओभासस्स णं [आवासपव्वतस्स दाहिणिल्लातो चरिमंतातो] केउगस्स [महापायालस्स उत्तरिल्ले चरिमंते एस णं बावण्णं जोयणसहस्साइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते ।]

संखस्स [णं आवासपव्वतस्स पच्चत्थिमिल्लातो चरिमंतातो] जुयकस्स [महापायालस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं बावण्णं जोयणसहस्साइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते ।]

दगसीमस्स [णं आवासपव्वतस्स उत्तरिल्लातो चरिमंतातो] ईसरस्स [महापायालस्स दाहिणिल्ले चरिमंते एस णं बावण्णं जोयणसहस्साइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते ।]

नाणावरणिज्जस्स नामस्स अंतरातियस्स एतेसि णं तिण्हं कम्मपगडीणं बावण्णं उत्तरपगडीतो पण्णत्तातो ।

सोहम्म-सणंकुमार-माहिंदेसु तिसु कप्पेसु बावण्णं विमाणवाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

[टी०] अथ द्विपञ्चाशत्स्थानकम्, तत्र **मोहणिज्जस्स कम्मस्स** त्ति इह **मोहनीय**कर्मणोऽवयवेषु चतुर्षु **क्रोधादि**कषायेषु मोहनीय[त्व?]मुपचर्यावयवे समुदायोपचारन्यायेन **मोहनीयस्ये**त्युक्तम्, तत्रापि कषायसमुदायापेक्षया द्विपञ्चाशन्नामधेयानि न पुनरेकैकस्य कषायमात्रस्यैवेति, तत्र **क्रोध** इत्यादीनि दश नामानि क्रोधकषायस्य, **चंडिक्के** त्ति चाण्डिक्यम् । तथा **मान** इत्यादीन्येकादश मानकषायस्य, **अत्तुक्कासे** त्ति आत्मोत्कर्षः, **उक्कासे** त्ति उत्कर्षः, **अवकासे** त्ति अपकर्षः, **उन्नए** त्ति उन्नतः, पाठान्तरेण **उन्नमः**, **उन्नामे** त्ति उन्नामः । तथा **मायादीनि** सप्तदश **माया**कषायस्य, **णूमे** त्ति न्यवमम्, **कक्के** त्ति कल्कम्, **कुरुए** त्ति कुरुकम्,

१-२. दृश्यतां पृ० १४२ टि० ४-५ ॥

झिमे त्ति जैह्म्यम् । तथा **लोभा**दीनि चतुर्दश लोभकषायस्य, **भिज्झा अभिज्झ** त्ति अभिध्यानमभिध्येत्यस्य तीतं पिधानमित्यादाविव वैकल्पिके अकारलोपे भिध्याऽभिध्या चेति शब्दभेदान्नामद्वयमिति ।

गोथुभेत्यादि, **गोस्तुभस्य** प्राच्यां लवणसमुद्रमध्यवर्त्तिनो वेलन्धरनागराजनिवासभूतपर्वतस्य **पौरस्त्याच्चरमान्तादपसृत्य वडवामुखस्य महापातालस्य** महापातालकलशस्य **पाश्चात्त्यश्चरमान्तो** येन व्यवधानेन भवतीति गम्यते, **एस णं** ति एत**दन्तरमबाधया** व्यवधानलक्षणमित्यर्थः, **द्विपञ्चाशद्योजनसहस्राणि** भवन्तीत्यक्षरघटना, भावार्थस्त्वयम्- इह लवणसमुद्रं पञ्चनवतिं योजनसहस्राण्यवगाह्य पूर्वादिषु दिक्षु चत्वारः क्रमेण वडवामुख-केतुक-जूयकेश्वराभिधाना महापातालकलशा भवन्ति, तथा जम्बूद्वीपपर्यन्ताद् द्विचत्वारिंशद्योजनसहस्राण्यवगाह्य सहस्रविष्कम्भाश्चत्वार एव वेलन्धरनागराजपर्वता गोस्तुभादयो भवन्ति, ततश्च पञ्चनवत्यास्त्रिचत्वारिंशत्यपकर्षितायां द्विपञ्चाशत् सहस्राण्यन्तरं भवति । तथा **सौधर्मे** द्वात्रिंशद्विमानानां लक्षाणि, **सनत्कुमारे** द्वादश, **माहेन्द्रे** चाष्टाविति सर्वाणि द्विपञ्चाशत् ॥५२॥

[सू० ५३] **देवकुरु-उत्तरकुरियातो णं जीवातो तेवण्णं तेवण्णं जोयणसहस्साइं साइरेगाइं आयामेणं पण्णत्तातो ।**

महाहिमवंत-रुप्पीणं वासहरपव्वयाणं जीवातो तेवण्णं तेवण्णं जोयणसहस्साइं नव य एक्कतीसे जोयणसते छच्च एकूणवीसतिभाए जोयणस्स आयामेणं पण्णत्तातो ।

समणस्स णं भगवतो महावीरस्स तेवण्णं अणगारा संवच्छरपरियाया पंचसु अणुत्तरेसु महतिमहालएसु महाविमाणेसु देवत्ताते उववन्ना ।

संमुच्छिमउरगपरिसप्पाणं उक्कोसेणं तेवण्णं वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता।

[टी०] त्रिपञ्चाशत्स्थानके लिख्यते । **महाहिमवंते**त्यादिसूत्रे संवादगाथा–

तेवन्नसहस्साइं नव य सए जोयणाण इगतीसे ।
जीवा महाहिमवओ अद्धकला छक्कलाओ ॥ [बृहत्क्षेत्र० ५६] त्ति ।

संवच्छरपरियाग त्ति संवत्सरमेकं यावत् पर्यायः प्रव्रज्यालक्षणो येषां ते

संवत्सरपर्यायाः, **महइमहालएसु महाविमाणेसु** त्ति **महान्ति** च तानि वि[1]स्तीर्णानि च **अतिमहालया** इव अतिमहालयाश्च अत्यन्त[2]मुत्सवाश्रयभूतानि **महातिमहालयास्तेषु**, **महान्ति** च तानि प्रशस्तानि **विमानानि** चेति विग्रहः, एते चाप्रतीताः, [3]**अनुत्तरोपपातिकाङ्गे** तु [4]येऽधीयन्ते ते त्रयस्त्रिंशत् बहुवर्षपर्यायाश्चेति ॥५३॥

[सू० ५४] **भरहेरवएसु णं वासेसु एगमेगाए उस्सप्पिणीए एगमेगाए ओसप्पिणीए चउप्पण्णं चउप्पण्णं उत्तमपुरिसा उप्पज्जिंसु वा उप्पज्जंति वा उप्पज्जिस्संति वा, तंजहा– चउवीसं तित्थकरा, बारस चक्कवट्टी, णव बलदेवा, णव वासुदेवा ।**

अरहा णं अरिट्ठनेमी चउप्पण्णं रातिंदियाइं छउमत्थपरियागं पाउणित्ता जिणे जाए केवली सव्वण्णू सव्वभावदरिसी ।

समणे भगवं महावीरे एगदिवसेणं एगनिसेज्जाते चउप्पण्णं वागरणाइं वागरित्था ।

अणंतइस्स णं अरहतो [चउप्पण्णं गणा] चउप्पण्णं गणहरा होत्था ।

[टी०] चतुष्पञ्चाशत्स्थानके लिख्यते । **पाउणित्त** त्ति प्राप्य । **एगणिसेज्जाए** त्ति एकेनासनपरिग्रहेण, **वागरणाइं** ति **व्याक्रियन्ते** अभिधीयन्ते इति **व्याकरणानि** प्रश्ने सति निर्वचनतयोच्यमानाः पदार्थाः, **वागरित्थ** त्ति व्याकृतवान्, तानि चाप्रतीतानि। **अनन्तनाथस्येह** चतुष्पञ्चाशद् गणा गणधराश्चोक्ताः, [5]**आवश्यके** तु पञ्चाशदुक्तास्तदिदं मतान्तरमिति ॥५४॥

[सू० ५५] **मल्ली णं अरहा पणपन्नं वाससहस्साइं परमाउं पालइत्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।**

मंदरस्स णं पव्वतस्स पच्चत्थिमिल्लातो चरिमंतातो विजयबारस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं पणपण्णं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं

१. **विस्तीर्णानि महालया इव अतिमहालयाश्च** जे२ ॥ २. °**मुत्सेधाश्रय**° खं० ॥ ३. अनुत्तरोपपातिकाङ्गे त्रयो वर्गा विद्यन्ते । तत्र प्रथमे वर्गे दश अध्ययनानि, द्वितीये त्रयोदश, तृतीये दश, इत्येवं त्रयस्त्रिंशदध्ययनानि। तेषु च त्रयस्त्रिंशतो बहुवर्षपर्यायाणामनुत्तरोपपातिकानामनगाराणं वर्णनं दृश्यते ॥ ४. **येऽभिधीयंते** खं०॥ ५. दृश्यतां पृ० १४० टि० ३ ॥

चउद्दिसिं पि वेजयंतं जयंतं अपराजियं ति ।

समणे भगवं महावीरे अंतिमरातियंसि पणपण्णं अज्झयणाइं कल्लाणफलविवागाइं पणपण्णं अज्झयणाणि पावफलविवागाणि वागरेत्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

पढम-बितियासु दोसु पुढवीसु पणपण्णं निरयावाससतसहस्सा पण्णत्ता।

दंसणावरणिज्ज-णामा-ऽऽउयाणं तिण्हं कम्मपगडीणं पणपण्णं उत्तरपगडीतो पण्णत्तातो ।

[टी०] पञ्चपञ्चाशत्स्थानके[१] किञ्चिद् लिख्यते। **मंदरस्से**[२]त्यादि, इह **मेरोः** पश्चिमान्तात् पूर्वस्य जम्बूद्वीपद्वारस्य पश्चिमान्तः पञ्चपञ्चाशत् सहस्राणि योजनानां भवतीत्युक्तम्, तत्र किल मेरोर्विष्कम्भमध्यभागात् पञ्चाशत् सहस्राणि द्वीपान्तो भवति, लक्षप्रमाणत्वाद् द्वीपस्य, मेरुविष्कम्भस्य च दशसाहस्रिकत्वाद् द्वीपार्धे पञ्चसहस्रक्षेपेण पञ्चपञ्चाशदेव भवतीति[३], इह च यद्यपि **विजयद्वा**रस्य पश्चिमान्त इत्युक्तं तथापि जगत्याः पूर्वान्त इति किल सम्भाव्यते, मेरुमध्यात् पञ्चाशतो योजनसहस्राणां जगत्या बाह्यान्ते पूर्यमाणत्वात्, जम्बूद्वीपजगतीविष्कम्भेण च[४] सह जम्बूद्वीपलक्षं पूरणीयम्, लवणसमुद्रजगतीविष्कम्भेण च सह लवणसमुद्रलक्षद्वयमन्यथा द्वीपसमुद्रमानाज्जगतीमानस्य पृथग् गणने मनुष्यक्षेत्रपरिधिरतिरिक्ता स्यात्, सा हि पञ्चचत्वारिंशल्लक्षप्रमाणक्षेत्रापेक्षयाऽभिधीयते, ततश्चैवमतिरिक्ता स्यादिति, अथवेह किञ्चिदूनापि पञ्चपञ्चाशत् पूर्णतया विवक्षितेति। **अंतिमराइयंसि** त्ति सर्वायुःकालपर्यवसानरात्रौ रात्रेर्वाऽन्तिमे भागे **पापायां मध्यमायां** नगर्यां **हस्तिपाल**स्य राज्ञः करणसभायां कार्त्तिकमासामावास्यायां **स्वातिना** नक्षत्रेण चन्द्रमसा युक्तेन नागे करणे प्रत्यूषसि पर्यङ्कासननिषण्णः पञ्चपञ्चाशदध्ययनानि **कल्लाणफलविवागाइं** ति **कल्याणस्य** पुण्यस्य कर्मणः **फलं** कार्यं **विपाच्यते** व्यक्तीक्रियते यैस्तानि **कल्याणफलविपाकानि**, एवं **पापफलविपाकानि**, **व्याकृत्य** प्रतिपाद्य **सिद्धो बुद्धः**, **यावत्करणात्** 'मुत्ते अंतकडे परिनिव्वुडे सव्वदुक्खप्पहीणे'

---

१. 'नके त्विदं लि' जे१ खं० हे१,२ ॥ २. **मंदरस्येत्यादि** जे१ खं० हे१,२ ॥ ३. **भवंतीति** जे१ खं० हे२ ॥ ४. **च** नास्ति जे२ ॥

त्ति दृश्यम् ।

पढमेत्यादि, प्रथमायां त्रिंशन्नरकलक्षाणि द्वितीयायां पञ्चविंशतिरिति पञ्चपञ्चाशत्। **दंसणे**त्यादि, दर्शनावरणीयस्य नव प्रकृतयो नाम्नो द्विचत्वारिंशत् आयुषश्चतस्र इत्येवं पञ्चपञ्चाशदिति ॥५५॥

[सू० ५६] **जंबुद्दीवे णं दीवे छप्पण्णं नक्खत्ता चंदेण सद्धिं जोगं जोएंसु वा जोएंति वा जोइस्संति वा ।**

विमलस्स णं अरहतो छप्पण्णं गणा छप्पण्णं गणहरा होत्था ।

[टी०] अथ षट्पञ्चाशत्स्थानके लिख्यते । **जंबुद्दीवे**त्यादि, तत्र चन्द्रद्वयस्य प्रत्येकमष्टाविंशतेर्भावात् षट्पञ्चाशन्नक्षत्राणि भवन्ति । **विमलस्ये**ह षट्पञ्चाशद् गणा गणधराश्चोक्ताः, [1]**आवश्यके** तु सप्तपञ्चाशदुच्यते तदिदं मतान्तरमिति ॥५६॥

[सू० ५७] **तिण्हं गणिपिडगाणं आयारचूलियवज्जाणं सत्तावण्णं अज्झीणा पण्णत्ता, तंजहा– आयारे सूतगडे ठाणे ।**

गोथुभस्स णं आवासपव्वतस्स पुरत्थिमिल्लातो चरिमंतातो वलयामुहस्स महापातालस्स बहुमज्झदेसभाए एस णं सत्तावण्णं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं दओभासस्स केउकस्स य, संखस्स जुयकस्स य, दयसीमस्स ईसरस्स य ।

मल्लिस्स णं अरहतो सत्तावण्णं मणपज्जवनाणिसता होत्था ।

महाहिमवंत-रुप्पीणं वासधरपव्वयाणं जीवाणं धणुपट्ठा सत्तावण्णं सत्तावण्णं जोयणसहस्साइं दोण्णि य तेणउते जोयणसते दस य एकूणवीसतिभाए जोयणस्स परिक्खेवेणं पण्णत्ता ।

[टी०] अथ सप्तपञ्चाशत्स्थानके किमपि लिख्यते । **गणिपिडगाणं** ति **गणिनः** आचार्यस्य पिटकानीव **पिटकानि** सर्वस्वभाजनानीति **गणिपिटकानि**, तेषाम्, **आचारस्य** श्रुतस्कन्धद्वयरूपस्य प्रथमाङ्गस्य **चूलिका** सर्वान्तिममध्ययनं

---

१. दृश्यतां पृ० १४० टि० ३ ॥

विमुक्त्यभिधानमाचारचूलिका, तद्वर्जानाम्, तत्राऽऽ**चारे** प्रथमश्रुतस्कन्धे नवाध्ययनानि, द्वितीये षोडश, **निशीथा**ध्ययनस्य प्रस्थानान्तरत्वेनेहानाश्रयणात्, षोडशानां मध्ये एकस्याचारचूलिकेति परिहृतत्वात् शेषाणि पञ्चदश, **सूत्रकृते** द्वितीयाङ्गे प्रथमश्रुतस्कन्धे षोडश, द्वितीये सप्त, **स्थानाङ्गे** दशेत्येवं सप्तपञ्चाशदिति ।

गोथुभेत्यादौ भावार्थोऽयम्– द्विचत्वारिंशत् सहस्राणि वेदिका-गोस्तुभपर्वतयोरन्तरम्, सहस्रं गोस्तुभस्य विष्कम्भः, द्विपञ्चाशद् गोस्तुभ-वडवामुखयोरन्तरम्, दशसहस्रमानत्वाद्वडवामुखविष्कम्भस्य तदर्द्धं पञ्चेति ततो द्विपञ्चाशतः पञ्चानां च मीलने सप्तपञ्चाशदिति। **जीवाणं धणुपट्ठ** त्ति । मण्डलखण्डाकारं क्षेत्रम्, इह सूत्रे संवादगाथार्द्धम्– **सत्तावन्न सहस्सा धणुं पि तेणउय दुसय दस य कल** [बृहत्क्षेत्र० ५७] त्ति ॥५७॥

[सू० ५८] पढम-दोच्च-पंचमासु तीसु पुढवीसु अट्ठावण्णं निरयावास-सतसहस्सा पण्णत्ता ।

नाणावरणिज्जस्स वेयणिय[स्स] आउय[स्स] नाम[स्स] अंतराइयस्स य एतेसि णं पंचण्हं कम्मपगडीणं अट्ठावण्णं उत्तरपगडीतो पण्णत्तातो ।

गोथुभस्स णं आवासपव्वतस्स पच्चत्थिमिल्लातो चरिमंतातो वलयामुहस्स महापायालस्स बहुमज्झदेसभाए एस णं अट्ठावण्णं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं चउद्दिसिं पि नेतव्वं ।

[टी०] अष्टपञ्चाशत्स्थानकेऽपि किमपि लिख्यते । **पढमे**त्यादि तत्र प्रथमायां त्रिंशन्नरकलक्षाणि द्वितीयायां पञ्चविंशतिः पञ्चम्यां त्रीणीति सर्वाण्यष्टपञ्चाशदिति । **नाणे**त्यादि, तत्र **ज्ञानावरणस्य** पञ्च **वेदनीयस्य** द्वे **आयुषश्च**तस्रो **नाम्नो** द्विचत्वारिंशत् **अन्तरायस्य** पञ्चेति सर्वा अष्टपञ्चाशदुत्तरप्रकृतयः । **गोथुभस्से**त्यादि, अस्य च भावार्थः पूर्वोक्तानुसारेणावसेयः । **एवं चउद्दिसिं पि नेयव्वं** ति अनेन सूत्रत्रयमतिदिष्टम्, तच्चैवम्– 'दओभासस्स णं आवासपव्वयस्स उत्तरिल्लाओ चरिमंताओ केउगस्स महापायालस्स बहुमज्झदेसभागे एस णं अट्ठावन्नं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे

पन्नत्ते, एवं संखस्स आवासपव्वयस्स पुरत्थिमिल्लाओ चरिमंताओ जूयगस्स[1] महापातालस्स, एवं दगसीमस्स आवासपव्वयस्स दाहिणिल्लाओ चरिमंताओ ईसरस्स महापायालस्स' त्ति ॥५८॥

[सू० ५९] चंदस्स णं संवच्छरस्स एगमेगे उदू एगूणसट्ठिं रातिंदियाणि रातिंदियग्गेणं पण्णत्ते ।

संभवे णं अरहा एकूणसट्ठिं पुव्वसतसहस्साइं अगारमज्झे वसित्ता मुंडे जाव पव्वतिते ।

मल्लिस्स णं अरहतो एगूणसट्ठिं ओहिण्णाणिसता होत्था ।

[टी०] अथैकोनषष्टिस्थानके लिख्यते । **चंदस्स णमित्यादि,** संवत्सरो ह्यनेकविधः स्थानाङ्गादिषूक्तः, तत्र यश्चन्द्रगतिमङ्गीकृत्य संवत्सरो विवक्ष्यते स चन्द्र एव, तत्र च द्वादश मासाः षट् च ऋतवो भवन्ति, तत्र चैकैकऋतोरेकोनषष्टी रात्रिंदिवानां रात्रिंदिवाग्रेण भवति, कथम् ?, एकोनत्रिंशद्रात्रिंदिवानि द्वात्रिंशच्च द्विषष्टिभागा अहोरात्रस्येत्येवंप्रमाणः कृष्णप्रतिपदारब्धः पौर्णमासीपरिनिष्ठितः चन्द्रमासो भवति, द्वाभ्यां च ताभ्यामृतुर्भवति, तत एकोनषष्टिः अहोरात्राण्यसौ भवति, यच्चेह द्विषष्टिभागद्वयमधिकं तन्न विवक्षितम् । **सम्भवस्यै**कोनषष्टिः पूर्वलक्षाणि गृहस्थपर्याय इहोक्तः, **आवश्यके**[2] तु चतुःपूर्वाङ्गाधिका सोक्तेति ॥५९॥

[सू० ६०] एगमेगे णं मंडले सूरिए सट्ठीए सट्ठीए मुहुत्तेहिं संघाएइ ।

लवणस्स णं समुद्दस्स सट्ठिं नागसाहस्सीओ अग्गोदयं धारेंति ।

विमले णं अरहा सट्ठिं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

बलिस्स णं वइरोयणिंदस्स सट्ठिं सामाणियसाहस्सीतो पण्णत्तातो ।

बंभस्स णं देविंदस्स देवरण्णो सट्ठिं सामाणियसाहस्सीतो पण्णत्तातो ।

सोहम्मीसाणेसु दोसु कप्पेसु सट्ठिं विमाणावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

[टी०] अथ षष्टिस्थानकम्, तत्र **एगमेगेत्यादि,** चतुरशीत्यधिकशतसंख्यानां

---

१. **जूयस्स** जे२ ॥ २. ''पण्णरस संयसहस्सा कुमारवासो अ संभवजिणस्स । चोआलीसं रज्जं चउरंग चेव बोद्धव्वं ॥२७९॥'' इति **आवश्यकनिर्युक्तौ** ॥

सूर्यमण्डलानामे**कैकं मण्डलं** तथाविधमार्गभूमिं **सूर्यः षष्ट्या षष्ट्या मुहूर्त्तैः** द्वाभ्यां द्वाभ्यामहोरात्राभ्यामित्यर्थः **सङ्घातयति** निष्पादयति, अयमत्र भावार्थः– एकस्मिन्नहनि यत्र स्थाने उदितः सूर्यस्तत्र स्थाने पुनर्द्वाभ्यामहोरात्राभ्यामुदेतीति । **अग्गोदयं** ति षोडशसहस्रोच्छ्रिताया वेलाया यदुपरि गव्यूतद्वयमानं वृद्धिहानिस्वभावं तद**ग्रोदकम्** । **बलिस्स** त्ति औदीच्यस्य असुरकुमारनिकायराजस्य । **बंभस्स** त्ति ब्रह्मलोकाभिधान-पञ्चमदेवलोकेन्द्रस्य । **सट्ठि** त्ति **सौधर्मे** द्वात्रिंश**दीशाने** चाष्टाविंशतिर्विमानलक्षाणीति कृत्वा षष्टिस्तानि भवन्तीति ॥६०॥

[सू० ६१] **पंचसंवच्छरियस्स णं जुगस्स रिदुमासेणं मिज्जमाणस्स एगसट्ठिं उदुमासा पण्णत्ता ।**

मंदरस्स णं पव्वतस्स पढमे कंडे एगसट्ठिं जोयणसहस्साइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ते ।

चंदमंडले णं एगसट्ठिविभागभतिए समंसे पण्णत्ते । एवं सूरस्स वि ।

[**टी०**] अथ एकषष्टिस्थानकम्, तत्र **पञ्चे**त्यादि, पञ्चभिः संवत्सरैर्निर्वृत्तमिति **पञ्चसांवत्सरिकम्**, तस्य, **ण**मित्यलङ्कारे, **युगस्य** कालमानविशेषस्य **ऋतुमासेन** न चन्द्रादिमासेन **मीयमानस्य एकषष्टिः ऋतुमासाः प्रज्ञप्ताः**, इह चायं भावार्थः– युगं हि पञ्च संवत्सरा निष्पादयन्ति, तद्यथा– चन्द्रश्चन्द्रोऽभिवर्द्धितः चन्द्रोऽभिवर्धितश्चेति, तत्र एकोनत्रिंशदहोरात्राणि द्वात्रिंशच्च द्विषष्टिभागा अहोरात्रस्येत्येवंप्रमाणेन $२९\frac{३२}{६२}$ कृष्णप्रतिपदारब्धेन पौर्णमासीनिष्ठितेन चन्द्रमासेन द्वादशमासपरिमाणश्चन्द्रसंवत्सरस्तस्य च प्रमाणमिदम्- त्रीणि शतान्यह्नां चतुष्पञ्चाशदुत्तराणि द्वादश च द्विषष्टिभागा दिवसस्य $३५४\frac{१२}{६२}$, तथा एकत्रिंशद् दिवसा एकविंशत्युत्तरं च शतं चतुर्विंशत्युत्तरशतभागानां दिवसस्येत्येवंप्रमाणोऽभिवर्द्धितमासो भवति, $३१\frac{१२१}{१२४}$, एतेन च मासेन द्वादशमासप्रमाणोऽभिवर्द्धितसंवत्सरो भवति, स च [1]प्रमाणेन त्रीणि शतान्यह्नां त्र्यशीत्यधिकानि चतुश्चत्वारिंशच्च द्विषष्टिभागा दिवसस्य $३८३\frac{४४}{६२}$ । तदेवं त्रयाणां

१. प्रमाणतः जे१ हे१,२ । प्रमाणत जे२ ॥

चन्द्रसंवत्सराणां द्वयोश्चाभिवर्द्धितसंवत्सरयोरेकीकरणे जातानि दिनानाम् अष्टादश शतानि त्रिंशदुत्तराणि १८३०, ऋतुमासश्च त्रिंशताऽहोरात्रैर्भवतीति त्रिंशता भागहारे लब्धा एकषष्टिः ऋतुमासा इति ।

मंदरस्सेत्यादि, इह **मेरु**र्नवनवतियोजनसहस्रप्रमाणो द्विधा विभक्तः, तत्र प्रथमो भाग एकषष्टिः सहस्राण्युक्तः, द्वितीयस्तु अष्टत्रिंशत्स्थानकेऽष्टत्रिंशदिति[1], **क्षेत्रसमासे** तु कन्देन सह लक्षप्रमाणस्त्रिधा विभक्तः, तत्र प्रथमं काण्डं सहस्रं द्वितीयं त्रिषष्टिस्तृतीयं षट्त्रिंशदिति । **चंदमंडले** इत्यादि **चन्द्रमण्डलं** चन्द्रविमानं **ण**मित्यलङ्कृतौ **एगसट्ठि** त्ति योजनस्यैकषष्टितमै**र्भागैर्विभाजितं** विभागैर्व्यवस्थापितं **समांशं** समविभागं **प्रज्ञप्तम्**, न विषमांशम्, योजनस्यैकषष्टिभागानां षट्पञ्चाशद्भागप्रमाणत्वात् [2]तस्यावशिष्टस्य च भागभागस्याविद्यमानत्वादिति । **एवं सूरस्स वि** त्ति एवं **सूर्यस्या**पि मण्डलं वाच्यम्, अष्टचत्वारिंशदेकषष्टिभागमात्रं हि तत्, न चापरमंशान्तरं तस्याप्यस्तीति समांशतेति ॥६१॥

[सू० ६२] **पंचसंवच्छरिए णं जुगे बावट्ठिं पुण्णिमातो बावट्ठिं अमावासातो [पण्णत्तातो] ।**

वासुपुज्जस्स णं अरहतो बावट्ठिं गणा बावट्ठिं गणहरा होत्था ।

सुक्कपक्खस्स णं चंदे बावट्ठिं बावट्ठिं भागे दिवसे दिवसे परिवड्ढति, ते चेव बहुलपक्खे दिवसे दिवसे परिहायति ।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु पढमे पत्थडे पढमावलियाए एगमेगाए दिसाए बावट्ठिं बावट्ठिं विमाणा पण्णत्ता ।

सव्वे वेमाणियाणं बावट्ठिं विमाणपत्थडा पत्थडग्गेणं पण्णत्ता ।

[टी०] अथ द्विषष्टिस्थानकम्, **पंचे**त्यादि, तत्र युगे त्रयश्चन्द्रसंवत्सरा भवन्ति, तेषु षट्त्रिंशत् पौर्णमास्यो भवन्ति, द्वौ चाभिवर्द्धितसंवत्सरौ भवतः, तत्र चाभिवर्द्धितसंवत्सरस्त्रयोदशभिश्चन्द्रमासैर्भवतीति तयोः षड्विंशतिः पौर्णमास्य इत्येवं द्विषष्टिस्ता भवन्ति इत्येवममावास्या अपीति । **वासुपूज्यस्ये**ह द्विषष्टिर्गणा गणधराश्चोक्ता

१. अत्र दृश्यतां पृ० १३१ पं० १८ ॥ २. **तस्य च भागभागस्या** खं० जे१ ॥

[1]**आवश्यके** तु षट्षष्टिरुक्तेति मतान्तरमिदमपीति । **सुक्कपक्खस्से**त्यादि, शुक्लपक्षस्य सम्बन्धी **चन्द्रो** [2]द्विषष्टिं भागान् प्रतिदिनं वर्द्धते, एवं कृष्णपक्षे **चन्द्रः** परिहीयते, अयं चार्थः [*]**सूर्यप्रज्ञप्त्या**मप्युक्तः, तथाहि–

किण्हं राहुविमाणं निच्चं चंदेण होइ अविरहियं ।
चउरंगुलमप्पत्तं हेट्ठा चंदस्स तं चरइ ॥
बावट्ठिं बावट्ठिं दिवसे दिवसे उ सुक्कपक्खस्स ।
जं परिवड्ढइ चंदो खवेइ तं चेव कालेणं ॥
पन्नरसइभागेण य चंदं पण्णरसमेव तं वरइ ।
पण्णरसइभागेण य पुणो वि तं चेव वक्कमइ ॥
एवं वड्ढइ चंदो परिहाणी एव होइ चंदस्स ।
[3]**कालो वा जोण्हा वा एयणुभावेण चंदस्स ॥** [सूर्यप्र० १९]

तथा तत्रैवोक्तम् –

[4]**सोलस भागे काऊण उडुवई हायएत्थ पन्नरसं ।**
तेत्तियमेत्ते भागे पुणो वि परिवड्ढई जोण्हं ॥ [ज्योतिष्क० १११] ति ।

तदेवं भणितद्वयानुसारेणानुमीयते यथा चन्द्रमण्डलस्य एकत्रिंशदुत्तरनवशतभागविकल्पितस्य एकोऽशोऽवस्थित एवास्ते, शेषाः प्रतिदिवसं द्विषष्टिं द्विषष्टिं कृत्वा वर्द्धन्ते, ततः पञ्चदशे चन्द्रदिने सर्वे समुदिता भवन्ति, पुनस्तथैव हीयन्ते पञ्चदशे दिने एकावशेषा भवन्तीति वचनद्वयसामर्थ्यलभ्यं व्याख्यानमेतत् । [*]**जीवाभिगमे** तु **'बावट्ठिं बावट्ठिं'** गाहा तथा **'पन्नरसतिभागेणं'** गाहा एते गाथे इत्थं [5]व्याख्याते – **बावट्ठिं बावट्ठिं** इत्यत्र [6]द्विषष्टिर्द्विषष्टिर्भागानां **दिवसे दिवसे च** प्रत्यहमित्यर्थः, **शुक्लपक्षस्य** सम्बन्धिनि, **यत् परिवर्द्धते चन्द्र**श्चतुरः साधिकान् द्विषष्टिभागान्, **क्षपयति तदेव कालेन**, एतदेवाह– **पन्नरस** इत्यादिना, चन्द्रविमानं द्विषष्टिभागान् क्रियते ततः

१. दृश्यतामत्र पृ०१४० टि०३ ॥ २. **द्विषष्टिभागान्** जे१खं०हे१ ॥ ३. इमाश्चतस्रो गाथाः **सूर्यप्रज्ञप्तौ** एकोनविंशतितमे प्राभृते सन्ति । तत्र च **'कालो वा जोण्हो वा'** इति पाठः । प्रागपि उद्धृतेयं गाथा **ज्योतिष्करण्डकात्**, दृश्यतां पृ० ६० पं० ६ टि० २ ॥ किन्तु **'तथा तत्रैवोक्तम्'** इति पाठेन अत्र सूर्यप्रज्ञप्तेः प्रकृतत्वात् **'सूर्यप्रज्ञप्तावेव उक्तम्'** इत्यर्थः सूच्यते, किन्तु **सूर्यप्रज्ञप्तौ चन्द्रप्रज्ञप्तौ** वा नेयं गाथा कुत्रापि समुपलभ्यते ॥ ४. दृश्यतां पृ०६० टि०२॥ ५. **व्याख्यायेते** हे२ ॥ ६. **द्विषष्टिर्द्विषष्टिभागानां** जे१ । **द्विषष्टिर्भागानां** खं० । **द्विषष्टिभागानां** हे१,२ । (द्विषष्टिं द्विषष्टिं भागानां ?) ॥

पञ्चदशभिर्भागोऽपह्रियते ततश्चत्वारो भागाः समधिका द्विषष्टिभागानां पञ्चदशभागेन लभ्यन्ते, अत उच्यते– **पञ्चदशभागेन चो**क्तलक्षणेन **चन्द्रम**धिकृत्य **पञ्चदशैव** दिवसां**स्त**द्राहुविमानं **चरति**, एवम**पक्रामती**त्यपि भावनीयमिति, अत्रास्माभिर्यथादृष्टे लिखिते उपनीते बहुश्रुतैर्निर्णयः कार्य इति ।

सोहम्मीत्यादि, तत्र **सौधर्मेशान**योस्त्रयोदश विमानप्रस्तटा भवन्ति, **सनत्कुमार-माहेन्द्रयो**र्द्वादश, **ब्रह्मलोके** षट्, **लान्तके** पञ्च, **शुक्रे** चत्वारः, एवं **सहस्रारे**, **आनत-प्राणतयो**श्चत्वारः, एव**मारणा-ऽच्युतयोः**, ग्रैवेयकेष्वधस्तनमध्यमोपरिमेषु त्रयः त्रयः, अनुत्तरेष्वेक इति द्विषष्टिस्ते भवन्ति । एतेषां च मध्यभागे प्रत्येकमुडुविमानादिकाः सर्वार्थसिद्धविमानान्ता वृत्तविमानरूपा द्विषष्टिरेव विमानेन्द्रका भवन्ति, तत्पार्श्वतश्च **पूर्वादिषु** दिक्षु त्र्यस्र-चतुरस्र-वृत्तविमानक्रमेण विमानानामावलिका भवन्ति, तदेवं **सौधर्मेशान**योः कल्पयोः प्रथमे प्रस्तटे **सर्वाधस्तन** इत्यर्थः **पढमावलियाए** त्ति **प्रथमा** उत्तरोत्तरावलिकापेक्षया आद्याश्चतस्र आवलिका यस्मिन् स **प्रथमावलिकाक**स्तत्र, अथवा **प्रथमात्** मूलभूताद्विमानेन्द्रकादारभ्य याऽऽवलिका[1] विमानानुपूर्वी तया, अथवोत्तरोत्तरावलिकापेक्षया एकैकस्यां दिशि या **प्रथमा** आद्यावलिका तस्याम्, **पढमावलिय** त्ति पाठान्तरे तु उत्तरोत्तरावलिकापेक्षया या एकैकस्यां दिशि **प्रथमावलिका** सा **द्विषष्टिर्द्विषष्टिर्विमानानि**[2] प्रमाणेन **प्रज्ञप्ते**ति, **एगमेगाए**[3] त्ति उडुविमानाभिधानदेवेन्द्रकापेक्षया **एकैकस्यां** पूर्वादिकायां **दिशि द्विषष्टिर्द्विषष्टिर्विमानानि प्रज्ञप्तानि**, द्वितीयादिषु पुनः प्रस्तटेषु एकैकहान्या विमानानि भवन्ति यावद् द्विषष्टितमेऽनुत्तरसुरप्रस्तटे सर्वार्थसिद्धदेवेन्द्रकस्य पार्श्वत एकैकमेव भवतीति, तथा **सव्वे** त्ति **सर्वे वैमानिकानां** देवविशेषाणां सम्बन्धिनो **द्विषष्टिर्विमानप्रस्तटा** विमानप्रतराः **प्रस्तटाग्रेण** प्रस्तटपरिमाणेन **प्रज्ञप्ता** इति ॥६२॥

[सू० ६३] उसभे णं अरहा कोसलिए तेवट्ठिं पुव्वसतसहस्साइं महारायवासमज्झावसित्ता मुंडे भवित्ता णं अगारातो अणगारियं पव्वइते ।

---

१. **यावदावलिका** जे१ । **यावआवलिका** खं०॥ २. **द्विषष्टिर्वि°** हे२ विना ॥ ३. **एगमेगाए इ त्ति** जे१,२ मु० ॥

हरिवास-रम्मयवासेसु मणूसा तेवट्ठीए रातिंदिएहिं संपत्तजोव्वणा भवंति। निसढे णं पव्वते तेवट्ठिं सूरोदया पण्णत्ता । एवं नीलवंते वि ।

[टी०] अथ त्रिषष्टिस्थानकम्, तत्र **संपत्तजोव्वण** त्ति मातापितृपरिपालनानपेक्षा इत्यर्थः । **निसहे ण**मित्यादि, किल सूर्यमण्डलानां चतुरशीत्यधिकशतसंख्यानां मध्यात् **जम्बूद्वीपस्य** पर्यन्तिमे अशीत्युत्तरे योजनशते पञ्चषष्टिर्भवति, तत्र च निषध-वर्षधरपर्वतस्योपरि **नीलवद्वर्षधरस्य** चोपरि **त्रिषष्टिः सूर्योदयाः** सूर्योदयस्थानानि सूर्यमण्डलानीत्यर्थः, तदन्ये तु द्वे जगत्या उपरि, शेषाणि तु लवणे त्रिषु त्रिंशदधिकेषु योजनशतेषु भवन्तीति भावार्थः ॥६३॥

[सू० ६४] अट्ठट्ठमिया णं भिक्खुपडिमा चउसट्ठीए रातिंदिएहिं दोहि य अट्ठासीतेहिं भिक्खासतेहिं अहासुत्तं जाव भवति ।

चउसट्ठिं असुरकुमारावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

चमरस्स णं रण्णो चउसट्ठिं सामाणियसाहस्सीतो पण्णत्तातो ।

सव्वे वि णं दधिमुहपव्वया पल्लासंठाणसंठिता सव्वत्थ समा विक्खंभुस्सेहेणं चउसट्ठिं चउसट्ठिं जोयणसहस्साइं पण्णत्ता ।

सोहम्मीसाणेसु बंभलोए य तीसु कप्पेसु चउसट्ठिं विमाणावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

सव्वस्स वि य णं रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स चउसट्ठीलट्ठीए महग्घे मुत्तामणिमए हारे पण्णत्ते ।

[टी०] अथ चतुःषष्टिस्थानकम्, **अट्ठे**त्यादि, अष्टावष्टमानि दिनानि यस्यां[1] साऽ**ष्टाष्टमिका**, यस्यां हि अष्टौ दिनाष्टकानि भवन्ति तस्यामष्टावष्टमानि भवन्त्येवेति, **भिक्षुप्रतिमा** अभिग्रहविशेषः, अष्टावष्टकानि यतोऽसौ भवत्यतश्चतुःषष्ट्या रात्रिंदिवैः सा पालिता भवति, तथा प्रथमेऽष्टके प्रतिदिनमेकैका भिक्षा, एवं द्वितीये द्वे द्वे, यावदष्टमे अष्टावष्टाविति सङ्कलनया द्वे शते भिक्षाणामष्टाशीत्यधिके भवतः, अत उक्तम्-

---

१. दिनानि साऽष्टाष्टमिका यस्यां हि खं० । दिनानि यस्यां हि जे१,२ ॥

द्वाभ्यां चेत्यादि, **यावत्**करणात् 'अहाकप्पं अहामग्गं फासिया पालिया सोभिया तीरिया कित्तिया सम्मं आणाए आराहिया यावि भवती' ति दृश्यम् ।

सव्वे वि णमित्यादि इतोऽष्टमे नन्दीश्वराख्ये द्वीपे पूर्वादिषु दिक्षु चत्वारोऽञ्जनकपर्वता भवन्ति, तेषां च प्रत्येकं चतसृषु दिक्षु चतस्रः पुष्करिण्यो भवन्ति, तासां च मध्यभागेषु प्रत्येकं दधिमुखपर्वता भवन्ति, ते च षोडश पल्यकसंस्थानसंस्थिताः, यतः सर्वत्र समा विष्कम्भेण, मूलादिषु दशसहस्रविष्कम्भत्वात्तेषाम्, क्वचित्तु **विक्खंभुस्सेहेणं** ति पाठस्तत्र तृतीयैकवचनलोपदर्शनाद्विष्कम्भेणेति व्याख्येयम्, तथा **उत्सेधेनो**च्चत्वेन **चतुःषष्टिश्चतुःषष्टि**रिति । **सोहम्मे**त्यादि, **सौधर्मे** द्वात्रिंश**दीशाने**ऽष्टाविंशतिः **ब्रह्मलोके** च चत्वारि विमानलक्षाणि भवन्तीति सर्वाणि चतुःषष्टिरिति । **चउसट्ठिलट्ठीए** त्ति चतुःषष्टि**र्यष्टीनां** सरीणां यस्मिन्नसौ **चतुःषष्टियष्टिकः**, **मुत्तामणिमये** त्ति **मुक्ताश्च** मुक्ताफलानि **मणयश्च** चन्द्रकान्तादिरत्नविशेषाः, **मुक्ता**रूपा वा **मणयो** रत्नानि मुक्तामणयः, तद्विकारो **मुक्तामणिमयः** ॥६४॥

[सू० ६५] जंबुद्दीवे णं दीवे पणसट्ठिं सूरमंडला पण्णत्ता ।

थेरे णं मोरियपुत्ते पणसट्ठिं वासाइं अगारमज्झे वसित्ता मुंडे भवित्ता णं अगारातो अणगारियं पव्वतिते ।

सोहम्मवडेंसयस्स णं विमाणस्स एगमेगाए बाहाए पणसट्ठिं पणसट्ठिं भोमा पण्णत्ता ।

[टी०] अथ पञ्चषष्टिस्थानकम्, तत्र **मोरियपुत्ते णं** ति **मौर्यपुत्रो** भगवतो **महावीरस्य** सप्तमो गणधरस्तस्य पञ्चषष्टिर्वर्षाणि गृहस्थपर्यायः, **आवश्यके**[1]ऽप्येवमेवोक्तः, नवरमेतस्यैव यो बृहत्तरो भ्राता **मण्डिकपुत्रा**भिधानः षष्ठगणधरः तद्दीक्षादिन एव प्रव्रजितस्तस्याऽऽ**वश्यके** त्रिपञ्चाशद्वर्षाणि गृहस्थपर्याय उक्तो न च बोधविषयमुपगच्छति यतो बृहत्तरस्य पञ्चषष्टिर्युज्यते लघुतरस्य त्रिपञ्चाशदिति । **सोहम्मे**त्यादि, **सौधर्मावतंसकं** विमानं सौधर्मदेवलोकस्य मध्यभागवर्त्ति शक्रनिवासभूतम्, **एगमेगाए बाहाए** त्ति एकैकस्यां दिशि प्राकाराभ्यर्णवर्त्तीनि

१. दृश्यतां पृ० १३९ टि० ४ ॥

भौमानि नगराकाराणि, विशिष्टस्थानानीत्येके ॥६५॥

[सू० ६६] **दाहिणड्ढमणुस्सखेत्ता णं छावट्ठिं चंदा पभासिंसु वा पभासंति वा पभासिस्संति वा, छावट्ठिं सूरिया तवइंसु वा तवइंति वा तवइस्संति वा।**

उत्तरड्ढमणुस्सखेत्ता णं छावट्ठिं चंदा पभासिंसु वा पभासंति वा पभासिस्संति वा । छावट्ठिं सूरिया तवइंसु वा तवइंति वा तवइस्संति वा ।

सेज्जंसस्स णं अरहतो छावट्ठिं गणा छावट्ठिं गणहरा होत्था ।

आभिणिबोहियनाणस्स णं उक्कोसेणं छावट्ठिं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता।

[टी०] अथ षट्षष्टिस्थानकम्, तत्र **दाहिणे**त्यादि, मनुष्यक्षेत्रस्यार्द्धम**र्द्धमनुष्यक्षेत्रं** दक्षिणं च तत्तच्चेति **दक्षिणार्द्धमनुष्यक्षेत्रम्**, तत्र भवा **दाक्षिणार्द्धमनुष्यक्षेत्राः**, **ण**मित्यलङ्कारे, **षट्षष्टिश्चन्द्राः प्रभासितवन्तः** प्रभासनीयम्, अथवा लिङ्गव्यत्ययाद् दक्षिणानि यानि मनुष्यक्षेत्राणामर्द्धानि तानि तथा, तानि प्रकाशितवन्तः, पाठान्तरं **दक्षिणार्द्धमनुष्यक्षेत्रे** प्रभासनीयं **प्रभासितवन्तः**, ते च एवम्- द्वौ जम्बूद्वीपे चन्द्रौ चत्वारो लवणसमुद्रे द्वादश धातकीखण्डे द्विचत्वारिंशत् कालोदसमुद्रे द्विसप्ततिश्च पुष्करार्धे, सर्वे चैते द्वात्रिंशदधिकं शतम्, एतदर्द्धं च षट्षष्टिर्दक्षिणपङ्क्तौ स्थिताः षट्षष्टिश्चोत्तरपङ्क्तौ, यदा चोत्तरपङ्क्तिः पूर्वस्यां गच्छति तदा दक्षिणा पश्चिमायामिति, एवं सूर्यसूत्रमप्यवसेयमिति । **छावट्ठिं गण** त्ति [1]**आवश्यके** तु षट्सप्ततिरभिहितेतीदं च मतान्तरमिति । **छावट्ठी सागरोवमाइं ठिइ** त्तिं, यच्चातिरिक्तं तदिह न विवक्षितम्, यत एवमिदमन्यत्रोच्यते–

[2]**दो वारे विजयाइसु गयस्स तिन्नऽच्चुए अहव ताइं ।**

---

१. दृश्यतां पृ० १४० टि० ३ ॥ २. "इह कश्चित् साधुर्मत्यादिज्ञानान्वितो देशोनां पूर्वकोटीं यावत् प्रव्रज्यां परिपाल्य विजय-वैजयन्त-जयन्ता-ऽपराजितविमानानामन्यतरविमाने उत्कृष्टं त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमलक्षणदेवायुरनुभूय पुनरप्रतिपतितमत्यादिज्ञान एव मनुजेषूत्पन्नो देशोनां पूर्वकोटीं प्रव्रज्यां विधाय तदैव विजयादिषूत्कृष्टमायुः संप्राप्य पुनरप्रतिपतितमत्यादिज्ञान एव मनुष्यो भूत्वा पूर्वकोटीं जीवित्वा सिद्ध्यतीति । एवं विजयादिषु वारद्वयं गतस्य; अथवाऽच्युतदेवलोके द्वाविंशतिसागरोपमस्थितिकेषु देवेषु त्रीन् वारान् गतस्य तानि षट्षष्टिसागरोपमानि अधिकानि भवन्ति । अधिकं चेह नरभवसंबन्धि देशोनं पूर्वकोटित्रयं चतुष्टयं वा द्रष्टव्यम् । नानाजीवानां तु सर्वाद्धं सर्वकालं मतिज्ञानस्य स्थितिः ।" इति **विशेषावश्यकभाष्यस्य** मलधारि**हेमचन्द्रसूरि**विरचितायां वृत्तौ ॥

अइरेगं नरभवियं नाणाजीवाण सव्वद्धं ।। [विशेषाव० ४३६] ति ।।६६।।

[सू० ६७] **पंचसंवच्छरियस्स णं जुगस्स नक्खत्तमासेणं मिज्जमाणस्स सत्तसट्ठिं नक्खत्तमासा पण्णत्ता ।**

हेमवतेरण्णवतियातो णं बाहातो सत्तसट्ठिं सत्तसट्ठिं जोयणसताइं पणपण्णाइं तिण्णि य भागा जोयणस्स आयामेणं पण्णत्तातो ।

मंदरस्स णं पव्वतस्स पुरत्थिमिल्लातो चरिमंतातो गोयमदीवस्स णं दीवस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं सत्तसट्ठिं जोयणसहस्साइं अबाधाते अंतरे पण्णत्ते।

सव्वेसिं पि णं नक्खत्ताणं सीमाविक्खंभे णं सत्तसट्ठिंभागभइते समंसे पण्णत्ते ।

[टी०] अथ सप्तषष्टिस्थानके किञ्चिद्विव्रियते । तत्र **पंचसंवे**त्यादि, नक्षत्रमासो येन कालेन चन्द्रो नक्षत्रमण्डलं भुङ्क्ते, स च सप्तविंशतिरहोरात्राणि एकविंशतिश्चाहोरात्रस्य सप्तषष्टिभागाः २७ $\frac{२१}{६७}$, युगप्रमाणं चाष्टादश शतानि त्रिंशदधिकानीति प्राक् दर्शितम् १८३०, तदेवं नक्षत्रमासस्योक्तप्रमाणराशिना दिनसप्तषष्टिभागतया व्यवस्थापितेन त्रिंशदुत्तराष्टादशशतप्रमाणेन युगदिनप्रमाणराशिः सप्तषष्टिभागतया व्यवस्थापित एकं लक्षं द्वाविंशतिः सहस्राणि षट् शतानि दश चेत्येवंरूपो विभज्यमानः सप्तषष्टिनक्षत्रमासप्रमाणो भवतीति । **बाहाओ** त्ति लघुहिमवज्जीवायाः पूर्वापरभागतो ये प्रवर्द्धमानक्षेत्रप्रदेशपङ्क्ती हैमवतवर्षजीवां यावत्ते हैमवतबाहू उच्येते एवमैरण्यवतबाहू अपि भावनीयौ, इह प्रमाणसंवादः– **बाहा सत्तट्ठिसए पणपन्ने तिण्णि य कलाओ** [1][बृहत्क्षेत्र० ५५] त्ति, **कला** एकोनविंशतिभागः, एतच्च बाहुप्रमाणं हैमवतधनुःपृष्ठात् **चत्ताला सत्त सया अडतीससहस्स दस कला य धणु** [1][बृहत्क्षेत्र० ५५] त्ति एवंलक्षणात् ३८७४० $\frac{१०}{१९}$ हिमवद्धनुःपृष्ठे **धणुपट्ट कलचउक्कं पणुवीससहस्स दुसय तीसहिय** [*][बृहत्क्षेत्र० ५३] त्ति एवंलक्षणे २५२३० $\frac{४}{१९}$ अपनीते यच्छेषं तदर्द्धीकृतं सद्भवतीति, **आयामेन** दैर्घ्येणेति । **मंदरस्से**त्यादि, मेरोः पूर्वान्ताज्जम्बूद्वीपोऽपरस्यां दिशि जगतीबाह्यान्तपर्यवसानः

१. दृश्यतां परिशिष्टं पृ० ५८ पं० २७ ।

पञ्चपञ्चाशद्योजनसहस्राणि तावदस्ति, ततः परं द्वादशयोजनसहस्राण्यतिक्रम्य लवणसमुद्रमध्ये गौतमद्वीपाभिधानो द्वीपोऽस्ति तमधिकृत्य सूत्रार्थः संभवति, पञ्चपञ्चाशतो द्वादशानां च सप्तषष्टित्वभावात्, यद्यपि सूत्रपुस्तकेषु गौतमशब्दो न दृश्यते तथाप्यसौ दृश्यः, **जीवाभिगमा**दिषु लवणसमुद्रे गौतम-चन्द्र-रविद्वीपान् विना द्वीपान्तरस्याश्रूयमाणत्वादिति । **सव्वेसिं पि ण**मित्यादि, **सर्वेषामपि ण**मित्यलङ्कारे नक्षत्राणां **सीमाविष्कम्भः** पूर्वापरतश्चन्द्रस्य नक्षत्रभुक्तिक्षेत्रविस्तारः नक्षत्रेणाहोरात्रभोग्यक्षेत्रस्य सप्तषष्ट्या भागै**र्भाजितो** विभक्तः **समांशः** समच्छेदः प्रज्ञप्तः, भागान्तरेण तु भज्यमानस्य नक्षत्रसीमाविष्कम्भस्य विषमच्छेदता भवति, भागान्तरेण न भक्तुं शक्यते इत्यर्थः, तथाहि– नक्षत्रेणाहोरात्रगम्यस्य क्षेत्रस्य सप्तषष्टिभागीकृतस्यैकविंशतिर्भागा अभिजिन्नक्षत्रस्य क्षेत्रतः सीमाविष्कम्भो भवति, एतावति क्षेत्रे चन्द्रेण सह तस्य योगो व्यपदिश्यत इत्यर्थः, तथा तस्यामेवैकविंशतौ त्रिंशन्मुहूर्त्तत्वादहोरात्रस्य त्रिंशता गुणितायां ६३० सप्तषष्ट्या हृतभागायां यल्लब्धं तत् कालसीमा भवति, चन्द्रेण सह तस्य योगकाल इत्यर्थः, सा च नव मुहूर्त्ताः सप्तविंशतिश्च सप्तषष्टिभागाः ९ $\frac{२७}{६७}$ । आह च–

[१]अभिइस्स चंदजोगो सत्तट्ठिं खंडिए अहोरत्ते ।
भागा उ एक्कवीसं क्षेत्रतः [२]होंतऽहिगा नव मुहुत्ता य ॥ [ज्योतिष्क० १६२] त्ति

कालतः । तथा शतभिषग्-भरण्यार्द्रा-ऽऽश्लेषा-स्वाति-ज्येष्ठानां त्रयस्त्रिंशत् सप्तषष्टिभागास्तद्भागार्द्धं च क्षेत्रसीमाविष्कम्भो भवति, तस्यामेव सार्द्धत्रयस्त्रिंशति त्रिंशता गुणितायां १००५ सप्तषष्ट्या हृतभागायां यल्लब्धं तदेषां कालसीमा, तच्च पञ्चदश

---

१. ``**अभिजितः** अभिजिन्नक्षत्रस्य चन्द्रेण सह योगः **सप्तषष्टिखण्डितः** सप्तषष्टिप्रविभागीकृतो योऽहोरात्रस्तस्य सत्का ये एकविंशतिर्भागास्तावन्तं कालं भवति, ते चैकविंशतिः सप्तषष्टिभागाः परिभाव्यमाना नव मुहूर्त्ताः **अधिकाः** सप्तविंशतिसप्तषष्टिभागाधिका भवन्ति । तथाहि- सप्तषष्टिखण्डीकृतस्याहोरात्रस्य सत्का ये एकविंशतिर्भागास्ते मुहूर्त्तगतभागकरणार्थं त्रिंशता गुण्यन्ते जातानि षट् शतानि त्रिंशदधिकानि ६३०, तेषां सप्तषष्ट्या भागे हृते लब्धा नव मुहूर्त्ताः, एकस्य च मुहूर्त्तस्य सप्तविंशतिः सप्तषष्टिभागा इति ॥१६२॥'' इति **ज्योतिष्करण्डस्य मलयगिरिसूरि**-विरचितायां वृत्तौ ॥ २. **होंति हिगा** खं० जे१ ॥

मुहूर्त्ताः, आह च–

सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जे[१]ट्ठा य ।

एए छण्णक्खत्ता पन्नरसमुहुत्तसंजोगा ॥ [जम्बू० प्र० ७।१६०] इति ।

तथोत्तरात्रय-पुनर्वसु-रोहिणी-विशाखानां सप्तषष्टिभागानां शतं तद्भागार्द्धं च क्षेत्रविष्कम्भः सीमा भवति, तथा तस्मिन्नेव त्रिंशद्गुणिते ३०१५ तथैव हृतभागे यल्लब्धं तदेषां कालसीमा भवति, सा च पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्ता इति, आह च–

तिन्नेव उत्तराइं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य ।

एए छन्नक्खत्ता, पणयालमुहुत्तसंजोगा ॥ [जम्बू० प्र० ७।१६०] इति । शेषाणां पञ्चदशानां नक्षत्राणां सप्तषष्टिरेव सप्तषष्टिभागानां क्षेत्रसीमाविष्कम्भो भवति, तस्यां च तथैव गुणितायां २०१० हृतभागायां च यल्लब्धं तत् कालसीमा, तच्च त्रिंशन्मुहूर्त्ताः, आह च–

[२]अवसेसा नक्खत्ता पन्नरस वि होंति तीसइमुहुत्ता ।

चंदस्स तेहिं जोगो समासओ एस वक्खामि ॥ [ज्योतिष्क० १६५]

एवं चैकस्य षण्णां षण्णां पञ्चदशानां चेत्येवमष्टाविंशतेर्नक्षत्राणामष्टादश शतानि त्रिंशदधिकानि सप्तषष्टिभागानामेतदेव द्विगुणं षट्पञ्चाशतो नक्षत्राणां भवति, तच्च सहस्रत्रयं षट् शतानि षष्ट्यधिकानि ३६६० ॥६७॥

[सू० ६८] धायइसंडे णं दीवे अट्ठसट्ठिं चक्कवट्टिविजया अट्ठसट्ठिं रायधाणीतो पण्णत्ताओ । उक्कोसपदे अट्ठसट्ठिं अरहंता समुप्पज्जिंसु वा समुप्पज्जंति वा समुप्पज्जिस्संति वा । एवं चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेवा ।

पुक्खरवरदीवड्ढे णं अट्ठसट्ठिं विजया एवं चेव जाव वासुदेवा ।

विमलस्स णं अरहतो अट्ठसट्ठिं समणसाहस्सीतो उक्कोसिया समणसंपदा होत्था ।

---

१. दृश्यतां परिशिष्टे पृ० ५२ पं० १५ ॥ २. टीका- **अवशेषाणि** श्रवण-धनिष्ठाप्रभृतीनि नक्षत्राणि **पञ्चदशापि सूर्येण सह गतानि** यान्ति **त्रयोदश समान्** परिपूर्णा**नहोरात्रान् द्वादश च मुहूर्त्तान्** यावत् । तथाहि- अमूनि परिपूर्णान् सप्तषष्टिभागान चन्द्रेण समं व्रजन्ति, ततः सूर्येण सह एतानि पञ्चभागानप्यहोरात्रस्य सप्तषष्टिसंख्यान् गच्छन्ति, सप्तषष्टेश्च पञ्चभिर्भागे हृते लब्धास्त्रयोदशाहोरात्राः, शेषौ च द्वौ भागौ तिष्ठतः, तौ त्रिंशता गुण्येते जाता षष्टिः, तस्याः पञ्चभिर्भागे हृते लब्धा द्वादश मुहूर्ता इति ॥१६५॥'' इति **ज्योतिष्करण्डकस्य मलयगिरि**सूरिविरचितायां वृत्तौ ॥

[टी०] अथाष्टषष्टिस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, [1]**धायइसंडे** इत्यादि, इह यदुक्तम् **एवं चक्कवट्टी बलदेवा वासुदेव** त्ति तत्र यद्यपि चक्रवर्त्तिनां वासुदेवानां वा नैकदा अष्टषष्टिः सम्भवति यतो जघन्यतोऽप्येकैकस्मिन् महाविदेहे च[2]तुर्णां चतुर्णां तीर्थकरादीनामवश्यं भावः [3]**स्थानाङ्गा**दिष्वभिहितः, न चैकत्र क्षेत्रे चक्रवर्त्ती वासुदेवश्चैकदा भवतोऽतः षष्टिरेवोत्कर्षतश्चक्रवर्त्तिनां वासुदेवानां चाष्टषष्ट्यां विजयेषु भवति तथापीह सूत्रे एकसमयेनेत्यविशेषणात् कालभेदभाविनां चक्रवर्त्त्यादीनां विजयभेदेनाष्टषष्टिरविरुद्धा, अभिलप्यन्ते च [4]**जम्बूद्वीपप्रज्ञप्त्यां** भारत-काच्छाद्यभिलापेन चक्रवर्त्तिन इति ॥६८॥

[सू० ६९] **समयखेत्ते णं मंदरवज्जा एकूणसत्तरिं वासा वासधरपव्वता पण्णत्ता, तंजहा– पणतीसं वासा, तीसं वासहरा, चत्तारि उसुयारा ।**

मंदरस्स पव्वतस्स पच्चत्थिमिल्लातो चरिमंतातो गोतमद्दीवस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं एकूणसत्तरिं जोयणसहस्साइं अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ।

मोहणिज्जवज्जाणं सत्तण्हं कम्मपगडीणं एकूणसत्तरिं उत्तरपगडीतो पण्णत्तातो।

[टी०] अथैकोनसप्ततिस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, **समये**त्यादि, **मन्दरवर्ज्जा** मेरुवर्जाः, **वर्षाणि** च भरतादिक्षेत्राणि **वर्षधरपर्वताश्च** हिमवदादयस्तत्सीमाकारिणः **वर्ष-वर्षधरपर्वताः** समुदिता **एकोनसप्ततिः प्रज्ञप्ताः**, कथम् ?, पञ्चसु मेरुषु प्रतिबद्धानि सप्त सप्त भरत-हैमवतादीनि पञ्चत्रिंशद्वर्षाणि तथा प्रतिमेरु षट् षट् हिमवदादयो वर्षधरास्त्रिंशत्तथा चत्वार एवेषुकारा इति सर्वसंख्यैकोनसप्ततिरिति । **मंदरस्से**त्यादि, लवणसमुद्रं पश्चिमायां दिशि द्वादश योजनसहस्राण्यवगाह्य द्वादशसहस्रमानः सुस्थिताभिधानस्य लवणसमुद्राधिपतेर्भवनेनालङ्कृतो **गौतमद्वीपो** नाम द्वीपोऽस्ति, तस्य च पश्चिमान्तो मेरोः पश्चिमान्तादेकोनसप्ततिः [5]सहस्राणि [6]भवन्ति, पञ्चचत्वारिंशतो

---

१. **'संडेत्यादि** हे२ विना ॥ २. **चतुर्णां तीर्थकरा'** हे२ विना ॥ ३. ''जंबूदीवे दीवे महाविदेहे वासे जहन्नपते चत्तारि अरहंता चत्तारि चक्कवट्टी चत्तारि बलदेवा चत्तारि वासुदेवा उप्पज्जिंसु वा उप्पज्जंति वा उप्पज्जिस्संति वा ॥'' इति **स्थानाङ्गसूत्रे** ४/२९९ ॥ ४. **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ** तृतीये चतुर्थे च वक्षस्कारे द्रष्टव्यम् ॥ ५. **सहस्राणि भवति** इति जेसं२ मध्ये पत्रस्याधस्तान्निर्दिष्टः पूरितः पाठः ॥ ६. **भवंतीति** जे१ ॥

जम्बूद्वीपसम्बन्धिनां द्वादशानामन्तरसम्बन्धिनां द्वादशानामेव द्वीपविष्कम्भसम्बन्धिनां च मीलनादिति । **मोहनीयवर्ज्जानां कर्म्मणामेकोनसप्ततिरुत्तरप्रकृतयो** भवन्तीति[1] कथम् ? ज्ञानावरणस्य पञ्च, दर्शनावरणस्य नव वेदनीयस्य द्वे, आयुषश्चतस्रः, नाम्नो द्विचत्वारिंशद्, गोत्रस्य द्वे, अन्तरायस्य पञ्चेति ॥६९॥

[सू० ७०] **समणे भगवं महावीरे वासाणं सवीसतिराते मासे वीतिक्कंते सत्तरीए रातिंदिएहिं सेसेहिं वासावासं पज्जोसविते ।**

पासे णं अरहा पुरिसादाणीए सत्तरिं वासाइं बहुपडिपुण्णाइं सामण्णपरियागं पाउणित्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

वासुपुज्जे णं अरहा सत्तरिं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

मोहणिज्जस्स णं कम्मस्स सत्तरिं सागरोवमकोडाकोडीओ अबाहूणिया कम्मट्ठिती कम्मणिसेगे पण्णत्ते ।

माहिंदस्स णं देविंदस्स देवरण्णो सत्तरिं सामाणियसाहस्सीतो पण्णत्तातो।

[टी०] अथ सप्ततिस्थानके किमपि लिख्यते, **समणे**त्यादि,[2] **वर्षाणां** चतुर्मासप्रमाणस्य वर्षाकालस्य **सविंशतिरात्रे** विंशतिदिवसाधिके **मासे व्यतिक्रान्ते** पञ्चाशति दिनेष्वतीतेष्वित्यर्थः, सप्तत्यां च रात्रिंदिवेषु शेषेषु, भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यामित्यर्थः, वर्षास्वावासो **वर्षावासः** वर्षावस्थानं **पज्जोसवेइ** त्ति **परिवसति** सर्वथा[3] करोति, पञ्चाशति प्राक्तनेषु दिवसेषु तथाविधवसत्यभावादिकारणे स्थानान्तरमप्याश्रयति, भाद्रपदशुक्लपञ्चम्यां तु वृक्षमूलादावपि निवसतीति हृदयमिति । **पुरिसादाणीए** त्ति पुरुषाणा**मादानीयः** उपादेयः **पुरुषादानीयः** । **अबाहूणिया कम्मट्ठिई कम्मणिसेगे पण्णत्ते** त्ति, इह किलात्मा अविशिष्टमेव कर्म्मपुद्गलोपादानं कृत्वा उत्तरकालं ज्ञानावरणीयादिकर्म्मणां स्वं स्वमबाधाकालं मुक्त्वा ज्ञानावरणीयादिप्रकृतिविभागतया अनाभोगिकेन वीर्येणोदयसहितं तद्दलिकं निषिञ्चति, उदययोग्यं रचयतीत्यर्थः, अतो द्विविधा स्थितिः– कर्म्मत्वापादनमात्ररूपा अनुभवरूपा च, यतः **स्थितिः** अवस्थानं तेन भावेनाप्रच्यवनम्, तत्र कर्म्मत्वापादनरूपां तामधिकृत्य सप्ततिः सागरोपमकोटीकोट्यः,

---

१. भवंति जे२ ॥ २. समेत्यादि जे२ ॥ ३. सर्वथा वासं करोति हे२ ॥

अनुभवरूपां त्वधिकृत्य सप्तवर्षसहस्रोनेति, तत्र **अबाह** त्ति किमुक्तं भवति ? बन्धावलिकाया आरभ्य यावत् सप्तवर्षसहस्राणि तावत् तत् कर्म न बाधते, नोदयं यातीत्यर्थः, ततोऽनन्तरसमये कर्मदलिकं पूर्वनिषिक्तम् उदये प्रवेशयति, निषेको नाम ज्ञानावरणादिकर्म्मदलिकस्यानुभवनार्थं रचना, तच्च प्रथमसमये बहुकं निषिञ्चति द्वितीयसमये विशेषहीनं तृतीयसमये विशेषहीनमेवं यावदुत्कृष्टस्थिति कर्मदलिकं तावद्विशेषहीनं निषिञ्चति, तथा चोक्तम्–

मोत्तूण सगमबाहं पढमाए ठिइए बहुतरं दव्वं ।
सेसे विसेसहीणं जावुक्कोसन्ति सव्वासिं ।। [कर्मप्र० ८३] ति ।

बाधृ लोडने [पा०धा० ५], बाधत इति **बाधा** कर्म्मण उदय इत्यर्थः, न बाधा **अबाधा**, अन्तरं कर्म्मोदयस्येत्यर्थः, तया ऊनिका **अबाधोनिका कर्मस्थितिः कर्म्मनिषेको** भवतीत्येवमेके प्राहुः, अन्ये पुनराहुः- **अबाधाकालेन** वर्षसहस्रसप्तकलक्षणेनोना **कर्म्मस्थितिः** सप्तसहस्राधिकसप्ततिसागरोपमकोटीकोटीलक्षणा, **कर्म्मनिषेको** भवति, स च कियान्? उच्यते– **सत्तरिं सागरोवमकोडाकोडीओ** त्ति ।।७०।।

[सू० ७१] **चउत्थस्स णं चंदसंवच्छरस्स हेमंताणं एक्कसत्तरीए राइंदिएहिं वीतिक्कंतेहिं सव्वबाहिरातो मंडलातो सूरिए आउट्टिं करेति ।**

वीरियपुव्वस्स णं पुव्वस्स एक्कसत्तरिं पाहुडा पण्णत्ता ।

अजिते णं अरहा एक्कसत्तरिं पुव्वसतसहस्साइं अगारमज्झे वसित्ता मुंडे भवित्ता जाव पव्वतिते ।

एवं सगरे वि राया चाउरंतचक्कवट्टी एक्कसत्तरिं पुव्व जाव पव्वतिते ।

[टी०] अथैकसप्ततिस्थानके लिख्यते किञ्चित्, **चउत्थस्से**त्यादि, इह भावार्थोऽयम्– युगे हि पञ्च संवत्सरा भवन्ति, तत्राद्यौ चन्द्रसंवत्सरौ तृतीयोऽभिवर्द्धितसंवत्सरश्चतुर्थश्चन्द्रसंवत्सर एव, तत्र च एकोनत्रिंशता दिनानां द्वात्रिंशता च द्विषष्टिभागैर्दिनस्य चन्द्रमासो भवति, अयं च द्वादशगुणश्चन्द्रसंवत्सरो भवति, त्रयोदशगुणश्चायमेवाभिवर्द्धितो भवति, ततश्चन्द्र-चन्द्रा-ऽभिवर्द्धितलक्षणे संवत्सरत्रये दिनानां सहस्रं द्विनवतिः षट् च द्विषष्टिभागा भवन्ति $१०९२\frac{६}{६२}$, तथा

आदित्यसंवत्सरे दिनानां शतत्रयं षट्षष्टिश्च भवन्ति, तत्त्रितये च सहस्रमष्टनवत्यधिकं भवति, इह च किल चन्द्रयुगमादित्ययुगं चाषाढ्यामेकं पूर्यतेऽपरं च श्रावणकृष्णप्रतिपदि आरभ्यते, एवं चादित्ययुगसंवत्सरत्रयापेक्षया चन्द्रयुगसंवत्सरत्रयं पञ्चभिर्दिनैः षट्पञ्चाशता च दिनद्विषष्टिभागैरूनं भवतीति कृत्वा आदित्ययुगसंवत्सरत्रयं श्रावणकृष्णपक्षस्य चन्द्रदिनषट्के साधिके पूर्यते चन्द्रयुगसंवत्सरत्रयं त्वाषाढ्याम्, ततश्च श्रावणकृष्णपक्षसप्तमदिनादारभ्य दक्षिणायनेनादित्यश्चरन् चन्द्रयुगचतुर्थसंवत्सरस्य चतुर्थमासान्तभूतायामष्टादशोत्तरशततमदिनभूतायां कार्तिक्यां द्वादशोत्तरशततमे स्वकीयमण्डले चरति, ततश्चान्यान्येकसप्ततिर्मण्डलानि तावत्स्वेव दिनेषु मार्गशीर्षादीनां चतुर्णां हेमन्तमासानां सम्बन्धिषु चरति, ततो द्विसप्ततितमे दिने माघमासे बहुलपक्षत्रयोदशीलक्षणे सूर्य आवृत्तिं करोति, दक्षिणायनान्निवृत्त्योत्तरायणेन चरतीत्यर्थः, उक्तं च **ज्योतिष्करण्डके**, पञ्चसु युगसंवत्सरेषूत्तरायणतिथयः क्रमेणैवं[1] यदुत–

बहुलस्स सत्तमीए १ सूरो सुद्धस्स तो चउत्थीए २ ।
बहुलस्स य पाडिवए ३ बहुलस्स य तेरसीदिवसे ४ ॥
सुद्धस्स य दसमीए ५ पवत्तए पंचमी उ आउट्टी ।

---

१. क्रमेणैव जे१,२ हे२ ॥ २. ''**पढमा बहुलपडिवए बिइया बहुलस्स तेरसीदिवसे । सुद्धस्स य दसमीए बहुलस्स य सत्तमीए उ ॥२४७॥ सुद्धस्स चउत्थीए पवत्तए पंचमी उ आउट्टी । एया आउट्टीओ सव्वाओ सावणे मासे ॥२४८॥** टीका- इह सूर्यस्य दशाऽऽवृत्तयो भवन्ति, एतच्चानन्तरमेव भावितम् । तत्र पञ्चावृत्तयः श्रावणे मासे पञ्च माघमासे । तत्र याः श्रावणे मासे भवन्ति तासां मध्ये प्रथमा बहुलपक्षे प्रतिपदि १, द्वितीया **बहुलस्य** बहुलपक्षस्य सम्बन्धिनि त्रयोदशीरूपे दिवसे २, तृतीया **शुद्धस्य** शुक्लपक्षस्य दशम्याम् ३, चतुर्थी बहुलपक्षस्य सप्तम्याम् ४, **शुद्धस्य** शुक्लपक्षस्य चतुर्थ्यां प्रवर्त्तते पञ्चमी आवृतिः ५ । एताः सर्वा अप्यावृत्तयः श्रावणे मासे वेदितव्याः ॥२४७-२४८॥ साम्प्रतमेता आवृत्तयो येन नक्षत्रेण युता भवन्ति तन्नक्षत्रनिरूपणार्थमाह- **पढमा होइ अभिइणा संठाणाहि य तहा विसाहाहिं । रेवतिए उ चउत्थी पुव्वाहिं फग्गुणीहि तहा ॥२४९॥** टीका- श्रावणमासभाविनीनामन्तरोदितस्वरूपाणां पञ्चानामावृत्तीनां मध्ये प्रथमाऽऽवृत्तिरभिजिता नक्षत्रेण युता भवति, द्वितीया **संठाणाहिं** ति मृगशिरसा, तृतीया विशाखाभिः, चतुर्थी रेवत्या, पञ्चमी पूर्वाफाल्गुनीभिः ॥२४९॥ अधुना माघमासे भाविन्य आवृत्तयो यासु तिथिषु भवन्ति ता अभिदधाति- **बहुलस्स सत्तमीए पढमा सुद्धस्स तो चउत्थीए । बहुलस्स य पाडिवए बहुलस्स य तेरसीदिवसे ॥२५०॥ सुद्धस्स य दसमीए पवत्तए पंचमी उ आउट्टी । एया आउट्टीओ सव्वाओ माघमासम्मि ॥२५१॥** टीका- माघमासे प्रथमाऽऽवृत्तिः **बहुलस्य** कृष्णपक्षस्य सप्तम्यां भवति १, द्वितीया **शुद्धस्य** शुक्लपक्षस्य चतुर्थ्याम् २, तृतीया बहुलपक्षस्य प्रतिपदि ३, चतुर्थी बहुलपक्षस्य त्रयोदशीदिवसे ४, पञ्चमी शुक्लपक्षस्य दशम्यां प्रवर्त्तते ५। एताः सर्वा अप्यावृत्तयो माघमासे भवन्ति ॥२५०-२५१॥'' इति **ज्योतिष्करण्डकस्य मलयगिरि**सूरिविरचितायां वृत्तौ ॥

एआ आउट्टीओ सव्वाओ माघमासम्मि ॥ [ज्योतिष्क० २५०-२५१] त्ति ।

दक्षिणायनदिनानि चैवम्–

पढमा बहुलपडिवए १ बीया बहुलस्स तेरसीदिवसे २ ।
सुद्धस्स य दसमीए ३ बहुलस्स य सत्तमीए ४ उ ॥
सुद्धस्स चउत्थीए पवत्तए पंचमी उ आउट्टी ।
एया आउट्टीओ सव्वाओ सावणे मासे ॥ [ज्योतिष्क० २४७-२४८] त्ति ।

वीरियपुव्वस्स त्ति तृतीयपूर्वस्य, **पाहुड** त्ति प्राभृतमधिकारविशेषः । **अजिए**त्यादि, तस्य हि अष्टादश पूर्वलक्षाणि कुमारत्वं त्रिपञ्चाशच्चैकपूर्वाङ्गाधिका राज्यमित्येकसप्ततिः, इह च पूर्वाङ्गमधिकमल्पत्वान्न विवक्षितमिति । **सगरो** द्वितीयश्चक्रवर्त्ती **अजितस्वामि**कालीनः ॥७१॥

[सू० ७२] बावत्तरिं सुवण्णकुमारावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

लवणस्स समुद्दस्स बावत्तरिं नागसाहस्सीतो बाहिरियं वेलं धारेंति ।

समणे भगवं महावीरे बावत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालयित्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

थेरे णं अयलभाया बावत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालयित्ता सिद्धे जाव प्पहीणे ।

अब्भंतरपुक्खरद्धे णं बावत्तरिं चंदा पभासिंसु वा पभासंति वा पभासिस्संति वा, बावत्तरिं सूरिया तवइंसु वा तवइंति वा तवइस्संति वा ।

एगमेगस्स णं रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स बावत्तरिं पुरवरसाहस्सीतो पण्णत्तातो ।

बावत्तरिं कलातो पण्णत्तातो, तंजहा– लेहं १, गणितं २, रूवं ३, नट्टं ४, गीयं ५, वाइतं ६, सरगयं ७, पुक्खरगयं ८, समतालं ९, जूयं १०, जाणवयं ११, पोरेकव्वं १२, अट्ठावयं १३, दयमट्टियं १४, अण्णविधिं १५, पाणविधिं १६, लेणविहिं १७, सयणविहिं १८, अज्जं १९, पहेलियं २०, मागधियं २१, गाधं २२, सिलोगं २३, गंधजुत्तिं २४, मधुसित्थं २५,

आभरणविहिं २६, तरुणीपडिकम्मं २७, इत्थीलक्खणं २८, पुरिसलक्खणं २९, हयलक्खणं ३०, गयलक्खणं ३१, गोणलक्खणं ३२, कुक्कुडलक्खणं ३३, मेंढयलक्खणं ३४, चक्कलक्खणं ३५, छत्तलक्खणं ३६, दंडलक्खणं ३७, असिलक्खणं ३८, मणिलक्खणं ३९, काकणिलक्खणं ४०, चम्मलक्खणं ४१, चंदचरियं ४२, सूरचरितं ४३, राहुचरितं ४४, गहचरितं ४५, सोभाकरं ४६, दोभाकरं ४७, विज्जागतं ४८, मंतगयं ४९, रहस्सगयं ५०, सभावं ५१, चारं ५२, पडिचारं ५३, वूहं ५४, पडिवूहं ५५, खंधावारमाणं ५६, नगरमाणं ५७, वत्थुमाणं ५८, खंधावारनिवेसं ५९, नगरनिवेसं ६०, वत्थुनिवेसं ६१, ईसत्थं ६२, छरुपगयं ६३, आससिक्खं ६४, हत्थिसिक्खं ६५, धणुव्वेयं ६६, हिरण्णवायं, सुवण्णवायं, मणिपागं, धाउपागं ६७, बाहुजुद्धं, दंडजुद्धं, मुट्ठिजुद्धं, अट्ठिजुद्धं, जुद्धं, निजुद्धं, जुद्धातिजुद्धं ६८, सुत्तखेड्डं, नालियाखेड्डं, वट्टखेड्डं, धम्मखेड्डं ६९, पत्तच्छेज्जं, कडगच्छेज्जं, पत्तगच्छेज्जं ७०, सज्जीवं, निज्जीवं ७१, सउणरुतमिति ७२ ।

संमुच्छिमखहयरपंचेंदियतिरिक्खजोणियाणं उक्कोसेणं बावत्तरिं वाससहस्साइं ठिती पण्णत्ता ।

[टी०] अथ द्विसप्ततिस्थानके किमपि लिख्यते, **सुवर्णकुमाराणां** द्विसप्ततिर्लक्षाणि, कथम् ?, दक्षिणनिकाये अष्टत्रिंशदुत्तरनिकाये तु चतुस्त्रिंशदिति । **नागसाहस्सीओ** त्ति नागकुमारदेवसहस्राणि **वेलां** षोडशसहस्रप्रमाणामुत्सेधतो विष्कम्भतश्च दशसहस्रमानां लवणजलधिशिखां **बाह्यां धातकी**खण्डद्वीपाभिमुखीम्। **महावीरो द्विसप्ततिं वर्षा**[1]**ण्यायुः पालयित्वा सिद्धः**, कथम् ?, त्रिंशद् गृहस्थभावे, द्वादश सार्द्धानि पक्षश्च छद्मस्थभावे, देशोनानि त्रिंशत् केवलित्वे इति द्विसप्ततिः । **अयलभाय** त्ति **महावीरस्य** नवमो गणधरः, तस्यायुर्द्विसप्ततिर्वर्षाणि, कथम् ? षट्चत्वारिंशद् गृहस्थत्वे, द्वादश छद्मस्थतायाम्, चतुर्दश केवलित्वे इति । **पुष्करार्द्धे** द्विसप्ततिश्चन्द्राः, तत्रैकस्यां पङ्क्तौ षट्त्रिंशदन्यस्यां च तावन्त एवेत्येवमिति । **बावत्तरिं कलाओ** त्ति कलनानि **कलाः**,

१. द्विसप्ततिवर्षा° जे२ विना ॥

विज्ञानानीत्यर्थः, ताश्च कलनीयभेदाद् द्विसप्ततिर्भवन्ति, तत्र लेखनं **लेखो**ऽक्षरविन्यासः, तद्विषया **कला** विज्ञानं लेख एवोच्यते एवं सर्वत्र, स च लेखो द्विधा– लिपिविषयभेदात्, तत्र लिपिरष्टादशस्थानकोक्ता, अथवा **लाटा**दिदेशभेदतस्तथाविधविचित्रोपाधिभेदतो वाऽनेकविधेति, तथाहि– पत्र-वल्क-काष्ठ-दन्त-लोह-ताम्र-रजतादयो अक्षराणामाधारास्तथा लेखनोत्कीर्णन-स्यूत-व्यूत-च्छिन्न-भिन्न-दग्ध-सङ्क्रान्तितोऽक्षराणि भवन्तीति, विषयापेक्षयाप्यनेकधा– स्वामि-भृत्य-पितृ-पुत्र-गुरु-शिष्य-भार्या-पति-शत्रु-मित्रादीनां लेखविषयाणामनेकत्वात्तथाविधप्रयोजनभेदाच्च, अक्षरदोषाश्चैते–

अतिकार्श्यमतिस्थौल्यम्, वैषम्यं पङ्क्तिवक्रता ।
अतुल्यानां च सादृश्यमविभागोऽवयवेषु च ॥ [ ] इति १,

तथा **गणितं** सङ्ख्यानं सङ्कलिताद्यनेकभेदं पाटीप्रसिद्धम् २, रूपं लेप्य-शिला-सुवर्ण-मणि-वस्त्र-चित्रादिषु रूपनिर्म्माणम् ३, **नाट्यं** कला भरतमार्गच्छलिकं लास्यविधानमित्यादिभेदादष्टधा, नाट्यग्रहणात् नृत्तकलापि गृहीता, सा च अभिनयिका अङ्गहारिका व्यायामिका चेति त्रिभेदा, स्वरूपं चात्र [1]**भरत**शास्त्रादवसेयम् ४, तथा **गीतं** कला, सा च निबन्धमार्ग-छलिकमार्ग-भिन्नमार्ग[2]भेदात् त्रिधा, तत्र–

सप्त स्वरास्त्रयो ग्रामा, मूर्च्छना एकविंशतिः ।
ताना एकोनपञ्चाशत् समाप्तं स्वरमण्डलम् ॥ [ ]

इयं च **विशाखिल**शास्त्रावसेयेति ५, **वाइयं** ति वाद्यकला, सा च तत-वितत-शुषिर-घनवाद्यानां चतुष्पञ्चत्र्येकप्रकारतया त्रयोदशधा ६ इत्यादिकः कलाविभागो लौकिकशास्त्रेभ्योऽवसेयः, इह च द्विसप्ततिरिति कलासंख्योक्ता, बहुतराणि च सूत्रे तन्नामान्युपलभ्यन्ते, तत्र च कासांचित् कासुचिदन्तर्भावोऽवगन्तव्य इति ॥७२॥

[सू० ७३] हरिवस्स-रम्मयवस्सियातो णं जीवातो तेवत्तरिं तेवत्तरिं जोयणसहस्साइं नव य एक्कुत्तरे जोयणसते सत्तरस य एकूणवीसतिभागे

१. भरतविरचिते नाट्यशास्त्रे चतुर्थोऽध्यायोद्रष्टव्यः ॥ २. "भिन्नमाणणमार्ग" जे२ ॥

जोयणस्स अद्धभागं च आयामेणं पण्णत्तातो ।

विजये णं बलदेवे तेवत्तरिं वाससयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे जाव प्पहीणे ।

[टी०] अथ त्रिसप्ततिस्थानके किमपि लिख्यते, **हरिवासे**त्यादि, अत्र संवादगाथा–

एगुत्तरा नव सया तेवत्तरिमेव जोयणसहस्सा ।
जीवा सत्तरस कला अद्धकला चेव हरिवासे ॥ ७३९०१ १७/१९ १/२ [बृहत्क्षेत्र० ५८] त्ति ।

तथा **विजयो** द्वितीयबलदेवः, तस्येह त्रिसप्ततिर्वर्षलक्षाण्यायुरुक्तम्, **आवश्यके**[1] तु पञ्चसप्ततिरितीदमपि मतान्तरमेव ॥७३॥

[सू० ७४] **थेरे णं अग्गिभूती चोवत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे जाव प्पहीणे ।**

निसभातो णं वासहरपव्वतातो तिगिंच्छिद्दहातो णं दहातो सीतोता महानदी चोवत्तरिं जोयणसताइं साहियाइं उत्तराहुत्ती पवहित्ता वतिरामतियाए जिब्भियाए चउजोयणायामाए पण्णासजोयणविक्खंभाए वइरतले कुंडे महता घडमुहपवत्तिएणं मुत्तावलिहारसंठाणसंठितेणं पवातेणं महया सद्देणं पवडति। एवं सीता वि दक्खिणाहुत्ती भाणियव्वा ।

चउत्थवज्जासु छसु पुढवीसु चोवत्तरिं निरयावाससयसहस्सा पण्णत्ता ।

[टी०] अथ चतुःसप्ततिस्थानके लिख्यते किञ्चित्, तत्रा**ग्निभूति**रिति **महावीरस्य** द्वितीयो गणनायकः, तस्येह चतुःसप्ततिवर्षाण्यायुः, अत्र चायं विभागः– षट्चत्वारिंशद्वर्षाणि गृहस्थपर्यायः, द्वादश छद्मस्थपर्यायः, षोडश केवलिपर्याय इति।

णिसहाओ णमित्यादि, अस्य भावार्थः– किल **निषधवर्षधरस्य** विष्कम्भो योजनानां षोडश सहस्राणि अष्टौ शतानि द्विचत्वारिंशत् कलाद्वयं चेति, तस्य च मध्यभागे **तिगिंछि**महाह्रदः सहस्रद्वयविष्कम्भश्चतुःसहस्रायामः, तदेवं पर्वतविष्कम्भार्द्धस्य ह्रदविष्कम्भार्द्धेन न्यूनतायां **शीतोदा**महानद्याः पर्वतस्योपरि चतुःसप्ततिशतान्येकविंशत्यधिकानि कला चैकेत्येवं प्रवाहो भवति। **वइरामइयाए जिब्भियाए** त्ति वज्रमय्या

१. दृश्यतां पृ० १४२ टि० ॥

जिह्विकया प्रणालस्थमकरमुखजिह्वया **चतुर्योजनदीर्घया पञ्चाशद्योजनविष्कम्भया वइरतले कुंडे** त्ति निषधपर्वतस्याधोवर्त्तिनि वज्रभूमिके अशीत्यधिकचतुर्योजनशतायाम-विष्कम्भे दशयोजनावगाहे शीतोदादेवीभवनाध्यासितमस्तकेन तद्द्वीपेनालङ्कृतमध्यभागे शीतोदाप्रपातह्रदे **महय** त्ति महाप्रमाणेन, यत् पुनः **दुहओ** त्ति क्वचित् दृश्यते तदपपाठ इति मन्यते, **घडमुहपवत्तिएणं** ति **घटमुखेनेव** कलशवदनेनेव **प्रवर्त्तितः** प्रेरितो **घटमुखप्रवर्त्तितस्तेन मुक्तावलीनां** मुक्ताफलसरीणां सम्बन्धी **हारस्तस्य** यत् **संस्थानं** तेन **संस्थितो** यस्तेन, **प्रपातः** पर्वतात् प्रपतज्जलसमूहस्तेन, **महाशब्देन** महाध्वनिना **प्रपतति**, एवं **शीतापि**, नवरं नीलवद्वर्षधराद् **दक्षिणाभिमुखी** प्रपततीति ।

चउत्थवज्जेत्यादि, तत्र प्रथमायां त्रिंशत्, द्वितीयायां पञ्चविंशतिः, तृतीयायां पञ्चदश, पञ्चम्यां त्रीणि लक्षाणि, षष्ठ्यां पञ्चोनं लक्षम्, सप्तम्यां पञ्चेत्येतानि मीलितानि चतुःसप्ततिर्भवन्तीति ॥७४॥

[सू० ७५] सुविहिस्स णं पुप्फदंतस्स अरहतो पण्णत्तरिं जिणा पण्णत्तरिं जिणसता होत्था ।

सीतले णं अरहा पण्णत्तरिं पुव्वसहस्साइं अगारमज्झे वसित्ता मुंडे भवित्ता जाव पव्वतिते ।

संती णं अरहा पण्णत्तरिं वाससहस्साइं अगारवासमज्झावसित्ता जाव पव्वतिते ।

[टी०] अथ पञ्चसप्ततिस्थानके किमपि लिख्यते, **सुविधेः** नवमतीर्थकरस्य नामान्तरतः **पुष्पदन्तस्ये**ति, तथा **शीतलस्य** पञ्चसप्ततिः पूर्वसहस्राणि गृहवासे, कथम् ? पञ्चविंशतिः कुमारत्वे, पञ्चाशच्च राज्य इति, तथा **शान्तिः** पञ्चसप्ततिर्वर्षसहस्राणि[1] गृहवासमध्युष्य प्रव्रजितः, कथम् ? पञ्चविंशतिः कुमारत्वे, पञ्चविंशतिः माण्डलिकत्वे, पञ्चविंशतिश्चक्रवर्त्तित्वे इति ॥७५॥

[सू० ७६] छावत्तरिं विज्जुकुमारावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

एवं–

---

१. °सप्ततिवर्ष° जे१, हे१ ॥

दीव-दिसा-उदहीणं विज्जुकुमारिंद-थणियमग्गीणं ।
छण्हं पि जुगलयाणं छावत्तरिं मो सतसहस्सा ॥५९॥

[टी०] अथ षट्सप्ततिस्थानके किञ्चित् लिख्यते, तत्र **विद्युत्कुमाराणां** भवनावासलक्षाणि दक्षिणायां चत्वारिंशदुत्तरस्यां तु षट्त्रिंशदिति षट्सप्ततिरिति । **एवमिति** इदमेव भवनमानं शेषाणां **द्वीपकुमारा**दिभवनपतिनिकायानाम्, इहार्थे गाथा– **दीवे**त्यादि **युगलाना**मिति दक्षिणोत्तरनिकायभेदेन युगलम्, निकाये निकाये भवतीति ॥७६॥

[सू० ७७] **भरहे राया चाउरंतचक्कवट्टी सत्तत्तरिं पुव्वसतसहस्साइं कुमारवासमज्झावसित्ता महरायाभिसेयं पत्ते ।**

अंगवंसातो णं सत्तत्तरिं रायाणो मुंडे जाव पव्वइया ।

[1]**गद्दतोय-तुसियाणं देवाणं सत्तत्तरिं देवसहस्सा परिवारो पण्णत्ता ।**

एगमेगे णं मुहुत्ते सत्तत्तरिं लवे लवग्गेणं पण्णत्ते ।

[टी०] अथ सप्तसप्ततिस्थानके विव्रियते किञ्चित्, तत्र **भरत**चक्रवर्त्ती **ऋषभस्वामिनः** षट्सु पूर्वलक्षेष्वतीतेषु जातस्त्र्यशीतितमे च तत्रातीते भगवति च प्रव्रजिते राजा संवृत्तः, ततश्च त्र्यशीत्याः षट्सु निष्कर्षितेषु सप्तसप्ततिस्तस्य कुमारवासो भवतीति । **अङ्गवंशः** अङ्गराजसन्तानस्तस्य सम्बन्धिनः **सप्तसप्तती राजानः प्रव्रजिताः । गद्दतोये**त्यादि, **ब्रह्मलोक**स्याधोवर्त्तिनीष्वष्टासु **कृष्णराजि**ष्वष्टौ **सारस्वता**दयो लोकान्तिकाभिधाना देवनिकाया भवन्ति, तत्र **गर्द्दतोयाना तुषितानां** च देवानामुभयपरिवारसंख्यामीलनेन **सप्तसप्ततिर्देवसहस्राणि परिवारः प्रज्ञप्तानी**ति । तथै**कैको मुहूर्त्तः सप्तसप्ततिं**[2] **लवान् लवाग्रेण** लवपरिमाणेन **प्रज्ञप्तः**, कथम् ? उच्यते–

हट्ठस्स अणवगल्लस्स, णिरुवकिट्ठस्स जंतुणो ।
एगे ऊसासनीसासे, एस पाणु त्ति वुच्चई[3] **॥**

---

१. ''गद्दतोय-तुसियाणं देवाणं सत्त देवा सत्त देवसहस्सा पण्णत्ता'' इति **स्थानाङ्गसूत्रे** सू० ५७६ ॥
२. **सप्ततिर्लवान्** जे२ हे१,२ ॥ ३. **वुच्चइ** जे२ हे१ ॥

सत्त पाणूणि से थोवे, सत्त थोवाणि से लवे ।
लवाणं सत्तहत्त[1]रीए, एस मुहुत्ते वियाहिए ॥ [[2]भगवती० ६।७।४] त्ति ॥७७॥

[सू० ७८] **सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो वेसमणे महाराया अट्ठसत्तरीए सुवण्णकुमार-दीवकुमारावाससतसहस्साणं आहेवच्चं पोरेवच्चं भट्टित्तं सामित्तं महारायत्तं आणाईसरसेणावच्चं कारेमाणे पालेमाणे विहरति ।**

थेरे णं अकंपिते अट्ठत्तरिं वासाइं सव्वाउयं पालयित्ता सिद्धे जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।

उत्तरायणनियट्टे णं सूरिए पढमातो मंडलातो एगूणचत्तालीसइमे मंडले अट्ठत्तरिं एगसट्ठिभाए दिवसखेत्तस्स निवुड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिनिवुड्ढेत्ता णं चारं चरति, एवं दक्खिणायणनियट्टे वि ।

[टी०] अथाष्टसप्ततिस्थानके किञ्चित् लिख्यते, **सक्कस्सेत्**यादि, **वेसमणे महाराय** त्ति सोम-यम-वरुण-वैश्रमणाभिधानानां लोकपालानां चतुर्थ उत्तरदिक्पालः, स हि वैश्रमणदेवनिकायिकानां सुपर्णकुमारदेव-देवीनां [3]द्वीपकुमारदेव-देवीनां व्यन्तर-व्यन्तरीणां चाधिपत्यं करोति, तदाधिपत्याच्च तन्निवासानामप्याधिपत्यमसौ करोतीत्युच्यते **अष्टसप्तत्याः सुपर्णकुमार-द्वीपकुमारावासशतसहस्राणा**मिति, तत्र सुपर्णकुमाराणां दक्षिणायामष्टत्रिंशद् भवनलक्षाणि द्वीपकुमाराणां च चत्वारिंशदित्येवमष्टसप्ततिरिति, द्वीपकुमाराधिपत्यमेतस्य [4]**भगवत्यां** न दृश्यते, इह तूक्तमिति मतान्तरमिदम्, **आहेवच्चं**

१. °**रिए** जे१ खं० ॥ २. **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ** द्वितीये वक्षस्कारे, **अनुयोगद्वारसूत्रे** ३६७ तमे सूत्रेऽपि च इदं गाथाद्वयमस्ति । ''**हट्ठस्स** गाहा । **हृष्टस्य** तुष्टस्य अनवकल्यस्य जरसा अपीडितस्य **निरुपक्लिष्टस्य** व्याधिना प्राक् साम्प्रतं वाऽनभिभूतस्य **जन्तोः** मनुष्यादे**रेक** उच्छ्वासयुक्तो निःश्वासः **उच्छ्वासनिःश्वासः**, **एष प्राण उच्यते**, शोक-जरादिभिरस्वस्थस्य जन्तोरुच्छ्वासनिःश्वासः त्वरितादिस्वरूपतया स्वभावस्थो न भवत्यतो **हृष्टा**दिविशेषणोपादानम् ॥ **सत्त पाणूणी**त्यादि श्लोकः, **सप्त प्राणा** यथोक्तस्वरूपाः **स** एकः **स्तोकः**, सप्त स्तोकाः स एको **लवः**, **लवानां** सप्तसप्तत्या यो निष्पद्यते **एष मुहूर्त्तो व्याख्यातः** ॥'' इति **अनुयोगद्वारसूत्रे** मलधारि**हेमचन्द्रसूरि**विरचितायां वृत्तौ ॥ ३. **दिक्कुमार**° इति सर्वेषु हस्तलिखितादर्शेषु पाठः । एतदनुसारेण '**द्वीपकुमारदेव-देवीनां दिक्कुमारदेव-देवीनां**' इति सम्पूर्णः पाठोऽत्र टीकायां भवेदिति संभाव्यते । दृश्यतामधस्तनमत्रत्यं टिप्पणम् ॥ ४. भगवतीसूत्रस्य तृतीये शतके सप्तमे उद्देशके ईदृशं सूत्रमुपलभ्यते- ''सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो **वेसमणस्स** महारण्णो इमे देवा आणा-उववाय-वयण-निद्देसे चिट्ठंति, तंजहा- वेसमणकाइया ति वा वेसमणदेवयकाइया ति वा **सुवण्णकुमारा सुव्वणकुमारीओ दीवकुमारा दीवकुमारीओ दिसाकुमारा दिसाकुमारीओ** वाणमंतरा वाणमंतरीओ जे याऽवन्ने तहप्पगारा सव्वे ते

ति **आधिपत्यम्** अधिपतिकर्म्म, **पोरेवच्चं** ति पुरोवर्त्तित्वम् अग्रगामित्वमित्यर्थः, **भट्टित्तं** ति **भर्तृत्वं** पोषकत्वम्, **सामित्तं** ति स्वामित्वं स्वामिभावम्, **महारायत्तं** ति **महाराजत्वं** लोकपालत्वमित्यर्थः, **आणाईसरसेणावच्चं** ति आज्ञाप्रधानसेनानायकत्वं **कारेमाणे** त्ति अनुनायकैः सेवकानां कारयन् **पालेमाणे** त्ति आत्मनापि पालयन् **विहरति** आस्ते ।

अकम्पितः स्थविरो **महावीर**स्याष्टमो गणधरस्तस्य चाष्टसप्ततिर्वर्षाणि सर्वायुः, कथम् ?, गृहस्थपर्याये अष्टचत्वारिंशत्, छद्मस्थपर्याये नव, केवलिपर्याये चैकविंशतिरिति । **उत्तरायणनियट्टे णं** ति **उत्तरायणाद्** उत्तरदिग्गमनान्निवृत्तः **उत्तरायणनिवृत्तः**, प्रारब्धदक्षिणायन इत्यर्थः, **सूरिए** त्ति आदित्यः **पढमाओ मंडलाओ** त्ति दक्षिणां दिशं गच्छतो रवेर्यत् प्रथमं तस्मात्, न तु सर्वाभ्यन्तरसूर्यमार्गात्, **एकूणचत्तालीसइमे** त्ति एकोनचत्वारिंशत्तमे मण्डले दक्षिणायनप्रथममण्डलापेक्षया, सर्वाभ्यन्तरमण्डलापेक्षया तु चत्वारिंशे, **अट्ठत्तरिं** ति अष्टसप्ततिम्[१] **एगसट्ठिभाए** त्ति मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागान् **दिवसखेत्तस्स** त्ति दिवसलक्षणस्य क्षेत्रस्य दिवसस्यैवेत्यर्थः, **निव्वुड्ढेत्त**[२] त्ति निर्वर्ध्य[३] हापयित्वेत्यर्थः, तथा **रयणिखेत्तस्स** त्ति रजन्या एव **अभिनिव्वुड्ढेत्त**[४] त्ति अभिनिर्वर्ध्य[५] वर्धयित्वेत्यर्थः, **चारं चरइ** त्ति भ्राम्यतीत्यर्थः, भावार्थोऽस्यैवं **चन्द्रप्रज्ञप्ति**वाक्यैरुपदर्श्यते– जम्बूद्वीपे द्वीपे यदैतौ **सूर्यौ** सर्वाभ्यन्तरमण्डलमुपसंक्रम्य चारं चरतस्तदा नवनवतिर्योजनसहस्राणि षट् च पञ्चचत्वारिंशदधिकानि योजनशतान्यन्योन्यमन्तरं कृत्वा चरतः, एतच्च **जम्बूद्वीपे**ऽशीत्युत्तरं योजनशतं

तब्भत्तिया जाव चिट्ठंति ।'' अस्मिन् सूत्रे द्वीपकुमाराधिपत्यं वैश्रमणस्य स्पष्टं दृश्यते, अतः अभयदेवसूरिभिः 'न दृश्यते' इति यद् लिखितं तत् तेषां समक्षं विद्यमानेषु **भगवती**सूत्रादर्शेषु अदर्शनादेव तैर्लिखितं भवेदिति संभाव्यते॥

१. °**सप्तति**ः खं० जे१ हे१ । °**सप्ततिरिति** हे२ ॥ २. **निवुड्ढेत्त** खं० हे१,२ ॥ ३. **निवर्ध्य** खं०जे१ हे१,२। '२७, ८८, ९८' सूत्रेष्वपि ईदृशो विचारो वर्तते, किन्तु २७ तमसूत्रटीकायां '**निवर्धयन्, अभिनिवर्धयन्**' इति शब्दप्रयोगो दृश्यते, अतो '**नि-निर्**' उपसर्गौ एकार्थाविति मत्वा उभयोरपि पाठयोः संगतिः कर्तुं शक्यते । यदि तु अत्र '**निवर्ध्य**' अग्रे च '**अभिनिवर्ध्य**' इति पाठः स्वीक्रियते तदा खं० जे१ पाठः समीचीनः एव ॥

४. °**निवुड्ढेत्त** हे१,२ ॥ ५. **अभिनिवर्ध्य** खं० जे१, हे१,२ ॥

प्रविश्याभ्यन्तरं मण्डलं भवति, एतस्मिंश्च द्विगुणे जंबूद्वीपप्रमाणादपकर्षिते यथोक्तमन्तरं भवतीति, तथा तत्र तयोश्चरतोरुत्कृष्टोऽष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति जघन्यिका च द्वादशमुहूर्त्ता रात्रिर्भवति, ततोऽभ्यन्तरमण्डलान्निष्क्रम्य प्रथमेऽहोरात्रेऽभ्यन्तरानन्तरं मण्डलमुपसङ्क्रम्य यदा चारं चरतस्तदा नवनवतिर्योजनसहस्राणि षट् च पञ्चचत्वारिंशदधिकानि योजनशतानि पञ्चत्रिंशच्च एकषष्टिभागा योजनस्यान्तरं कृत्वा चारं चरतः, तदा चाष्टादशमुहूर्त्तो दिवसो भवति द्वाभ्यां मुहूर्त्तस्यैकषष्टिभागाभ्यामूनः, द्वादशमुहूर्त्ता च रात्रिर्भवति द्वाभ्यां मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यामधिकेति, एवं दक्षिणायनस्य द्वितीयादिषु मण्डलेष्वहोरात्रेषु चान्योन्यान्तरप्रमाणस्य पञ्चभिः पञ्चभिर्योजनैः पञ्चत्रिंशता चैकषष्टिभागैर्योजनस्य वृद्धिर्वाच्या, द्वाभ्यां द्वाभ्यां च मुहूर्त्तैकषष्टिभागाभ्यां दिनहानी रात्रिवृद्धिश्चेति, एवं च एकोनचत्वारिंशत्तमे मण्डले सूर्ययोरन्तरं नवनवतिः सहस्राण्यष्ट शतानि सप्तपञ्चाशच्च योजनानां त्रयोविंशतिश्चैकषष्टिभागाः, दिनप्रमाणं चाष्टादशानां मुहूर्त्तानां मध्यादेकषष्टिभागानामष्टसप्तत्यां पातितायां षोडश मुहूर्त्ताश्चतुश्चत्वारिंशच्चैकषष्टिभागा मुहूर्त्तस्य, रात्रेस्त्वष्टसप्तत्यां क्षिप्तायां त्रयोदश मुहूर्त्ताः सप्तदशैकषष्टिभागाश्चेति, **एवं दक्खिणायणनियट्टे** त्ति यथोत्तरायणनिवृत्त एकोनचत्वारिंशत्तमे मण्डले अष्टसप्ततिमेकषष्टिभागान् हापयति वर्द्धयति च, एवं दक्षिणायननिवृत्तोऽपि सूर्यस्तान् हापयति वर्द्धयति च, केवलं दक्षिणायने दिनभागान् हापयति रात्रिभागांश्च वर्द्धयति, इह तु दिनभागान् वर्द्धयति रात्रिभागांश्च हापयतीति ॥७८॥

[सू० ७९] वलयामुहस्स णं पातालस्स हेट्ठिल्लातो चरिमंतातो इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं एकूणासीति जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं केउस्स वि जुययस्स वि ईसरस्स वि ।

छट्ठीए णं पुढवीए बहुमज्झदेसभायाओ छट्ठस्स घणोदहिस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं एकूणासीतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स बारस्स य बारस्स य एस णं एगूणासीइं जोयणसहस्साइं साइरेगाइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

[टी०] अथैकोनाशीतितमस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, तत्र **वलयामुहस्स** त्ति वडवामुखाभिधानस्य पूर्वदिग्व्यवस्थितस्य **पायालस्स** त्ति महापातालकलशस्याधस्तनचरमान्ताद् रत्नप्रभापृथिवीचरमान्त एकोनाशीत्यां सहस्रेषु भवति, कथम् ? **रत्नप्रभा** हि अशीतिसहस्राधिकं योजनानां लक्षं बाहल्यतो भवति, तस्याश्चैकं समुद्रावगाहसहस्रं परिहृत्याधोलक्षप्रमाणावगाहो वलयामुखपातालकलशो भवति, ततस्तच्चरमान्तात् पृथिवीचरमान्तो यथोक्तान्तर एव भवति, एवमन्येऽपि त्रयो वाच्या इति ।

छट्ठीए इत्यादि, अस्य भावार्थः- षष्ठपृथिवी हि बाहल्यतो योजनानां लक्षं षोडश च सहस्राणि [१]भवति, घनोदधयस्तु यद्यपि सप्तापि प्रत्येकं विंशतिः सहस्राणि स्युस्तथाप्येतस्य ग्रन्थस्य मतेन षष्ठोऽसावेकविंशतिः संभाव्यते, तदेवं षष्ठपृथिवीबाहल्यार्द्धमष्टपञ्चाशत् घनोदधिप्रमाणं चैकविंशतिरित्येवमेकोनाशीतिर्भ[२]वति, ग्रन्थान्तरमतेन तु सर्वघनोदधीनां विंशतियोजनसहस्रबाहल्यत्वात् पञ्चमीमाश्रित्येदं सूत्रमवसेयम्, यतस्तद्बाहल्यमष्टादशोत्तरं लक्षमुक्तम्, यत आह–

[३]**पढमाऽसीइ सहस्सा १ बत्तीसा २ अट्ठवीस ३ वीसा य ४ ।**
अट्ठार ५ सोल ६ अट्ठ य ७ सहस्स लक्खोवरिं कुज्जा ॥ [बृहत्सं० २४१] इति ।

अथवा षष्ठ्याः सहस्राधिकोऽपि मध्यभागो मध्यभागो विवक्षितः, एवमर्थसूचकत्वाद्बहुशब्दस्येति । तथा जम्बूद्वीपस्य जगत्याश्चत्वारि द्वाराणि **विजय-वेजयन्त-जयन्ता-ऽपराजिता**भिधानानि चतुश्चतुर्योजनविष्कम्भाणि गव्यूतपृथुलद्वार-

१. **भवंति** जे२ खं० ॥ २. °**वतीति** खं० ॥ ३. ''अत्र प्राकृतत्वात् **प्रथमा**शब्दात् परत्र विभक्तेर्लोपः, प्रथमायां घर्माभिधायां पृथिव्यामुच्चैस्त्वपरिमाणं परिभावयन्नशीतिसहस्राणि लक्षस्योपरि कुर्यात् । किमुक्तं भवति ? प्रथमाया रत्नप्रभायाः पृथीव्या अशीतियोजनसहस्राधिको योजनलक्षो बाहल्यमिति । एवं द्वितीयादिष्वपि पृथिवीषु बाहल्यपरिभावने द्वात्रिंशदादीनि योजनसहस्राणि लक्षस्योपरि कुर्यात् । अत्राप्ययं भावार्थः- द्वितीयस्यां पृथिव्यां विंशतियोजनसहस्राधिकः। पञ्चम्यामष्टादशयोजनसहस्राधिकः । षष्ठ्यां षोडशयोजनसहस्राधिकः । सप्तम्यामष्टयोजनसहस्राधिक इति । योजनं चेह प्रमाणाङ्गुलनिष्पन्नं द्रष्टव्यम् । रत्नप्रभायां च पृथिव्यामशीतियोजनसहस्राधिको लक्षः एवम्- षोडशसहस्रप्रमाणं प्रथमं खरकाण्डम्, द्वितीयं पङ्कबहुलं काण्डं चतुरशीतियोजनसहस्रमानम्, तृतीयमशीतियोजनसहस्रप्रमाणं जलबहुलं काण्डमिति । शेषास्तु पृथिव्यः सर्वा अपि पृथिवीस्वरूपाः, केवलं शर्कराप्रभा शर्कराबहुला वालुकाप्रभा वालुकाबहुलेत्येवं नामानुसारतो विशेषस्वरूपं परिभावनीयम् ॥'' इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरिसूरि**विरचितायां टीकायाम् ॥

शाखानि क्रमेण पूर्वादिषु दिक्षु भवन्ति, तेषां च **द्वारस्य च द्वारस्य चा**न्योन्यमित्यर्थः, **एस णं** ति एतदेकोनाशीतिर्योजनसहस्राणि सातिरेकाणीत्येवंलक्षणम**बाधया** व्यवधानेन व्यवधानरूपमित्यर्थोऽ**न्तरं प्रज्ञप्तम्**, कथम् ?, **जम्बूद्वीप**परिधेः[1] [यो०] ३१६२२७, गा०३, धनुषां १२८, अङ्गुल १३ सार्ध इत्येवंलक्षणस्यापकर्षितद्वार-द्वारशाखाविष्कम्भस्य[2] चतुर्विभक्तस्यैवंफलत्वादिति ॥७९॥

[सू० ८०] **सेज्जंसे णं अरहा असीतिं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।**

तिविट्ठू णं वासुदेवे असीतिं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

अयले णं बलदेवे असीतिं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

तिविट्ठू णं वासुदेवे असीतिं वाससतसहस्साइं महाराया होत्था ।

आउबहुले णं कंडे असीतिं जोयणसहस्साइं बाहल्लेणं पण्णत्ते ।

ईसाणस्स णं देविंदस्स देवरण्णो असीतिं सामाणियसाहस्सीतो पण्णत्तातो।

जंबुद्दीवे णं दीवे असीउत्तरं जोयणसतं ओगाहेत्ता सूरिए उत्तरकट्ठोवगते पढमं उदयं करेती ।

[टी०] अथाशीतितमस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, **श्रेयांसः** एकादशो जिनः । **त्रिपृष्ठः श्रेयांसजिन**कालभावी प्रथमवासुदेवः, **अचलः** प्रथमबलदेवः, तथा त्रिपृष्ठवासुदेवस्य चतुरशीतिर्वर्षलक्षाणि सर्वायुरिति, चत्वारि लक्षाणि कुमारत्वे शेषं तु महाराज्ये इति। **आउबहु** इत्यादि, किल **रत्नप्रभाया** अशीत्युत्तरयोजनलक्षबाहल्यायास्त्रीणि काण्डानि भवन्ति, तत्र प्रथमं रत्नकाण्डं षोडशविधरत्नमयं षोडशसहस्रबाहल्यं द्वितीयं पङ्ककाण्डं चतुरशीतिसहस्रमानं तृतीयमब्बहुलकाण्डमशीतिर्योजनसहस्राणीति **जंबुद्दीवे ण**मित्यादि, **ओगाहित्त** त्ति प्रविश्य **उत्तरकट्ठोवगय** त्ति **उत्तरां काष्ठां** दिश**मुपगतः उत्तरकाष्ठोपगतः प्रथममुदयं करोति**, सर्वाभ्यन्तरमण्डले उदेतीत्यर्थः ॥८०॥

[सू० ८१] **नवनवमिया णं भिक्खुपडिमा एक्कासीतिए रातिंदिएहिं चउहि य पंचुत्तरेहिं भिक्खासतेहिं अहासुत्तं जाव आराहिता** [**यावि भवति**] **।**

कुंथुस्स णं अरहतो एक्कासीतिं मणपज्जवणाणिसया होत्था ।

---

१. °परिधिः जे२ हे२ ॥ २. °द्वारशाखा° जे१ खं० ॥

वियाहपण्णत्तीए एक्कासीतिं महाजुम्मसया पण्णत्ता ।

[टी०] अथैकाशीतिस्थानके किञ्चिदुच्यते, **नवनवमिके**ति नव नवमानि दिनानि यस्यां सा **नवनवमिका**, भवन्ति च नवसु नवकेषु नव नवमदिनानि, तस्यां च भिक्षुप्रतिमायामेकाशीतिरात्रिंदिवानि भवन्त्येव, नवानां नवकानामेकाशीतिरूपत्वात्, तथा प्रथमे नवके प्रतिदिनमेकैका भिक्षा, एवमेकोत्तरया वृद्ध्या नवमे नवके नव नवेति सर्वासां पिण्डने चत्वारि पञ्चोत्तराणि भिक्षाशतानि भवन्तीत्यत उक्तं **चउहि ये**त्यादि, इह च **भिक्षाशब्देन** दत्तिरभिप्रेता, **अहासुत्तं** ति **यथासूत्रं** सूत्रानतिक्रमेण **जाव** त्ति करणाद् 'यथाकल्पं यथामार्गं यथातत्त्वं सम्यक्कायेन स्पृष्टा पालिता शोभिता तीरिता कीर्त्तिता आज्ञयाऽऽराधिता' इति द्रष्टव्यम् । **वियाहपन्नत्तीए**[1] त्ति **व्याख्या-प्रज्ञप्त्यामेकाशीतिर्महायुग्मशतानि प्रज्ञप्तानि**, इह **शत**शब्देनाध्ययनान्युच्यन्ते, तानि कृतयुग्मादिलक्षणराशिविशेषविचाररूपाणि [2]अवान्तराध्ययनस्वभावानि तदवगमावगम्यानीति ॥८१॥

[सू० ८२] **जंबुद्दीवे दीवे बासीतं मंडलसतं जं सूरिए दुक्खुत्तो संकमित्ता णं चारं चरति, तंजहा– निक्खममाणे य पविसमाणे य ।**

समणे भगवं महावीरे बासीतीए रातिंदिएहिं वीतिक्कंतेहिं गब्भातो गब्भं साहरिते ।

महाहिमवंतस्स णं वासहरपव्वयस्स अवरिल्लाओ चरिमंताओ सोगंधियस्स कंडस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं बासीइं जोयणसयाइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। एवं रुप्पिस्स वि ।

[टी०] अथ द्व्यशीतिस्थानके किमपि लिख्यते, तत्र **जम्बूद्वीपे द्व्यशीतं** द्व्यशीत्यधिकं **मण्डलशतं** सूर्यस्य मार्गशतं 'तद् भवति' इति वाक्यशेषः, किंभूतम् ?

१. **भगवतीसूत्रे** ३५ तमे शतके द्वादश एकेन्द्रियमहायुग्मशतानि, ३६ तमे शतके द्वादश द्वीन्द्रियमहायुग्मशतानि, ३७ तमे शतके द्वादश त्रीन्द्रियमहायुग्मशतानि, ३८ तमे शतके द्वादश चतुरिन्द्रियमहायुग्मशतानि, ३९ तमे शतके द्वादश असंज्ञिपञ्चेन्द्रियमहायुग्मशतानि, ४० तमे शतके एकविंशतिः संज्ञिपञ्चेन्द्रियमहायुग्मशतानि सर्वसंख्यया १२+१२+१२+१२+१२+२१=८१ महायुग्मशतानि । एतेषु यद् वर्णितं तत् तत्रैव द्रष्टव्यं जिज्ञासुभिः ॥ २. **अपांतरा°** जे२ हे१,२ ॥

यत् सूर्यो द्विकृत्वो द्वौ वारौ **सङ्क्रम्य** प्रविश्य **चारं चरति**, तद्यथा- निष्क्रामंश्च **जम्बूद्वीपात्** प्रविशंश्च **जम्बूद्वीप** एवेति, अयमत्र भावार्थः- किल चतुरशीत्यधिकं सूर्यमण्डलशतं भवति, तत्र सर्वाभ्यन्तर[1]-सर्वबाह्ये सकृदेव सङ्क्रामति शेषाणि तु द्वौ वाराविति, इह च द्व्यशीतिविवक्षयैवेदं द्व्यशीतिस्थानकेऽधीतमिति भावनीयम्, यद्यपि च **जम्बूद्वीपे** पञ्चषष्टिरेव मण्डलानां भवति तथापि जम्बूद्वीपकसूर्यचारविषयत्वाच्छेषाण्यपि जम्बूद्वीपेन विशेषितानीति ।

समणे इत्यादि आषाढशुक्लषष्ठ्या आरभ्य **द्व्यशीत्यां रात्रिंदिवेष्वतिक्रान्तेषु** त्र्यशीतितमे वर्त्तमाने, अश्वयुजः कृष्णत्रयोदश्यामित्यर्थः, **गर्भात्** गर्भाशयाद् **देवानन्दा**ब्राह्मणीकुक्षित इत्यर्थः **गर्भं त्रिशिला**भिधानक्षत्रियाकुक्षिं **संहृतो** नीतो देवेन्द्रवचनकारिणा **हरिनैगमेष्य**[2]भिधानदेवेनेति, इदं च सूत्रं द्व्यशीतिं रात्रिंदिवान्यधिकृत्य द्व्यशीतिस्थानकेऽधीयते, त्र्यशीतितमं रात्रिंदिवमाश्रित्य तु त्र्यशीतिस्थानके इति ।

महाहिमवंतस्सेत्यादि **महाहिमवतो** द्वितीयवर्षधरपर्वतस्य योजनशतद्वयोच्छ्रितस्य **अवरिल्लाओ** त्ति उपरिमाच्चरमान्तात्[3] सौगन्धिककाण्डस्याधस्तनश्चरमान्तो द्व्यशीतियो(र्यो?)जनशतानि, कथम् ? **रत्नप्रभापृथिव्यां** हि त्रीणि काण्डानि खरकाण्डं पङ्ककाण्डमब्बहुलकाण्डं चेति, तत्र प्रथमं काण्डं षोडशविधम्, तद्यथा रत्नकाण्डम् १, वज्रकाण्डम् २, एवं वैडूर्य ३ लोहिताक्ष ४ मसारगल्ल ५ हंसगर्भ ६ पुलक ७ सौगन्धिक ८ ज्योतीरस ९ अञ्जन १० अञ्जनपुलक ११ रजत १२ जातरूप १३ अङ्क १४ स्फटिक १५ रिष्टकाण्डं चेति १६, एतानि च प्रत्येकं सहस्रप्रमाणानि, ततश्च सौगन्धिककाण्डस्याष्टमत्वादशीतिः शतानि द्वे च शते महाहिमवदुच्छ्रय इत्येवं द्व्यशीतिः शतानि इति, एवं **रुक्मिणो**ऽपि पञ्चमवर्षधरस्य वाच्यम्, महाहिमवत्समानोच्छ्रायत्वात्तस्येति ॥८२॥

[सू० ८३] समणे भगवं महावीरे बासीतीए रातिंदिएहिं वीतिक्कंतेहिं तेयासीइमे रातिंदिए वट्टमाणे गब्भाओ गब्भं साहरिते ।

---

१. द्वितीयाद्विवचनमेतत् ॥ २. हरिनिग॰ खं॰ । हरिणेगमे॰ हे२ ॥ ३. ॰च्चरिमा॰ हे१,२ विना ॥

सीतलस्स णं अरहतो तेसीति गणा तेसीति गणधरा होत्था ।

थेरे णं मंडियपुत्ते तेसीति वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

उसभे णं अरहा कोसलिए तेसीतिं पुव्वसतसहस्साइं अगारवासमज्झावसित्ता मुंडे भवित्ता णं जाव पव्वइते ।

भरहे णं राया चाउरंतचक्कवट्टी तेसीतिं पुव्वसतसहस्साइं अगारवासमज्झावसित्ता जिणे जाते केवली सव्वण्णू सव्वभावदरिसी ।

[टी०] अथ त्र्यशीतितमस्थानके किमपि लिख्यते, इह **शीतल**जिनस्य[1] त्र्यशीतिर्गणास्त्र्यशीतिर्गणधरा उक्ताः, **आवश्यके**[2] त्वेकाशीतिरिति मतान्तरमिदमिति[3]। तथा **स्थविरो मण्डिकपुत्रो महावीरस्य** षष्ठो गणधरः तस्य च त्र्यशीतिर्वर्षाणि सर्वायुः, कथम् ?, त्रिपञ्चाशद् गृहस्थपर्याये, चतुर्दश छद्मस्थपर्याये, षोडश केवलित्वे इत्येवं त्र्यशीतिरिति । तथा **कोसलिए** त्ति **कोशलदेशे**[4] भवः कौशलिकः । **तेसीइं** ति विंशतिः पूर्वलक्षाणि कुमारत्वे, त्रिषष्टिः राज्ये इत्येवं त्र्यशीतिः । तथा **भरत**श्चक्रवर्त्ती सप्तसप्ततिः पूर्वलक्षाणि कुमारत्वे, षट्[5] चक्रवर्त्तित्वे, इत्येवं **त्र्यशीतिमगारवासमध्युष्य जिनो जातः** राज्यावस्थस्यैव रागादिक्षयात् **केवली** संपूर्णा-ऽसहाय-विशुद्धज्ञानादित्रययोगात्, **सर्वज्ञो** विशेषबोधात्, **सर्वभावदर्शी** सामान्यबोधात्, ततः पूर्वलक्षं प्रव्रज्याग्रहणपूर्वकं केवलित्वेन विहृत्य सिद्ध इति ॥८३॥

[सू० ८४] **चउरासीतिं निरयावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।**

उसभे णं अरहा कोसलिए चउरासीइं पुव्वसतसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे बुद्धे जाव [प्पहीणे] । एवं भरहे बाहुबलि बंभि सुंदरि ।

सेज्जंसे णं अरहा चउरासीइं वाससतसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे जाव प्पहीणे ।

---

१. °**स्य त्र्यशीतिर्गणधरा उक्ता** खं० हे१ ॥ २. दृश्यता पृ० १४० टि० ३ ॥ ३. °**न्तरमिति** खं० जे१ हे२ ॥ ४. **कोशलादेशे** जे२ हे१ ॥ ५. **षट् च चक्र**° जे२ ॥

तिविट्ठू णं वासुदेवे चउरासीइं वाससयसहस्साइं परमाउयं पालयित्ता अप्पतिट्ठाणे नरए नेरइयत्ताते उववन्ने ।

सक्कस्स णं देविंदस्स देवरण्णो चउरासीतिं सामाणियसाहस्सीतो पण्णत्तातो।

सव्वे वि णं बाहिरया मंदरा चउरासीतिं चउरासीतिं जोयणसहस्साइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि णं अंजणगपव्वया चउरासीतिं चउरासीतिं जोयणसहस्साइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

हरिवस्स-रम्मयवासियाणं जीवाणं धणुपट्ठा चउरासीतिं चउरासीतिं जोयणसहस्साइं सोलस जोयणाइं चत्तारि य भागा जोयणस्स परिक्खेवेणं पण्णत्ता ।

पंकबहुलस्स णं कंडस्स उवरिल्लातो चरिमंतातो हेट्ठिले चरिमंते एस णं चउरासीतिं जोयणसहस्साइं अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ।

वियाहपण्णत्तीए णं भगवतीए चउरासीतिं पदसहस्सा पदग्गेणं पण्णत्ता।

चउरासीतिं नागकुमारावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

चउरासीतिं पइण्णगसहस्सा पण्णत्ता ।

चउरासीतिं जोणिप्पमुहसतसहस्सा पण्णत्ता ।

पुव्वाइयाणं सीसपहेलियपज्जवसाणाणं सट्ठाणट्ठाणंतराणं चउरासीतीए गुणकारे पण्णत्ते ।

उसभस्स णं अरहतो कोसलियस्स चउरासीतिं गणा चउरासीतिं गणधरा होत्था ।

उसभस्स णं अरहतो कोसलियस्स उसभसेणपामोक्खातो चउरासीतिं समणसाहस्सीओ होत्था ।

चउरासीतिं विमाणावाससयसहस्सा सत्ताणउतिं च सहस्सा तेवीसं च विमाणा भवंतीति मक्खाया ।

[टी०] चतुरशीतिस्थानके किमपि लिख्यते, चतुरशीतिर्नरकलक्षाण्यमुना विभागेन–

[1]तीसा य १ पण्णवीसा २ पण्णरस ३ दसेव ४ तिण्णि य ५ हवंति ।
पंचूणसयसहस्सं ६ पंचेव ७ अणुत्तरा निरया ॥ [बृहत्सं० २५५] इति ।

श्रेयांसः एकादशस्तीर्थकरः एकविंशतिर्वर्षलक्षाणि कुमारत्वे तावन्त्येव प्रव्रज्यायां द्विचत्वारिंशद्राज्ये इत्येवं चतुरशीतिमायुः पालयित्वा सिद्धः । तथा **तिविट्ठु** त्ति प्रथमवासुदेवः **श्रेयांस**जिनकालभावीति । **अप्रतिष्ठानो नरकः** सप्तमपृथिव्यां पञ्चानां मध्यम इति । तथा **सामाणिय** त्ति समानर्द्धयः । तथा **[2]बाहिरय** त्ति जम्बूद्वीपकमेरुव्यतिरिक्ताश्चत्वारो **मन्दराश्चतुरशीतिः** सहस्राणि प्रज्ञप्ताः **अंजणगपव्वय** त्ति **जम्बूद्वीपाद**ष्टमे **नन्दीश्वरा**भिधाने द्वीपे चक्रवालविष्कम्भमध्यभागे पूर्वादिषु दिक्षु चत्वारोऽञ्जनरत्नमया **[3]अञ्जनकपर्वताः** । **हरिवासे**त्यादि, **चत्तारि य भागा जोयणस्स** त्ति एकोनविं[4]शतिभागाः, इहार्थे गाथार्द्धम्–

धणुपट्ठ कल[5]चउक्कं चुलसीइ सहस्स सोलहिय ॥ [*बृहत्क्षेत्र० ५९] त्ति [८४०१६ ४/१९]।

तथा पङ्कबहुलं काण्डं द्वितीयं तस्य च बाहल्यं चतुरशीतिः सहस्राणीति यथोक्तसूत्रार्थ इति । तथा **व्याख्याप्रज्ञप्त्यां भगवत्यां चतुरशीतिः पदसहस्राणि पदाग्रेण** पदपरिमाणेन, इह च यत्रार्थोपलब्धिस्तत् पदम्, मतान्तरेण तु अष्टादशपदसहस्रपरिमाणत्वा**दाचारस्य** [6]एतद्द्विगुणद्विगुणत्वाच्च शेषाङ्गानां [7]**व्याख्याप्रज्ञप्तिर्द्वे** लक्षे अष्टाशीतिश्च सहस्राणि पदानां भवतीति । तथा चतुरशीति**र्नागकुमारा**वासलक्षाणि चतुश्चत्वारिंशतो दक्षिणायां चत्वारिंशतश्चोत्तरायां भावादिति । चतुरशीति**र्योनयो** जीवोत्पत्तिस्थानानि, ता एव **प्रमुखानि** द्वाराणि

---

१. ''प्रथमायां रत्नप्रभायां पृथिव्यां त्रिंशच्छतसहस्राणि नरकावासानां ३०००००० । द्वितीयस्यां पञ्चविंशतिः शतसहस्राणि २५००००० । तृतीयस्यां पञ्चदश १५००००० । चतुर्थ्यां दश १०००००० । पञ्चम्यां त्रीणि ३००००० । षष्ठ्यां पञ्चोनं शतसहस्रं ९९९९५ । सप्तम्यां पञ्चैव ५ अनुत्तराः सर्वाधोवर्तिनो नरकावासाः । ते चैवम्- पूर्वस्यां दिशि कालनामा नरकावासोऽपरस्यां दिशि महाकालो दक्षिणस्यां रोरुक उत्तरस्यां महारोरुको मध्येऽप्रतिष्ठानः ॥२५५॥'' इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरिसूरि**विरचितायां वृत्तौ ॥ २. **बाहरिय** जे२ ॥ ३. **अंजनपर्वताः** जे१ खं० ॥ ४. °**तिर्भागाः** खं० ॥ ५. **चउक्क चुलसीइं** जे२ । **चउक्कं चुलसीई** खं० जे१ ॥ ६. **एतद्द्विगुणत्वाच्च शेषा**° जे१ खं० ॥ ७. **समवायाङ्गे भगवतीसूत्र**वर्णनेऽपि 'चतुरासीति पयसहस्साइं पयग्गेणं' इत्येवाभिहितम्, किन्तु **नन्दीसूत्रे भगवतीसूत्र**वर्णने 'दो लक्खा अट्ठासीतिं पयसहस्साइं पयग्गेणं' इत्यभिहितम् ॥

योनिप्रमुखानि, तेषां **शतसहस्राणि** लक्षाणि **योनिप्रमुखशतसहस्राणि प्रज्ञप्तानि**, कथम् ?

पुढवि-दग-अगणि-मारुय एक्केक्के सत्त जोणिलक्खाओ ।
वण पत्तेय अणंते दस [१]चोद्दस जोणिलक्खाओ ॥
विगलिंदिएसु दो दो चउरो चउरो य नारय-सुरेसु ।
तिरिएसु होंति चउरो [२]चोद्दस लक्खा य मणुएसु ॥ [*बृहत्सं० ३५१-३५२] त्ति ।

इह च जीवोत्पत्तिस्थानानामसंख्येयत्वेऽपि समानवर्ण-गन्ध-रस-स्पर्शानां तेषामेकत्वविवक्षणान्न यथोक्तयोनिसंख्याव्यभिचारो मन्तव्य इति । **पुव्वाइयाण**मित्यादि, पूर्वमादिर्येषां तानि **पूर्वादिकानि**, तेषाम्, शीर्षप्रहेलिका पर्यवसाने येषां तानि **शीर्षप्रहेलिकापर्यवसानानि**, तेषाम्, **स्वस्थानात्** पूर्वपूर्वस्थानादुत्तरोत्तरस्य संख्यास्थानस्योत्पत्तिस्थानात् संख्याविशेषलक्षणात् गुणनीयादित्यर्थः **स्थानान्तराणि** अनन्तरस्थानान्यव्यवहितसंख्याविशेषा गुणकारनिष्पन्ना येषु तानि **स्वस्थानस्थानान्तराणि** क्रमव्यवस्थितसंख्यास्थानविशेषा इत्यर्थः, अथवा **स्वस्थानानि** पूर्वस्थानानि **स्थानान्तराणि** च अनन्तरस्थानानि स्वस्थान-स्थानान्तराणि, अथवा **स्वस्थानात्** प्रथमस्थानात् पूर्वाङ्गलक्षणात् **स्थानान्तराणि** विलक्षणस्थानानि **स्वस्थानस्थानान्तराणि**, तेषाम्, **चतुरशीत्या** लक्षैरिति शेषः, **गुणकारः** अभ्यासराशिः **प्रज्ञप्तः**, तथाहि - किल चतुरशीत्या लक्षैः पूर्वाङ्गं भवतीति स्वस्थानम्, तदेव चतुरशीत्या लक्षैर्गुणितं पूर्वमुच्यते, तच्च स्थानान्तरमिति, एवं पूर्वं स्वस्थानं तदेव चतुरशीत्या लक्षैर्गुणितमनन्तरस्थानं **त्रुटिताङ्गाभिधानं** भवति, [३]इह सङ्ग्रहगाथे–

पुव्वतुडियाडडावव[४]हूहुय तह उप्पले य पउमे य ।
नलिणत्थनिउर अउए नउए पउए य नायव्वे ॥ [ ]
चूलियसीसपहेलिय चोद्दस नामा उ अंगसंजुत्ता ।
अट्ठावीसं ठाणा चउणउयं होइ ठाणसयं ॥ [ ] ति ।

अभिलापश्चैषाम् - पूर्वाङ्गं पूर्वं त्रुटिताङ्गं त्रुटितमित्यादिरिति ।

चउरासीतिमित्यादि, इह विभागोऽयम्–

१. चउदस जे१ खं० ॥ २. चउदस जे१ ॥ ३. अत्र संग्रह° जे१ खं० ॥ ४. हुहुय जे२ हे१ ॥

बत्तीस ३२ अट्ठवीसा २८ बारस १२ अट्ठ ८ चउरो ४ सयसहस्सा ।
आरेण बंभलोगा विमाणसंखा भवे एसा ॥
पंचास ५० चत्त ४ छच्चेव सहस्सा[1] लंत ६ सुक्क सहस्सारे[2] ।
सय चउरो आणयपाणएसु तिण्णारणच्चुयओ ॥
एक्कारसुत्तरं हेट्ठिमेसु १११ सत्तुत्तरं च मज्झिमए १०७ ।
सयमेगं उवरिमए १०० पंचेव अणुत्तरविमाणा ॥ [बृहत्सं० ११७-११९] इति ।

भवंतीति मक्खाय त्ति एतानि विमानान्येवं भवन्ति इति हेतोराख्यातानि भगवता सर्वज्ञत्वात् सत्यवादित्वाच्चेति ॥८४॥

[सू० ८५] आयारस्स णं भगवतो सचूलियागस्स पंचासीतिं उद्देसणकाला पण्णत्ता ।

धायइसंडस्स णं मंदरा पंचासीतिं जोयणसहस्साइं सव्वग्गेणं पण्णत्ता ।

रुयए णं मंडलियपव्वए पंचासीतिं जोयणसहस्साइं सव्वग्गेणं पण्णत्ते ।

नंदणवणस्स णं हेट्ठिल्लातो चरिमंतातो सोगंधियस्स कंडस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं पंचासीतिं जोयणसयाइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते ।

[टी०] अथ पञ्चाशीतिस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, तत्राऽऽ**चारस्य** प्रथमाङ्गस्य नवाध्ययनात्मकप्रथमश्रुतस्कन्धरूपस्य **सचूलियागस्स** त्ति द्वितीये हि तस्य श्रुतस्कन्धे पञ्च चूलिकाः तासु च पञ्चमी **निशीथा**ख्येह न गृह्यते भिन्नप्रस्थानरूपत्वात्तस्यास्तदन्याश्चतस्रः, तासु च प्रथम-द्वितीये सप्तसप्ताध्ययनात्मिके तृतीय-चतुर्थ्यावेकैकाध्ययनात्मिके तदेवं सह चूलिकाभिर्वर्त्तत इति **सचूलिकाक**स्तस्य पञ्चाशीतिरुद्देशनकाला भवन्तीति, उद्देशकानामेतावत्संख्यत्वात्, तथाहि– प्रथमश्रुतस्कन्धे नवस्वध्ययनेषु क्रमेण सप्त षट् चत्वारश्चत्वारः षट् पञ्च अष्ट चत्वारः सप्त चेति, द्वितीयश्रुतस्कन्धे तु प्रथमचूलायां सप्तस्वध्ययनेषु क्रमेण एकादश त्रयस्त्रयः चतुर्षु द्वौ द्वौ द्वितीयायां सप्तैकसराणि अध्ययनान्येवं तृतीयैकाध्ययनात्मिका एवं चतुर्थ्यपीति सर्वमीलने पञ्चाशीतिरिति ।

---

१. सहसा खं० । सहस जे१,२ ॥ २. सहसारे जे२॥

तथा धातकीखण्डमन्दरौ सहस्रमवगाढौ चतुरशीतिः सहस्राण्युच्छ्रिताविति पञ्चाशीतिर्योजनसहस्राणि सर्वाग्रेण भवतः, पुष्करार्द्धमन्दरावप्येवम्, नवरं सूत्रे नाभिहितौ विचित्रत्वात् सूत्रगतेरिति । तथा **रुचको** रुचकाभिधानस्त्रयोदशद्वीपान्तर्गतः प्राकाराकृती रुचकद्वीपविभागकारितया स्थितः, अत एव **माण्डलिकपर्वतो** मण्डलेन व्यवस्थितत्वात्, स च सहस्रमवगाढश्चतुरशीतिरुच्छ्रित इति **पञ्चाशीतिः सहस्राणि सर्वाग्रेणे**ति ।

तथा **नन्दनवनस्य मेरोः** पञ्चयोजनशतोच्छ्रितायां प्रथममेखलायां व्यवस्थितस्याऽधस्त्याच्चरमान्तात् **सौगन्धिककाण्डस्य** रत्नप्रभापृथिव्याः खरकाण्डाभिधानप्रथमकाण्डस्यावान्तरकाण्डभूतस्याष्टमस्य **सौगन्धिका**भिधानरत्नमयस्य **सौगन्धिक**काण्डस्याधस्त्यश्चरमान्तः पञ्चाशीतिर्योजनशतान्यन्तरमाश्रित्य भवति, कथम् ? पञ्च शतानि **मेरोः** सम्बन्धीनि प्रत्येकं च सहस्रप्रमाणत्वादवान्तर-काण्डानामष्टमकाण्डमशीतिः शतानीति ॥८५॥

[सू० ८६] सुविहिस्स णं पुप्फदंतस्स अरहओ छलसीतिं गणा छलसीतिं गणहरा होत्था ।

सुपासस्स णं अरहतो छलसीतिं वाइसया होत्था ।

दोच्चाए णं पुढवीए बहुमज्झदेसभागाओ दोच्चस्स घणोदहिस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं छलसीतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

[टी०] अथ षडशीतिस्थानके किमपि लिख्यते, तत्र **सुविधेः** नवमजिनस्येह षडशीतिर्गणा गणधराश्चोक्ता **आवश्यके**[१] तु अष्टाशीतिरिति मतान्तरमिदम् । तथा **द्वितीया पृथिवी शर्कराप्रभा**, सा च बाहल्यतो द्वात्रिंशत्सहस्राधिकलक्षमाना तदर्द्धे षट्षष्टिः सहस्राणि घनोदधिश्च तदधोवर्त्ती द्वितीयपृथिवीसम्बन्धित्वात् द्वितीयो विंशतिः सहस्राणि बाहल्यत इति षडशीतिर्यथोक्तमन्तरं भवतीति ॥८६॥

[सू० ८७] मंदरस्स णं पव्वतस्स पुरत्थिमिल्लातो चरिमंतातो गोथुभस्स आवासपव्वयस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं सत्तासीतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । मंदरस्स [णं पव्वतस्स] दक्खिणिल्लातो चरिमंतातो

१. दृश्यतां पृ० १४० टि० ३ ॥

दओभासस्स आवासपव्वतस्स उत्तरिल्ले चरिमंते एस णं सत्तासीतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं मंदरस्स [णं पव्वतस्स] पच्चत्थिमिल्लातो चरिमंतातो संखस्स आवासपव्वतस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते एवं चेव । एवं मंदरस्स [णं पव्वतस्स] उत्तरिल्लातो चरिमंतातो दगसीमस्स आवासपव्वतस्स दाहिणिल्ले चरिमंते एस णं सत्तासीतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते।

छण्हं कम्मपगडीणं आतिमउवरिल्लवज्जाणं सत्तासीतिं उत्तरपगडीतो पण्णत्तातो ।

महाहिमवंतकूडस्स णं उवरिल्लातो चरिमंतातो सोगंधियस्स कंडस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं सत्तासीतिं जोयणसयाइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते । एवं रुप्पीकूडस्स वि ।

[टी०] अथ सप्ताशीतिस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, **मंदरे**त्यादि, **मेरोः** पौरस्त्यान्तात् जम्बूद्वीपान्तः पञ्चचत्वारिंशत् सहस्राणि द्विचत्वारिंशच्च सहस्राणि लवणजलधिमवगाह्य गोस्तुभो वेलन्धरनागराजावासपर्वतः प्राच्यां दिशि भवति, एवं सूत्रोक्तमन्तरं भवतीति, एवमन्येषां त्रयाणामन्तरमवसेयमिति ।

तथा षण्णां कर्म्मप्रकृतीना**मादिमोपरिमवर्जानां** ज्ञानावरणान्तरायरहितानां दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीया-ऽऽयुष्कनाम-गोत्रसंज्ञितानामित्यर्थः **सप्ताशीतिरुत्तर-प्रकृतयः प्रज्ञप्ताः**, कथम् ?, दर्शनावरणादीनां षण्णां क्रमेण नव द्वे अष्टाविंशतिः चतस्रो द्विचत्वारिंशद् द्वे चेत्येतासां मीलने सूत्रोक्तसंख्या स्यादिति ।

महाहिमवंतेत्यादि, महाहिमवति द्वितीयवर्षधरपर्वते अष्टौ सिद्धायतनकूट-महाहिमवत्कूटादीनि कूटानि भवन्ति, तानि च पञ्चशतोच्छ्रितानि, तत्र महाहिमवत्कूटस्य पञ्च शतानि द्वे शते महाहिमवद्वर्षधरोच्छ्रयस्य अशीतिश्च शतानि प्रत्येकं सहस्रमानानामष्टानां सौगन्धिककाण्डावसानानां रत्नप्रभाखरकाण्डावान्तरकाण्डानामित्येवं मीलिते सप्ताशीतिरन्तरं भवतीति । **एवं रुप्पिकूडस्स वि** त्ति रुक्मिणि पञ्चमवर्षधरे यद् द्वितीयं रुक्मिकूटाभिधानं कूटं तस्याप्यन्तरं महाहिमवत्कूटस्येव वाच्यम्,

समानप्रमाणत्वाद् द्वयोरपीति ॥८७॥

[सू० ८८] एगमेगस्स णं चंदिमसूरियस्स अट्ठासीतिं अट्ठासीतिं महग्गहा परिवारो पण्णत्तो ।

दिट्ठिवायस्स णं अट्ठासीतिं सुत्ताइं पण्णत्ताइं, तंजहा– उज्जुसुयं, परिणतापरिणतं, एवं अट्ठासीतिं सुत्ताणि भाणियव्वाणि जहा णंदीए ।

मंदरस्स णं पव्वतस्स पुरत्थिमिल्लातो चरिमंतातो गोथुभस्स आवासपव्वतस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं अट्ठासीतिं जोयणसहस्साइं अबाधाते अंतरे पण्णत्ते। एवं चउसु वि दिसासु णातव्वं ।

बाहिराओ उत्तरातो णं कट्ठातो सूरिए पढमं छम्मासं अयमीणे चोयालीसइमे मंडलगते अट्ठासीति एकसट्ठिभागे मुहुत्तस्स दिवसखेत्तस्स णिवुड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिणिवुड्ढेत्ता सूरिए चारं चरतीति । दक्खिणकट्ठातो णं सूरिए दोच्चं छम्मासं अयमीणे चोयालीसतिमे मंडलगते अट्ठासीतिं एगसट्ठिभागे मुहुत्तस्स रयणिखेत्तस्स णिवुड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिणिवुड्ढेत्ता णं सूरिए चारं चरति ।

[टी०] अष्टाशीतिस्थानके किञ्चिद् विव्रियते, **एकैकस्या**ऽसंख्यातानामपि प्रत्येकमित्यर्थः, चन्द्रमाश्च सूर्यश्च[1] **चन्द्रमःसूर्यम्**, तस्य, चन्द्र-सूर्ययुगलस्य इत्यर्थः, **अष्टाशीतिर्महाग्रहाः**, एते च यद्यपि चन्द्रस्यैव परिवारोऽन्यत्र श्रूयते तथापि सूर्यस्यापीन्द्रत्वादेत एव परिवारतयाऽवसेया इति । **दिट्ठिवाए**त्यादि, **दृष्टिवादस्य** द्वादशाङ्गस्य परिकर्म्म-सूत्र-पूर्वगत-प्रथमानुयोग-चूलिकाभेदेन पञ्चप्रकारस्य **सुत्ताइं** ति द्वितीयप्रकारभूतानि अष्टाशीतिर्भवन्ति[2], **जहा नंदीए** त्ति अतिदेशतः सूत्राणि दर्शितानि, तानि चाग्रे व्याख्यास्यामः ।

मंदरस्सेत्यादि, **मेरोः** पूर्वान्तात् जम्बूद्वीपस्य पञ्चचत्वारिंशद्योजनसहस्रमानत्वात् जम्बूद्वीपान्ताच्च द्विचत्वारिंशद्योजनसहस्रेषु गोस्तुभस्य व्यवस्थितत्वात् तस्य च

१. सूर्यश्चन्द्रमः° जे२ ॥ २. °र्भवति जे१,२ ॥

सहस्रविष्कम्भत्वाद् यथोक्तः सूत्रार्थो भवतीति, अनेनैव क्रमेण दक्षिणादिदिग्व्यवस्थितान् दकावभास-शङ्ख-दकसीमाख्यान् वेलन्धरनागराजनिवासपर्वतानाश्रित्य वाच्यमत एवाह– **एवं चउसु वि दिसासु नेयव्व**मिति ।

बाहिराओ णमित्यादि, **बाह्यायाः** सर्वाभ्यन्तरमण्डलरूपाया **उत्तरस्याः काष्ठायाः**, क्वचित्तु **बाहिराओ** त्ति न दृश्यते, **सूर्यः प्रथमं षण्मासं** दक्षिणायनलक्षणं दक्षिणायनादित्वात् संवत्सरस्य, **अयमीणे** त्ति **आयान्** आगच्छन् चतुश्चत्वारिंशत्तममण्डलगतोऽष्टाशीतिमेकषष्टिभागान्, **दिवसखेत्तस्स** त्ति दिवसस्यैव **निवुड्ढेत्त** त्ति निवर्ध्य हापयित्वा **रयणिखेत्तस्स** त्ति रजन्यास्तु **अभिवर्ध्य सूरिए चारं चरइ** त्ति भ्राम्यतीति, इह च भावनैवम्– प्रतिमण्डलं दिनस्य मुहूर्त्तैकषष्टिभागद्वय-हानेर्दक्षिणायनापेक्षया चतुश्चत्वारिंशत्तमे अष्टाशीतिर्भागा हीयन्ते, रात्रेस्तु त एव वर्द्धन्त इति, द्विः सूर्यग्रहणं चेह दिनरात्र्याश्रितवाक्यद्वयभेदकल्पनया न पुनरुक्तमवसेयमिति, इदं च सूत्रमष्टसप्ततिस्थानकसूत्रवद् भावनीयमिति । **दक्खिणाओ** इत्यादिसूत्रं पूर्वसूत्रवदवगन्तव्यम्, नवरमिह दिनवृद्धिः रात्रिहानिश्च भावनीयेति ॥८८॥

[सू० ८९] **उसभे णं अरहा कोसलिए इमीसे ओसप्पिणीए ततियाए समाए पच्छिमे भागे एकूणणउइए अद्धमासेहिं सेसेहिं कालगते वीतिक्कंते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।**

समणे भगवं महावीरे इमीसे ओसप्पिणीए चउत्थीए समाए पच्छिमे भागे एगूणनउतीए अद्धमासेहिं सेसेहिं कालगते जाव सव्वदुक्खप्पहीणे ।

हरिसेणे णं राया चाउरंतचक्कवट्टी एगूणनउई वाससयाइं महाराया होत्था।

संतिस्स णं अरहतो एगूणनउई अज्जासाहस्सीतो उक्कोसिया अज्जासंपदा होत्था ।

[टी०] अथैकोननवतिस्थानके किञ्चिद्विचार्यते, **तइयाए समाए** त्ति **सुषमादुष्षमा**भिधानाया **एकोननवत्यामर्द्धमासेषु** त्रिषु वर्षेषु अर्द्धनवसु च मासेषु 'सत्सु' इति गम्यते, **जाव** त्ति करणात् 'अंतगडे सिद्धे बुद्धे मुत्ते' त्ति दृश्यम् । **हरिषेणचक्रवर्त्ती** दशमस्तस्य च दश वर्षसहस्राणि सर्वायुस्तत्र च शतोनानि नव

सहस्राणि राज्यं शेषाण्येकादश [शतानि] कुमारत्व-माण्डलिकत्वा-ऽनगारत्वेषु अवसेयानि। इह **शान्तिजिन**स्यैकोननवतिरार्यिकासहस्राण्युक्तानि, [1]**आवश्यके** त्वेकषष्टिः सहस्राणि शतानि च षडभिधीयन्त इति मतान्तरमेतदिति ॥८९॥

[सू० ९०] **सीयले णं अरहा णउइं धणूइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।**

अजियस्स णं अरहओ णउइं गणा नउइं गणहरा होत्था । एवं संतिस्स वि ।

सयंभुस्स णं वासुदेवस्स णउतिं वासाइं विजए होत्था ।

सव्वेसि णं वट्टवेयड्ढपव्वयाणं उवरिल्लातो सिहरतलातो सोगंधियकंडस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं नउतिं जोयणसयाइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

[**टी०**] अथ नवतिस्थानके किञ्चिद् व्याख्यायते, तत्राऽ**जितनाथ**स्य **शान्तिनाथ**स्य चेह नवतिर्गणा गणधराश्चोक्ताः, [2]**आवश्यके** तु पञ्चनवतिर**जित**स्य षट्त्रिंशत्तु **शान्ते**रुक्ताः, तदिदमपि मतान्तरमिति। तथा **स्वयम्भूः** तृतीयवासुदेवः, तस्य नवतिर्वर्षाणि **विजयः** पृथिवीसाधनव्यापारः । **सव्वेसि ण**मित्यादि, सर्वेषां विंशतेरपि **वर्तुलवैताढ्यानां शब्दापाति**प्रभृतीनां योजनसहस्रोच्छ्रितत्वात् **सौगन्धिक-**काण्डचरमान्तस्य चाष्टसु सहस्रेषु व्यवस्थितत्वात् नवसु सहस्रेषु नवतेः शतानां भावात् सूत्रोक्तमन्तरमनवद्यमिति ॥९०॥

[सू० ९१] **एक्काणउइं परवेयावच्चकम्मपडिमातो पण्णत्तातो ।**

कालोयणे णं समुद्दे एक्काणउतिं जोयणसयसहस्साइं साहियाइं परिक्खेवेणं पण्णत्ते ।

कुंथुस्स णं अरहतो एक्काणउतिं आहोहियसता होत्था ।

---

१. ''अज्जासंगहमाणं उसभाईणं अओ वुच्छं ॥२५९॥ तिण्णेव य लक्खाइं १ तिण्णि य तीसा य २ तिण्णि छत्तीसा ३ । तीसा य छच्च ४ पंच य तीसा ५ चउरो अ वीसा अ ६ ॥२६०॥ चत्तारि य तीसाइं ७ तिण्णि य असिआइं ८ तिण्हमेत्तो अ । वीसुत्तरं ९ छलहियं १० तिसहस्सहिअं च लक्खं च ११ ॥२६१॥ लक्खं १२ अट्ठ सयाणि य १३ बावट्ठि सहस्स १४ चउसयसमग्गा १५ । एगट्ठी छच्च सया १६ सट्ठिसहस्सा सया छच्च १७ ॥२६२॥ सट्ठि १८ पणपण्ण १९ पण्णे २० गचत्त २१ चत्ता २२ तहट्ठतीसं च २३ । छत्तीसं च सहस्सा २४ अज्जाणं संगहो एसो ॥२६३॥'' - इति **आवश्यकनिर्युक्तौ** ॥ २. दृश्यतां पृ० १४० टि० ३ ॥

आउय-गोयवज्जाणं छण्हं कम्मपगडीणं एक्काणउतिं उत्तरपगडीओ पण्णत्ताओ ।

[टी०] अथैकनवतिस्थानके किञ्चिद्वितन्यते, तत्र **परेषाम्** आत्मव्यतिरिक्तानां **वैयावृत्यकर्म्माणि** भक्तपानादिभिरुपष्टम्भक्रियास्तद्विषयाः **प्रतिमाः** अभिग्रहविशेषाः **परवैयावृत्यकर्म्मप्रतिमाः**, एतानि च प्रतिमात्वेनाभिहितानि क्वचिदपि नोपलब्धानि, केवलं विनय-वैयावृत्यभेदा एते सन्ति, तथाहि– दर्शनगुणाधिकेषु सत्कारादिर्दशधा विनयः, आह च–

[१]सक्कार १ अब्भुट्ठाणे २ सम्माणा ३ ऽऽसणअभिग्गहो ४ तह य ।
आसणअणुप्पयाणं ५ किइकम्मं ६ अंजलिगहो य ७ ॥
इंतस्सणुगच्छणया ८ ठियस्स तह पज्जुवासणा भणिया ९ ।
गच्छंताणुव्वयणं १० एसो सुस्सूसणाविणओ ॥ [ ] त्ति ।

तत्र **सत्कारो** वन्दन-स्तवनादिः १, **अभ्युत्थानम्** आसनत्यागः २, **सन्मानो** वस्त्रादिपूजनम् ३, **आसनाभिग्रहः** तिष्ठत एवासनानयनपूर्वकमुपविशतात्रेति भणनमिति ४, **आसनानुप्रदानम्** आसनस्य स्थानात् स्थानान्तरसञ्चारणम् ५, **कृतिकर्म्मादीनि** प्रकटानि । तथा तीर्थकरादीनां पञ्चदशानां पदानामनाशातनादिपदचतुष्टयगुणितत्वे षष्टिविधोऽनाशातनाविनयो भवति, तथाहि–

तित्थयर १ धम्म २ आयरिय ३ वायगे ४ थेर ५ कुल ६ गणे ७ संघे ८ ।
सम्भोइय ९ किरियाए १० मइनाणाईण १५ य तहेव ॥ [ ]

अत्र भावना– तीर्थकराणामनाशातना, तीर्थकरप्रज्ञप्तस्य धर्म्मस्य अनाशातना, एवं सर्वत्र ।

कायव्वा पुण भत्ती बहुमाणो तह य वण्णवाओ य ।
अरहंतमाइयाणं केवलनाणावसाणाणं ॥ [ ] ति ।

तथौपचारिकविनयः सप्तधा, यदाह–

---

१. एता वक्ष्यमाणाश्च सर्वा अपि विनयसम्बद्धा गाथा **दशवैकालिक**स्य प्रथमेऽध्ययने **हरिभद्र**सूरिविरचितायां वृत्तावन्यत्र च समुद्धृताः सन्ति । विशेषतो जिज्ञासुभिः परिशिष्टे टिप्पनेषु द्रष्टव्यम् ॥

अब्भासच्छण १ छंदाणुवत्तणं २ कयपडिकीई तहय ३ ।
कारियनिमित्तकरणं ४ दुक्खत्तगवेसणा तहय ५ ॥
तह देसकालजाणण ६ सव्वत्थेसु तहय अणुमई भणिया ७ ।
उवयारिओ उ विणओ एसो भणिओ समासेणं ॥ [ ] ति,

अभ्यासासनम् उपचरणीयस्यान्तिकेऽवस्थानम्, **छन्दानुवर्त्तनम्** अभिप्रायानुवृत्तिः, **कृतप्रतिकृति**र्नाम प्रसन्ना आचार्याः सूत्रादि दास्यन्ति 'न नाम निर्ज्जरा' इति मन्यमानस्याहारादिदानम्, **कारितनिमित्तकरणं** सम्यक् [1]शास्त्रमध्यापितस्य विशेषेण विनये वर्त्तनं तदर्थानुष्ठानं च, शेषाणि प्रसिद्धानि, तथा वैयावृत्यं दशधा, यदाह–

आयरिय उवज्झाए थेर-तवस्सी-गिलाण-सेहाणं ।
साहम्मिय-कुल-गण-संघसंगयं तमिह कायव्वं ॥ [ ] ति,

तत्र प्रव्राजना १ दिगु २ द्देश ३ समुद्देश ४ वाचना ५ चार्य[2]भेदादाचार्यस्य च पञ्चविधत्वात्तदेवं चतुर्दशधेत्ये[3]कनवतिर्विनयभेदाः, एते एव अभिग्रहविषयीकृताः प्रतिमा उच्यन्त इति ।

तथा [4]**कालोयणे** त्ति **कालोद**समुद्रः, स चैकनवतिर्लक्षाणि साधिकानि परिक्षेपेण, आधिक्यं च सप्तत्या सहस्रैः षड्भिः शतैः पञ्चोत्तरैः सप्तदशभिर्धनुःशतैः पञ्चदशोत्तरैः सप्ताशीत्या चाङ्गुलैः साधिकैरिति । [5]**आहोहिय** त्ति नियतक्षेत्रविषयावधयः । **आयुर्गोत्रवर्ज्जानां षण्णा**मिति ज्ञानावरण-दर्शनावरण-वेदनीय-मोहनीय-नामाऽन्तरायाणां क्रमेण पञ्च-नव-द्व्यष्टाविंशति-द्विचत्वारिंशत्-पञ्चभेदानामिति ॥९१॥

[सू० ९२] बाणउइं पडिमातो पण्णत्ताओ ।

थेरे णं इंदभूती बाणउतिं वासाइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे बुद्धे [जाव प्पहीणे] ।

मंदरस्स णं पव्वतस्स बहुमज्झदेसभागातो गोथुभस्स आवासपव्वतस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं बाणउतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते। एवं चउण्ह वि आवासपव्वयाणं ।

---

१. **शास्त्रपदमपितस्य** खं० ॥ २. °**भेदाचार्य**° जे२ खंमू० ॥ ३. सत्कारादि १०, अनाशातनादि ६०, औपचारिक ७, वैयावृत्य १४ = ९१ ॥ ४. **कालायणे** जे१,२ हे१,२ ॥ ५. **अहो**° जे२ ॥

[टी०] अथ द्विनवतिस्थानके किमप्यभिधीयते, **द्विनवतिः प्रतिमाः** अभिग्रहविशेषाः, ताश्च *__दशाश्रुतस्कन्धनिर्युक्त्य__नुसारेण दर्श्यन्ते, तत्र किल पञ्च प्रतिमा उक्ताः, तद्यथा– समाधिप्रतिमा १, उपधानप्रतिमा २, विवेकप्रतिमा ३, प्रतिसंलीनताप्रतिमा ४, एकविहारप्रतिमा चेति ५ । तत्र समाधिप्रतिमा द्विविधा– श्रुतसमाधिप्रतिमा चारित्रसमाधिप्रतिमा च, दर्शनं ज्ञानान्तर्गतमिति न भिन्ना दर्शनप्रतिमा विवक्षिता, तत्र श्रुतसमाधिप्रतिमा द्विषष्टिभेदा, कथम् ?, **आचारे** प्रथमे श्रुतस्कन्धे पञ्च, द्वितीये सप्तत्रिंशत्, **स्थानाङ्गे** षोडश, **व्यवहारे** चतस्र इत्येता द्विषष्टिः, एताश्च चरित्रस्वभावा अपि विशिष्टश्रुतवतां भवन्तीति श्रुतप्रधानतया श्रुतसमाधिप्रतिमात्वेनोपदिष्टा इति सम्भावयामः । पञ्च सामायिकच्छेदोपस्थापनीयाद्याश्चारित्रसमाधिप्रतिमाः । उपधानप्रतिमा द्विविधा– भिक्षु-श्रावकभेदात्, तत्र भिक्षुप्रतिमा ***मासाई सत्तंता** [[1]**पञ्चाशक० १८।३**] इत्यादिनाऽभिहितस्वरूपा द्वादश, उपासकप्रतिमास्तु ***दंसणवय** [**पञ्चाशक० १०।३**] इत्यादिनाऽभिहितस्वरूपा एकादशेति सर्वास्त्रयोविंशतिः । विवेकप्रतिमा त्वेका क्रोधादेराभ्यन्तरस्य गण-शरीरोपधि-भक्त-पानादेर्बाह्यस्य च विवेचनीयस्यानेकत्वेऽप्येकत्वविवक्षणादिति । प्रतिसंलीनताप्रतिमाऽ-प्येकैव इन्द्रियस्वरूपस्य पञ्चविधस्य नोइन्द्रियस्वभावस्य च योग-कषाय-विविक्तशयना-ऽऽसनभेदतस्त्रिविधस्य प्रतिसंलीनताविषयस्य भेदेनाविवक्षणादिति, पञ्चम्येकविहारप्रतिमैकैव, न चेह सा भेदेन विवक्षिता, भिक्षुप्रतिमास्वन्तर्भावितत्वादित्येवं द्विषष्टिः पञ्च त्रयोविंशतिरेका एका च द्विनवतिस्ता भवन्तीति ।

स्थविर **इन्द्रभूतिर्महावीरस्य** प्रथमगणनायकः, स च गृहस्थपर्यायं पञ्चाशतं वर्षाणि त्रिंशतं छद्मस्थपर्यायं द्वादश च केवलित्वं पालयित्वा सिद्ध इति सर्वाणि द्विनवतिरिति।

मंदरस्सेत्यादेर्भावार्थः– मेरुमध्यभागात् **जम्बूद्वीपः** पञ्चाशत् सहस्राणि ततो

---

१. "मासाई सत्तंता पढमा बिति सत्त राइदिणा । अहराई एगराई भिक्खुपडिमाण बारसगं ॥१॥" इति सम्पूर्णा गाथा । आवश्यकसूत्रे प्रतिक्रमणाध्ययने 'बारसहिं भिक्खुपडिमाहिं' इति सूत्रस्य व्याख्यानरूपे मूलभाष्येऽपि गाथेयं वर्तते, व्याख्याता च तत्र **हरिभद्र**सूरिभिः ॥ २. 'दंसण वय सामाइय पोसहपडिमा अबंभ सच्चित्ते । आरंभ पेस उद्दिट्ठवज्जए समणभूए य ॥' इति सम्पूर्णा गाथा । गाथेयम् आवश्यकसूत्रे प्रतिक्रमणाध्ययने 'इगारसहिं उवासगपडिमाहिं' इति सूत्रस्य मूलभाष्येऽपि वर्तते ॥

द्विचत्वारिंशत् सहस्राण्यतिक्रम्य गोस्तुभपर्वत इति सूत्रोक्तमन्तरं भवतीति, एवं शेषाणामपि ॥९२॥

[सू० ९३] **चंदप्पभस्स णं अरहतो तेणउतिं गणा तेणउतिं गणहरा होत्था।**

संतिस्स णं अरहतो तेणउइं चोद्दसपुव्विसया होत्था ।

तेणउतिंमंडलगते णं सूरिए अतिवट्टमाणे वा नियट्टमाणे वा समं अहोरत्तं विसमं करेति ।

[टी०] अथ त्रिनवतिस्थानके किमपि वितन्यते, **तेणउइंमंडले**त्यादि, तत्र **अतिवर्त्तमानो वा** सर्वबाह्यात् सर्वाभ्यन्तरं प्रति गच्छन् **निवर्त्तमानो वा** सर्वाभ्यन्तरात् सर्वबाह्यं प्रति गच्छन् व्यत्ययो वा व्याख्येयः, **सममहोरात्रं विषमं करोती**त्यस्यार्थः– अहश्च रात्रिश्च अहोरात्रं तयोः समता तदा भवति यदा [1]पञ्चदश पञ्चदश मुहूर्त्ता उभयोरपि भवन्ति, तत्र सर्वाभ्यन्तरमण्डले अष्टादशमुहूर्त्तमहर्भवति रात्रिश्च द्वादशमुहूर्त्ता, सर्वबाह्ये तु व्यत्ययः, तथा त्र्यशीत्यधिके मण्डलशते द्वौ द्वावेकषष्टिभागौ वर्द्धेते हीयेते च, यदा च दिनवृद्धिस्तदा रात्रिहानिः रात्रिवृद्धौ च दिनहानिरिति, तत्र द्विनवतितमे मण्डले प्रतिमण्डलं मुहूर्त्तैकषष्टिभागद्वयवृद्ध्या त्रयो मुहूर्त्ता एकेनैकषष्टिभागेनाधिका वर्द्धन्ते हीयन्ते वा, तेषु च द्वादशमुहूर्त्तेषु मध्ये क्षिप्तेषु अष्टादशभ्योऽपसारितेषु वा पञ्चदश मुहूर्त्ता उभयत्रैकेनैकषष्टिभागेनाधिका हीना वा भवन्ति, अतो द्विनवतितममण्डलस्यार्द्धे समाहोरात्रता तस्यैव चान्ते विषमाहोरात्रता भवति, द्विनवतितमं मण्डलं चादित आरभ्य त्रिनवतितममिति यथोक्तः सूत्रार्थ इति ॥९३॥

[सू० ९४] **निसह-नेलवंतियाओ णं जीवातो चउणउइं चउणउइं जोयणसहस्साइं एक्कं छप्पण्णं जोयणसतं दोण्णि य एकूणवीसतिभागे जोयणस्स आयामेणं पण्णत्ता[तो] ।**

अजितस्स णं अरहतो चउणउतिं ओहिनाणिसया होत्था ।

[टी०] अथ चतुर्नवतिस्थानके किञ्चिद्विवेच्यते, **निसहे**त्यादि, इह पादोना

---

१. पंचदश मुहूर्ता जे१ खं० ॥

संवादगाथा– **चउणउइसहस्साइं छप्पण्णहियं सयं कला दो य । जीवा निसहस्सेसा** [*बृहत्क्षेत्र० ६०] इति ॥९४॥

[सू० ९५] सुपासस्स णं अरहतो पंचाणउतिं गणा पंचाणउतिं गणहरा होत्था ।

जंबुद्दीवस्स णं दीवस्स चरिमंताओ चउद्दिसिं लवणसमुद्दं पंचाणउतिं पंचाणउतिं जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता चत्तारि महापायाला पण्णत्ता, तंजहा– वलयामुहे केउए जुयते ईसरे ।

लवणसमुद्दस्स उभओपासिं पि पंचाणउतिं पंचाणउतिं पदेसा उव्वेधुस्सेधपरिहाणीए पण्णत्ता ।

कुंथू णं अरहा पंचाणउतिं वाससहस्साइं परमाउयं पालयित्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

थेरे णं मोरियपुत्ते पंचाणउतिं वासाइं सव्वाउयं पालयित्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

[टी०] अथ पञ्चनवतिस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, **लवणसमुद्रस्योभयपार्श्वतोऽपि पञ्चनवतिः पञ्चनवतिः प्रदेशा उद्वेधोत्सेधपरिहाण्यां** विषये **प्रज्ञप्ताः**, अयमत्र भावार्थः- लवणसमुद्रमध्ये दशसाहस्रिकक्षेत्रस्य समधरणीतलापेक्षया सहस्रमुद्वेधः, उण्डत्वमित्यर्थः, तदनन्तरं पञ्चनवतिं प्रदेशानतिक्रम्योद्वेधस्य प्रदेशः परिहीयते, ततोऽपि पञ्चनवतिं प्रदेशान् गत्वा उद्वेधस्य प्रदेशो हीयते, एवं पञ्चनवतिपञ्चनवतिप्रदेशातिक्रमे प्रदेशमात्रस्य प्रदेशमात्रस्योद्वेधस्य हान्या पञ्चनवत्यां योजनसहस्रेष्वतिक्रान्तेषु समुद्रतटप्रदेशे उद्वेधतः सहस्रस्यापि परिहाणिर्भवति, समभूतलत्वं भवतीत्यर्थः, तथा समुद्रमध्यभागापेक्षया तत्तटस्य साहस्रिक उत्सेधो भवति, उत्सेधश्चोच्चत्वम्, तत्र समधरणीतलरूपात् तत्तटात् पञ्चनवतिं प्रदेशानतिक्रम्य एकप्रदेशिका उत्सेधस्य परिहाणिर्भवति, ततोऽपि पञ्चनवतिं प्रदेशान् गत्वा प्रादेशिक्येवोत्सेधहानिर्भवति, एवं पञ्चनवतिपञ्चनवतिप्रदेशातिक्रमेण प्रादेशिक्या प्रादेशिक्या उत्सेधहान्या पञ्चनवत्यां योजनसहस्रेष्वतिक्रान्तेषु समुद्रमध्यभागे सहस्रमपि उत्सेधस्य परिहीयते, एवं

साहस्रिकोत्सेधपरिहाणौ, साहस्रिकोद्वेधता भवति **लवणस्येति**, अथवा **उद्वेधार्थं** यो**त्सेधपरिहाणिस्तस्यां पञ्चनवतिः प्रदेशाः प्रज्ञप्ताः**, तेष्वतिलङ्घितेषु उत्सेधतः प्रदेशपरिहाण्यामुद्वेधः प्रादेशिको भवतीति ।

तथा **कुन्थुनाथस्य** सप्तदशतीर्थकरस्य कुमारत्व-माण्डलिकत्व-चक्रवर्त्तित्वाऽनगारत्वेषु प्रत्येकं त्रयोविंशतेर्वर्षसहस्राणामर्द्धाष्टमवर्षशतानां च भावात् सर्वायुः पञ्चनवतिर्वर्षसहस्राणि भवतीति । तथा **मौर्यपुत्रो महावीरस्य** सप्तमगणधरस्तस्य पञ्चनवतिर्वर्षाणि सर्वायुः, कथम् ?, गृहस्थत्व-छद्मस्थत्व-केवलित्वेषु क्रमेण पञ्चषष्टि-चतुर्दश-षोडशानां वर्षाणां भावादिति ॥९५॥

[सू० ९६] एगमेगस्स णं रण्णो चाउरंतचक्कवट्टिस्स छण्णउतिं छण्णउतिं गामकोडीओ होत्था ।

वायुकुमाराणं छण्णउइं भवणावाससतसहस्सा पण्णत्ता ।

वावहारिए णं दंडे छण्णउतिं अंगुलाणि अंगुलपमाणेणं, एवं धणू नालिया जुगे अक्खे मुसले वि ।

अब्भंतराओ आइमुहुत्ते छण्णउतिं अंगुलच्छाये पण्णत्ते ।

[टी०] अथ षण्णवतिस्थानके किमपि व्याख्यायते, **वायुकुमाराणां षण्णवतिर्भवनलक्षाणि** दक्षिणस्यां[1] पञ्चाशत उत्तरस्यां च षट्चत्वारिंशतो भावादिति । **वावहारिए** त्ति व्यावहारिको येन गव्यूतादिप्रमाणं चिन्त्यते, अव्यावहारिकस्तु लघुः दीर्घो वा भवत्युक्तप्रमाणात्, दण्डो हि चतुःकर उक्तः, करश्च चतुर्विंशत्यङ्गुलः, एवं चतुर्विंशतौ चतुर्गुणितायां षण्णवतिः स्यादेवेति । **अब्भंतराओ** इत्यादि, **अभ्यन्तराद्** अभ्यन्तरं मण्डलमाश्रित्येत्यर्थः, **आदिमुहूर्त्तः षण्णवत्यङ्गुलच्छायः प्रज्ञप्तः**, अयमत्र भावार्थः– सर्वाभ्यन्तरे मण्डले यत्र दिने **सूर्यश्च**रति तस्य दिनस्य प्रथमो मुहूर्त्तो द्वादशाङ्गुलमानं शङ्कुमाश्रित्य षण्णवत्यङ्गुलच्छायो भवति, तथाहि– तद्दिनमष्टादशमुहूर्त्तप्रमाणं भवतीति मुहूर्त्तोऽष्टादशभागो दिनस्य भवति, ततश्च छायागणितप्रक्रियया छेदेनाष्टादशलक्षणेन द्वादशाङ्गुलः शङ्कुर्गुण्यत इति, ततो द्वे शते

---

१. हे१ विना- °**णास्यां पंचाशत उत्तरास्यां च** जे१,२ खं० । °**णायां पंचाशत उत्तरायां च** हे२ ॥

षोडशोत्तरे भवतः २१६, तयोरर्द्धीकृतयोरष्टोत्तरं शतं भवति १०८, ततश्च शङ्कुप्रमाणे १२ऽपनीते षण्णवतिरङ्गुलानि लभ्यन्ते इति ॥९६॥

[सू० ९७] मंदरस्स णं पव्वतस्स पच्चत्थिमिल्लातो चरिमंतातो गोथुभस्स णं आवासपव्वयस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं सत्ताणउतिं जोयणसहस्साइं अबाधाते अंतरे पण्णत्ते । एवं चउद्दिसिं पि ।

अट्ठण्हं कम्मपगडीणं सत्ताणउतिं उत्तरपगडीतो पण्णत्तातो ।

हरिसेणे णं राया चाउरंतचक्कवट्टी देसूणाइं सत्ताणउतिं वाससयाइं अगारवासमज्झावसित्ता मुंडे भवित्ता णं अगारातो जाव पव्वतिते ।

[टी०] अथ सप्तनवतिस्थानके किञ्चिद् विचार्यते, **मंदरे**त्यादेर्भावार्थोऽयम्– मेरोः पश्चिमान्तात् जम्बूद्वीपान्तः पञ्चपञ्चाशत् सहस्राणि ततो द्विचत्वारिंशता गोस्तुभ इति यथोक्तमेवान्तरमिति । **हरिषेणो** दशमचक्रवर्त्ती **देशोनानि सप्तनवतिं वर्षशतानि** गृहमध्युषितस्त्रीणि चाधिकानि प्रव्रज्यां पालितवान् दशवर्षसहस्रत्वात्तदायुष्कस्येति ॥९७॥

[सू० ९८] नंदणवणस्स णं उवरिल्लातो चरिमंतातो पंडयवणस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं अट्ठाणउतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

मंदरस्स णं पव्वतस्स पच्चत्थिमिल्लातो चरिमंतातो गोथुभस्स आवासपव्वतस्स पुरत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं अट्ठाणउतिं जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं चउदिसिं पि ।

दाहिणभरहड्ढस्स णं धणुपट्ठे अट्ठाणउतिं जोयणसयाइं किंचूणाइं आयामेणं पण्णत्ते ।

उत्तरातो णं कट्ठातो सूरिए पढमं छम्मासं अयमीणे एक्कूणपन्नासतिमे मंडलगते अट्ठाणउतिं एक्कसट्ठिभागे मुहुत्तस्स दिवसखेत्तस्स निवुड्ढेत्ता रयणिखेत्तस्स अभिनिवुड्ढेत्ता णं सूरिए चारं चरति ।

दक्खिणातो णं कट्ठातो सूरिए दोच्चं छम्मासं अयमीणे एक्कूणपन्नासतिमे मंडलगते अट्ठाणउतिं एक्कसट्ठिभाए मुहुत्तस्स रयणिखेत्तस्स निवुड्ढेत्ता दिवसखेत्तस्स अभिनिवुड्ढेत्ता णं सूरिए चारं चरति ।

रेवतिपढमजेट्ठपज्जवसाणाणं एक्कूणवीसाए नक्खत्ताणं अट्ठाणउतिं तारातो तारग्गेणं पण्णत्तातो ।

[टी०] अथाष्टनवतिस्थानके किञ्चिदभिधीयते, **नंदणवणे**त्यादेर्भावार्थोऽयम्– **नन्दनवनं** मेरोः पञ्चयोजनशतोच्छ्रितप्रथममेखलाभावि पञ्चयोजनशतोच्छ्रितं तद्गतपञ्चयोजनशतोच्छ्रितकूटाष्टकस्य तद्ग्रहणेन ग्रहणात्, तथा पण्डकवनं च **मेरु**शिखरव्यवस्थितम्, अतो नवनवत्या **मेरो**रुच्चैस्त्वस्य आद्ये सहस्रे अपकृष्टे यथोक्तमन्तरं भवतीति । गोस्तुभसूत्रभावार्थः पूर्ववत्, नवरं गोस्तुभविष्कम्भसहस्रे क्षिप्ते यथोक्तमन्तरं भवतीति । **वेयड्ढस्स ण**मित्यादिर्यः केषुचित् पुस्तकेषु दृश्यते सोऽपपाठः, सम्यक्पाठश्चायम्– **दाहिणभरहड्ढस्स णं धणुपट्ठे अट्ठाणउइं जोयणसयाइं किंचूणाइं आयामेणं पण्णत्ते** इति, यतोऽन्यत्रोक्तम्–

नव चेव सहस्साइं छावट्ठाइं सयाइं सत्त भवे ।
सविसेस कला चेगा दाहिणभरहद्धधणुपट्ठं ॥ [बृहत्क्षेत्र० ४३]* [९६०७ $\frac{१}{१९}$] ति ।

वैताढ्यधनुःपृष्ठं त्वेवमुक्तमन्यत्र–

दस चेव सहस्साइं सत्तेव सया हवंति तेयाला ।
धणुपट्ठं वेयड्ढे कला य पण्णारस[1] हवंति ॥ [बृहत्क्षेत्र० ४५]* [१०७४३ $\frac{१५}{१९}$]

उत्तराओ णमित्यादि, भावार्थः पूर्वोक्तानुसारेणावसेयः, नवरमिह **एक्केतालीसइमे** इति केषुचित् पुस्तकेषु दृश्यते सोऽपपाठः, **एगूणपंचासइमे** त्ति एकोनपञ्चाशतो द्विगुणत्वे अष्टनवतिर्भवति, द्वयगुणनं च प्रतिमण्डलं मुहूर्त्तैकषष्टिभागद्वयवृद्धेर्दिनस्य रात्रेर्वेति । **रेवई**त्यादि, **रेवतिः** प्रथमा येषां तानि **रेवतिप्रथमानि** तथा **ज्येष्ठा** पर्यवसाने येषां तानि **ज्येष्ठापर्यवसानानि**, तानि च तानि चेति कर्म्मधारयः, तेषामेकोनविंशतेर्नक्षत्राणा**मष्टनवतिस्तारास्तारापरिभागेन प्रज्ञप्ताः**, तथाहि- **रेवती**नक्षत्रं द्वात्रिंशत्तारम् ३२, **अश्विनी** त्रितारम् ३५, **भरणी** त्रितारम् ३८, **कृत्तिका** षट्तारम् ४४, **रोहिणी** पञ्चतारम् ४९, **मृगशिर**स्त्रितारम् ५२, **आद्रा(र्द्रा?)** एकतारम् ५३, **पुनर्वसू** पञ्चतारम् ५८, **पुष्य**स्त्रितारम् ६१, **अश्लेषा** षट्तारम् ६७, **मघा** सप्ततारम् ७४, **पूर्वफाल्गुनी** द्वितारम् ७६, **उत्तरफाल्गुनी**[2] द्वितारम् ७८, **हस्तः** पञ्चतारम् ८३,

---

१. **पण्णरस** हे२ ॥ २. **उत्तराफा°** जे२ ।

चित्रा एकतारम् ८४, **स्वाति**रेकतारम् ८५, **विशाखा** पञ्चतारम् ९०, **अनुराधा**[1] चतुस्तारम् ९४, **ज्येष्ठा** त्रितारमित्येवम् ९७, सर्वतारामीलने यथोक्ततारागमेकोनं ग्रन्थान्तराभिप्रायेण भवति, अधिकृतग्रन्थाभिप्रायेण त्वेषामेकतरस्य एकताराधिकत्वं सम्भाव्यते ततो यथोक्ता तत्संख्या भवतीति ॥९८॥

[सू० ९९] मंदरे णं पव्वते णवणउतिं जोयणसहस्साइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ते।

नंदणवणस्स णं पुरत्थिमिल्लातो चरिमंतातो पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं णवणउतिं जोयणसताइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते ।

एवं दक्खिणिल्लातो उत्तरे ।

पढमे सूरियमंडले णवणउतिं जोयणसहस्साइं सातिरेगाइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते । दोच्चे सूरियमंडले णवणउतिं जोयणसहस्साइं साहियाइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते । ततिए सूरियमंडले नवनउतिं जोयणसहस्साइं साहियाइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।

इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए अंजणस्स कंडस्स हेट्ठिल्लातो चरिमंतातो वाणमंतरभोमेज्जविहाराणं उवरिमंते एस णं नवनउतिं जोयणसयाइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

[टी०] [2]अथ नवनवतिस्थानके किमपि लिख्यते, **नंदणवणे**त्यादि, अस्य भावार्थः– **मेरु**विष्कम्भो मूले दश सहस्राणि, **नन्दनवन**स्थाने तु नवनवतिर्योजनशतानि चतुःपञ्चाशच्च योजनानि षट् च योजनैकादशभागा बाह्यो गिरिविष्कम्भो **नन्दनवना**भ्यन्तरस्तु **मेरु**विष्कम्भ एकोननवतिः शतानि चतुःपञ्चाशदधिकानि षट् चैकादशभागास्तथा पञ्च शतानि **नन्दनवन**विष्कम्भः, तदेवमभ्यन्तरगिरिविष्कम्भो द्विगुण**नन्दनवन**विष्कम्भश्च मीलितो यथोक्तमन्तरं प्रायो भवतीति । **पढमसूरियमंडले** त्ति, इह **जम्बूद्वीप**प्रमाणस्याशीत्युत्तरशते द्विगुणिते अपकृष्टे यो राशिः स प्रथममण्डलस्याऽऽयामविष्कम्भः, स च नवनवतिः सहस्राणि षट् शतानि

---

१. °राधाश्चतु° हे१,२ विना । "**अणुराहा पंचतारे पन्नत्ते**" इति विक्रमसंवत् १९७५ तमे वर्षे **आगमोदयसमिति** प्रकाशितायां **मलयगिरि**विरचितटीकासहितायां **सूर्यप्रज्ञप्तौ** दशमे प्राभृते नवमे प्राभृतप्राभृते ॥ २. **अत्र नव**° जे१,२॥

चत्वारिंशदधिकानि, द्वितीयं तु नवनवतिः सहस्राणि षट् शतानि पञ्चचत्वारिंशच्च योजनानि योजनस्य च पञ्चत्रिंशदेकषष्टिभागाः, कथम् ?, मण्डलस्य मण्डलस्य चान्तरं[1] द्वे द्वे योजने, सूर्यविमानविष्कम्भश्चाष्टचत्वारिंशदेकषष्टिभागाः, एतद् द्विगुणितं पञ्च योजनानि पञ्चत्रिंशदेकषष्टिभागाश्चेति जातमेतच्च पूर्वमण्डलविष्कम्भे क्षिप्तं जातमुक्तप्रमाणमिति, तृतीयमण्डलविष्कम्भोऽप्येवमवसेयः, स च नवनवतिः सहस्राणि षट् शतानि एकपञ्चाशत् योजनानि नवैकषष्टिभागाश्चेति ।

इमीसे णमित्यादेर्भावार्थोऽयम्– अञ्जनकाण्डं दशमं काण्डम्, तत्र च **रत्नप्रभो**परिमान्ताच्छतं शतानां भवति, प्रथमकाण्डप्रथमशते च व्यन्तरनगराणि न सन्तीति तस्मिन्नपसारिते नवनवतिः शतान्यन्तरं सूत्रोक्तं भवतीति ॥९९॥

[सू० १००] **दसदसमिया णं भिक्खुपडिमा एगेणं राइंदियसतेणं अद्धछट्ठेहिं भिक्खासतेहिं अहासुत्तं जाव आराहिया यावि भवति ।**

सयभिसयानक्खत्ते सएक्कतारे पण्णत्ते ।

सुविधी पुप्फदंते णं अरहा एगं धणुसतं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

पासे णं अरहा पुरिसादाणीए एक्कं वाससयं सव्वाउयं पालयित्ता सिद्धे जाव प्पहीणे । एवं थेरे वि अज्जसुहम्मे ।

सव्वे वि णं दीहवेयड्ढपव्वया एगमेगं गाउयसतं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि णं चुल्लहिमवंत-सिहरिवासहरपव्वया एगमेगं जोयणसतं उड्ढंउच्चत्तेणं, एगमेगं गाउयसतं उव्वेधेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि णं कंचणगपव्वया एगमेगं जोयणसयं उड्ढंउच्चत्तेणं, एगमेगं गाउयसतं उव्वेधेणं, एगमेगं जोयणसयं मूले विक्खंभेणं पण्णत्ता ।

[**टी०**] अथ शतस्थानके किञ्चिल्लिख्यते, तत्र दश दशमदिनानि यस्यां सा दशदशमिका, या हि दिनानां दश दशकानि भवति[2], तत्र भवन्ति दश दशमदिनानि शतं च दिनानामत उच्यते **एकेन रात्रिंदिवशतेने**ति, यस्यां च प्रथमे दशके प्रतिदिनमेकैका भिक्षा द्वितीये द्वे द्वे एवं यावद् दशमे दश दशेत्येवं सर्वभिक्षासङ्कलने सूत्रोक्तसंख्या भवत्येव इति।

---

१. °स्याचांतरं जे१ । °स्यावांतरं खं० जे२ ॥ २. भवंति जे२ ॥

पार्श्वनाथस्त्रिंशद्वर्षाणि कुमारत्वं सप्ततिं चानगारत्वमित्येवं **शतमायुः पालयित्वा सिद्धः** । एवं **थेरे वि अज्जसुहम्मे** त्ति **आर्यसुधर्म्मा महावीरस्य** पञ्चमो गणधरः सोऽपि वर्षशतं सर्वायुः पालयित्वा सिद्धः, तथा च तस्यागारवासः पञ्चाशद्वर्षाणि छद्मस्थपर्यायो द्विचत्वारिंशत् केवलिपर्यायोऽष्टौ, भवति चैतद्राशित्रयमीलने वर्षशतमिति। वैताढ्यादिषूच्चत्वचतुर्थांशः उद्वेधः, **काञ्चनका** उत्तरकुरु-देवकुरुषु क्रमव्यवस्थितानां पञ्चानां महाह्रदानामुभयतो दश दश व्यवस्थिताः, ते च **जम्बूद्वीपे** शतद्वयसंख्याः समवसेया इति ॥१००॥

[सू० १०१] **चंदप्पभे णं अरहा दिवड्ढं धणुसतं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।**

आरणे कप्पे दिवड्ढं विमाणावाससतं पण्णत्तं । एवं अच्चुए वि ।

[सू० १०२] **सुपासे णं अरहा दो धणुसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।**

सव्वे वि णं महाहिमवंत-रुप्पीवासहरपव्वया दो दो जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं, दो दो गाउयसताइं उव्वेधेणं पण्णत्ता ।

जंबुद्दीवे णं दीवे दो कंचणपव्वतसया पण्णत्ता ।

[सू० १०३] **पउमप्पभे णं अरहा अड्ढाइज्जाइं धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था।**

असुरकुमाराणं देवाणं पासायवडेंसगा अड्ढाइज्जाइं जोयणसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

[टी०] अथैकोत्तरस्थानवृद्ध्या सूत्ररचनां परित्यज्य पञ्चाशच्छतादिवृद्ध्या तां कुर्वन्नाह– **चंदप्पहे**त्यादि, सुगमं च सर्वमा द्वादशाङ्गगणिपिटकसूत्रात् ॥१५०॥२००॥

नवरं **पासायवडेंसय** त्ति **अवतंसकाः** शेखरकाः कर्णपूराणि वा अवतंसका इव अवतंसकाः प्रधाना इत्यर्थः, प्रासादाश्च ते अवतंसकाश्च प्रासादानां वा मध्ये अवतंसकाः **प्रासादावतंसकाः** ॥२५०॥

[सू० १०४] **सुमती णं अरहा तिण्णि धणुसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।**

अरिट्ठनेमी णं अरहा तिण्णि वाससयाइं कुमारमज्झावसित्ता मुंडे भवित्ता जाव पव्वतिते ।

वेमाणियाणं देवाणं विमाणपागारा तिण्णि तिण्णि जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

समणस्स णं भगवतो महावीरस्स तिन्नि सयाणि चोद्दसपुव्वीणं होत्था।

पंचधणुसतियस्स णं अंतिमसारीरियस्स सिद्धिगतस्स सातिरेगाणि तिण्णि धणुसयाणि जीवप्पदेसोगाहणा पण्णत्ता ।

[सू० १०५] पासस्स णं अरहतो पुरिसादाणीयस्स अद्धुट्ठाइं सयाइं चोद्दसपुव्वीणं होत्था ।

अभिनंदणे णं अरहा अद्धुट्ठाइं धणुसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

[टी०] तथा **पंचधणुस्सतियस्स ण**मित्यादि, पञ्चधनुःशतप्रमाणस्य **अंतिमसारीरियस्स** त्ति चरमशरीरस्य **सिद्धिगतस्य सातिरेकाणि त्रीणि शतानि** धनुषां **जीवप्रदेशावगाहना प्रज्ञप्ता,** यतोऽसौ **शैलेशीकरण**समये शरीररन्ध्रपूरणेन देहत्रिभागं विमुच्य घनप्रदेशो भूत्वा देहत्रिभागद्वयावगाहनः सिद्धिमुपगच्छति, सातिरेकत्वं चैवम्–

तिण्णि सया तेत्तीसा धणुत्तिभागो य होइ बोद्धव्वो ।
एसा खलु सिद्धाणं उक्कोसोगाहणा भणिय ।। [आव० नि० ९७१] त्ति ।।३००।।३५०।।

[सू० १०६] संभवे णं अरहा चत्तारि धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

सव्वे वि णं णिसभ-नीलवंता वासहरपव्वया चत्तारि चत्तारि जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं, चत्तारि चत्तारि गाउयसताइं उव्वेधेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि य णं वक्खारपव्वया णिसभ-नीलवंतवासहरपव्वयं तेणं चत्तारि चत्तारि जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं, चत्तारि चत्तारि गाउयसताइं उव्वेधेणं पण्णत्ता।

आणय-पाणएसु णं दोसु कप्पेसु चत्तारि विमाणसया पण्णत्ता ।

समणस्स णं भगवतो महावीरस्स चत्तारि सता वादीणं सदेवमणुयासुरम्मि लोगम्मि वाए अपराजिताणं उक्कोसिया वादिसंपया होत्था ।

[सू० १०७] अजिते णं अरहा अद्धपंचमाइं धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था।

सगरे णं राया चाउरंतचक्कवट्टी अद्धपंचमाइं धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था।

[सू० १०८] → [१]सव्वे वि णं वक्खारपव्वया सीया-सीओयाओ महानईओ मंदरं वा पव्वयं तेणं पंच जोयणसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं, पंच गाउयसयाइं उव्वेहेणं पण्णत्ता ← ।

सव्वे वि णं वासहरकूडा पंच पंच जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं, मूले पंच पंच जोयणसताइं विक्खंभेणं पण्णत्ता ।

उसभे णं अरहा कोसलिए पंच धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

भरहे णं राया चाउरंतचक्कवट्टी पंच धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

सोमणस-गंधमादण-विज्जुप्पभ-मालवंता णं वक्खारपव्वया णं मंदर-पव्वयं तेणं पंच पंच जोयणसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं, पंच पंच गाउयसताइं उव्वेधेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि णं वक्खारपव्वयकूडा हरि-हरीसहकूडवज्जा पंच पंच जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं, मूले पंच पंच जोयणसताइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि णं णंदणकूडा बलकूडवज्जा पंच पंच जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं, मूले पंच पंच जोयणसताइं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ता ।

सोहम्मीसाणेसु कप्पेसु विमाणा पंच पंच जोयणसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता।

[टी०] **सव्वे वि णं वक्खारपव्वए**त्यादि, वक्षस्कारपर्वता एकमेरुप्रतिबद्धा विंशतिस्ते च वर्षधरासत्तौ चतुःशतोच्चाः, शीतादिनदीप्रत्यासत्तौ मेरुप्रत्यासत्तौ च पञ्चशतोच्चा इति । तथा **सव्वे वि णं वक्खारे**त्यादि, तत्र वर्षधरकूटानि शतद्वयमशीत्यधिकम्, कथम् ?,

लहुहिमव हिमव निसढे एक्कारस अट्ठ नव य कूडाइं ।
नीलाइसु तिसु नवगं अट्ठेक्कारस जहासंखं ।। [ ]

एतेषां च पञ्चगुणत्वात्, वक्षस्कारकूटानि त्वशीत्यधिकचतुःशतीसंख्यानि, कथम् ?,

विज्जुपहमालवंते नव नव सेसेसु सत्त सत्तेव ।
सोलस वक्खारेसुं चउरो चउरो य कूडाइं ।। [ ]

---

१. → ← एतदन्तर्गतः पाठो जे२ मध्ये एव वर्तते ।।

एतेषां पञ्चगुणत्वात्, पञ्चगुणत्वं च **जम्बूद्वीपादिमेरू**पलक्षितक्षेत्राणां पञ्चत्वात्, सर्वाण्येतानि पञ्चशतोच्छ्रितानि, एवं **मानुषोत्तरा**दिष्वपि, वैताढ्यकूटानि तु सक्रोशषड्योजनोच्छ्रयाणि, वर्षकूटानि तु **ऋषभकूटा**दीन्यष्टयोजनोच्छ्रितानीति, **हरिकूटहरिसहकूट**वर्जनं त्विह तयोः सहस्रोच्छ्रयत्वाद्, आह च–

वि[1]ज्जुप्पभहरिकूडो हरिस्सहो मालवंतव[2]क्खारे ।
नंदणवणबलकूडो उव्विद्धा जोयणसहस्सं ॥ [बृहत्क्षेत्र० १५६] ति ॥५००॥

[सू० १०९] सणंकुमार-माहिंदेसु कप्पेसु विमाणा छ जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

चुल्लहिमवंतकूडस्स णं उवरिल्लाओ चरिमंताती चुल्लहिमवंतस्स वासहरपव्वतस्स समे धरणितले एस णं छ जोयणसताइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते । एवं सिहरिकूडस्स वि ।

पासस्स णं अरहतो छ सता वादीणं सदेवमणुयासुरे लोए [वाए] अपराजियाणं उक्कोसा वातिसंपदा होत्था ।

अभिचंदे णं कुलगरे छ धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

वासुपुज्जे णं अरहा छहिं पुरिससतेहिं मुंडे भवित्ता णं अगारातो अणगारियं पव्वतिते ।

[टी०] चुल्लहिमवंतकूडस्सेत्यादि, इह भावार्थः– **हिमवान्** योजनशतोच्छ्रितस्तत्कूटं च पञ्चशतोच्छ्रितमिति सूत्रोक्तमन्तरं भवतीति । **अभिचंदे णं कुलकरे** त्ति **अभिचन्द्रः** कुलकरोऽस्यामवसर्प्पिण्यां सप्तानां कुलकराणां चतुर्थः, तस्योच्छ्रयः [3]षड् धनुःशतानि

---

१. "व्या०- विद्युत्प्रभनामके देवकुरूणां पश्चिमदिग्भागे मेरोर्दक्षिणापरकोणस्थे निषधलग्ने गजदन्ते पर्वते हरिकूटं यन्नाम निषधप्रत्यासन्नं नवमं कूटम्, तथोत्तरकुरूणां पूर्वदिशि मेरोरुत्तरपूर्वस्यां दिशि वर्तमाने नीलवद्वर्षधरपर्वतलग्ने माल्यवति वक्षस्कारपर्वते नीलवतः प्रत्यासन्नं यन्नवमं हरिस्सहकूटं नाम कूटम्, यच्च मेरोः प्रथममेखलायां नन्दनवने उत्तरपूर्वस्यां दिशि वक्ष्यमाणस्वरूपं बलकूटं नाम कूटम्, एतानि त्रीण्यपि कूटानि कनकमयानि प्रत्येकं योजनसहस्रमुद्विद्धानि उच्चानि १०००।" इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरिसूरि**विरचितायां वृत्तौ ॥ २. °**वक्खारो** जे२ हेमू२ ॥ ३. "कुलकरनामप्रतिपादनायाह- **पढमित्थ विमलवाहण चक्खुम जसमं चउत्थमभिचंदे । तत्तो अ पसेणइए मरुदेवे चेव नाभी य ॥१५५॥** प्रथमोऽत्र विमलवाहनश्चक्षुष्मान् यशस्वी चतुर्थोऽभिचन्द्रः ततश्च प्रसेनजित् मरुदेवश्चैव

पञ्चाशदधिकानि ॥६००॥

[सू० ११०] बंभ-लंतएसु कप्पेसु विमाणा सत्त सत्त जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्त जिणसता होत्था ।

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स सत्त वेउव्वियसया होत्था ।

अरिट्ठनेमी णं अरहा सत्त वाससताइं देसूणाइं केवलपरियागं पाउणित्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

महाहिमवंतकूडस्स णं उवरिल्लातो चरिमंतातो महाहिमवंतस्स वासधरपव्वयस्स समे धरणितले एस णं सत्त जोयणसताइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते । एवं रुप्पिकूडस्स वि ।

[टी०] **श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य सप्त जिनशतानि** केवलिशतानीत्यर्थः । तथा **श्रमणस्य भगवतो महावीरस्य सप्त वैक्रियशतानि** वैक्रियलब्धिमत्साधुशतानीत्यर्थः । **अरिट्ठे**त्यादि, **देसूणाइं** ति चतुःपञ्चाशता दिनानामूनानि, तत्प्रमाणत्वात् छद्मस्थकालस्येति । **महाहिमवंते**त्यादौ भावार्थोऽयम्– **महाहिमवान्** योजनशतद्वयोच्छ्रितस्तत्कूटं च पञ्चशतोच्छ्रितमिति सूत्रोक्तमन्तरं भवतीति ॥७००॥

[सू० १११] महासुक्क-सहस्सारेसु दोसु कप्पेसु विमाणा अट्ठ जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए पढमे कंडे अट्ठसु जोयणसतेसु वाणमंतरभोमेज्जविहारा पण्णत्ता ।

समणस्स णं भगवओ महावीरस्स अट्ठ सया अणुत्तरोववातियाणं देवाणं गतिकल्लाणाणं ठितिकल्लाणाणं आगमेसिभद्दाणं उक्कोसिया

नाभिश्चेति ॥१५५॥ **णव धणुसया य पढमो अट्ठय सतड्ढसत्तमाइं च । छच्चेव अड्ढछट्ठा पंचसया पण्णवीसं तु** ॥१५६॥ नव धनुःशतानि प्रथमः अष्टौ च सप्त अर्धसप्तमानि षड् च अर्धषष्ठानि पञ्च शतानि पञ्चविंशतिः, अन्ये पठन्ति- पञ्चशतानि विंशत्यधिकानि, यथासंख्यं विमलवाहनादीनामिदं प्रमाणं द्रष्टव्यमिति गाथार्थः ॥१५६॥" इति **आवश्यकसूत्रस्य हारिभद्र्यां** वृत्तौ ॥

अणुत्तरोववातियसंपदा होत्था ।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जातो भूमिभागातो अट्ठहिं जोयणसएहिं सूरिए चारं चरति ।

अरहतो णं अरिट्ठनेमिस्स अट्ठ सताइं वादीणं सदेवमणुयासुरम्मि लोगम्मि वाते अपराजियाणं उक्कोसिया वादिसंपदा होत्था ।

[टी०] **इमीसे ण**मित्यादि, **प्रथमं काण्डं** खरकाण्डस्य षोडशविभागस्य प्रथमविभागरूपं रत्नकाण्डम्, तत्र योजनसहस्रप्रमाणे अध उपरि च योजनशतद्वयं विमुच्यान्येष्वष्टसु योजनशतेषु वनेषु भवा **वाना**स्ते च ते **व्यन्तरा**श्च तेषां सम्बन्धिनः भूमिविकारत्वाद् **भौमेयका**स्ते च ते **विहरन्ति** क्रीडन्ति तेष्विति **विहारा**श्च नगराणि **वानव्यन्तरभौमेयकविहारा** इति । **अट्ठ सय** त्ति अष्ट शतानि, केषामित्याह- **अणुत्तरोववाइयाणं देवाणं** ति देवेषूत्पत्स्यमानत्वात् **देवा** द्रव्यदेवा इत्यर्थः, तेषाम्, **गतिः** देवगतिलक्षणा **कल्याणं** येषां ते **गतिकल्याणाः**, तेषाम्, एवं **स्थितिः** त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमलक्षणा **कल्याणं** येषां ते तथा, तेषाम्, तथा ततश्च्युताना**मागमिष्यद्** आगामि **भद्रं** कल्याणं निर्वाणगमनलक्षणं येषां ते **आगमिष्यद्भद्राः**, तेषाम्, किमित्याह- **उक्कोसिए**त्यादि ॥८००॥

[सू० ११२] **आणय-पाणय-आरण-ऽच्चुतेसु कप्पेसु विमाणा णव जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।**

निसभकूडस्स णं उवरिल्लातो सिहरतलातो णिसभस्स वासहरपव्वतस्स समे धरणितले एस णं नव जोयणसताइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं नीलवंतकूडस्स वि ।

विमलवाहणे णं कुलगरे णव धणुसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं होत्था ।

इमीसे [णं] रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जातो भूमिभागातो णवहिं जोयणसतेहिं सव्वुपरिमे तारारूवे चारं चरति ।

निसभस्स णं वासधरपव्वयस्स उवरिल्लातो सिहरतलातो इमीसे रतणप्पभाए

पुढवीए पढमस्स कंडस्स बहुमज्झदेसभाए एस णं णव जोयणसताइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते । एवं नीलवंतस्स वि ।

[टी०] **निसहकूडस्स** णमित्यादि, इहायं भावः– निषधकूटं पञ्चशतोच्छ्रितं निषधश्चतुःशतोच्छ्रित इति यथोक्तमन्तरं भवतीति ॥९००॥

[सू० ११३] सव्वे वि णं गेवेज्जविमाणा दस दस जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि णं जमगपव्वया दस दस जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता, दस दस गाउयसताइं उव्वेधेणं, मूले दस दस जोयणसताइं आयामविक्खंभेणं। एवं चित्त-विचित्तकूडा वि भाणियव्वा ।

सव्वे वि णं वट्टवेयड्ढपव्वया दस दस जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं, दस दस गाउयसताइं उव्वेधेणं, मूले दस दस जोयणसताइं विक्खंभेणं, सव्वत्थ समा पल्लगसंठाणसंठिया, दस दस जोयणसताइं विक्खंभेणं पण्णत्ता ।

सव्वे वि णं हरि-हरिस्सहकूडा वक्खारकूडवज्जा दस दस जोयणसयाइं उड्ढंउच्चत्तेणं, मूले दस दस जोयणसयाइं विक्खंभेणं पण्णत्ता । एवं बलकूडा वि नंदणकूडवज्जा ।

अरहा वि अरिट्ठनेमी दस वाससयाइं सव्वाउयं पालइत्ता सिद्धे बुद्धे जाव प्पहीणे ।

पासस्स णं अरहतो दस सयाइं जिणाणं होत्था ।

पासस्स णं अरहतो दस अंतेवासिसयाइं कालगताइं जाव सव्वदुक्खप्पहीणाइं ।

पउमद्दह-पुंडरीयद्दहा दस दस जोयणसयाइं आयामेणं पण्णत्ता ।

[सू० ११४] अणुत्तरोववातियाणं देवाणं विमाणा एक्कारस जोयणसताइं उड्ढंउच्चत्तेणं पण्णत्ता ।

पासस्स णं अरहतो एक्कारस सताइं वेउव्वियाणं होत्था ।

[टी०] **सव्वे वि णं जमगे**त्यादि, उत्तरकुरुषु नीलवद्वर्षधरस्य दक्षिणतः शीताया

महानद्या उभयोः कूलयोर्द्वौ **यमका**भिधानौ पर्वतौ स्तः, ते च पञ्चस्वप्युत्तरकुरुषु द्वयोर्द्वयोर्भावाद् दश । **एवं चित्त-विचित्तकूडा वि** त्ति पञ्चसु देवकुरुषु यमकवत् तत्सद्भावात् पञ्च **चित्रकूटाः** पञ्च च[१] **विचित्रकूटा** इति ।

सव्वे वि णमित्यादि, **सर्वेऽपि वृत्ता वैताढ्या** विंशतिः शब्दापात्यादयः। **सव्वे वि णं हरी**त्यादि, **हरिकूटं विद्युत्प्रभा**भिधाने गजदन्ताकारवक्षस्कारपर्वते **हरिसह**कूटं तु **मालवद्व**क्षस्कारे, एतानि च पञ्चस्वपि मन्दरेषु भावात् पञ्च पञ्च भवन्ति सहस्रोच्छ्रितानि च, **वक्खारकूडवज्ज** त्ति शेषवक्षस्कारकूटेष्वेवमुच्चत्वं नास्ति, एतेष्वेवास्तीत्यर्थः । **एवं बलकूडा वि** त्ति पञ्चसु मन्दरेषु पञ्च **नन्दनवना**नि तेषु प्रत्येकमैशान्यां दिशि **बलकूटा**भिधानं कूटमस्ति, ततः पञ्च, तानि सहस्रोच्छ्रितानि च, **नंदनकूडवज्ज** त्ति शेषाणि **नन्दनवने**षु प्रत्येकं **पूर्वा**दिदिग्विदिग्व्यवस्थितानि चत्वारिंशत्संख्यानि **नन्दनकूटानि** वर्जयित्वा, तानि साहस्रिकाणि न भवन्तीत्यर्थः । **अरहे**त्यादि, कुमारत्वे त्रीणि वर्षशतान्यनगारत्वे सप्तेत्येवं दश शतानि । **पउमद्दहपुंडरीयद्दह** त्ति **पद्मह्रदः श्रीदेवी**निवासो हिमवद्वर्षधरपर्वतोपरिवर्त्ती **पुण्डरीक**ह्रदो **लक्ष्मी**देवीनिवासः **शिखरि**वर्षधरोपरिवर्त्तीति ॥१०००॥११००॥

[सू० ११५] **महापउम-महापुंडरीयद्दहा णं दो दो जोयणसहस्साइं आयामेणं पण्णत्ता ।**

[सू० ११६] **इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए वतिरकंडस्स उवरिल्लाओ चरिमंताओ लोहितक्खस्स कंडस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं तिण्णि जोयणसहस्साइं अबाहाते अंतरे पण्णत्ते ।**

[सू० ११७] **तिगिंच्छि-केसरिद्दहा णं दहा चत्तारि चत्तारि जोयणसहस्साइं आयामेणं पण्णत्ता ।**

[टी०] तथा **महापद्म-महापुण्डरीकह्रदौ** महाहिमवद्रुक्मिवर्षधरयोरुपरिवर्त्तिनौ ह्री-बुद्धिदेव्योर्निवासभूताविति ॥२०००॥

इमीसे णं रयणेत्यादि, अयमिह भावार्थः– **रत्नप्रभा**पृथिव्याः प्रथमस्य

१. **च** नास्ति खं० जे१ ॥

षोडशविभागस्य **खरकाण्डा**भिधानकाण्डस्य **वज्रकाण्डं** नाम द्वितीयं काण्डम्, **वैडूर्यकाण्डं** तृतीयम्, **लोहिताक्ष**काण्डं चतुर्थम्, तानि च प्रत्येकं साहस्रिकाणीति त्रयाणां यथोक्तमन्तरं भवतीति ॥३०००॥

तिगिंच्छि-केसरिहृदौ निषध-नीलवद्वर्षधरोपरिस्थितौ **धृति-कीर्त्ति**देवीनिवासाविति ॥४०००॥

[सू० ११८] धरणितले मंदरस्स णं पव्वतस्स बहुमज्झदेसभागाओ रुयगणाभीतो चउद्दिसिं पंच पंच जोयणसहस्साइं अबाहाए मंदरे पव्वते पण्णत्ते ।

[सू० ११९] सहस्सारे णं कप्पे छ विमाणावाससहस्सा पण्णत्ता ।

[टी०] **धरणितले** इत्यादि, **धरणितले** धरण्यां समे भूभाग इत्यर्थः, **रुयगनाभीओ** त्ति

[१]अट्ठपएसो रुयगो तिरियं लोगस्स मज्झयारम्मि ।

एस प्पभवो दिसाणं एसेव भवे अणुदिसाणं ॥ [आचा० नि० ४२] ति ।

रुचक एव **नाभिः** चक्रस्य तुम्बमिवेति **रुचकनाभिः**, ततश्चतसृष्वपि दिक्षु [२]पञ्च पञ्च सहस्राणि **मेरु**स्तस्य दशसहस्रविष्कम्भत्वादिति ॥५०००॥६०००॥

[सू० १२०] इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए रयणस्स कंडस्स उवरिल्लातो चरिमंतातो पुलगस्स कंडस्स हेट्ठिल्ले चरिमंते एस णं सत्त जोयणसहस्साइं अबाहाए अंतरे पण्णत्ते ।

[सू० १२१] हरिवस्स-रम्मया णं वासा अट्ठ जोयणसहस्साइं सातिरेगाइं वित्थरेणं पण्णत्ता ।

[सू० १२२] दाहिणड्ढभरहस्स णं जीवा पाईणपडिणायया दुहतो समुद्दं पुट्ठा णव जोयणसहस्साइं आयामेणं पण्णत्ता ।

---

१. ''तिर्यग्लोकमध्ये रत्नप्रभापृथिव्या उपरि बहुमध्यदेशे मेर्व्वन्तर्द्वौ सर्व्वक्षुल्लकप्रतरौ तयोरुपरितनस्य चत्वारः प्रदेशा गोस्तनाकारसंस्थाना अधस्तनस्यापि चत्वारस्तथाभूता एवेत्येषोऽष्टाकाशप्रदेशात्मकश्चतुरस्रो रुचको दिशामनुदिशां च **प्रभव** उत्पत्तिस्थानमिति ।'' इति **शीलाचार्य**विरचितायाम**ाचाराङ्ग**टीकायां प्रथमेऽध्ययने प्रथमे उद्देशके ॥ **२. पञ्च** नास्ति खं० जे१ ॥

[सू० १२३] मंदरे णं पव्वते धरणितले दस जोयणसहस्साइं विक्खंभेणं पण्णत्ते ।

[सू० १२४] जंबूदीवे णं दीवे एगं जोयणसयसहस्सं आयामविक्खंभेणं पण्णत्ते ।

[सू० १२५] लवणे णं समुद्दे दो जोयणसतसहस्साइं चक्कवालविक्खंभेणं पण्णत्ते ।

[सू० १२६] पासस्स णं अरहतो तिण्णि सयसाहस्सीतो सत्तावीसं च सहस्साइं उक्कोसिया सावियासंपदा होत्था ।

[सू० १२७] धायइसंडे णं दीवे चत्तारि जोयणसतसहस्साइं चक्कवालविक्खंभेणं पण्णत्ते ।

[सू० १२८] लवणस्स णं समुद्दस्स पुरत्थिमिल्लातो चरिमंतातो पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते एस णं पंच जोयणसयसहस्साइं अबाधाते अंतरे पण्णत्ते ।

[सू० १२९] भरहे णं राया चाउरंतचक्कवट्टी छ पुव्वसतसहस्साइं रायमज्झावसित्ता मुंडे भवित्ता णं अगारातो अणगारियं पव्वतिते ।

[सू० १३०] जंबूदीवस्स णं दीवस्स पुरत्थिमिल्लातो वेइयंतातो धायइसंडचक्कवालस्स पच्चत्थिमिल्ले चरिमंते [एस णं] सत्त जोयणसतसहस्साइं अबाधाते अंतरे पण्णत्ते ।

[सू० १३१] माहिंदे णं कप्पे अट्ठ विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता ।

[टी०] **इमीसे णमित्यादि, रत्नकाण्डं** प्रथमं **पुलककाण्डं** सप्तममिति सप्त सहस्राणि ॥७०००॥

हरिवस्सेत्यादि, इहार्थे गाथार्द्धम्– [१] हरिवासे इगवीसा चुलसीइ सया कला य एक्का य [बृहत्क्षेत्र० ३१] त्ति ॥८०००॥

---

१. "हरिवासे इगवीसा, चुलसीइ सया कला य एक्का य । सोलस सहस्स अट्ठ सय, बायाला दो कला निसढे ॥३१॥ व्या०- सुगमम् । तथा निषधपर्वतस्य विष्कम्भानयनाय जम्बूद्वीपविष्कम्भो लक्षप्रमाणो द्वात्रिंशता गुण्यते, जाता द्वात्रिंशल्लक्षाः, तासां नवत्यधिकेन शतेन भागो ह्रियते, लब्धानि योजनानां षोडश सहस्राण्यष्टौ शतानि

दाहिणेत्यादि, दक्षिणो भागो **भरत**स्येति **दक्षिणार्द्धभरतं** तस्य जीवेव **जीवा** ऋज्वी सीमा **प्राचीनं** पूर्वतः **प्रतीचीनं** पश्चिमतः **आयता** दीर्घा **प्राचीनप्रतीचीनायता दुहओ** त्ति उभयतः पूर्वापरपार्श्वयोरित्यर्थः, **समुद्रं** लवणसमुद्रं **स्पृष्टा** छुप्तवती, **नव सहस्राण्या**यामत इहोक्ता, [1]स्थानान्तरे तु तद्विशेषोऽयम्– नव सहस्राणि सप्त शतान्यष्टचत्वारिंशदधिकानि द्वादश च कला इति ॥९०००॥१००००॥ १०००००॥२०००००॥३०००००॥४०००००॥

लवणेत्यादि, तत्र **जम्बूद्वीप**स्य लक्षं चत्वारि च **लवण**स्येति पञ्च ॥५०००००॥ [2]**जंबूदीवस्से**त्यादि, तत्र लक्षं **जम्बूद्वीप**स्य द्वे **लवणस्य** चत्वारि **धातकीखण्ड**स्येति सप्त लक्षाण्यन्तरं सूत्रोक्तं भवतीति ॥७०००००॥

[सू० १३२] अजियस्स णं अरहतो सातिरेगाइं नव ओहिणाणिसहस्साइं होत्था ।

[सू० १३३] [3]पुरिससीहे णं वासुदेवे दस वाससतसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता पंचमाए पुढवीए णरएसु नेरइयत्ताते उववन्ने ।

[सू० १३४] समणे भगवं महावीरे तित्थकरभवग्गहणातो छट्ठे पोट्टिलभवग्गहणे एगं वासकोडिं सामण्णपरियागं पाउणित्ता सहस्सारे कप्पे सव्वट्ठे विमाणे देवत्ताते उववन्ने ।

[सू० १३५] उसभसिरिस्स भगवतो चरिमस्स य महावीरवद्धमाणस्स एगा सागरोवमकोडाकोडी अबाधाए अंतरे पण्णत्ते ।

[टी०] अजितस्यार्हतः सातिरेकाणि नवावधिज्ञानिसहस्राणि, अतिरेकश्च[4] चत्वारि शतानि, इदं च सहस्रस्थानकमपि सल्लक्षस्थानकाधिकारे यदधीतं तत् सहस्रशब्दसाधर्म्याद्विचित्रत्वाद्वा सूत्रगतेर्लेखकदोषाद्वेति ॥९०००॥

द्विचत्वारिंशदधिकानि अपरे चैकोनविंशतिभागरूपे द्वे कले १६८४२ क० २ । एतावन्निषधपर्वतस्य विष्कम्भपरिमाणम् ॥''
- इति **बृहत्क्षेत्रसमासस्य मलयगिरि**विरचितायां टीकायाम् ॥

१. ''जोयणसहस्सनवगं, सत्तेव सया हवंति अडयाला । बारस य कला सकला, दाहिणभरहद्धजीवाओ ॥३९॥'' - इति **बृहत्क्षेत्रसमासे** प्रथमेऽधिकारे ॥ २. **जंबुदी°** जे१ खं० ॥ ३. **स्थानाङ्गे** तु ''पुरिससीहे णं वासुदेवे दस वाससयसहस्साइं सव्वाउयं पालइत्ता छट्ठाते तमाए पुढवीए नेरतितत्ताए उववन्ने'' (सू० ७३५) इति पाठः ॥
४. °**श्चत्वारि** खं० ॥

पुरुषसिंहः पञ्चमवासुदेवः ॥१०००००० ॥

समणेत्यादि, किल भगवान् **पोट्टिलाभि**धानो राजपुत्रो बभूव, तत्र च[1] वर्षकोटिं प्रव्रज्यां पालितवानित्येको भवः, ततो देवोऽभूदिति द्वितीयः, ततो **नन्दना**भिधानो राजसूनुः **छत्राग्र**नगर्यां जज्ञे इति तृतीयः, तत्र वर्षलक्षं सर्वदा[2] मासक्षपणेन तपस्तप्त्वा दशमदेवलोके **पुष्पोत्तरवरविजयपुण्डरी**काभिधाने विमाने देवोऽभवदिति चतुर्थः, ततो **ब्राह्मणकुण्डग्रामे ऋषभदत्त**ब्राह्मणस्य भार्याया **देवानन्दा**भिधानायाः कुक्षावुत्पन्न इति पञ्चमः, ततस्त्र्यशीतितमे दिवसे **क्षत्रियकुण्डग्रामे** नगरे **सिद्धार्थ**महाराजस्य **त्रि[3]शिला**भिधानभार्यायाः कुक्षाविन्द्रवचनकारिणा **हरिनैगमेषि**नाम्ना देवेन संहृतस्तीर्थकरतया च जात इति षष्ठः, उक्तभवग्रहणं हि विना नान्यद् भवग्रहणं षष्ठं श्रूयते भगवत इत्येतदेव षष्ठभवग्रहणतया व्याख्यातम्, यस्माच्च भवग्रहणादिदं षष्ठं तदप्येतस्मात् षष्ठमेवेति सुष्ठूच्यते **तीर्थकरभवग्रहणात् षष्ठे पोट्टिलभवग्रहणे** इति ॥१००००००० ॥

उसभेत्यादि, **उसभसिरिस्स** त्ति प्राकृतत्वेन **श्रीऋषभ** इति वाच्ये व्यत्ययेन निर्देशः कृतः, एका सागरोपमकोटीकोटीति द्विचत्वारिंशता वर्षसहस्रैः किञ्चित्साधिकैरूनाऽप्यल्पत्वाद्विशेषस्याविशेषितोक्तेति ॥१०००००००००००००० ॥

[सू० १३६-१] **दुवालसंगे गणिपिडगे पण्णत्ते, तंजहा— आयारे सूतगडे ठाणे समवाए वियाहपण्णत्ती णायाधम्मकहाओ उवासगदसातो अंतगडदसातो अणुत्तरोववातियदसातो पण्हावागरणाइं विवागसुते दिट्ठिवाए ।**

[सू० १३६-२] **से किं तं आयारे*? आयारेणं समणाणं निग्गंथाणं आयारगोयरविणयवेणइयट्ठाणगमणचंकमणपमाणजोगजुंजणभासासमिति-गुत्तीसेज्जोवहिभत्तपाणउग्गमउप्पायणएसणाविसोहिसुद्धासुद्धग्गहणवयणियम-तवोवधाणसुप्पसत्थमाहिज्जति । से समासतो पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा— णाणायारे दंसणायारे चरित्तायारे तवायारे वीरियायारे । आयारस्स णं परित्ता वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा, संखेज्जातो पडिवत्तीतो, संखेज्जा वेढा,**

---

१. च नास्ति जे२ ॥ २. मासलक्षक्षपणेन खं० ॥ ३. त्रिशला° जे१,२, हे१,२ ॥

संखेज्जा सिलोगा, संखेज्जातो निज्जुत्तीतो । से णं अंगट्ठयाए पढमे अंगे, दो सुतक्खंधा, पणुवीसं अज्झयणा, पंचासीती उद्देसणकाला, पंचासीई समुद्देसणकाला, अट्ठारस पदसहस्साइं पदग्गेणं पण्णत्ते । संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा, अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासया कडा णिबद्धा णिकाइता जिणपण्णत्ता भावा आघविज्जंति पण्णविज्जंति परूविज्जंति दंसिज्जंति निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति । से एवंआता, एवंणाता, एवंविण्णाता। एवं चरणकरणपरूवणया आघविज्जति पण्णविज्जति परूविज्जति दंसिज्जति निदंसिज्जति उवदंसिज्जति । सेत्तं आयारे ।

[टी०] इह य एते अनन्तरं संख्याक्रमसम्बन्धमात्रेण सम्बद्धा विविधा वस्तुविशेषा उक्तास्त एव विशिष्टतरसम्बन्धसम्बद्धा द्वादशाङ्गे प्ररूप्यन्त इति द्वादशाङ्गस्यैव स्वरूपमभिधित्सुराह– **दुवालसंगे** इत्यादि, अथवोत्तरोत्तरसंख्याक्रमसंबद्धार्थ-प्ररूपणमनन्तरमकारि, साम्प्रतं संख्यामात्रसंबद्धपदार्थप्ररूपणायोपक्रम्यते– **दुवालसंगे** इत्यादि, तत्र श्रुतपरमपुरुषस्याङ्गानीवाङ्गानि द्वादशाऽङ्गानि **आचारादीनि** यस्मिंस्तद् द्वादशाङ्गम्, गुणानां गणोऽस्यास्तीति **गणी** आचार्यः, तस्य पिटकमिव **पिटकं** सर्वस्वभाजनं **गणिपिटकम्**, अथवा **गणि**शब्दः परिच्छेदवचनः, तथा चोक्तम्–

आयारम्मि अहीए जं नाओ होइ समणधम्मो उ ।
तम्हा आयारधरो भण्णइ पढमं गणिट्ठाणं ।। [आचा०[1] नि० १०]

परिच्छेदस्थानमित्यर्थः, ततश्च परिच्छेदसमूहो गणिपिटकम्, अत्र चैवं पदघटना - यदेतद् **गणिपिटकं** तत् **द्वादशाङ्गं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा– आचारः सूत्रकृत** इत्यादि।

[2]**से किं** तमित्यादि, अथ किं तदाचारवस्तु ? यद्वा अथ कोऽयमाचारः ?

---

१. "**यस्मादा**चाराध्ययनात् क्षान्त्यादिकश्चरण-करणात्मको वा **श्रमणधर्मः** परिज्ञातो **भवति तस्मात्** सर्वेषां गणित्वकारणानामाचारधरत्वं **प्रथमम्** आद्यं प्रधानं वा **गणिस्थान**मिति" इति **शीलाचार्य**विरचितायामा**चाराङ्गटीका**यां प्रथमेऽध्ययने प्रथमे उद्देशके ॥ २. **आचारादी**नां दृष्टिवादपर्यन्तानां द्वादशानामङ्गानां स्वरूपं नन्दीसूत्रस्य हारिभद्रीवृत्त्यनुसारेण प्रायः सर्वं वर्णितमत्र, अतो विशेषजिज्ञासुभिः नन्दीसूत्रस्य हरिभद्रसूरिभिर्विरचिता वृत्तिरवलोकनीया । यद्यपि नन्दीसूत्रस्य **जिनदासगणिमहत्तर**विरचितायां **चूर्णा**वपि एतादृशं किञ्चिद् वर्णनमुपलभ्यते, तथापि इयम् **अभयदेवसूरि**भिर्विरचिता वृत्तिः बहुषु स्थानेषु प्रायोऽक्षरशः **नन्दीहारिभद्रीवृत्ति**मनुसरति इति ध्येयम् ॥

आचरण**माचारः** आचर्यत इति वा **आचारः** साध्वाचरितो ज्ञानाद्यासेवनविधिरिति भावार्थः, एतत्प्रतिपादको ग्रन्थोऽप्या**चार** एवोच्यते । **आयारेणं** ति अनेनाचारेण करणभूतेन **श्रमणाना**माचाराद्याख्यायत इति योगः, अथवा **आचारे**ऽधिकरणभूते **ण**मिति वाक्यालङ्कारे **श्रमणानां** तपःश्रीसमालिङ्गितानां **निर्ग्रन्थानां** सबाह्याभ्यन्तरग्रन्थरहितानाम्, आह– श्रमणा निर्ग्रन्था एव भवन्तीति विशेषणं किमर्थमिति ?, उच्यते, **शाक्या**दिव्यवच्छेदार्थम्, उक्तं च– **निग्गंथ-सक्क-तावस-गेरुय-आजीव पंचहा समण** [पिण्डनि० ४४५][१] त्ति, तत्रा**ऽऽचारो** ज्ञानाद्यनेकभेदभिन्नः, **गोचरो** भिक्षाग्रहणविधिलक्षणः, **विनयो** ज्ञानादिविनयः, **वैनयिकं** तत्फलं कर्म्मक्षयादि, **स्थानं** कायोत्सर्गोपवेशन-शयनभेदात् त्रिरूपम्, **गमनं** विहारभूम्यादिषु गतिः, **चङ्क्रमणम्** उपाश्रयान्तरे शरीरश्रमव्यपोहाद्यर्थमितस्ततः सञ्चरणम्, **प्रमाणं** भक्त-पाना-ऽभ्यवहारोपध्यादेर्मानम्, **योगयोजनं** स्वाध्याय-प्रत्युपेक्षणादिव्यापारेषु परेषां नियोजनम्, **भाषा** संयतभाषा सत्या-ऽसत्यामृषारूपा, **समितयः** ईर्यासमित्याद्याः पञ्च, **गुप्तयो** मनोगुप्त्यादयस्तिस्रः, तथा **शय्या** च वसति**रुपधिश्च** वस्त्रादिको **भक्तं** च अशनादि **पानं** च उष्णोदकादीति द्वन्द्वः, तथा उद्गमोत्पादनैषणालक्षणानां दोषाणां **विशुद्धिः** अभाव **उद्गमोत्पादनैषणाविशुद्धिः**, ततः शय्यादीनामुद्गमादिविशुद्ध्या **शुद्धानां** तथाविधकारणेऽ**शुद्धानां** च **ग्रहणं शय्यादिग्रहणम्**, तथा **व्रतानि** मूलगुणा **नियमाः** उत्तरगुणास्**तपउपधानं** द्वादशविधं तपः, तत आचारश्च गोचरश्चेत्यादि यावद् गुप्तयश्च शय्यादिग्रहणं च व्रतानि च नियमाश्च तपउपधानं चेति समाहारद्वन्द्वस्ततस्तच्च तत् **सुप्रशस्तं** चेति कर्म्मधारयः, एतत् सर्वमा**ख्यायते** अभिधीयते । एतेषु **चाऽऽचारादि**पदेषु यत्र क्वचिदन्यतरोपादाने अन्यतरस्य गतार्थस्याभिधानं तत् सर्वं तत्प्राधान्यख्यापनार्थमेवेत्यवसेयमिति ।

---

१. ''निग्गंथ-सक्क-तावस-गेरुय-आजीव पंचहा समणा । तेसि परिवेसणाए लोभेण वणिज्ज को अप्पं ? ॥४४५॥ **व्या०- निर्ग्रन्थाः** साधवः, **शाक्याः** मायासूनवीयाः, **तापसाः** वनवासिनः पाखण्डिनः, **गैरुकाः** गेरुकरञ्जितवाससः परिव्राजकाः, **आजीवकाः** गोशालकशिष्या इति **पञ्चधा** पञ्चप्रकाराः श्रमणा भवन्ति, एतेषां च यथायोगं गृहिगृहेषु समागतानां **परिवेषणे** भोजनप्रदाने क्रियमाणे सति कोऽप्याहारलम्पटः साधुः **लोभेन** आहारादिलुब्धतया वनति शाक्यादिभक्तमात्मानं दर्शयति, तद्भक्तगृहिणः पुरत इति सामर्थ्यगम्यम् ॥४४५॥''- इति **पिण्डनिर्युक्तौ मलयगिरि**सूरिविरचितायां वृत्तौ ॥

से समास[ओ] इत्यादि, **सः** आचारो यमधिकृत्य ग्रन्थस्याचार इति संज्ञा प्रवर्त्तते **समासतः** संक्षेपतः **पञ्चविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा– ज्ञानाचार** इत्यादि, तत्र **ज्ञानाचारः** श्रुतज्ञानविषयः कालाध्ययन-विनयाध्ययनादिरूपो व्यवहारोऽष्टधा, **दर्शनाचारः** सम्यक्त्ववतां व्यवहारो निःशङ्कितादिरूपोऽष्टधा, **चारित्राचारः** चारित्रिणां समित्यादिपालनात्मको व्यवहारः, **तपआचारो** द्वादशविधतपोविशेषानुष्ठितिः, **वीर्याचारो** ज्ञानादिप्रयोजनेषु वीर्यस्याऽगोपनमिति । **आचारस्स** त्ति आचारग्रन्थस्य, **ण**मित्यलङ्कारे, **परित्ता** संख्येया आद्यन्तोपलब्धेर्नानन्ता भ[1]वतीत्यर्थः, का ? **वाचना** सूत्रार्थप्रदानलक्षणा, **अवसर्प्पिण्युत्सर्प्पिणीकालं** [2]वा प्रतीत्य [3]**परीते**ति । **संख्येयान्यनुयोगद्वाराणि** उपक्रमादीनि, अध्ययनानामेव संख्येयत्वात् प्रज्ञापकवचनगोचरत्वाच्च । **संखेज्जाओ पडिवत्तीओ** त्ति द्रव्यादिपदार्थाभ्युपगमा मतान्तराणीत्यर्थः, प्रतिमाद्यभिग्रहविशेषा वा । **संखेज्जा वेढ** त्ति **वेष्टकाः** छन्दोविशेषाः, एकार्थप्रतिबद्धवचनसङ्कलिकेत्यन्ये । **संखेज्जा सिलोग** त्ति श्लोकाः अनुष्टुप्छन्दांसि। **संख्याताः निर्युक्तयः, निर्युक्तानां** सूत्रेऽभिधेयतया व्यवस्थापितानामर्थानां **युक्तिः** घटना विशिष्टा योजना निर्युक्तयुक्तिः, एतस्मिंश्च वाच्ये युक्तशब्दलोपान्निर्युक्तिरित्युच्यते, एताश्च निक्षेपनिर्युक्त्याद्याः संख्येया इति । **से ण**मित्यादि, **स** आचारो **ण**मित्यलङ्कारे **अङ्गार्थतया** अङ्गलक्षणवस्तुत्वेन **प्रथममङ्गं** स्थापनामधिकृत्य, रचनापेक्षया तु द्वादशमङ्गं प्रथमम्, पूर्वगतस्य सर्वप्रवचनात् पूर्वं क्रियमाणत्वादिति **द्वौ श्रुतस्कन्धौ** अध्ययनसमुदायलक्षणौ । **पञ्चविंशतिरध्ययनानि**, तद्यथा–

सत्थपरिण्णा १ लोगविजओ २ सीओसणिज्ज ३ संमत्तं ४ ।

आवंति ५ धुय ६ विमोहो ७ महापरिण्णो ८ वहाणसुयं ९ ॥ [[4]आव० सं०] ति प्रथमश्रुतस्कन्धः ।

---

१. **भवंती** जे२ ॥ २. **वा** नास्ति जे१ ॥ ३. प्रतिषु पाठः- **परीत्तेति** जे२ हे१,२ । **परीते त्ति** खं० जे१॥
४. **आवश्यकसूत्र**स्य चतुर्थे प्रतिक्रमणाध्ययने '**अट्ठावीसविहे आयारकप्पे**' इति सूत्रस्य **हरिभद्र**सूरिविरचितायां वृत्तौ इदं गाथाद्वयं दृश्यते, तत्र च पूर्वापरसम्बन्धानुसारेण **आवश्यकसंग्रहणिकार**विरचितमिदं गाथाद्वयं प्रतीयते।

पिंडेसण १ सेज्जि २ रिया ३ भासज्जाया य ४ वत्थ ५ पाएसा ६ ।

उग्गहपडिमा ७ सत्त सत्तिक्कया १४ भावण १५ विमुत्ती १६ ॥ [आव० सं०] इति द्वितीयश्रुतस्कन्धः ।

एवमेतानि **निशीथ**वर्जानि पञ्चविंशतिरध्ययनानि । तथा **पञ्चाशीतिरुद्देशनकालाः**, कथम् ?, उच्यते, अङ्गस्य श्रुतस्कन्धस्याध्ययनस्योद्देशकस्य चैतेषां चतुर्णामप्येक एवोद्देशनकालः, एवं च शस्त्रपरिज्ञादिषु पञ्चविंशतावध्ययनेषु क्रमेण सप्त १ षट् २ चतु ३ श्चतुः ४ षट् ५ पञ्च ६ अष्ट ७ सप्त ८ चतु ९ रेकादश १० त्रि ११ त्रि १२ द्वि १३ द्वि १४ द्वि १५ द्वि १६ संख्या उद्देशनकालाः षोडशस्वध्ययनेषु, शेषेषु नवसु नवैवेति, इह सङ्ग्रहगाथा–

सत्त य छ च्चउ चउरो छ पंच अट्ठेव सत्त चउरो य ।

एक्कारा ति ति दो दो दो दो सत्तेक्क एक्को य ॥ [ ] त्ति ।

एवं समुद्देशनकाला अपि भणितव्याः । **अष्टादश पदसहस्राणि पदाग्रेण प्रज्ञप्तः**, इह यत्रार्थोपलब्धिस्तत् पदम् । ननु यदि द्वौ श्रुतस्कन्धौ पञ्चविंशतिरध्ययनान्यष्टादश पदसहस्राणि पदाग्रेण भवन्ति, ततो यद् भणितं [1]**नवबंभचेरमइओ अट्ठारसपदसहस्सिओ वेउ** [आचा० नि० ११] त्ति तत् कथं न विरुध्यते ? उच्यते, यत् द्वौ श्रुतस्कन्धावित्यादि तदाचारस्य प्रमाणं भणितम्, यत् पुनरष्टादश पदसहस्राणि तन्नवब्रह्मचर्य्याध्ययनात्मकस्य प्रथमश्रुतस्कन्धस्य प्रमाणम्, विचित्रार्थबद्धानि च सूत्राणि, गुरूपदेशतस्तेषामर्थोऽवसेय इति । **संख्येयानि अक्षराणि**, वेष्टकादीनां संख्येयत्वात् । **अनन्ता गमाः**, इह **गमाः** अर्थगमा गृह्यन्ते, अर्थपरिच्छेदा इत्यर्थः, ते चानन्ताः, एकस्मादेव सूत्रात्तत्तद्धर्मविशिष्टानन्तधर्म्मात्मकवस्तुप्रतिपत्तेः, अन्ये तु व्याचक्षते - अभिधानाभिधेयवशतो गमा भवन्ति, ते चानन्ताः । **अनन्ताः पर्यायाः** स्वपरभेदभिन्ना अक्षरार्थपर्याया इत्यर्थः । [2]**परित्तास्त्रसा** आख्यायन्त इति योगः, त्रसन्तीति **त्रसाः** द्वीन्द्रियादयस्ते च [3]परीत्ता नानन्ताः, एवंरूपत्वादेव तेषाम् । **अनन्ताः स्थावरा** वनस्पतिकायसहिताः ।

---

१. दृश्यतामत्र पृ०७१ पं०९ ॥ २. **परीत्ता॰** जे२ ॥ ३. **परीता** खं० जे१ ॥

किंभूता एते ? **सासया कडा निबद्धा निकाइय** त्ति **शाश्वताः** द्रव्यार्थतया अविच्छेदेन प्रवृत्तेः, **कृताः** पर्यायार्थतया प्रतिसमयमन्यथात्वावाप्तेः, **निबद्धाः** सूत्र एव ग्रथिताः, **निकाचिता** निर्युक्ति-सङ्ग्रहणि-हेतूदाहरणादिभिः प्रतिष्ठिता **जिनैः प्रज्ञप्ता भावाः** पदार्था अन्येऽप्यजीवादयः **आघविज्जंति** त्ति प्राकृतशैल्या **आख्यायन्ते** सामान्यविशेषाभ्यां कथ्यन्त इत्यर्थः, **प्रज्ञाप्यन्ते** नामादिभेदाभिधानेन, **प्ररूप्यन्ते** नामादिस्वरूपकथनेन, यथा **पज्जायाणभिधेय** [विशेषाव० २५] मित्यादि, **दर्श्यन्ते** उपमामात्रतः [1] **यथा गौर्गवयस्तथा** [मी० श्लो० वा०] इत्यादि, **निदर्श्यन्ते** हेतु-दृष्टान्तोपन्यासेन, **उपदर्श्यन्ते** उपनय-निगमनाभ्यां सकलनयाभिप्रायतो वेति ।

साम्प्रतमाचाराङ्गग्रहणफलप्रतिपादनायाह- **से एवमित्यादि, स** इत्याचाराङ्गग्राहको गृह्यते, **एवंआय** त्ति अस्मिन् भावतः सम्यगधीते सत्ये**वमात्मा** भवति, तदुक्तक्रियापरिणामाव्यतिरेकात् स एव भवतीत्यर्थः, इदं च सूत्रं पुस्तकेषु न दृष्टं **नन्द्यां** तु दृश्यते इतीह व्याख्यातमिति, एवं क्रियासारमेव ज्ञानमिति ख्यापनार्थं क्रियापरिणाममभिधायाधुना ज्ञानमधिकृत्य आह- **एवंनाय** त्ति इदमधीत्य **एवंज्ञाता** भवति यथैवेहोक्तमिति, **एवंविन्नाय** त्ति विविधो विशिष्टो वा ज्ञाता विज्ञाता **एवंविज्ञाता** भवति, तन्त्रान्तरीयज्ञातृभ्यः प्रधानतर इत्यर्थः । **एवमित्यादि** निगमनवाक्यम्, **एवम्** अनेन प्रकारेणाऽऽचारगोचरविनयाद्यभिधानरूपेण **चरण-करणप्ररूपणता आख्यायत** इति, **चरणं** व्रत-श्रमणधर्म्म-संयमाद्यनेकविधम्, **करणं** पिण्डविशुद्धि-समित्याद्यनेकविधम्, तयोः **प्ररूपणता** प्ररूपणैव **आख्यायते** इत्यादि पूर्ववदिति, [2] **सेत्तं आयारे** त्ति तदिदमाचारवस्तु अथवा सोऽयमाचारो यः [3] पूर्वं पृष्ट इति ॥१॥

[सू० १३७] से किं तं सूयगडे ? सूयगडेणं ससमया सूइज्जंति, परसमया सूइज्जंति, ससमय-परसमया सूइज्जंति, जीवा सूइज्जंति, अजीवा सूइज्जंति,

---

१. ''कीदृग् गवय इत्येवं पृष्टो नागरिकैर्यदि । ब्रवीत्यारण्यको वाक्यं यथा गौर्गवयस्तथा ॥१॥'' इति **मीमांसा श्लोकवार्तिके** उपमानपरिच्छेदे **न्यायरत्नाकरस्य** टीका ''प्रसिद्धसाधर्म्यात् साध्यसाधनमुपमानम्'' (न्या० सू० १.१.६) इति अक्षपादेनोक्तम्, **कीदृशो गवयः** इत्येवं नागरिकेण पृष्टो वन्यः प्रसिद्धेन गवा साधर्म्यादप्रसिद्धं गवयं येन वाक्येन बोधयति यथा- **गौरिव गवयः** इति, तद्वाक्यम् उपमानमिति । २. **सेतं** हे१ विना ॥ ३. **पूर्वपृष्ट** खं० हे२ । **पूर्वदृष्ट** हे१ ॥

जीवा-ऽजीवा सूइज्जंति, लोगे सूइज्जति, अलोगे सूइज्जति, लोगालोगे सूइज्जति। सूयगडे णं जीवा-ऽजीव-पुण्ण-पावा-ऽऽसव-संवर-णिज्जर-बंध-मोक्खावसाणा पयत्था सूइज्जंति । समणाणं अचिरकालपव्वइयाणं कुसमयमोहमोहमतिमोहिताणं संदेहजायसहजबुद्धिपरिणामसंसइयाणं पावकरमइलमतिगुणविसोहणत्थं आसीतस्स किरियावादिसतस्स चउरासीतीए अकिरियावादीणं सत्तट्ठीए अण्णाणियवादीणं बत्तीसाए वेणइयवादीणं तिण्हं तेसट्ठाणं अण्णदिट्ठियसयाणं वूहं किच्चा ससमए ठाविज्जति । णाणादिट्ठंतवयणणिस्सारं सुट्ठु दरिसयंता विविहवित्थाराणुगमपरम-सब्भावगुणविसिट्ठा मोक्खपहोदारगा उदारा, अण्णाणतमंधकारदुग्गेसु दीवभूता, सोवाणा चेव सिद्धिसुगतिघरुत्तमस्स, णिक्खोभनिप्पकंपा सुत्तत्था। सूयगडस्स णं परित्ता वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा, संखेज्जातो पडिवत्तीतो, संखेज्जा वेढा, [संखेज्जा] सिलोगा, [संखेज्जाओ] निज्जुत्तीतो । से णं अंगट्ठताए दोच्चे अंगे, दो सुतक्खंधा, तेवीसं अज्झयणा, तेत्तीसं उद्देसणकाला, तेत्तीसं समुद्देसणकाला, छत्तीसं पदसहस्साइं पयग्गेणं पण्णत्ते । संखेज्जा अक्खरा, तं चेव जाव परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासया कडा णिबद्धा णिकाइता जिणपण्णत्ता भावा आघविज्जंति जाव उवदंसिज्जंति । से [1][एवंआता, ?] एवंणाते[णाता?] एवंविण्णाते[ता?] जाव चरणकरणपरूवणया आघविज्जति [पण्णविज्जति परूविज्जति निदंसिज्जति उवदंसिज्जति] । सेत्तं सूयगडे ।

[टी०] से किं तं सूयगडे ? सूच सूचायाम् [ ], सूचनात् सूत्रम्, सूत्रेण कृतं सूत्रकृत[2]मिति रूढ्योच्यते। **सूयगडेणं** ति सूत्रकृतेन सूत्रकृते वा **स्वसमयाः सूच्यन्ते** इत्यादि कण्ठ्यम्, तथा [3]सूत्रकृतेन **जीवा-ऽजीव-पुण्य-पापा-ऽऽश्रव-संवर-निर्जरा-बन्ध-मोक्षावसानाः पदार्थाः सूच्यन्ते**। तथा **समणाण**मित्यादि, अत्र च **श्रमणानां**

१. अत्र १४७[७] तमे च सूत्रे **एवं णाते एवं विण्णाते** इत्येव पाठो हस्तलिखितादर्शेषु दृश्यते, किन्तु १३६ तमे सूत्रे **एवंआता एवंणाता एवंविण्णाता** इति पाठो वर्तते, **नन्दीसूत्रे**ऽपि **आचारादिवर्णनपरेषु** सर्वेषु सूत्रेषु तथैव पाठः । अतस्तदनुसारेण अत्र १४७[७] तमे च सूत्रे '**एवंआता, एवंणाता, एवंविण्णाता**' इति पाठः शुद्ध इति संभाव्यते ॥ २. **मिति इहोच्यते** जे१ खं० ॥ ३. **सूत्रकृते जीवा**° खं० ॥

मतिगुणविशोधनार्थं स्वसमयः स्थाप्यत इति वाक्यार्थः, तत्र श्रमणानां किंभूतानाम् ? **अचिरकालप्रव्रजितानाम्**, [1]चिरप्रव्रजिता हि निर्म्मलमतयो भवन्ति, अहर्निशं शास्त्रपरिचयाद् बहुश्रुतसंपर्काच्चेति, पुनः किंभूतानाम् ? **कुसमयमोह[मोह]मइ-मोहियाणं** ति, कुत्सितः **समयः** सिद्धान्तो येषां ते **कुसमयाः** कुतीर्थिकाः, तेषां **मोहः** पदार्थेष्वयथावद् बोधः **कुसमयमोहः**, तस्माद्यो **मोहः** श्रोतृमनोमूढता, तेन **मतिर्मोहिता** मूढतां नीता येषां ते **कुसमयमोहमोहमतिमोहिताः** । अथवा **कुसमयाः** कुसिद्धान्ताः, तेषाम् **ओघः** संघो **म**कारस्तु प्राकृतत्वात्, तस्माद्यो **मोहः** मूढता, तेन **मतिर्मोहिता** येषां ते **कुसमयौघमोहमतिमोहिताः** । अथवा **कुसमयानां** कुतीर्थिकानां **मौधो मोघो** वा शुभफलापेक्षया निष्फलो यो **मोहस्तेन मतिर्मोहिता** येषां ते **कुसमयमौधमोहमतिमोहिताः कुसमयमोघमोहमतिमोहिता** वा, तेषाम्, तथा **संदेहाः** वस्तुतत्त्वं प्रति संशयाः **कुसमयमोहमोहमतिमोहितानामि**ति विशेषणसान्निध्यात् कुसमयेभ्यः सकाशात् जाता येषां ते **सन्देहजाताः**, तथा **सहजात्** स्वभावसम्पन्नात् न कुसमयश्रवणसम्पन्नाद् **बुद्धिपरिणामात्** मतिस्वभावात् संशयो जातो येषां ते **सहजबुद्धिपरिणामसंशयिताः**, सन्देहजाताश्च सहजबुद्धिपरिणामसंशयिताश्च ये ते तथा, तेषाम्, श्रमणानामिति प्रक्रमः, किमत आह– **पापकरो** विपर्यय-संशयात्मकत्वेन कुत्सितप्रवृत्तिनिबन्धनत्वादशुभकर्म्महेतुरत एव च **मलिनः** स्वरूपाच्छादनादनिर्म्मलो यो **मतिगुणो** बुद्धिपर्यायस्तस्य **विशोधनाय** निर्म्मलत्वाधानाय पापकरमलिनमति-गुणविशोधनार्थम् ।

आसीयस्स किरियावाइसयस्स त्ति अशीत्यधिकस्य क्रियावादिशतस्य **व्यूहं कृत्वा स्वसमयः स्थाप्यत** इति योगः, एवं शेषेष्वपि पदेषु क्रिया योजनीयेति । तत्र न [2]कर्त्तारं विना [3]क्रिया संभवतीति तामात्मसमवायिनीं वदन्ति ये तच्छीलाश्च ते क्रियावादिनः, ते पुनरात्माद्यस्तित्वप्रतिपत्तिलक्षणा अमुनोपायेनाशीत्यधिकशतसंख्या विज्ञेयाः - **जीवा-ऽजीवा-ऽऽश्रव-बन्ध-संवर-निर्जरा-पुण्या-ऽपुण्य-मोक्षाख्यान्नव** पदार्थान् विरचय्य परिपाट्या जीवपदार्थस्याधः स्वपरभेदावुपन्यसनीयौ,

१. चिरकालप्रव्र° हे१,२ ॥ २. कर्त्रा विना जे१,२ हे२ ॥ ३. क्रिया भवतीति जे२ हे१ ॥

तयोरधो नित्यानित्यभेदौ, तयोरप्यधः कालेश्वरा-ऽऽत्म-नियति-स्वभावभेदाः पञ्च न्यसनीयाः, पुनरित्थं विकल्पाः कर्त्तव्याः - अस्ति जीवः स्वतो नित्यः कालत इत्येको विकल्पः, विकल्पार्थश्चायम् - विद्यते खल्वात्मा स्वेन रूपेण नित्यश्च कालवादिनः, उक्तेनैवाभिलापेन द्वितीयो विकल्प ईश्वरकारणिकस्य, तृतीयः आत्मवादिनः, चतुर्थो नियतिवादिनः, पञ्चमः स्वभाववादिनः, एवं स्वत इत्यपरित्यजता लब्धाः पञ्च विकल्पाः, परत इत्यनेनापि पञ्च लभ्यन्ते, नित्यत्वापरित्यागेन चैते दश विकल्पाः, एवमनित्यत्वेनापि दशैव, इति एकत्र विंशतिर्जीवपदार्थेन लब्धाः, अजीवादिष्वप्यष्टास्वेवमेव प्रतिपदं विंशतिर्विकल्पानामतो विंशतिर्नवगुणा शतमशीत्युत्तरं क्रियावादिनामिति ।

चउरासीए अकिरियवाईणं ति, एतेषां च स्वरूपं यथा [१] **नन्द्या**दिषु तथा वाच्यम्, नवरमेतद्व्याख्याने पुण्यापुण्यवर्जाः सप्त पदार्थाः स्थाप्यन्ते, तदधः स्वतः परतश्चेति पदद्वयम्, तदधः कालादीनां षष्ठी यदृच्छा न्यस्यते, ततश्च नास्ति जीवः स्वतः कालत इत्येको विकल्पः, एवमेते चतुरशीतिर्भव[२]न्ति ।

सत्तट्ठीए अन्नाणियवाईणं ति, एतेऽपि तथैव, नवरं जीवादीन्नव पदार्थानुत्पत्तिदशमान् व्यवस्थाप्याधः सप्त सदादयः स्थाप्याः, तद्यथा– सत्त्वमसत्त्वं सदसत्त्वमवाच्यत्वं सदवाच्यत्वमसदवाच्यत्वं सदसदवाच्यत्वमिति, तत्र को जानाति जीवस्य सत्त्वमित्येको विकल्पः, एवम[३]सत्त्वमित्यादि, तत एते सप्त नवकास्त्रिषष्टिः, उत्पत्तेस्त्वाद्या एव चत्वारो वाच्याः, इत्येवं सप्तषष्टिरिति ।

तथा **बत्तीसाए वेणइयवाईणं** ति, एते चैवम्– सुर-नृपति-ज्ञाति-यति-स्थविरा-

---

१. ''**चउरासीईते अकिरियावादीणं** चतुरशीतेरक्रियावादिनाम्, क्रिया पूर्ववत्, न हि कस्यचिदनवस्थितस्य पदार्थस्य क्रिया समस्ति, तद्भावे चावस्थितेरभावादित्येवंवादिनोऽक्रियावादिनः । तथा चाऽऽहुरेके- 'क्षणिकाः सर्वसंस्काराः, अस्थितानां कुतः क्रिया ?। भूतिर्येषां क्रिया सैव कारकं सैव चोच्यते ॥१॥' [ ] इत्यादि । एते चाऽऽत्मादिनास्तित्वप्रतिपत्तिलक्षणा अमुनोपायेन चतुरशीतिर्द्रष्टव्याः एतेषां हि पुण्या-ऽपुण्यविवर्जितपदार्थसप्तकन्यासस्तथैव, जीवस्याधः स्व-परविकल्पभेदद्वयोपन्यासः, असत्त्वादात्मनो नित्याऽनित्यभेदौ न स्तः, कालादीनां तु पञ्चानां षष्ठी यदृच्छा न्यस्यते, पश्चाद् विकल्पाभिलापः- नास्ति जीवः स्वतः कालत इत्येको विकल्पः, एवमीश्वरादिभिरपि यदृच्छावसानैः, सर्वे च षड् विकल्पाः ।'' इति **नन्दीसूत्रे सूत्रकृताङ्ग**स्वरूपवर्णने **हरिभद्रसूरि**विरचितायां वृत्तौ ॥
२. °**र्भवति** खं० ॥ ३. °**सत्त्वादि** जे२ ॥

ऽधम-मातृ-पितॄणां प्रत्येकं काय-वाङ्-मनो-दानैश्चतुर्द्धा विनयः कार्य इत्यभ्युपगमवन्तो द्वात्रिंशदिति ।

एवं चैतेषां चतुर्णां वादिप्रकाराणां मीलने त्रीणि त्रिषष्ट्यधिकानि अन्यदृष्टिशतानि भवन्त्यत उच्यते- **तिण्हमित्यादि, वूहं किच्च** त्ति प्रतिक्षेपं कृत्वा **स्वसमयो** जैनसिद्धान्तः **स्थाप्यते** । यत एवं सूत्रकृतेन विधीयते अतस्तत्सूत्रार्थयोः स्वरूपमाह– **नाणेत्यादि, नाना** अनेकधा बहुभिः प्रकारैरित्यर्थः, **दिट्ठंतवयणनिस्सारं** ति स्याद्वादिना पूर्वपक्षीकृतानां प्रवादिनां स्वपक्षस्थापनाय यानि दृष्टान्तवचनान्युपलक्षणत्वाद्धेतुवचनानि च तदपेक्षया **निस्सारं** सारताशून्यं परेषां मतमिति गम्यते, **सुष्ठु** पुनरप्रतिक्षेपणीयत्वेन **दर्शयन्तौ** प्रकटयन्तौ तथा विविधश्चासौ सत्पदप्ररूपणाद्यनेकानुयोगद्वाराश्रितत्वेन **विस्तारानुगमश्च** अनुगमनीयानेकजीवादितत्त्वानां विस्तरप्रतिपादनं **विविध-विस्तारानुगमः**, तथा **परमसद्भावः** अत्यन्तसत्यता वस्तूनामैदम्पर्यमित्यर्थः, तावेव **गुणौ** ताभ्यां **विशिष्टौ विविधविस्तारानुगमपरमसद्भावगुणविशिष्टौ, मोक्खपहोयारग** त्ति मोक्षपथावतारकौ, सम्यग्दर्शनादिषु प्राणिनां प्रवर्त्तकावित्यर्थः, **उदार** त्ति **उदारौ** सकलसूत्रार्थदोषरहितत्वेन निखिलतद्गुणसहितत्वेन च, तथाऽज्ञानमेव **तमः अन्धकार**मात्यन्तिकान्धकारमथवा प्रकृष्टमज्ञानमज्ञानतमं तदेवान्धकारम**ज्ञानतमोऽन्धकारमज्ञानतमान्धकारं** वा, तेन ये **दुर्गा** दुरधिगमास्ते तथा, तेषु, तत्त्वमार्गेष्विति गम्यते, **दीवभूय** त्ति प्रकाशकारित्वाद् दीपोपमौ, **सोवाणा चेव** त्ति **सोपानानीव** उन्नताऽऽरोहणमार्गविशेष [१]इव **सिद्धिसुगतिगृहोत्तमस्य** सिद्धिलक्षणा सुगतिः सिद्धिसुगतिरथवा सिद्धिश्च सुगतिश्च सुदेवत्व-सुमानुषत्वलक्षणा सिद्धि-सुगती, तल्लक्षणं यद् गृहाणामुत्तमं **गृहोत्तमं** वरप्रासादस्तस्य **सिद्धिसुगतिगृहोत्तमस्या**रोहण इति [२]गम्यते, **निक्खोहनिप्पकंप** त्ति निक्षोभौ वादिना **क्षोभयितुं** चलयितुमशक्यत्वात् निष्प्रकम्पौ स्वरूपतोऽपीषद्व्यभिचारलक्षणकम्पाभावात्, कावित्याह – **सूत्रार्थौ** सूत्रं चार्थश्च निर्युक्ति-भाष्य-सङ्ग्रहणि-वृत्ति-चूर्णि-पञ्जिकादिरूप

---

१. इव सिद्धिसुगतिरथवा सिद्धिश्च सुगतिश्च खं० जे१ । इव सिद्धिसुगइगृहोत्तमस्य सिद्धिलक्षणा सुगति सिद्धिश्च सुगतिश्च जे२ ॥ २. गम्यं निक्खो° जे२ ॥

इति सूत्रार्थौ, शेषं कण्ठ्यं यावत् **सेत्तं सूयगडे** त्ति, नवरं **त्रयस्त्रिंशदुद्देशनकालाः**–

चउ ४ तिय ३ चउरो ४ दो २ दो २ एक्कारस चेव हुंति एक्कसरा ।

सत्तेव महज्झयणा एगसरा बीयसुयखंधे ॥ [ ] इत्यतो गाथातोऽवसेया इति ।

[सू० १३८] से किं तं ठाणे ? ठाणेणं ससमया ठाविज्जंति, परसमया ठाविज्जंति, ससमय-परसमया [ठाविज्जंति], जीवा ठाविज्जंति, अजीवा [ठाविज्जंति], जीवाजीवा [ठाविज्जंति], लोगो अलोगो लोगालोगो वा ठाविज्जति । ठाणेणं दव्व-गुण-खेत्त-काल-पज्जव पयत्थाणं ।

सेला सलिला य समुद्द सूर भवण विमाण आगरा णदीतो ।
णिधयो पुरिसज्जाया सरा य गोत्ता य जोतिसंचाला ॥६०॥

एक्कविधवत्तव्वयं दुविह जाव दसविहवत्तव्वयं जीवाण पोग्गलाण य लोगट्ठाइं च णं परूवणया आघविज्जति जाव ठाणस्स णं परित्ता वायणा जाव संखेज्जा सिलोगा, संखेज्जातो संगहणीतो । से तं(णं) अंगट्ठताए ततिए अंगे, एगे सुतक्खंधे, दस अज्झयणा, एक्कवीसं उद्देसणकाला, एक्कवीसं समुद्देसणकाला, बावत्तरिं पयसहस्साइं पदग्गेणं पण्णत्ते । संखेज्जा अक्खरा जाव चरणकरणपरूवणया आघविज्जति । सेत्तं ठाणे ।

[टी०] **से किं तं ठाणे** इत्यादि, अथ **किं तत् स्थानम्** ?, तिष्ठन्त्यस्मिन् प्रतिपाद्यतया जीवादय इति स्थानम्, तथा चाह– **ठाणेण**मित्यादि, स्थानेन स्थाने वा जीवाः स्थाप्यन्ते यथावस्थितस्वरूपप्रतिपादनयेति हृदयम्, शेषं प्रायो निगदसिद्धमेव, नवरं [१]**ठाणेण**मित्यस्य पुनरुच्चारणं सामान्येन पूर्वोक्तस्यैव स्थापनीयविशेषप्रतिपादनाय वाक्यान्तरमिदमिति ज्ञापनार्थम्, तत्र **दव्वगुणखेत्तकालपज्जव** त्ति प्रथमाबहुवचनलोपाद् द्रव्य-गुण-क्षेत्र-काल-पर्यवाः **पदार्थानां** जीवादीनां स्थानेन स्थाप्यन्ते इति प्रक्रमः, तत्र **द्रव्यं** द्रव्यार्थता यथा जीवास्तिकायोऽनन्तानि द्रव्याणि, **गुणः** स्वभावो यथोपयोगस्वभावो जीवः, **क्षेत्रं** यथा असंख्येयप्रदेशावगाहनोऽसौ, **कालो** यथा अनाद्यपर्यवसितः, **पर्यवाः** कालकृता अवस्था यथा नारकत्वादयो बालत्वादयो वेति।

---

१. ठाणेणं त्यस्य जे२ हे१,२ ॥

सेला इत्यादि गाथाविशेषः, तत्र **शैलाः हिमवदा**[1]दिपर्वताः स्थाप्यन्ते स्थानेनेति योगः सर्वत्र, **सलिलाश्च गङ्गाद्या** महानद्यः, **समुद्राः लवणादयः, सूराः** आदित्याः, **भवनानि** असुरादीनाम्, **विमानानि** चन्द्रादीनाम्, **आकराः** सुवर्णाद्युत्पत्तिभूमयः, **नद्यः** सामान्या **मही-कोसीप्रभृतयः, निधयः** चक्रवर्त्तिसम्बन्धिनो **नैसर्प्पादयो** नव, **पुरिसजाय** त्ति पुरुषप्रकारा उन्नतप्रणतादिभेदाः, पाठान्तरेण **पुस्सजोय** त्ति उपलक्षणत्वात् **पुष्यादि**नक्षत्राणां चन्द्रेण सह पश्चिमाग्रिमोभयप्रमर्द्दादिका योगाः, **स्वराश्च** षड्जादयः सप्त, **गोत्राणि च काश्यपादीनि** एकोनपञ्चाशत्, **जोइसंचाल** त्ति ज्योतिषः तारकरूपस्य सञ्चलनानि **तिहिं ठाणेहिं तारारूवे चलेज्जा [स्थानाङ्ग० सू० १४१]** इत्यादिना सूत्रेण स्थाप्यन्ते स्थानेनेति प्रक्रमः ।

तथा **एकविधं** च तद् **वक्तव्यकं** च तदभिधेयमित्ये**कविधवक्तव्यकं** प्रथमे अध्ययने स्थाप्यत इति योगः, एवं **द्विविधवक्तव्यकं** द्वितीयेऽध्ययने, एवं तृतीयादिषु **यावद् दशविधवक्तव्यकं** दशमेऽध्ययने ।

तथा **जीवानां पुद्गलानां च प्ररूपणताऽऽख्यायत** इति योगः, तथा **लोगट्ठाइं च णं** ति लोकस्थायिनां च धर्म्माधर्म्मास्तिकायादीनां **प्ररूपणता** प्रज्ञापना, शेषमाचारसूत्रव्याख्यानवदवसेयम्, नवरमे**कविंशतिरुद्देशनकालाः**, कथम् ? द्वितीय-तृतीय-चतुर्थेष्वध्ययनेषु चत्वारश्चत्वार उद्देशकाः पञ्चमे त्रय इत्येते पञ्चदश, शेषास्तु षट् षण्णामध्ययनानां षडुद्देशनकालत्वादिति । **बावत्तरिं पदसहस्साइं** ति अष्टादशपदसहस्रमाना**दाचाराद्** द्विगुणत्वात् [2]**सूत्रकृत**स्य ततोऽपि द्विगुणत्वात् **स्थान**स्येति ॥३॥

[सू० १३९] से किं तं [3]समवाए ? समवाए णं ससमया सूइज्जंति, परसमया सूइज्जंति, ससमय-परसमया सूइज्जंति, जीवा सूइज्जंति, अजीवा सूइज्जंति, जीवाजीवा सूइज्जंति, लोगे सूइज्जति, अलोगे सूइज्जति, लोगालोगे सूइज्जति। समवाए णं एकादियाणं एगत्थाणं एगुत्तरिय परिवड्ढी य दुवालसंगस्स य

---

१. **नारकादयो** जे२ ॥ २. **सूत्रकृतस्य ततोऽपि द्विगुणत्वात्** जे१ मध्ये नास्ति । खं० मध्ये तु अधस्तात् पूरितः । **सूत्रकृतस्तत् द्विगुणत्वात्** जे२ ॥ ३. **समाये** अटी० ॥

गणिपिडगस्स पल्लवग्गे समणुगाइज्जति । ठाणगसयस्स बारसविहवित्थरस्स सुतणाणस्स जगजीवहितस्स भगवतो समासेणं समायारे आहिज्जति । तत्थ य णाणाविहप्पगारा जीवाजीवा य वण्णिता वित्थरेणं, अवरे वि य बहुविहा विसेसा नरग-तिरिय-मणुय-सुरगणाणं आहारुस्सास-लेस-आवाससंख-आययप्पमाण-उववाय-चवण-ओगाहणोहि- वेयण-विहाण-उवओग-जोग-इंदिय-कसाय, विविहा य जीवजोणी, विक्खंभुस्सेहपरिरयप्पमाणं विधिविसेसा य मंदरादीणं महीधराणं, कुलगर-तित्थगर-गणधराणं समत्तभरहाहिवाण चक्कीण चेव चक्कहर-हलहराण य, वासाण य निग्गमा य, समाए एते अण्णे य एवमादि एत्थ वित्थरेणं अत्था समाहिज्जंति । समवायस्स णं परित्ता वायणा जाव से णं अंगट्ठताए चउत्थे अंगे, एगे अज्झयणे, एगे सुयक्खंधे, एगे उद्देसणकाले, एगे समुद्देसणकाले, एगे चोयाले पदसतसहस्से पदग्गेणं पण्णत्ते। संखेज्जाणि अक्खराणि जाव सेत्तं समवाए ।

[टी०] **से किं त**मित्यादि, अथ **कोऽसौ समवायः** ?, सूत्रे तु प्राकृतत्वेन वकारलोपात् **समाये** इत्युक्तम्, समवायनं **समवायः** सम्यक् परिच्छेद इत्यर्थः, तद्धेतुश्च ग्रन्थोऽपि **समवायः**, तथा चाह-- **समवायेन समवाये वा स्वसमयाः सूच्यन्ते** इत्यादि कण्ठ्यम् । तथा **समवायेन समवाये वा, एगाइयाणं** ति एकद्वित्रिचतुरादीनां शतान्तानां कोटीकोट्यन्तानां वा, **एगत्थाणं** ति एके च ते अर्थाश्चेत्येकार्थास्तेषाम्, अयमर्थः– **एकेषां** केषाञ्चित्, न सर्वेषाम्, निखिलानां वक्तुमशक्यत्वात्, **अर्थानां** जीवादीनाम्, **एगुत्तरिय** त्ति एक उत्तरो यस्यां सा एकोत्तरा सैव **एकोत्तरिका**, इह च प्राकृतत्वात् ह्रस्वत्वम्, **परिवुड्डी य** त्ति परिवृद्धिश्चेति समनुगीयते समवायेनेति योगः, तत्र च परिवर्द्धनं संख्यायाः समवसेयम्, **च**शब्दस्य चान्यत्र सम्बन्धादेकोत्तरिका अनेकोत्तरिका च, तत्र शतं यावदेकोत्तरिका परतोऽनेकोत्तरिकेति । तथा **द्वादशाङ्गस्य च गणिपिटकस्य पल्लवग्गं** ति पर्यवपरिमाणम् अभिधेयादितद्धर्मसंख्यानं यथा **परित्ता तसा** इत्यादि पर्यवशब्दस्य च **पल्लव** त्ति निर्देशः प्राकृतत्वात् पर्यङ्कः पल्लंक

इत्यादिवदिति, अथवा पल्लवा इव **पल्लवाः** अवयवास्तत्परिमाणं **समणुगाइज्जइ**[1] त्ति समनुगीयते प्रतिपाद्यते ।

पूर्वोक्तमेवार्थं प्रपञ्चयन्नाह– **ठाणगेत्यादि, ठाणगसयस्स** त्ति स्थानकशतस्यैकादीनां शतान्तानां संख्यास्थानानाम्, तद्विशेषितात्मादिपदार्थानामित्यर्थः, तथा **द्वादशविधो विस्तरो** यस्याचारादिभेदेन तत् **द्वादशविधविस्तरम्**, तस्य, **श्रुतज्ञानस्य** जिनप्रवचनस्य, किंभूतस्य ? **जगज्जीवहितस्य, भगवतः** श्रुतातिशययुक्तस्य **समासेन** संक्षेपेण **समाचारः** प्रतिस्थानं प्रत्यङ्गं च विविधाभिधेयाभिधायकत्वलक्षणो व्यवहारः **आहिज्जइ** त्ति आख्यायते । अथ समाचाराभिधानानन्तरं तत्र यदुक्तं तदभिधातुमाह– **तत्थ येत्यादि, तत्थ य** त्ति तत्रैव समवाये इति योगः, [2]नानाविधः प्रकारो येषां ते **नानाविधप्रकाराः**, तथाहि– एकेन्द्रियादिभेदेन पञ्चप्रकारा जीवाः, पुनरेकैकः प्रकारः पर्याप्ता-ऽपर्याप्तादिभेदेन नानाविधः, **जीवाजीवा य** त्ति जीवा अजीवाश्च वर्णिता **विस्तरेण** महता वचनसन्दर्भेण, **अपरेऽपि च बहुविधा विशेषा** जीवाजीवधर्म्मा वर्णिता इति योगः, तानेव लेशत आह– [3]**नरएत्यादि, नरय** त्ति निवासनिवासिनामभेदोपचारान्नारकाः, ततश्च **नारकतिर्यग्मनुजसुरगणानां** सम्बन्धिन आहारादयः, तत्र **आहारः** ओजआहारादिराभोगिकानाभोगिकस्वरूपोऽनेकधा, **उच्छ्वासो**ऽनुसमयादिः कालभेदेनानेकधा, **लेश्या** कृष्णादिका षोढा, **आवाससंख्या** यथा नरकावासानां चतुरशीतिर्लक्षाणीत्यादिका, **आयतप्रमाण**मावासानामेव संख्यातासंख्यातयोजनायामता, उपलक्षणत्वादस्य विष्कम्भ-बाहल्य-परिधिमानान्यप्यत्र द्रष्टव्यानि, **उपपात** एकसमयेनैतावतामेतावता वा कालव्यवधानेनोत्पत्तिः, **च्यवन**मेकसमयेनैतावतामियता वा कालव्यवधानेन मरणम्, **अवगाहना** शरीरप्रमाणमङ्गुलासंख्येयभागादि, **अवधिः** अङ्गुलासंख्येयभागक्षेत्रविषयादिः, **वेदना** शुभाशुभस्वभावा, **विधानानि** भेदा यथा सप्तविधा नारका इत्यादि, **उपयोगः** आभिनिबोधिकादिर्द्वादशविधः, **योगः** पञ्चदशविधः, **इन्द्रियाणि** पञ्च,

१. °इज्जंति समनुगीयंते प्रतिपाद्यते खं० । °इज्जंति समनुगीयते प्रतिपाद्यते जे१ । °इज्जत्ति समनुगीयते प्रतिपाद्यते जे२ ॥ २. नानाविधः नानाविधः जे२ ॥ ३. नरेत्यादि खंसं० विना ॥

द्रव्यादिभेदाद् विंशतिर्वा, श्रोत्रादिच्छिद्राद्यपेक्षयाऽष्टौ वा, **कषाया: क्रोधादय:** आहारश्चोच्छ्वासश्चेत्यादिद्व(द्वं)न्द्वस्ततः कषायशब्दात् प्रथमाबहुवचनलोपो द्रष्टव्यः, तथा **विविधा च जीवयोनि:** सचित्तादिकं जीवानामुत्पत्तिस्थानम्, तथा **विष्कम्भोत्सेध-परिरयप्रमाणं विधिविशेषाश्च मन्दरादीनां महीधराणा**मिति, तत्र **विष्कम्भो** विस्तार **उत्सेधः** उच्चत्वं **परिरय:** परिधिः, **विधिविशेषा** इति **विधयो** भेदा यथा **मन्दरा** जम्बूद्वीपीय-धातकीखण्डीय-पौष्करार्द्धिकभेदात् त्रिधा तद्विशेषस्तु जम्बूद्वीपको लक्षोच्चः शेषास्तु पञ्चाशीतिसहस्रोच्छ्रिता इति, एवमन्येष्वपि भावनीयम्, तथा **कुलकर-तीर्थकर-गणधराणां** तथा **समस्तभरताधिपानां चक्रिणां चैव** तथा **चक्रधर-हलधराणां च** विधिविशेषाः इति योगः, तथा **वर्षाणां** च **भरता**दिक्षेत्राणां **निर्गमा:** पूर्वेभ्यः उत्तरेषामाधिक्यानि, **समाए** त्ति **समवाये** चतुर्थे अङ्गे वर्णिता इति प्रक्रमः, अथैतन्निगमयन्नाह– **एते** चोक्ताः पदार्था **अन्ये च** घन-तनुवातादयः पदार्थाः, **एवमादय:** एवंप्रकाराः **अत्र** समवाये **विस्तरेणार्था: समाश्रीयन्ते**, अविपरीतस्वरूपगुणभूषिता बुद्ध्याऽङ्गीक्रियन्त इत्यर्थः, अथवा **समस्यन्ते** कुप्ररूपणाभ्यः सम्यक् प्ररूपणायां क्षिप्यन्ते, शेषं निगदसिद्धमा निगमनादिति ॥५॥

[सू० १४०] से किं तं वियाहे ? वियाहेणं ससमया विआहिज्जंति, परसमया विआहिज्जंति, ससमय-परसमया विआहिज्जंति, जीवा विआहिज्जंति, अजीवा विआहिज्जंति, जीवाजीवा विआहिज्जंति, लोए विआहिज्जति, अलोए वियाहिज्जति । वियाहेणं नाणाविहसुर-नरिंद-रायरिसि-विविहसंसइय-पुच्छियाणं जिणेण वित्थरेण भासियाणं दव्वगुणखेत्तकालपज्जवपदेस-परिणामजहत्थिभावअणुगमनिक्खेवणयप्पमाण-सुनिउणोवक्कमविविहप्पकार-पागडपयंसियाणं लोगालोगप्पगासियाणं संसारसमुद्दरुंदउत्तरणसमत्थाणं सुरवतिसंपूजियाणं भवियजणपयहिययाभिनंदियाणं तमरयविद्धंसणाण-सुदिट्ठदीवभूयईहामतिबुद्धिवद्धणाणं छत्तीससहस्समणूणयाणं वागरणाणं दंसणाओ सुयत्थबहुविहप्पगारा सीसहितत्थाय गुणहत्था । वियाहस्स णं परित्ता वायणा जाव अंगट्ठताए पंचमे अंगे, एगे सुतक्खंधे, एगे साइरेगे

अज्झयणसते, दस उद्देसगसहस्साइं, दस समुद्देसगसहस्साइं, छत्तीसं वागरणसहस्साइं, चउरासीति पयसहस्साइं पयग्गेणं पण्णत्ते । संखेज्जाइं अक्खराइं, अणंता गमा जाव सासया कडा णिबद्धा [णिकाइया जिणपण्णत्ता भावा] आघविज्जंति जाव एवं चरणकरणपरूवणया आघविज्जति । सेत्तं वियाहे ।

[टी०] से किं तं वियाहे इत्यादि, अथ **केयं व्याख्या** ?, व्याख्यायन्ते अर्था यस्यां सा **व्याख्या**, वियाहे इति च पुल्लिँङ्गनिर्देशः प्राकृतत्वात्, **वियाहेणं** ति व्याख्यया व्याख्यायां वा **ससमया** इत्यादीनि नव पदानि **सूत्रकृत**वर्णके व्याख्याततत्वादिह कण्ठ्यानि । **वियाहेण**मित्यादि, **नानाविधैः सुरैः नरेन्द्रैः राजऋषिभिश्च विविहसंसइय** त्ति **विविधसंशयितैः** विविधसंशयवद्भिः **पृष्टानि** यानि तानि तथा, तेषां **नानाविधसुरनरेन्द्रराजऋषिविविधसंशयितपृष्टानां** व्याकरणानां षट्त्रिंशतः सहस्राणां दर्शनात् श्रुतार्था व्याख्यायन्त इति पूर्वापरेण वाक्यसंबन्धः, पुनः किंभूतानां व्याकरणानाम् ? **जिनेने**ति भगवता **महावीरेण वित्थरेण भासियाणं** विस्तरेण भणितानामित्यर्थः, पुनः किंभूतानाम् ? **दव्वे**त्यादि, **द्रव्य-गुण-क्षेत्र-काल-पर्यव-प्रदेश-परिणामानां यथास्तिभावोऽनुगम-निक्षेप-नय-प्रमाण-सुनिपुणोपक्रमैर्विविधप्रकारैः प्रकटः प्रदर्शितो** यैर्व्याकरणैस्तानि तथा, तेषाम्, तत्र **द्रव्याणि** धर्मास्तिकायादीनि, **गुणा** ज्ञान-वर्णादयः, **क्षेत्रम्** आकाशम्, **कालः** समयादिः, **पर्यवाः** स्व-परभेदभिन्ना धर्म्माः, अथवा कालकृता अवस्था नव-पुराणादयः पर्यवाः, **प्रदेशा** निरंशावयवाः, **परिणामाः** अवस्थातोऽवस्थान्तरगमनानि, **यथा** येन प्रकारेणा**ऽस्तिभावः** अस्तित्वं सत्ता **यथाऽस्तिभावः**, **अनुगमः** संहितादिव्याख्यानप्रकाररूपः उद्देश-निर्देश-निर्गमादिद्वारकलापात्मको वा, **निक्षेपो** नाम-स्थापना-द्रव्य-भावैर्वस्तुनो न्यासः, **नयप्रमाणम्, नया नैगमा**दयः सप्त द्रव्यास्तिक-पर्यायास्तिकभेदात् ज्ञाननय-क्रियानयभेदान्निश्चय-व्यवहारभेदाद्वा द्वौ, ते एव तावेव वा **प्रमाणं** वस्तुतत्त्वपरिच्छेदनं **नयप्रमाणम्**, तथा **सुनिपुणः** सुसूक्ष्मः **सुनिगुणो** वा सुष्ठु निश्चितगुण **उपक्रमः** आनुपूर्व्यादिः, **विविधप्रकारता** चैषां भेदभणनत एवोपदर्शितेति,

पुनः किंभूतानां व्याकरणानाम् ?, **लोकालोकौ प्रकाशितौ** येषु तानि तथा, तेषाम्, तथा **संसारसमुद्दरुंदउत्तरणसमत्थाणं** ति संसारसमुद्रस्य **रुंदस्य** विस्तीर्णस्य **उत्तरणे** तारणे समर्थानामित्यर्थः, अत एव **सुरपतिसंपूजितानां** प्रच्छक-निर्णायकपूजनात् सूक्तत्वेन श्लाघितत्वाद्वा, तथा **भवियजणपयहिययाभिणंदियाणं** ति **भव्यजनानां** भव्यप्राणिनां **प्रजा** लोको **भव्यजनप्रजा भव्यजनपदो** वा, तस्यास्तस्य वा **हृदयैः** चित्तैर**भिनन्दितानां** अनुमोदितानामिति विग्रहः, तथा **तमोरजसी** अज्ञान-पातके **विध्वंसयति** नाशयति यत्त**तमोरजोविध्वंसं** तच्च तद् ज्ञानं च **तमोरजोविध्वंसज्ञानम्**, तेन **सुष्ठु दृष्टानि** निर्णीतानि यानि तानि तथा, अत एव तानि च तानि **दीपभूतानि** चेति, अत एव तानि च तानि **ईहामतिबुद्धिवर्द्धनानि** चेति, तेषां **तमोरजोविध्वंसज्ञानसुदृष्टदीपभूतेहामतिबुद्धिवर्द्धनानाम्**, तत्र **ईहा** वितर्कः, **मतिः** अवायो निश्चय इत्यर्थः, **बुद्धिः** औत्पत्तिक्यादिश्चतुर्विधेति, अथवा **तमोरजोविध्वंसनाना**मिति पृथगेव पदम्, पाठान्तरेण **सुदृष्टदीपभूताना**मिति च, तथा **छत्तीससहस्समणूणयाणं** ति अन्यूनकानि षट्त्रिंशत् सहस्राणि येषां तानि तथा, इह **म**कारोऽन्यथा पदनिपातश्च प्राकृतत्वादनवद्य इति, **वागरणाणं** ति व्याक्रियन्ते प्रश्नानन्तरमुत्तरतयाऽभिधीयन्ते निर्णायकेन यानि तानि **व्याकरणानि**, तेषां **दर्शनात्** प्रकाशनादुपनिबन्धनादित्यर्थः, अथवा तेषां **दर्शना** उपदर्शका इत्यर्थः, क इत्याह- **सुयत्थबहुविहप्पयार** त्ति श्रुतविषया अर्थाः **श्रुतार्था** अभिलाप्यार्थविशेषा इत्यर्थः, **श्रुता** वा आकर्णिता जिनसकाशे गणधरेण ये **अर्थास्ते श्रुतार्थाः**, अथवा **श्रुत**मिति सूत्रम् **अर्था** निर्युक्त्यादय इति **श्रुतार्थाः**, ते च ते **बहुविधप्रकारा**श्चेति विग्रहः, **श्रुतार्थानां** वा **बहुविधाः प्रकारा** इति विग्रहः, किमर्थं ते व्याख्यायन्त इत्याह– **शिष्यहितार्थाय** शिष्याणां **हितम्** अनर्थप्रतिघाता-ऽर्थप्राप्तिरूपं तदेवाऽ**र्थः** प्रार्थ्यमानत्वात्तस्य, तस्मै इति, किंभूतास्ते अत आह– **गुणहस्ताः**, **गुण** एवार्थप्राप्त्यादिलक्षणो हस्त इव **हस्तः** प्रधानावयवो येषां ते तथा ।

वियाहस्सेत्यादि तु निगमनान्तं सूत्रसिद्धम्, नवरं **शत**मिहाध्ययनस्य संज्ञा । **चतुरशीतिः पदसहस्राणि पदाग्रेणे**ति **समवाया**पेक्षया द्विगुणताया इहानाश्रयणात्,

अन्यथा तद्द्विगुणत्वे द्वे लक्षे अष्टाशीतिः सहस्राणि च भवन्तीति ॥५॥

[सू० १४१] से किं तं णायाधम्मकहाओ ? णायाधम्मकहासु णं णायाणं णगराइं, उज्जाणाइं, चेतियाइं, वणसंडा, रायाणो, अम्मापितरो, समोसरणाइं, धम्मायरिया, धम्मकहातो, इहलोइया पारलोइया इड्डिविसेसा, भोगपरिच्चाया, पव्वजातो, सुतपरिग्गहा, तवोवहाणाइं, परियागा, संलेहणातो, भत्तपच्चक्खाणाइं, पाओवगमणाइं, देवलोगगमणाइं, सुकुलपच्चायाती, पुण बोहिलाभो, अंतकिरियातो य आघविज्जंति जाव नायाधम्मकहासु णं पव्वइयाणं विणयकरणजिणसामिसासणवरे संजमपतिण्णापालणधिइमतिववसायदुब्बलाणं तवनियमतवोवहाणरणदुद्धरभरभग्गाणिसहाणिसट्ठाणं घोरपरीसहपराजियासहप[पा]रुद्धरुद्धसिद्धालयमग्गनिग्गयाणं विसयसुहतुच्छआसावसदोसमुच्छियाणं विराहियचरित्तणाणदंसणजतिगुणविविहप्पगारणिस्सारसुन्नयाणं संसारअपारदुक्खदुग्गतिभवविविहपरंपरापवंचा, धीराण य जियपरीसहकसायसेण्णधितिधणियसंजमउच्छाहनिच्छियाणं आराहियणाणदंसणचरित्तजोगणिस्सल्लसुद्धसिद्धालयमग्गमभिमुहाणं सुरभवणविमाणसोक्खाइं अणोवमाइं भोत्तूण चिरं च भोगभोगाणि ताणि दिव्वाणि महरिहाणि ततो य कालक्कमचुयाणं जह य पुणो लद्धसिद्धिमग्गाणं अंतकिरिया, चलियाण य सदेवमाणुसधीरकरणकारणाणि बोधणअणुसासणाणि गुणदोसदरिसणाणि, दिट्ठंते पच्चये य सोऊण लोगमुणिणो जह य ट्ठिय सासणम्मि जरमरणणासणकरे, आराहितसंजमा य सुरलोगपडिनियत्ता उवेंति जह सासतं सिवं सव्वदुक्खमोक्खं, एते अण्णे य एवमादित्थ वित्थरेण य । णायाधम्मकहासु णं परित्ता वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा जाव संखेज्जातो संगहणीतो । से णं अंगट्ठताए छट्ठे अंगे, दो सुतक्खंधा, एकूणवी(ती?)सं[1] अज्झयणा, ते समासतो दुविहा पण्णत्ता, तंजहा– चरिता य कडता य । दस धम्मकहाणं वग्गा, तत्थ णं एगमेगाए धम्मकहाए पंच पंच अक्खाइयसताइं,

---

१. एकूणतीसं खं०अटी० विना ॥

एगमेगाए अक्खाइयाए पंच पंच उवक्खाइयसताइं, एगमेगाए उवक्खाइयाए पंच पंच अक्खाइयउवक्खाइयसताइं, एवामेव सपुव्वावरेणं अद्धुट्ठातो अक्खाइयकोडीओ भवंतीति मक्खायाओ । एगूणतीसं उद्देसणकाला, एगूणतीसं समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं पयसतसहस्साइं पयग्गेणं पण्णत्ते । संखेज्जा अक्खरा जाव चरणकरणपरूवणया आघविज्जति । सेत्तं णायाधम्मकहातो ।

[टी०] **से किं त**मित्यादि, अथ **कास्ता ज्ञाताधर्मकथाः** ? **ज्ञातानि** उदाहरणानि तत्प्रधाना धर्म्मकथा **ज्ञाताधर्मकथाः**, दीर्घत्वं संज्ञात्वाद्, अथवा प्रथमश्रुतस्कन्धो ज्ञाताभिधायकत्वात् ज्ञातानि द्वितीयस्तु तथैव धर्मकथाः, ततश्च ज्ञातानि च धर्मकथाश्च **ज्ञाताधर्मकथाः**, तत्र प्रथमव्युत्पत्त्यर्थं सूत्रकारो दर्शयन्नाह– **नायाधम्मकहासु ण-**मित्यादि, **ज्ञातानाम्** उदाहरणभूतानां **मेघकुमारा**दीनां **नगरा**दीन्याख्यायन्ते, नगरादीनि द्वाविंशतिः पदानि कण्ठ्यानि च, नवरमु**द्यानं** पत्र-पुष्प-फल-च्छायोपगवृक्षोपशोभितं विविधवेषोन्नतमानश्च बहुजनो यत्र भोजनार्थं यातीति, **चैत्यं** व्यन्तरायतनम्, **वनखण्डो**ऽनेकजातीयैरुत्तमैर्वृक्षैरुपशोभित इति । **आघविज्जंति**, इह **याव**त्करणादन्यानि पञ्च पदानि दृश्यानि यावदयं सूत्रावयवो यथा **नायाधम्मे**त्यादि, तत्र **ज्ञाताधर्म्मकथासु ण**मित्यलङ्कारे, **प्रव्रजितानाम्**, क्व ? **विनयकरणजिनस्वामिशासनवरे** कर्मविनयकरे जिननाथसम्बन्धिनि शेषप्रवचनापेक्षया प्रधाने प्रवचने इत्यर्थः, पाठान्तरेण **समणाणं विणयकरणजिणसासणम्मि पवरे**, किंभूतानाम् ? **संयमप्रतिज्ञा** संयमाभ्युपगमः सैव दुरधि[१]गमत्वात् कातरनरक्षोभकत्वाद् गम्भीरत्वाच्च पातालमिव **पातालम्**, तत्र, **धृतिमतिव्यवसाया दुर्लभा** येषां ते तथा, पाठान्तरेण **संयमप्रतिज्ञापालने** ये **धृतिमतिव्यवसायास्तेषु दुर्बला** ये ते तथा, तेषाम्, तत्र **धृतिः** चित्तस्वास्थ्यम्, **मतिः** बुद्धिः, **व्यवसायः** अनुष्ठानोत्साह इति, तथा **तपसि नियमः** अवश्यं करणं **तपोनियमो** नियन्त्रित(तं) तपः, स च **तपउपधानं** चानियन्त्रितं तप एव श्रुतोपचारतपो वा **तपोनियमतपउपधाने** ते एव **रणश्च** कातरनरक्षोभकत्वात् सङ्ग्रामो **दुद्धरभर** त्ति

---

१. °**गम्यत्वात्** हे२ विना ॥

श्रमकारणत्वाद् **दुर्द्धरभरश्च** दुर्वहलोहादिभारस्ताभ्यां भग्ना इति **भग्नकाः** पराङ्मुखीभूताः, तथा **निसहा-निसट्ठाणं** ति **निःसहा** नितरामशक्तास्त एव निःसहका **निसृष्टाश्च** निसृष्टाङ्गा मुक्ताङ्गा ये ते **तपोनियमतपउपधानरणदुर्धरभरभग्नकनिःसहकनिसृष्टाः**, पाठान्तरेण **निःसहकनिविष्टाः**, तेषाम्, इह च प्राकृतत्वेन ककारलोप-सन्धिकरणाभ्यां भग्ना इत्यादौ दीर्घत्वमवसेयम्, तथा **घोरपरीषहैः पराजिताश्चासहाश्च** असमर्थाः सन्तः **प्रारब्धाश्च** परीषहैरेव वशीकर्त्तुं **रुद्धाश्च** मोक्षमार्गगमने ये ते **घोरपरीषहपराजितासहप्रारब्धरुद्धाः**, अत एव **सिद्धालयमार्गात्** ज्ञानादेर्**निर्गताः** प्रतिपतिता ये ते तथा, ते च ते ते चेति, तेषाम्, **घोरपरीषहपराजितासह-प्रारब्धरुद्धसिद्धालयमार्गनिर्गतानाम्**, पाठान्तरेण **घोरपरीषहपराजितानाम्**, तथा **सह** युगपदेव परीषहैर्विशिष्टगुणश्रेणिमारोहन्तः **प्ररुद्धरुद्धाः** अतिरुद्धाः **सिद्धालयमार्गनिर्गताश्च** ये ते तथा, तेषां **सहप्ररुद्धरुद्धसिद्धालयमार्गनिर्गतानाम्**, तथा **विषयसुखे तुच्छे** स्वरूपतः **आशावशदोषेण** मनोरथपारतन्त्र्यवैगुण्येन **मूर्च्छिता** अध्युपपन्ना ये ते तथा, तेषां **विषयसुखतुच्छाशावशदोषमूर्च्छितानाम्**, पाठान्तरेण **विषयसुखे** या **महेच्छा** कस्यांचिदवस्थायां या चावस्थान्तरे **तुच्छाशा** तयोर्वशः पारतन्त्र्यं तल्लक्षणेन **दोषेण मूर्च्छिता** ये ते तथा, तेषां **विषयसुखमहेच्छातुच्छाशावशदोषमूर्च्छितानाम्**, तथा **विराधितानि चरित्रज्ञानदर्शनानि** यैस्ते तथा, तथा **यतिगुणेषु विविधप्रकारेषु** मूलगुणोत्तरगुणरूपेषु **निःसाराः** सारवर्जिताः पलञ्जिप्रायगुणधान्या इत्यर्थः, तथा तैरेव यतिगुणैः **शून्यकाः** सर्वथा अभावाद्ये ते तथेति पदत्रयस्य कर्म्मधारयोऽतस्तेषां **विराधितचारित्रज्ञानदर्शनयतिगुणविविधप्रकारनिःसारशून्यकानाम्**, किमत आह– **संसारे** संसृतौ **अपारदुःखा** अनन्तक्लेशा ये **दुर्गतिषु** नारक-तिर्यक्-कुमानुष-कुदेवत्वरूपासु **भवा** भवग्रहणानि तेषां या **विविधाः परम्पराः** पारम्पर्याणि तासां ये **प्रपञ्चास्ते संसारापारदुःखदुर्गतिभवविविधपरम्पराप्रपञ्चाः, आख्यायन्ते** इति पूर्वेण योगः, तथा **धीराणां** च महासत्त्वानाम्, किंभूतानाम् ? - **जितं परीषह-कषायसैन्यं** यैस्ते तथा, **धृतेः** मनःस्वास्थ्यस्य **धनिकाः** स्वामिनो **धृतिधनिकाः**,

तथा **संयमे उत्साहो** वीर्यं **निश्चितः** अवश्यंभावी येषां ते **संयमोत्साहनिश्चिताः**, ततः पदत्रयस्य कर्म्मधारयः, अतस्तेषां **जितपरीषहकषायसैन्यधृतिधनिकसंयमोत्साहनिश्चितानाम्**, तथा **आराधिता ज्ञानदर्शनचारित्रयोगा** यैस्ते तथा, **निःशल्यो** मिथ्यादर्शनादिरहितः **शुद्धश्च** अतीचारवियुक्तो यः **सिद्धालयस्य** सिद्धेर्मार्गस्तस्याऽ**भिमुखा** ये ते तथा, ततः पदद्वयस्य कर्म्मधारयः, अतस्तेषा**माराधितज्ञानदर्शनचारित्रयोगनिःशल्यशुद्धसिद्धालयमार्गाभिमुखानाम्**, किमत आह– **सुरभवने** देवतयोत्पादे यानि **विमानसौख्यानि** तानि **सुरभवनविमानसौख्यानि अनुपमानि ज्ञाताधर्मकथा**स्वाख्यायन्त इति प्रक्रमः, इह च **भवन**शब्देन भवनपतिभवनानि न व्याख्यातान्यविराधितसंयमप्रव्रजितप्रस्तावात्, ते हि भवनपतिषु नोत्पद्यन्त इति, तथा **भुक्त्वा चिरं च भोगभोगान्** मनोज्ञशब्दादीन् **तां**स्तथाविधान् **दिव्यान्** स्वर्गभवान् **महार्हान्, महतः** आत्यन्तिकान् **अर्हान्** प्रशस्ततया पूज्यानिति भावः, **ततश्च** देवलोकात् **कालक्रमच्युतानां यथा च पुनर्लब्धसिद्धिमार्गाणां** मनुजगतावबाप्तज्ञानादीना**मन्तक्रिया** मोक्षो भवति तथाऽऽख्यायत इति प्रक्रमः, तथा **चलितानां च** कथञ्चित् कर्मवशतः परीषहादावधीरतया संयमप्रतिज्ञाया भ्रष्टानां सह देवैर्मानुषाः **सदेवमानुषा**स्तेषां सम्बन्धीनि **धीरकरणे** धीरत्वोत्पादने यानि **कारणानि** ज्ञातानि तानि **सदेवमानुषधीरकरणकारणानि** आख्यायन्त इति प्रक्रमः, इयमत्र भावना - यथा **आर्याषाढो** देवेन धीरीकृतो यथा वा **मेघकुमारो** भगवता, **शैलकाचार्यो** वा **पन्थक**साधुना धीरीकृतः एवं [१]**धीरकरणकारणानि** तत्राख्यायन्ते, किंभूतानि तानीत्याह- **बोधनानुशासनानि, बोधनानि** मार्गभ्रष्टस्य मार्गसंस्थापनानि **अनुशासनानि** दुस्थस्य सुस्थतासम्पादनानि, अथवा **बोधनम्** आमन्त्रणं तत्पूर्वकान्य**नुशासनानि बोधनानुशासनानि**, तथा **गुणदोषदर्शनानि** संयमाराधनायां गुणा इतरत्र दोषा भवन्तीत्येवंदर्शनानि वाक्यान्याख्यायन्त इतिं योगः, तथा **दृष्टान्तान्** ज्ञातानि **प्रत्ययांश्च** बोधिकारणभूतानि वाक्यानि **श्रुत्वा लोकमुनयः शुक**परिव्राजकादयो **यथा च** येन च प्रकारेण **स्थिताः शासने** जरा-मरणनाशनकरे जिनानां सम्बन्धिनीति भावः,

---

१. **धीरीकरण°** जे२ हे२, खंसं० ॥

तथाऽऽख्यायन्त[1] इति योगः, तथा **आराहितसंजम** त्ति एत एव लौकिकमुनयः संयमवलिताश्च जिनप्रवचनं प्रपन्नाः पुनः परिपालितसंयमाश्च सुरलोकं गत्वा चैते **सुरलोकप्रतिनिवृत्ता उपयन्ति यथा शाश्वतं** सदाभाविनं **शिवम्** अबाधकं **सर्वदुःखमोक्षं** निर्वाणमित्यर्थः, **एते** चोक्तलक्षणाः **अन्ये च एवमादिअत्थ** त्ति **एवमादय आदि**शब्दस्य प्रकारार्थत्वादेवंप्रकारा **अर्थाः** पदार्थाः, **वित्थरेण य** त्ति विस्तरेण **च**शब्दात् क्वचित् केचित् संक्षेपेण आख्यायन्त इति क्रियायोगः ।

नायाधम्मकहासु णमित्यादि कण्ठ्यमा निगमनात्, नवरं **एकूणतीसमज्झयण**[2] त्ति प्रथमे श्रुतस्कन्धे एकोनविंशतिर्द्वितीये च दशेति । तथा **दस धम्मकहाणं वग्गा** इत्यादौ भावनेयम्- इहैकोनविंशतिर्ज्ञाताध्ययनानि दार्ष्टान्तिकार्थज्ञापनलक्षणज्ञातप्रतिपादकत्वात्तानि प्रथमश्रुतस्कन्धे, द्वितीये त्वहिंसादिलक्षणधर्म्मस्य कथा **धर्मकथा** आख्यानकानीत्युक्तं भवति, तासां च **दश वर्गाः**, **वर्ग** इति समूहः, ततश्चार्थाधिकारसमूहात्मकान्यध्ययनान्येव दश वर्गा द्रष्टव्याः, [*]तत्र ज्ञातेष्वादिमानि दश ज्ञातानि ज्ञातान्येव, न तेष्वाख्यायिकादिसम्भवः, शेषाणि नव ज्ञातानि, तेषु[3] पुनरेकैकस्मिन् पञ्च पञ्च चत्वारिंशदधिकानि आख्यायिकाशतानि, तत्राप्येकैकस्यामाख्यायिकायां पञ्च पञ्चोपाख्यायिकाशतानि, तत्राप्येकैकस्यामुपाख्यायिकायां पञ्च पञ्चाख्यायिकोपाख्यायिकाशतानि, एवमेतानि संपिण्डितानि किं सञ्जातम् ?

इगवीसं कोडिसयं लक्खा पण्णासमेव बोद्धव्वा । (९ x ५४० x ५०० x ५०० =)
१२१५०००००० एवं ठिए समाणे अहिगयसुत्तस्स पत्थावो ।। [नन्दी० हारि०]

तद्यथा- **दस धम्मकहाणं वग्गा, तत्थ णं एगमेगाए धम्मकहाए पंच पंच**

---

१. °**ख्यायत** जे१ ।। २. **एकूणवीस**° खं० । अत्रेदमवधेयम्- समवायाङ्गसूत्रस्य मूलादर्शेषु **एकूणवीस**° इति पाठ उपलभ्यते, खं०अटी० हस्तलिखितादर्शेऽपि **एकूणवीस**° इति पाठ उपलभ्यते, अन्येषु तु अटी०हस्तलिखितादर्शेषु **एकूणतीस**° इति पाठ उपलभ्यते । नन्दीसूत्रेऽपि **एकूणवीसं** इति पाठो दृश्यते, **नन्दीवृत्तिकृद्भि**रपि तथैव व्याख्यातम् । तथापि अटी०मध्ये 'प्रथमे श्रुतस्कन्धे एकोनविंशतिर्द्वितीये च दश' इति व्याख्यादर्शनात् **एकूणतीस**° इति पाठस्यापि संगतिः कर्तुं शक्यत एवात्र इति ध्येयम् ।। ३. **नन्दी**सूत्रस्य **हरिभद्र**सूरिविरचितायां वृत्तावीदृशमेव वर्णनमुपलभ्यते, **जिनदास**गणिमहत्तरविरचितायां **चूर्णौ** तु अन्यथा वर्णनं दृश्यते । विस्तरार्थिभिः परिशिष्टे टिप्पने द्रष्टव्यम् ।।

अक्खाइयासयाइं, एगमेगाए अक्खाइयाए पंच पंचउवक्खाइयासयाइं, एगमेगाए उवक्खाइयाए पंच पंच अक्खाइउवक्खाइयासयाइं ति, एवमेतानि सम्पिण्डितानि किं संजातम् ?

पणुवीसं कोडिसयं (१२५००००००) एत्थ य समलक्खणाइया जम्हा ।
नवनायसंबद्धा अक्खाइयमाइया तेणं ॥
[1]ते सोहिज्जंति फुडं इमाउ रासीउ वेगलाणं तु ।
पुणरुत्तवज्जियाणं पमाणमेत्थं विणिद्दिट्ठं ॥ [नन्दी० हारि०]

शोधिते चैतस्मिन् सति अर्द्धचतुर्था एव कथानककोट्यो भवन्तीति, अत एवाह– **एवामेव सपुव्वावरेणं** ति भणितप्रकारेण गुणन-शोधने कृते सतीत्युक्तं भवति, **अद्धुट्ठाओ अक्खाइयाकोडीओ भवंतीति मक्खायाओ** त्ति आख्यायिकाः कथानकानि एता एवमेतत्संख्या **भवन्तीति** कृत्वा **आख्याता** भगवता **महावीरेणे**ति। तथा **संख्यातानि पदसयसहस्साणी**ति किल पञ्च लक्षाणि षट्सप्ततिश्च सहस्राणि **पदाग्रेण**, अथवा सूत्रालापकपदाग्रेण संख्यातान्येव पदशतसहस्राणि भवन्तीत्येवं सर्वत्र भावयितव्यमिति ॥६॥

[सू० १४२] से किं तं उवासगदसातो ? उवासगदसासु णं उवासयाणं णगराइं, उज्जाणाइं, चेतियाइं, वणसंडा, रायाणो, अम्मापितरो, समोसरणाइं, धम्मायरिया, धम्मकहाओ, इहलोइया पारलोइया इड्ढिविसेसा, उवासयाणं च सीलव्वयवेरमणगुणपच्चक्खाणपोसहोववासपडिवज्जणतातो, सुयपरिग्गहा, तवोवहाणाइं, पडिमातो, उवसग्गा, संलेहणातो, भत्तपच्चक्खाणाइं, पाओवगमणाइं, देवलोगगमणाइं, सुकुलपच्चायाती, पुण बोहिलाभो, अंतकिरियातो य आघविज्जंति । उवासगदसासु णं उवासयाणं रिद्धिविसेसा, परिसा, वित्थरधम्मसवणाणि, बोहिलाभ, अभिगमणं, सम्मत्तविसुद्धता, थिरत्तं, मूलगुणुत्तरगुणातियारा, ठितिविसेसा य, बहुविसेसा पडिमाऽभिग्गहगहण-पालणा, उवसग्गाहियासणा, णिरुवसग्गा य, तवा य चित्ता, सीलव्वयगुण-

१. तो हे१ विना ॥

वेरमणपच्चक्खाणपोसहोववासा, अपच्छिममारणंतियायसंलेहणाझोसणाहिं[1] अप्पाणं जह य भावइत्ता बहूणि भत्ताणि अणसणाए य छेयइत्ता उववण्णा कप्पवरविमाणुत्तमेसु जह अणुभवंति सुरवरविमाणवरपोंडरीएसु सोक्खाइं अणोवमाइं कमेण भोत्तूण उत्तमाइं, तओ आउक्खएणं चुया समाणा जह जिणमयम्मि बोहिं, लद्धूण य संजमुत्तमं तमरयोघविप्पमुक्का उवेंति जह अक्खयं सव्वदुक्खमोक्खं, एते अन्ने य एवमादी [अत्था वित्थरेण य] । उवासयदसासु णं परित्ता वायणा, संखेज्जा अणु[ओगदारा] जाव संखेज्जातो संगहणीतो । से णं अंगट्ठयाए सत्तमे अंगे, एगे सुतक्खंधे, दस अज्झयणा, दस उद्देसणकाला, दस समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं पयसयसहस्साइं पयग्गेणं पण्णत्ते । संखेज्जाइं अक्खराइं जाव एवं चरणकरणपरूवणया आघविज्जति। सेत्तं उवासगदसातो ।

[टी०] **से किं त**मित्यादि, अथ कास्ता उपासकदशाः ?, **उपासकाः** श्रावकास्तद्व्रतक्रियाकलापप्रतिबद्धा **दशाः** दशाध्ययनोपलक्षिता **उपासकदशाः**, तथा चाह– **उपासकदसासु णं** उपासकानां **नगराणि उद्यानानि चैत्यानि वनषण्डा राजानः अम्बा-पितरौ समवसरणानि धर्माचार्या धर्मकथा ऐहलौकिक-पारलौकिका ऋद्धिविशेषा उपासकानां च शीलव्रतविरमणगुणप्रत्याख्यान-पौषधोपवासप्रतिपदनताः**[2], तत्र **शीलव्रतानि** अणुव्रतानि, **विरमणानि** रागादिविरतयः, **गुणा** गुणव्रतानि, **प्रत्याख्यानानि** नमस्कारसहितादीनि, **पोषधः** अष्टम्यादिपर्वदिनं तत्रो**पवसन**माहार-शरीरसत्कारादित्यागः **पोषधोपवासः**, ततो द्वन्द्वे सत्येतेषां **प्रतिपदनताः**[3] प्रतिपत्तय इति विग्रहः, **श्रुतपरिग्रहास्तपउपधानानि** च प्रतीतानि, **पडिमाओ** त्ति एकादश उपासकप्रतिमाः कायोत्सर्गा वा, **उपसर्गा** देवादिकृतोपद्रवाः, **संलेखना** भक्त-पानप्रत्याख्यानानि, **पादपोपगमनानि देवलोकगमनानि सुकुलप्रत्यायातिः पुनर्बोधिलाभोऽन्तक्रिया चाख्यायन्ते** पूर्वोक्तमेव, इतो विशेषत आह– **उवासगे**त्यादि, तत्र **ऋद्धिविशेषा**

१. °णाहिं ज्झोसणाहिं खं० जे१ ॥ २. पोष° हे१ ॥ ३. प्रतिपादनताः खं० । प्रतिपदनं जे२ ॥

अनेककोटीसंख्यद्रव्यादिसम्पद्विशेषाः, तथा **परिषदः** परिवारविशेषा यथा माता-पितृ-पुत्रादिका अभ्यन्तरपरिषत् दासी-दास-मित्रादिका बाह्यपरिषदिति, **विस्तरधर्मश्रवणानि महावीर**सन्निधौ, ततो **बोधिलाभोऽभिगमः सम्यक्त्वस्य विशुद्धता, स्थिरत्वं** सम्यक्त्वशुद्धेरेव, **मूलगुणोत्तरगुणा** अणुव्रतादयः, **अतिचारास्**तेषामेव बन्ध-वधादितः खण्डनानि, **स्थितिविशेषाश्च** उपासकपर्यायस्य कालमानभेदाः, **बहुविशेषाः प्रतिमाः** प्रभूतभेदाः सम्यग्दर्शनादिप्रतिमाः, **अभिग्रहग्रहणानि**, तेषामेव च **पालनानि, उपसर्गाधिसहनानि, निरुपसर्गं च** उपसर्गाभावश्चेत्यर्थः, [1]**तपांसि च चित्राणि, शीलव्रता**दयोऽनन्तरोक्तरूपाः, **अपश्चिमाः** पश्चात्कालभाविन्यः, अकारस्त्वमङ्गलपरिहारार्थः, मरणरूपे अन्ते भवा **मारणान्तिक्यः, आत्मनः** शरीरस्य जीवस्य च **संलेखनाः** तपसा रागादिजयेन च कृशीकरणानि **आत्मसंलेखनाः**, ततः पदत्रयस्य कर्म्मधारयः, तासाम्, **झोसण** त्ति **जोषणाः** सेवनाः करणानीत्यर्थः, ताभिर[2]**पश्चिममारणान्तिकात्मसंलेखनाजोषणाभिरात्मानं यथा च भावयित्वा, बहूनि भक्तानि अनशनतया च** निर्भोजनतया **छेदयित्वा** व्यवच्छेद्य **उपपन्ना** मृत्वेति गम्यते, केषु ? **कल्पवरेषु** यानि **विमानानि उत्तमानि** तेषु, **यथानुभवन्ति** सुरवरविमानानि वरपुण्डरीकाणीव **वरपुण्डरीकाणि** यानि तेषु, कानि? **सौख्यान्यनुपमानानि क्रमेण भुक्त्वोत्तमानि, ततः आयुःक्षयेण च्युताः सन्तो यथा जिनमते बोधिं** लब्ध्वा इति शेषः, **लब्ध्वा च संयमोत्तमं** प्रधानं संयमं **तमोरजओघविप्रमुक्ता** अज्ञानकर्मप्रवाहविमुक्ता **उपयन्ति यथा अक्षयम्** अपुनरावृत्तिकं **सर्वदुःखमोक्षं** कर्मक्षयमित्यर्थः, तथोपासकदशास्वाख्यायत इति प्रक्रमः, **एते** चान्ये चेत्यादि प्राग्वत्। नवरं **संखेज्जाइं पयसयसहस्साइं पदग्गेणं** ति किलैकादश लक्षाणि द्विपञ्चाशच्च सहस्राणि पदानामिति ॥७॥

[सू० १४३] से किं तं अंतगडदसातो ? अंतगडदसासु णं अंतगडाणं णगराइं, उज्जाणाइं, चेतियाइं, वणसंडा, रायाणो, अम्मापितरो, समोसरणाइं धम्मायरिया, धम्मकहातो, इहलोइया पारलोइया इड्ढिविसेसा, भोगपरिच्चाया,

---

१. तपांसि च रित्राणि जे१ खं० । तपांसि च विचित्राणि हे२ ॥ २. °रपश्चिमामारणा° खं० जे१,२॥

पव्वज्जातो, सुतपरिग्गहा, तवोवहाणाइं, पडिमातो बहुविहातो, खमा, अज्जवं, मद्दवं च, सोयं च सच्चसहियं, सत्तरसविहो य संजमो, उत्तमं च बंभं, आकिंचणिया, तवो, चियातो, किरियातो, समितिगुत्तीओ चेव, तह अप्पमायजोगो, सज्झायज्झाणाण य उत्तमाणं दोण्हं पि लक्खणाइं, पत्ताण य संजमुत्तमं जियपरीसहाणं चउव्विहकम्मक्खयम्मि जह केवलस्स लंभो, परियाओ जत्तिओ य जह पालिओ मुणीहिं, पातोवगतो य जो जहिं जत्तियाणि भत्ताणि छेयइत्ता अंतगडो मुणिवरो तमरयोघविप्पमुक्को, मोक्खसुहमणुत्तरं च पत्ता, एते अन्ने य एवमादी अत्था परू[विज्जंति] जाव से णं अंगट्ठयाए अट्ठमे अंगे, एगे सुतक्खंधे, दस अज्झयणा, सत्त वग्गा, दस उद्देसणकाला, दस समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं पयसतसहस्साइं पयग्गेणं। संखेज्जा अक्खरा जाव एवं चरणकरणपरूवणया आघविज्जति । सेत्तं अंतगडदसातो ।

[टी०] **से किं** त**मित्यादि**, अथ कास्ता **अन्तकृतदशाः** ? तत्रान्तो विनाशः, स च कर्म्मणस्तत्फलस्य वा संसारस्य कृतो यैस्ते **अन्तकृताः**, ते च तीर्थकरादयः, तेषां **दशाः** प्रथमवर्गे दशाध्ययनानीति तत्संख्यया **अन्तकृतदशाः**, तथा चाह– **अंतगडदसासु ण**मित्यादि कण्ठ्यम्, नवरं **नगरा**दीनि चतुर्दश पदानि षष्ठाङ्गवर्णकाभिहितान्येव, तथा **पडिमाओ** त्ति द्वादश भिक्षुप्रतिमा मासिक्यादयो **बहुविधाः**, तथा [1]**क्षमा आर्जवं मार्दवं च शौचं च सत्यसहितम्**, तत्र **शौचं** परद्रव्यापहारमालिन्याभावलक्षणम्, **सप्तदशविधश्च संयम उत्तमं च ब्रह्म** मैथुनविरतिरूपम्, **आकिंचणिय** त्ति आकिञ्चन्यम्, **तपः**, **त्याग** इति आगमोक्तं दानम्, **समितयो गुप्तयश्चैव**, **तथा अप्रमादयोगः**, **स्वाध्यायध्यानयोश्च उत्तमयोर्द्वयोरपि लक्षणानि** स्वरूपाणि, तत्र स्वाध्यायस्य लक्षणं **सज्झाएण पसत्थं झाण** [[2]उपदेशमाला० गा० ३३८]मित्यादि, ध्यानलक्षणं यथा– **अंतोमुहुत्तमेत्तं**

---

१. **क्षमा मार्दवं आर्जवं च** खं० ।। २. ''सज्झाएण पसत्थं झाणं जाणइ स सव्वपरमत्थं । सज्झाए वट्टंतो खणे खणे जाइ वेरग्गं ।।३३८।।'' इति संपूर्णा गाथा ।।

चित्तावत्थाणमेगवत्थुम्मि[१] [ध्यानश० ३] इत्यादि, आख्यायन्त इति सर्वत्र योगः, तथा **प्राप्तानां च संयमोत्तमं** सर्वविरतिं **जितपरीषहाणां चतुर्विधकर्म्मक्षये** घातिक्षये सति **यथा केवलस्य** ज्ञानादेर्**लाभः पर्यायः** प्रव्रज्यालक्षणो **यावांश्च** यावद्वर्षादिप्रमाणो **यथा** येन तपोविशेषाश्रयणादिना प्रकारेण **पालितो** मुनिभिः **पादपोपगतश्च** पादपोपगमाभिधानमनशनं प्रतिपन्नो **यो** मुनिर्**यत्र शत्रुञ्जय**पर्वतादौ **यावन्ति** च **भक्तानि** भोजनानि **छेदयित्वा**, अनशनिनां हि प्रतिदिनं भक्तद्वयच्छेदो भवति, **अन्तकृतो मुनिवरो** जात इति शेषः, **तमोरजओघविप्रमुक्तः**, एवं च सर्वेऽपि क्षेत्र-कालादिविशेषिता मुनयो **मोक्षसुखमनुत्तरं च प्राप्ता** आख्यायन्त इति क्रियायोगः ।

एते अन्ये चेत्यादि प्राग्वत् । नवरं **दस अज्झयण** त्ति प्रथमवर्गापेक्षयैव घटन्ते, **नन्द्यां** तथैव व्याख्यातत्वात्, यच्चेह पठ्यते **सत्त वग्ग** त्ति तत् प्रथमवर्गादन्यवर्गापेक्षया, यतोऽत्र सर्वेऽप्यष्ट वर्गाः, **नन्द्याम**पि तथा पठितत्वात्, **तद्वृत्ति**[२]**श्चे**यम्– **अट्ठ वग्ग त्ति अत्र वर्गः समूहः, स चान्तकृतानामध्ययनानां वा, सर्वाणि चैकवर्गगतानि युगपदुद्दिश्यन्ते, अतो भणितम् 'अट्ठ उद्देसणकाला'इत्यादि** [नन्दी० हारि०], इह च **दश उद्देशनकाला** अधीयन्ते इति नास्याभिप्रायमवगच्छामः । तथा **संख्यातानि पदशतसहस्राणि पदाग्रेणे**ति, तानि च किल त्रयोविंशतिर्लक्षाणि चत्वारि च सहस्राणीति ॥८॥

[सू० १४४] से किं तं अणुत्तरोववातियदसातो ? अणुत्तरोववातियदसासु णं अणुत्तरोववातियाणं णगराइं, उज्जाणाइं, चेतियाइं, वणसंडा, रायाणो, अम्मापितरो, समोसरणाइं, धम्मायरिया, धम्मकहातो, इहलोइया पारलोइया

---

१. "**अंतोमुहुत्तमेत्तं चित्तावत्थाणमेगवत्थुम्मि । छउमत्थाणं झाणं जोगनिरोहो जिणाणं तु** ॥३॥ व्या०- इह **मुहूर्त्तः** सप्तसप्ततिलवप्रमाणः कालविशेषो भण्यते । **अन्त**र्मध्यकरणे, ततश्चान्तर्मुहूर्त्तमात्रं कालमिति गम्यते, **मात्र**शब्दस्तदधिककालव्यवच्छेदार्थः, ततश्च भिन्नमुहूर्त्तमेव कालम्, किम् ? **चित्तावस्थान**मिति **चित्तस्य** मनसः अवस्थानं चित्तावस्थानम्, **अवस्थितिः** अवस्थानम्, निष्प्रकम्पतया वृत्तिरित्यर्थः, क्व ? **एकवस्तुनि, एकम्** अद्वितीयं वसन्त्यस्मिन् गुणपर्याया इति **वस्तु** चेतनादि, एकं च तद्वस्तु एकवस्तु, तस्मिन् २ **छद्मस्थानां ध्यान**मिति, तत्र छादयतीति **छद्म** पिधानं तच्च ज्ञानादीनां गुणानामावारकत्वाज्ज्ञानावरणादिलक्षणं घातिकर्म, छद्मनि स्थिताश्**छद्मस्था** अकेवलिन इत्यर्थः, तेषां छद्मस्थानाम्, **ध्यानं** प्राग्वत् ॥३॥" इति **ध्यानशतके हारिभद्र्यां** वृत्तौ ॥ २."**से किं तं अंतगडदसाओ...**" [सू० ९२] इति **नन्दीसूत्रस्य हरिभद्र**सूरिविरचितायां वृत्तावेतदस्ति । **नन्दीसूत्रस्य जिनदास**गणिमहत्तरविरचितायां **चूर्णा**वपि स्तोकं वर्णनमुपलभ्यते ॥

इड्डिविसेसा, भोगपरिच्चाया, पव्वज्जाओ, सुतपरिग्गहा, तवोवहाणाइं, पडिमातो, संलेहणातो, भत्तपच्चक्खाणाइं, पाओवगमणाइं, अणुत्तरोववत्ति, सुकुलपच्चायाती, पुण बोहिलाभो, अंतकिरिया[तो] य आघविज्जंति । अणुत्तरोववातियदसासु णं तित्थकरसमोसरणाइं परममंगल्लजगहिताणि, जिणातिसेसा य बहुविसेसा, जिणसीसाणं चेव समणगणपवरगंधहत्थीणं थिरजसाणं परिसहसेण्णरिवुबलपमद्दणाणं तवदित्तचरित्त-णाणसम्मत्तसारविविहप्पगारवित्थर[1]पसत्थगुणसंजुयाणं अणगारमहरिसीणं अणगारगुणाण वण्णओ उत्तमवरतवविसिट्ठणाणजोगजुत्ताणं, जह य जगहियं भगवओ, जारिसा य रिद्धिविसेसा देवासुरमाणुसाण । परिसाणं पाउब्भावा य जिणसमीवं, जह य उवासंति जिणवरं, जह य परिकहें(हे)ति धम्मं लोगगुरू अमर-नरा-ऽसुरगणाणं, सोऊण य तस्स भासियं अवसेसकम्मा विसयविरत्ता नरा जहा अब्भुवेंति धम्मं ओरालं संजमं तवं चावि बहुविहप्पगारं जह बहूणि वासाणि अणुचरित्ता आराहियनाणदंसणचरित्तजोगा जिणवयणमणुगयमहियभासिता जिणवराण हिययेणमणुणेत्ता जे य जहिं जत्तियाणि भत्ताणि छेयइत्ता लद्धूण य समाहिमुत्तमं झाणजोगजुत्ता उववन्ना मुणिवरुत्तमा जह अणुत्तरेसु, पावंति जह अणुत्तरं तत्थ विसयसोक्खं तत्तो य चुया कमेण काहिंति संजया जह य अंतकिरियं, एते अन्ने य एवमादित्थ जाव परित्ता वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा, [जाव] संखेज्जातो संगहणीतो। से णं अंगट्ठयाए नवमे अंगे, एगे सुयक्खंधे, दस अज्झयणा, तिन्नि वग्गा, दस उद्देसणकाला, दस समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं पयसयसहस्साइं पयग्गेणं पण्णत्ते। संखेज्जाणि अक्खराणि जाव एवं चरणकरणपरूवणया आघविज्जति। सेत्तं अणुत्तरोववातियदसातो ।

[टी०] **से किं त**मित्यादि, नास्मादुत्तरो विद्यते इत्य**नुत्तर** उपपतन**मुपपातो** जन्मेत्यर्थः, **अनुत्तर**ः प्रधानः संसारे अन्यस्य तथाविधस्याभावा**दुपपातो** येषां ते तथा, त

१. °वित्थार° अटी० ॥

एवाऽ**नुत्तरोपपातिका**:, तद्वक्तव्यताप्रतिबद्धा **दशा** दशाध्ययनोपलक्षिता **अनुत्तरोपपातिकदशा**:, तथा चाह– **अणुत्तरोववाइयदसासु णमि**त्यादि, तत्रा**नुत्तरोपपातिकाना**मिति साधूनाम्, **नगरादी**नि द्वाविंशतिः पदानि **ज्ञाताधर्मकथा**वर्णकोक्तानि[१] तथा। एतेषामेव च प्रपञ्चं रचयन्नाह– **अनुत्तरोपपातिकदशासु तीर्थकरसमवसरणानि**, किम्भूतानि ? परममङ्गल्यत्वेन जगद्धितानि **परममङ्गल्यजगद्धितानि**, **जिनातिशेषाश्च बहुविशेषा** **देहं विमलसुयंध**[ ]मित्यादयश्चतुस्त्रिंशदधिकतरा वा, तथा **जिनशिष्याणां** चैव गणधरादीनाम्, किम्भूतानामत आह– **श्रमणगणप्रवरगन्धहस्तिनां** श्रमणोत्तमानामित्यर्थः, तथा **स्थिरयशसाम्**, तथा **परीषहसैन्य**मेव परीषहवृन्दमेव **रिपुबलं** परचक्रं तत्**प्रमर्द्दनानाम्**, तथा **दववद्** दावाग्निरिव **दीप्तानि** उज्ज्वलानि, पाठान्तरेण **तपोदीप्तानि**, यानि **चरित्र-ज्ञान-सम्यक्त्वानि** तैः **सारा**: अफल्गवो **विविधप्रकारविस्तारा** अनेकविधप्रपञ्चाः **प्रशस्ताश्च** ये क्षमादयो गुणास्तैः **संयुतानाम्**, क्वचित्तु **गुणध्वजाना**मिति पाठः, तथा **अनगाराश्च** ते **महर्षयश्चे**त्य**नगारमहर्षय**स्तेषाम**नगारगुणानां वर्णक**: श्लाघा आख्यायत इति योगः, पुनः किम्भूतानां **जिनशिष्याणाम्** ? **उत्तमाश्च** ते जात्यादिभिर्वरतपसश्च ते विशिष्टज्ञानयोगयुक्ताश्चेत्यत-स्तेषा**मुत्तमवरतपोविशिष्टज्ञानयोगयुक्तानाम्**, किञ्चापरम्? **यथा च जगद्धितं भगवत** इत्यत्र जिनस्य शासनमिति गम्यते, **यादृशाश्च ऋद्धिविशेषा देवासुरमानुषाणां** रत्नोज्ज्वललक्षयोजनमानविमानरचनं सामानिकाद्यनेकदेवदेवीकोटिसमवायनं मणिखण्डमण्डितदण्डपटुप्रचलत्पताकिकाशतोपशोभितमहाध्वजपुरःप्रवर्त्तनं विविधातोद्यनादगगनाभोगपूरणं चैवमादिलक्षणाः प्रतिकल्पितगन्धसिन्धुरस्कन्धारोहणं चतुरङ्गसैन्यपरिवारणं छत्र-चामर-महाध्वजादिमहाराजचिह्नप्रकाशनं च एवमादयश्च सम्पद्विशेषाः समवसरणगमनप्रवृत्तानां वैमानिक-ज्योतिष्काणां भवनपति-व्यन्तराणां राजादिमनुजानां च, अथवा अनुत्तरोपपातिकसाधूनाम् ऋद्धिविशेषा देवादिसम्बन्धिनस्तादृशा आख्यायन्त इति क्रिया, तथा **पर्षदां** **संजयवेमाणित्थी संजयि पुव्वेण** [२]**पविसिउं वीर**[ ]मित्यादिनोक्तस्वरूपाणां **प्रादुर्भावाश्च** आगमनानि, क्व ?

---

१. °**क्तानि यथा एतेषां**° जे२ हे१,२ ॥ २. **पवसिउं** खं० जे१,२ ॥

जिणसमीवं ति जिनसमीपे, **यथा च** येन च प्रकारेण पञ्चविधाभिगमादिना **उपासते** सेवन्ते राजादयो **जिनवरं** तथाऽऽख्या[1]यित इति योगः, **यथा च परिकथयति धर्म्मं लोकगुरुरि**ति जिनवरोऽ**मर-नरा-ऽसुरगणानाम्**, **श्रुत्वा च तस्ये**ति जिनवरस्य **भाषितम्**, **अवशेषाणि** क्षीणप्रायाणि **कर्म्माणि** येषां ते तथा, ते च ते विषयविरक्ताश्चेति **अवशेषकर्मविषयविरक्ताः**, के ? **नराः**, किम् ? **यथा अभ्युपयन्ति धर्म्ममुदारम्**, किंस्वरूपमत आह– **संयमं तपश्चापि**, किम्भूतमित्याह– **बहुविधप्रकारम्**, तथा **यथा बहूनि वर्षाणि अणुचरित्त** त्ति अनुचर्य आसेव्य संयमं तपश्चेति वर्त्तते, तत **आराधितज्ञान-दर्शन-चारित्रयोगाः**, तथा **जिणवयणमणुगयमहियभासिय** त्ति **जिनवचनम्** आचारादि **अनुगतं** सम्बद्धं नार्दवितर्दमित्यर्थः **महितं** पूजित**मधिकं** वा **भाषितं** यैरध्यापनादिना ते तथा, पाठान्तरे **जिनवचनमनुगत्या** आनुकूल्येन सुष्ठु भाषितं यैस्ते **जिनवचनानुगतिसुभाषिताः**, तथा **जिणवराण हियएणमणुणेत्त** त्ति, इह षष्ठी द्वितीयार्थे, तेन **जिनवरान् हृदयेन** मनसा **अनुनीय** प्राप्य ध्यात्वेति यावत्, **ये च यत्र यावन्ति** च **भक्तानि छेदयित्वा लब्ध्वा च समाधिमुत्तमं ध्यानयोगयुक्ताः उपपन्ना मुनिवरोत्तमा यथा अनुत्तरेषु** तथा आख्यायत इति प्रक्रमः, तथा **प्राप्नुवन्ति यथाऽनुत्तरं तत्थ** त्ति अनुत्तरविमानेषु **विषयसुखं** तथाऽऽख्यायते इति योगः, **तत्तो य** त्ति अनुत्तरविमानेभ्यश्**च्युताः क्रमेण करिष्यन्ति संयता यथा चान्तक्रियां** ते तथाऽऽख्यायन्ते **अनुत्तरोपपातिकदशा**स्विति प्रकृतम् ।

एते चान्ये चेत्यादि पूर्ववत्, नवरं **दस अज्झयणा तिन्नि वग्ग** त्ति, इहाध्ययनसमूहो वर्गः, वर्गे वर्गे दशाध्ययनानि, वर्गश्च युगपदेवोद्दिश्यते इत्यतस्त्रय एवोद्देशनकाला भवन्तीति । एवमेव च **नन्दा**वभिधीयन्ते, इह तु दृश्यन्ते दशेत्यत्राभिप्रायो न ज्ञायत इति । तथा **संख्यातानि पदसयसहस्साइं पदग्गेणं** ति किल षट्चत्वारिंशल्लक्षाण्यष्टौ च सहस्राणि ॥९॥

[सू० १४५] से किं तं पण्हावागरणाणि ? पण्हावागरणेसु [2]अट्ठुत्तरं

---

१. °यंत जे१ खं० ॥ २. ''**ण्हाणादिकोउकम्मं, भूतीकम्मं सविज्जगा भूती । विज्जारहिते लहुगो चउवीसा तिण्णि पसिणसया** ॥४२८९॥ व्या० णिंदुभादियाण मसाणचच्चरादिसु ण्हवणं कज्जति, रक्खाणिमित्तं भूती,

पसिणसतं, अट्ठुत्तरं अपसिणसतं, अट्ठुत्तरं पसिणापसिणसतं, विज्जातिसया, नागसुपण्णेहिं सद्धिं दिव्वा संवाया आघविज्जंति । पण्हावागरणदसासु णं ससमय-परसमयपण्णवयपत्तेयबुद्धविविधत्थभासाभासियाणं अतिसयगुण-उवसमणाण-प्पगारआयरियभासियाणं वित्थरेणं[1] थिरमहेसीहिं विविध-वित्थार(त्थ?)भासियाणं च जगहिताणं अद्दागंगुट्ठबाहुअसिमणिखोम-आइच्चमातियाणं विविहमहापसिणविज्जामणपसिणविज्जादइवयपयोग-पाहण्णगुणप्पगासियाणं सब्भूयबिगुणप्पभावनरगणमतिविम्हयकरीणं अति-सयमतीतकालसमये दमतित्थकरुत्तमस्स थितिकरणकारणाणं दुरभिगमदुरव-गाहस्स सव्वसव्वण्णुसम्मतस्साऽबुधजणविबोहकरस्स पच्चक्खयप्पच्चय-करीणं पण्हाणं विविहगुणमहत्था जिणवरप्पणीया आघविज्जंति । पण्हावागरणेसु णं परित्ता वायणा, संखेज्जा जाव संखेज्जातो संगहणीतो । से णं अंगट्ठताए दसमे अंगे, एगे सुत्तक्खंधे, [2][पणतालीसं अज्झयणा] पणतालीसं उद्देसणकाला, पणतालीसं समुद्देसणकाला, संखेज्जाणि पयसयसहस्साणि पयग्गेणं पण्णत्ते, संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा जाव चरणकरणपरूवणया आघविज्जति । सेत्तं पण्हावागरणाणि ।

[टी०] से किं तमित्यादि, **प्रश्नः** प्रतीतः, तन्निर्वचनं **व्याकरणम्**, प्रश्नानां च व्याकरणानां च योगात् **प्रश्नव्याकरणानि**, तेषु **अट्ठुत्तरं पसिणसयं** इत्यादि, तत्राङ्गुष्ठ-बाहुप्रश्नादिका मन्त्रविद्याः प्रश्नाः, याः पुनर्विधिना जप्यमाना अपृष्टा एव शुभाशुभं कथयन्ति एताः **अप्रश्नाः**, तथाऽङ्गुष्ठादिप्रश्नभावं तदभावं च प्रतीत्य या विद्याः शुभाशुभं कथयन्ति ताः **प्रश्नाप्रश्नाः** । **विज्जाइसय** त्ति तथा अन्ये **विद्यातिशयाः** स्तम्भ-स्तोभ-वशीकरण-विद्वेषीकरणोच्चाटनादयः **नागसुपर्णैश्च सह**

विज्जाभिमतीए भूतीए चउलहुं । इयराए मासलहुं । पसिणा एते पण्हवाकरणेसु पुव्वं आसी ॥४२८९॥ **पसिणापसिणं सुविणे विज्जासिद्धं तु साहति परस्स । अहवा आइंखिणिया घंटियसिट्ठं परिकहेति ॥४२९०॥** व्या० सुविणयविज्जाकहियं कधिंतस्स पासिणापसिणं भवति । अहवा विज्जाभिमंतिया घंटिया कण्णमूले चालिज्जति, तत्थ देवता कधिति, कहेंतस्स पसिणापसिणं भवति, स एव इंखिणी भण्णति ॥४२९०॥'' इति **निशीथभाष्यचूर्णौ** ।

१. ***वित्थारेण वीरमहे***° जे२ ॥ २. ***नन्दीसूत्रे*** पाठोऽयं वर्तते ॥

भवनपतिविशेषैरुपलक्षणत्वाद् यक्षादिभिश्च सह 'साधकस्य' इति गम्यते, **दिव्याः** तात्त्विकाः **संवादाः** शुभाशुभगताः संलापाः **आख्यायन्ते** । एतदेव प्रायः प्रपञ्चयन्नाह– **पण्हावागरणदसे**[1]त्यादि, **स्वसमय-परसमयप्रज्ञापका** ये **प्रत्येकबुद्धास्तैः कर-कण्डु**वादिसदृशै**र्विविधार्था** यका **भाषा** गम्भीरेत्यर्थः तया **भाषिताः** गदिताः **स्वसमयपरसमयप्रज्ञापकप्रत्येकबुद्धविविधार्थभाषाभाषिताः**, तासाम्, किम् ? - आदर्शाङ्गुष्ठादीनां सम्बन्धिनीनां **प्रश्नानां विविधगुणमहार्थाः** प्रश्नव्याकरणदशास्वाख्यायन्त इति योगः, पुनः किम्भूतानां प्रश्नानाम् ? **अइसयगुणउवसमनाणप्पगार-आयरियभासियाणं** ति **अतिशयाश्च** आमर्षौषध्यादयो **गुणाश्च** ज्ञानादय **उपशमश्च** स्वपरभेदः, एते **नानाप्रकारा** येषां ते तथा, ते च ते **आचार्याश्च तैर्भाषिता** यास्तास्तथा, तासाम्, कथं भाषितानामित्याह– **वित्थरेणं**[2] ति **विस्तरेण** महता वचनसन्दर्भेण, तथा **स्थिरमहर्षिभिः**, पाठान्तरे **वीरमहर्षिभिः विविहवित्थरभासियाणं**[3] **च** त्ति विविधविस्तरेण भाषितानाम्, **च**कारस्तृतीयप्रणायकभेदसमुच्चयार्थः, पुनः कथंभूतानां प्रश्नानाम् ? **जगहियाणं** ति जगद्धितानां पुरुषार्थोपयोगित्वात्, किंसम्बन्धिनीनामित्याह– **अद्दाग** त्ति **आदर्शश्चाङ्गुष्ठश्च बाहू** च **असिश्च मणिश्च क्षौमं** च वस्त्रम् **आदित्यश्चे**ति द्वन्द्वस्ते **आदिर्ये**षां कुड्य-शङ्ख-घटादीनां ते तथा, तेषां सम्बन्धिनीनाम्, प्रश्नविद्याभिरादर्शकादीनामावेशनात्, किंभूतानां प्रश्नानामत आह– **विविधमहाप्रश्नविद्याश्च** वाचैव प्रश्ने सत्युत्तरदायिन्यः[4] **मनःप्रश्नविद्याश्च** मनःप्रश्नितार्थोत्तरदायिन्यः, तासां **दैवतानि** तदधिष्ठातृदेवताः, तेषां **प्रयोगप्राधान्येन** तद्व्यापारप्रधानतया **गुणं** विविधार्थसंवादनलक्षणं **प्रकाशयन्ति** लोके व्यञ्जयन्ति यास्ता **विविधमहाप्रश्नविद्या-मनःप्रश्नविद्या-दैवतप्रयोगप्राधान्यगुणप्रकाशिकाः**, तासाम्, पुनः किंभूतानां प्रश्नानाम् ? **सद्भूतेन** तात्त्विकेन **द्विगुणेन** उपलक्षणत्वाल्लौकिकप्रश्नविद्याप्रभावापेक्षया बहुगुणेन, पाठान्तरे **विविधगुणेन, प्रभावेन** माहात्म्येन **नरगणमतेः** मनुजसमुदयबुद्धे**र्विस्मयकर्य्यः** चमत्कारहेतवो याः प्रश्नास्ताः

---

१. **पण्हावागरणमित्यादि** खं० जे१,२ ॥ २. **वित्थारेणं** हे१ विना ॥ ३. °**वित्थार**° हे२ विना ॥ ४. **प्रत्युत्तर**° जे२ ॥

सद्भूतद्विगुणप्रभावनरगणमतिविस्मयकर्यः, तासाम्, पुनः किंभूतानां तासाम् ? **अतिसयमतीतकालसमये** त्ति अतिशयेन योऽतीतः कालसमयः[1] स तथा, तत्र, अतिव्यवहिते काले इत्यर्थः, **दमः** शमस्तत्प्रधानः[2] **तीर्थकराणां** दर्शनान्तरशास्तृणा**मुत्तमो** यः स तथा भगवान् जिनः, तस्य **दमतीर्थकरोत्तमस्य स्थितिकरणं** स्थापनम् 'आसीद् अतीतकाले सातिशयज्ञानादिगुणयुक्तः सकलप्रणायकशिरःशेखरकल्पः पुरुषविशेषः एवंविधप्रश्नानामन्यथानुपपत्तेः' इत्येवंरूपम्, तस्य **कारणानि** हेतवो यास्तास्तथा, तासाम्, पुनस्ता एव विशिनष्टि **दुरभिगमं** दुरवबोधं गम्भीरसूक्ष्मार्थत्वेन दुरवगाहं च दुःखाध्येयं सूत्रबहुत्वाद्यत्तस्य, सर्वेषां सर्वज्ञानां **सम्मतम्** इष्टं **सर्वसर्वज्ञसम्मतम्**, अथवा सर्वं च तत् सर्वज्ञसम्मतं चेति **सर्वसर्वज्ञसम्मतं** प्रवचनतत्त्वमित्यर्थः, तस्य, **अबुधजनविबोधनकरस्य** एकान्तहितस्येति भावः, **पच्चक्खयपच्चयकरीणं** ति **प्रत्यक्षकेण** ज्ञानेन साक्षादित्यर्थो यः **प्रत्ययः** 'सर्वातिशयनिधानमतीन्द्रियार्थोपदर्शनाव्यभिचारि चेदं जिनप्रवचनम्' इत्येवंरूपा प्रतिपत्तिः, अथवा प्रत्यक्षेणेवानेनार्थाः[3] प्रतीयन्त इति प्रत्यक्षमिवेदमित्येवं प्रतीतिः **प्रत्यक्षताप्रत्ययस्**[4]तत्करणशीलाः प्रत्यक्षकप्रत्ययकर्यः प्रत्यक्षताप्रत्ययकर्यो **वा**, तासां **प्रत्यक्षकप्रत्ययकरीणां प्रत्यक्षताप्रत्ययकरीणां** वा, कासामित्याह- **प्रश्नानां** प्रश्नविद्यानाम् उपलक्षणत्वादन्यासां च यासामष्टोत्तरशतान्यादौ प्रतिपादितानि, **विविधगुणा** बहुविधप्रभावास्ते च ते **महार्थाश्च** महान्तोऽभिधेयाः पदार्थाः शुभाशुभसूचनादयो **विविधगुणमहार्थाः**, किंभूताः ? **जिनवरप्रणीताः**, किमित्याह **आघविज्जंति** त्ति आख्यायन्ते, शेषं पूर्ववत्, नवरं यद्यपीहाध्ययनानां दशत्वाद् दशैवोद्देशनकाला भवन्ति तथापि वाचनान्तरापेक्षया पञ्चचत्वारिंशदिति सम्भाव्यते इति **पणयालीस**मित्याद्यविरुद्धमिति । **संखेज्जाणि पयसयसहस्साणि पदग्गेणं** ति तानि च किल द्विनवतिर्लक्षाणि[5] षोडश च सहस्राणीति ॥१०॥

[सू० १४६] से किं तं विवागसुते ? विवागसुए णं सुकडदुक्कडाणं कम्माणं

---

१. कालः समयः खं० ॥ २. **समसमस्तत्प्र**° जे२ ॥ ३. **प्रत्यक्षेणैवा**° जे२ ॥ ४. **प्रत्यक्षकप्रत्यय**° जे२ ॥
५. °नवतिल° हे२ विना ॥

फलविवागे आघविज्जति । से समासओ दुविहे पण्णत्ते, तंजहा– दुहविवागे चेव सुहविवागे चेव, तत्थ णं दह दुहविवागाणि, दह सुहविवागाणि ।

से किं तं दुहविवागाणि ? दुहविवागेसु णं [दुहविवागाणं] णगराइं, चेतियाइं, उज्जाणाइं, वणसंडा, रायाणो, अम्मापितरो, समोसरणाइं, धम्मायरिया, धम्मकहातो, [1]नरग(नगर)गमणाइं, संसारपवंचदुहपरंपराओ य आघविज्जंति, सेत्तं दुहविवागाणि ।

से किं तं सुहविवागाणि ? सुहविवागेसु सुहविवागाणं णगराइं जाव धम्मकहातो, इहलोइयपारलोइया इड्ढिविसेसा, भोगपरिच्चाया, पव्वज्जाओ, सुयपरिग्गहा, तवोवहाणाइं, पडिमातो, संलेहणातो, भत्तपच्चक्खाणाइं, पाओवगमणाइं, देवलोगगमणाइं, सुकुलपच्चायाती, पुण बोहिलाभो, अंतकिरियातो य आघविज्जंति ।

दुहविवागेसु णं पाणातिवाय-अलियवयण-चोरिक्ककरण-परदारमेहुण-ससंगताए महतिव्वकसाय-इंदिय-प्पमाय-पावप्पओय-असुहज्झवसाण-संचियाणं कम्माणं पावगाणं पावअणुभागफलविवागा णिरयगति-तिरिक्खजोणिबहुविहवसण-सयपरंपरापबद्धाणं मणुयत्ते वि आगताणं जह पावकम्मसेसेण पावगा होंति फलविवागा वह-वसणविणास-णास-कण्णोट्ठंगुट्ठ-कर-चरण-नहच्छेयण-जिब्भच्छेयण-अंजण-कडग्गिदाहण-गयचलणमलण-फालण-उल्लंबण-सूल-लता-लउड-लट्ठिभंजण-तउ-सीसग-तत्ततेल्लकलकलअभिसिंचण-कुंभिपाग-कंपण-थिरबंधण-वेह-वज्झकत्तण-पतिभयकरकरपलीवणादिदारुणाणि दुक्खाणि अणोवमाणि, बहुविविहपरंपराणुबद्धा ण मुच्चंति पावकम्मवल्लीए, अवेयइत्ता हु णत्थि मोक्खो, तवेण धितिधणियबद्धकच्छेण सोहणं तस्स वा वि होज्जा ।

एत्तो य सुभविवागेसु सील-संजम-णियम-गुण-तवोवहाणेसु साहुसु

---

१. जेमू१-हे२-अटी० मध्येऽत्र '**नगरगमणाइं**' इति पाठः, अन्येषु तु हस्तलिखितादर्शेषु '**नरगगमणाइं**' इति पाठः. नन्दीसूत्रेऽपि अस्मिन्नेव वर्णने **निरयगमणाइं** इत्येव पाठः ॥

सुविहिएसु अणुकंपासयप्पयोगतेकालमतिविसुद्धभत्तपाणाइं पययमणसा हितसुहनीसेसतिव्वपरिणामनिच्छियमती पयच्छिऊणं पयोगसुद्धाइं जह य निव्वत्तेंति उ बोहिलाभं जह य परित्तीकरेंति णर-णिरय-तिरिय-सुरगतिगमणविपुलपरियट्ट-अरति-भय-विसाय-सोक-मिच्छत्तसेलसंकडं अण्णाणतमंधकारचिक्खल्लसुदुत्तारं जर-मरण-जोणिसंखुभितचक्कवालं सोलसकसायसावयपयंडचंडं अणातियं अणवयग्गं संसारसागरमिणं, जह य णिबंधंति आउगं सुरगणेसु, जह य अणुभवंति सुरगणविमाणसोक्खाणि अणोवमाणि, ततो य कालंतरे चुयाणं इहेव नरलोगमागयाणं आउ-वपु-वण्ण-रूव-जाति-कुल-जम्म-आरोग्ग-बुद्धि-मेहाविसेसा मित्तजण-सयण-धणधण्णविभवसमिद्धिसारसमुदयविसेसा बहुविहकामभोगुब्भवाण सोक्खाण सुहविवागुत्तमेसु, अणुवरयपरंपराणुबद्धा असुभाणं सुभाणं चेव कम्माणं भासिया बहुविहा विवागा विवागसुयम्मि भगवता जिणवरेण संवेगकारणत्था, अन्ने वि य एवमादिया, बहुविहा वित्थरेणं अत्थपरूवणया आघविज्जति ।

विवागसुयस्स णं परित्ता वायणा, संखेज्जा जाव संखेज्जातो संगहणीतो। से णं अंगट्ठताए एक्कारसमे अंगे, वीसं अज्झयणा, वीसं उद्देसणकाला, वीसं समुद्देसणकाला, संखेज्जाइं पयसयसहस्साइं पयग्गेणं पण्णत्ते, संखेज्जाणि अक्खराणि, जाव एवं चरणकरणपरूवणया आघविज्जति । सेतं विवागसुए।

[टी०] से किं तमित्यादि, विपचनं **विपाकः** शुभाशुभकर्म्मपरिणामस्तत्प्रतिपादकं श्रुतं **विपाकश्रुतम्** । **विवागसुए ण**मित्यादि कण्ठ्यम्, नवरं **फलविवागे** त्ति फलरूपो विपाकः, त[1]था **नगरगमणाइं** ति भगवतो **गौतमस्य** भिक्षाद्यर्थं नगरप्रवेशनानीति ।

एतदेव पूर्वोक्तं प्रपञ्चयन्नाह– **दुहविवागेसु ण**मित्यादि, तत्र **प्राणातिपाता-ऽलीकवचन-चौर्यकरण-परदारमैथुनैः** स[2]ह **ससंगयाए** त्ति या **ससङ्गता** सपरिग्रहता तया संचितानां कर्म्मणामिति योगः, **महातीव्रकषायेन्द्रियप्रमाद-पापप्रयोगाशुभाध्यवसानसञ्चितानां** कर्मणां पापकानां **पापानुभागा** अशुभरसा ये

१. °**था** इत्यत आरभ्य षट् पत्राणि खं० मध्ये न सन्ति ॥ २. **सह संगयाए** जे२ हे२ । खं० मध्येऽत्र पाठः पतितः ॥

फलविपाका विपाकोदयास्ते तथा, ते आख्यायन्त इति योगः, केषामित्याह– **निरयगतौ तिर्यग्योनौ** च ये **बहुविधव्यसनशतपरम्पराभिः प्रबद्धाः** ते तथा, तेषाम्, जीवानामिति गम्यते, तथा **मणुयत्ति** त्ति **मनुजत्वेऽप्यागतानां यथा पापकर्मशेषेण पापका भवन्ति फलविपाका** अशुभा विपाकोदया इत्यर्थः, तथा आख्यायते इति प्रकृतम्, तथाहि– [1]**व्यधो** यष्ट्यादिताडनं **वृषणविनाशो** वर्द्धितककरणं तथा नासायाश्च कर्णयोश्च ओष्ठस्य चाङ्गुष्ठानां च करयोश्च चरणयोश्च नखानां च यच्छेदनं तत्तथा, **जिह्वाछेदनम्, अंजण** त्ति अञ्जनं तप्तायःशलाकया नेत्रयोः, म्रक्षणं वा देहस्य क्षार-तैलादिना, **कडग्गिदाहणं** ति **कटानां** विदलवंशादिमयानामग्निः **कटाग्निस्तेन** दाहनं **कटाग्निदाहनम्,** कटेन परिवेष्टितस्य [2]बोधनमित्यर्थः, तथा **गजचलनमलनं फालनं** विदारणम् **उल्लम्बनं** वृक्षशाखादावुद्बन्धनम्, तथा **शूलेन लतया लकुटेन यष्ट्या** च **भञ्जनं** गात्राणाम्, तथा **त्रपुणा** धातुविशेषेण, **सीसकेन** च तेनैव, **तप्तेन तैलेन** च **कल-कल** त्ति सशब्देना**भिषेचनम्**, तथा **कुम्भ्यां** भाजनविशेषे पाकः **कुम्भीपाकः, कम्पनं** शीतलजलाच्छोटनादिना शीतकाले गात्रोत्कम्पजननम्, तथा **स्थिरबन्धनं** निबिडनियन्त्रणम्, **वेधः** कुन्तादिना शस्त्रेण भेदनम्, **वर्द्धकर्त्तनं** त्वगुत्त्रोटनम्, **प्रतिभयकरं** भयजननं तच्च तत् **करप्रदीपनं** च वसनावेष्टितस्य तैलाभिषिक्तस्य करयोरग्निप्रबोधनमिति कर्म्मधारयः, ततश्च **व्यधश्च वृषणविनाशश्चे**त्यादि यावत् **प्रतिभयकरकरप्रदीपनं** चेति द्वन्द्वः, ततस्तानि आदिर्येषां दुःखानां तानि, तथा तानि च तानि **दारुणानि** चेति कर्म्मधारयः, कानीमानीत्याह– **दुःखानि,** किंभूतानि ? **अनुपमानि** दुःखविपाकेष्वाख्यायन्त इति प्रक्रमः, तथेदमाख्यायते **बहुविविधपरम्पराभिः** दुःखानामिति गम्यते, **अनुबद्धाः** सन्ततमालिङ्गिता **बहुविविधपरम्परानुबद्धा** जीवा इति गम्यते, **न मुच्यन्ते** न त्यज्यन्ते, कया ? **पापकर्मवल्ल्या** दुःखफलसम्पादिकया, किमित्याह- यतोऽ**वेदयित्वा** अननुभूय कर्मफलमिति गम्यते, हुर्यस्मादर्थे, **नास्ति** न भवति **मोक्षो** वियोगः कर्म्मणः सकाशात्, जीवानामिति गम्यते, किं सर्वथा नेत्याह– **तपसा** अनशनादिना, किम्भूतेन ? **धृतिः**

१. **विधौ** जे२ । वधो जे१ । "व्यध ताडने" - **पा०धा०** ११८१ ॥ २. अग्निप्रबोधनमित्यर्थः ॥

चित्तसमाधानं तद्रूपा **धणियं** ति अत्यर्थं **बद्धा** निष्पीडिता **कच्छा** बन्धविशेषो यत्र तत्तथा तेन, धृतिबलयुक्तेनेत्यर्थः, **शोधनम्** अपनयनं तस्य कर्म्मविशेषस्य **वावि** त्ति सम्भावनायां **होज्जा** सम्पद्येत, नान्यो मोक्षोपायोऽस्तीति भावः ।

एत्तो **ये**त्यादि, **इत**श्चानन्तरं **सुखविपाकेषु** द्वितीयश्रुतस्कन्धाध्ययनेष्वित्यर्थः, यदाख्यायते तदभिधीयत इति शेषः, **शीलं** ब्रह्मचर्यं समाधिर्वा, **संयमः** प्राणातिपातविरतिः, **नियमा** अभिग्रहविशेषाः, **गुणाः** शेषमूलगुणाः **उत्तरगुणा**श्च, **तपो**ऽनशनादि, एतेषा**मुपधानं** विधानं येषां ते तथा, अतस्तेषु **शील-संयम-नियम-गुण-तपउपधानेषु**, केष्वित्याह– **साधुषु** यतिषु, किम्भूतेषु ? सुष्ठु **विहितम्** अनुष्ठितं येषां ते **सुविहिता**स्तेषु भक्तादि दत्त्वा यथा बोधिलाभादि निर्वर्त्तयन्ति तथेहाख्यायत इति सम्बन्धः, इह च सम्प्रदानेऽपि सप्तमी न दुष्टा, विषयस्य विवक्षणात्, **अनुकम्पा** अनुक्रोशस्तत्प्रधान **आशयः** चित्तं तस्य **प्रयोगो** व्यावृत्ति(पृति)**रनुकम्पाशयप्रयोग**स्तेन, तथा **तेकालमति** त्ति त्रिषु कालेषु या **मतिः** बुद्धिर्यदुत दास्यामीति परितोषो दीयमाने परितोषो दत्ते च परितोष इति सा **त्रिकालमति**स्तया च यानि **विशुद्धानि** तानि तथा, तानि च तानि **भक्तपानानि** चेति **अनुकम्पाशयप्रयोगत्रिकालमतिविशुद्धभक्त-पानानि** प्रदायेति क्रियायोगः, केन प्रदायेत्याह– **प्रयतमनसा** आदरपूतचेतसा, **हितो**ऽनर्थपरिहाररूपत्वात् सुखः तद्धेतुत्वात् शुभो वा **नीसेस** त्ति निःश्रेयसः कल्याणकरत्वात् **तीव्रः** प्रकृष्टः **परिणामः** अध्यवसानं यस्यां सा तथा, सा **निश्चिता** असंशया **मतिः** बुद्धिर्येषां ते **हितसुखनिःश्रेयसतीव्रपरिणामनिश्चितमतयः**, किम् ? **पयच्छिऊणं** ति प्रदाय, किंभूतानि भक्त-पानानि ? **प्रयोगेषु शुद्धानि** दायकदानव्यापारापेक्षया सकलाशंसादिदोषरहितानि ग्राहकग्रहणव्यापारापेक्षया चोद्गमादिदोषवर्ज्जितानि, ततः किम् ? **यथा च** येन च प्रकारेण **पारम्पर्येण** मोक्षसाधकत्वलक्षणेन **निर्वर्त्तयन्ति**, भव्यजीवा इति गम्यते, **तु**शब्दो भाषामात्रार्थः, **बोधिलाभम्, यथा च परित्तीकुर्वन्ति** ह्रस्वतां नयन्ति संसारसागरमिति योगः, किंभूतम् ? नर-निरय-तिर्यक्-सुरगतिषु यज्जीवानां **गमनं** परिभ्रमणं स एव **विपुलो** विस्तीर्णः **परिवत्तो** मत्स्यादीनां परिवर्त्तनमनेकधा सञ्चरणं यत्र स तथा, तथा **अरति-**

भय-विषाद-शोक-मिथ्यात्वान्येव शैला: पर्वतास्तै: **सङ्कट:** सङ्कीर्णो य: स तथा, तत: कर्म्मधारयोऽतस्तम्, इह च **विषादो** दैन्यमात्रम्, **शोक**स्त्वाक्रन्दनादिचिह्न इति, तथा अज्ञानमेव **तमोऽन्धकारं** महान्धकारं यत्र स तथा, अतस्तम्, **चिक्[१]खल्लसुदुत्तारं** ति **चिक्खल्लं** कर्दम: संसारपक्षे तु **चिक्खल्लं** विषय-धन-स्वजनादिप्रतिबन्ध:, तेन **सुदुस्तरो** दु:खोत्तार्यो य: स तथा, तम्, तथा **जरामरणयोनय** एव **संक्षुभितं** महामत्स्य-मकराद्यनेकजलजन्तुजातिसम्मर्देन प्रविलोडितं **चक्रवालं** जलपारिमाण्डल्यं यत्र स तथा, तम्, तथा **षोडश कषाया** एव **श्वापदानि** मकर-ग्राहादीनि **प्रकाण्डचण्डानि** अत्यर्थरौद्राणि यत्र स तथा, तम्, **अनादिकमनवदग्र**मनन्तं **संसारसागरमिमं** प्रत्यक्षमित्यर्थ:, तथा **यथा च** सागरोपमादिना प्रकारेण **निबध्नन्त्यायु: सुरगणेषु** साधुदानप्रत्ययमिति भाव:, **यथा चानुभवन्ति सुरगणविमानसौख्यानि अनुपमानि, ततश्च कालान्तरे च्युतानाम् इहेव** त्ति तिर्यग्लोके **नरलोकमागतानामायु-र्वपु-र्वर्ण-रूप-जाति-कुल-जन्मा-ऽऽरोग्य-बुद्धि-मेधाविशेषा** आख्यायन्त इति योग:, तत्रायुषो विशेष इतरजीवायुष: सकाशात् शुभत्वं दीर्घत्वं च, एवं **वपु:** शरीरं तस्य स्थिरसंहननता, **वर्ण**स्योदारगौरत्वम्, **रूप**स्यातिसुन्दरता **जाते**रुत्तमत्वम्, **कुल**स्याप्येवम्, **जन्मनो** विशिष्टक्षेत्रकालनिराबाधत्वम्, **आरोग्य**स्य प्रकर्ष:, **बुद्धि**रौत्पत्तिक्यादिका तस्या: प्रकृष्टता, **मेधा** अपूर्वश्रुतग्रहणशक्ति:, तस्या विशेष: प्रकृष्टतैवेति, तथा **मित्रजन:** सुहृल्लोक:, **स्वजन:** पितृपितृव्यादि:, **धनधान्य**रूपो यो **विभवो** लक्ष्मी: स **धनधान्यविभव:**, तथा **समृद्धे:** [२]पुरा-ऽन्त:पुर-कोश-कोष्ठागार-बल-वाहनरूपाया: सम्पदो यानि **साराणि** प्रधानवस्तूनि तेषां य: **समुदय:** समूह: स तथा इत्येतेषां द्वन्द्वस्तत एषां ये **विशेषा:** प्रकर्षास्ते तथा, तथा **बहुविधकामभोगोद्भवानां सौख्यानां** विशेषा इतीहापि सम्बन्धनीयम्, शुभविपाक उत्तमो येषां ते **शुभविपाकोत्तमा:**, तेषु, जीवेष्विति गम्यम्, इह चेयं षष्ठ्यर्थे सप्तमी, तेन शुभविपाकाध्ययनवाच्यानां साधूनामायुष्कादिविशेषा: शुभविपाकाध्ययनेष्वाख्यायन्ते इति प्रकृतम् ।

अथ प्रत्येकं श्रुतस्कन्धयोरभिधेये पुण्य-पापविपाकरूपे प्रतिपाद्य, तयोरेव यौगपद्येन

१. चिक्खिल्ल॰ जे१,२ ॥ २. **पुरकोश**॰ जे२ विना ॥

ते आह– **अणुवरयेत्**यादि, **अनुपरता** अविच्छिन्ना ये **परम्परानुबद्धाः** पारम्पर्यप्रति-[१]बद्धाः, के ? विपाका इति योगः, केषाम् ? **अशुभानां शुभानां चैव कर्मणां** प्रथम-द्वितीयश्रुतस्कन्धयोः क्रमेणैव **भाषिताः** उक्ता **बहुविधा विपाकाः विपाकश्रुते** एकादशेऽङ्गे **भगवता जिनवरेण संवेगकारणार्थाः** संवेगहेतवो भावाः, **अन्येऽपि चैवमादिका** आख्यायन्त इति पूर्वोक्तक्रियया वचनपरिणामाद्वोत्तरक्रियया योगः, एवं **बहुविधा विस्तरेणार्थप्ररूपणता आख्यायत** इति, शेषं कण्ठ्यम्, नवरं **संख्यातानि पदशतसहस्राणि पदाग्रेणे**ति, तत्र किल एका पदकोटी चतुरशीतिश्च लक्षाणि द्वात्रिंशच्च सहस्राणीति ॥११॥

[सू० १४७] [१] से किं तं दिट्ठिवाए ? दिट्ठिवाए णं सव्वभावपरूवणया आघविज्जति । से समासतो पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा– परिकम्मं सुत्ताइं पुव्वगयं अणुओगो चूलिया ।

[२] से किं तं परिकम्मे ? परिकम्मे सत्तविहे पण्णत्ते, तंजहा– सिद्धसेणियापरिकम्मे मणुस्ससेणियापरिकम्मे पुट्ठसेणियापरिकम्मे ओगाहणसेणियापरिकम्मे उवसंपज्जणसेणियापरिकम्मे विप्पजहणसेणियापरिकम्मे चुताचुतसेणियापरिकम्मे । से किं तं सिद्धसेणियापरिकम्मे ? सिद्धसेणियापरिकम्मे चोद्दसविहे पण्णत्ते, तंजहा– माउयापदाणि १, एगट्ठितातिं २, पाढो ३, अट्ठपयाणि ४, (अट्ठपयाणि ३, पाढो ४,) आगासपदाणि ५, केउभूयं ६, रासिबद्धं ७, एगगुणं ८, दुगुणं ९, तिगुणं १०, केउभूतपडिग्गहो ११, संसारपडिग्गहो १२, नंदावत्तं १३, सिद्धावत्तं १४, सेत्तं सिद्धसेणियापरिकम्मे। से किं तं मणुस्ससेणियापरिकम्मे? मणुस्ससेणियापरिकम्मे चोद्दसविहे पण्णत्ते, तंजहा– ताइं चेव माउयापयाइं जाव नंदावत्तं मणुस्सावत्तं, सेत्तं मणुस्ससेणियापरिकम्मे । अवसेसाइं परिकम्माइं पाढाइयाइं एक्कारसविहाणि पन्नत्ताइं । इच्चेताइं सत्त परिकम्माइं, छ ससमइयाणि, सत्त आजीवियाणि। छ चउक्कणइयाणि, सत्त तेरासियाणि। एवामेव सपुव्वावरेणं सत्त परिकम्माइं

---

१. पारंपर्यप्रतिबद्धाः हे२ विना नास्ति ॥

तेसीतिं भवंतीति मक्खायातिं । सेत्तं परिकम्माइं ।

[टी०] **से किं तं दिट्ठिवाए** त्ति, दृष्टयो दर्शनानि, वदनं वादः दृष्टीनां वादो **दृष्टिवादः** दृष्टीनां वा पातो यत्रासौ **दृष्टिपातः**, सर्वनयदृष्टयः एवेहाख्यायन्त इत्यर्थः, तथा चाह– **दिट्ठिवाएण**मित्यादि, दृष्टिपातेन[1] दृष्टिपाते वा सर्वभावप्ररूपणाऽऽख्यायते।

से समासओ पंचविहेत्यादि, सर्वमिदं प्रायो व्यवच्छिन्नं तथापि यथादृष्टं किञ्चित् लिख्यते, तत्र सूत्रादिग्रहणयोग्यतासम्पादनसमर्थानि परिकर्म्माणि गणितपरिकर्मवत्, तच्च परिकर्मश्रुतं सिद्धश्रेणिकादिपरिकर्म्ममूलभेदतः सप्तविधम्, उत्तरभेदतस्तु त्र्यशीतिविधं मातृकापदादि, एतच्च सर्वं समूलोत्तरभेदं सूत्रार्थतो व्यवच्छिन्नम्, एतेषां च परिकर्म्मणां षट् आदिमानि परिकर्म्माणि स्वसामयिकान्येव, गोशालकप्रवर्त्तिताजीविकपाषण्डि[2]सिद्धान्तमतेन पुनः च्युताच्युतश्रेणिकापरिकर्म्मसहितानि[3] सप्त प्रज्ञाप्यन्ते, इदानीं परिकर्मसु नयचिन्ता, तत्र नैगमो द्विविधः - साङ्ग्रहिको[4]ऽसाङ्ग्रहिकश्च[5], तत्र साङ्ग्रहिकः सङ्ग्रहं[6] प्रविष्टोऽसाङ्ग्रहिकश्च[7] व्यवहारम्, तस्मात् सङ्ग्रहो व्यवहार ऋजुसूत्रः शब्दादयश्चैक एवेत्येवं चत्वारो नयाः, एतैश्चतुर्भिर्नयैः षट् स्वसामयिकानि परिकर्म्माणि चिन्त्यन्ते, अतो भणितं **छ चउक्कनइयाइं** भवन्ति, त एव चाजीविकास्त्रैराशिका भणिताः, कस्माद् ?, उच्यते, यस्मात्ते सर्वं त्र्यात्मकम् इच्छन्ति, यथा 'जीवोऽजीवो जीवाजीवः, लोकोऽलोको लोकालोकः, सत् असत् सदसत्' इत्येवमादि, नयचिन्तायामपि ते त्रिविधं नयमिच्छन्ति, तद्यथा- द्रव्यार्थिकः पर्यायार्थिकः उभयार्थिकः, अतो भणितं **सत्त तेरासिय** त्ति सप्त परिकर्माणि त्रैराशिकपाषण्डस्था[8]स्त्रिविधया नयचिन्तया चिन्तयन्तीत्यर्थः । **सेत्तं परिकम्म**[9] त्ति निगमनम्।

[सू० १४७] [३] से किं तं सुत्ताइं ? सुत्ताइं अट्ठासीतिं भवंतीति मक्खायातिं, तंजहा- उज्जगं परिणयापरिणयं बहुभंगियं विपच्चवियं अणंतरपरंपरं सामाणं संजूहं भिन्नं आहव्वायं सोवत्थितं घंटं णंदावत्तं बहुलं

---

१. दृष्टिपादेन जे१,२ ॥ २. °पाखंडि जे२ ॥ ३. त्रुटितस्य खं० आदर्शस्य नि° इत्यतः प्रारम्भः ॥ ४. संग्राहि° खं० । संग्रहि° जे२ । जे१ मध्येऽत्र पत्रं त्रुटितम्॥ ५. °संग्राहि° खं० । °संग्रहि° जे२ ॥ ६. संग्रहप्रवि° जे२ ॥ ७. °संग्राहि° खं० हे१ ॥ ८. °पाषण्ड° हे१,२ विना ॥ ९. °कम्मे हे२ ॥

पुट्ठापुट्ठं वियावत्तं एवंभूतं दुयावत्तं वत्तमाणुप्पयं समभिरूढं सव्वतोभद्दं पणसं दुपडिग्गहं २२ । इच्चेताइं बावीसं सुत्ताइं छिण्णच्छेयणइयाणि ससमयसुत्तपरिवाडीए, इच्चेताइं बावीसं सुत्ताइं अच्छिन्नच्छेयनइयाणि आजीवियसुत्तपरिवाडीए, इच्चेताइं बावीसं सुत्ताइं तिकणइयाणि तेरासियसुत्तपरिवाडीए, इच्चेताइं बावीसं सुत्ताइं चउक्कणइयाणि ससमयसुत्तपरिवाडीए । एवामेव सपुव्वावरेणं अट्ठासीती सुत्ताइं भवंतीति मक्खायाइं । सेत्तं सुत्ताइं ।

[टी०] **से किं तं सुत्ताइ**मित्यादि, तत्र सर्वद्रव्य-पर्याय-नयाद्यर्थसूचनात् सूत्राणि [1]अमून्यपि च सूत्रार्थतो व्यवच्छिन्नानि तथापि दृष्टानुसारतः किञ्चिल्लिख्यते, एतानि किल ऋजुकादीनि द्वाविंशतिः सूत्राणि, तान्येव विभागतोऽष्टाशीतिर्भवन्ति, कथम् ?, उच्यते, **इच्चेइयाइं बावीसं सुत्ताइं छिन्नच्छेयनइयाइं ससमयसुत्तपरिवाडीए** त्ति इह यो नयः सूत्रं छिन्नं छेदेनेच्छति स छिन्नच्छेदनयो यथा [2]**धम्मो मंगलमुक्कट्ठं** [दशवै० १।१] इत्यादिश्लोकः सूत्रार्थतः प्रत्येकच्छेदेन स्थितो न द्वितीयादिश्लोकमपेक्षते, प्रत्येककल्पितपर्यन्त इत्यर्थः, एतान्येव द्वाविंशतिः स्वसमयसूत्रपरिपाट्या सूत्राणि स्थितानि, तथा **इत्येतानि द्वाविंशतिः सूत्राणि अच्छिन्नच्छेदनयिकान्याजीविकसूत्रपरिपाट्ये**ति, अयमर्थः– इह यो नयः सूत्रमच्छिन्नं छेदेनेच्छति सोऽच्छिन्नच्छेदनयो यथा [2]**धम्मो मंगलमुक्कट्ठं** [दशवै० १।१] इत्यादिश्लोक एवार्थतो द्वितीयादिश्लोकम[3]पेक्षमाणो द्वितीयादयश्च प्रथममिति अन्योन्यसापेक्षा इत्यर्थः, एतानि द्वाविंशतिराजीविकगोशालकप्रवर्त्तितपाषण्डसूत्रपरिपाट्या अक्षररचनाविभागस्थितान्यप्यर्थतोऽन्योन्य[4]मपेक्षमाणानि भवन्ति । **इच्चेइयाइं** इत्यादि सूत्रम्, तत्र **तिकनइयाइं** ति नयत्रिकाभिप्रायतश्चिन्त्यन्त इत्यर्थः, त्रैराशिकाश्चाजीविका एवोच्यन्ते इति। तथा **इच्चेइयाइं** इत्यादि सूत्रम्, तत्र **चउक्कनइयाइं** ति नयचतुष्काभिप्रायतश्चिन्त्यन्त इति भावना । **एवमेवे**त्यादिसूत्रम्, एवं चतस्रो द्वाविंशतयोऽष्टाशीतिः सूत्राणि [5]भवन्ति । **सेत्तं सुत्ताइं** ति निगमनवाक्यम् ।

---

१. **अष्टाशीत्यपि च** खंमू० जे१ । **अष्टाशीतिरेतान्यपि च** खंसं० ॥ २. दृश्यतां पृ०८२ पं०२० ॥ ३. °**मपेक्ष्यमाणो** जे२॥ ४. °**न्यमवेक्ष्यमाणानि** जे१,२,हे१ । °**न्यसावेक्ष्यमाणानि** खं०॥ ५. **भवंतीति** खं० जे१॥

[सू० १४७] [४] से किं तं पुव्वगए ? पुव्वगए चोद्दसविहे पण्णत्ते, तंजहा– उप्पायपुव्वं अग्गेणियं वीरियं अत्थिणत्थिप्पवायं णाणप्पवायं सच्चप्पवायं आतप्पवायं कम्मप्पवायं पच्चक्खाणं अणुप्पवायं अवंझं पाणाउं किरियाविसालं लोगबिंदुसारं १४ । उप्पायपुव्वस्स णं दस वत्थू, चत्तारि चूलियावत्थू पण्णत्ता। अग्गेणियस्स णं पुव्वस्स चोद्दस वत्थू, बारस चूलियावत्थू पण्णत्ता। वीरियपुव्वस्स अट्ठ वत्थू, अट्ठ चूलियावत्थू पण्णत्ता । अत्थिणत्थिप्पवायस्स णं पुव्वस्स अट्ठारस वत्थू, दस चूलियावत्थू पण्णत्ता । णाणप्पवायस्स णं पुव्वस्स बारस वत्थू पण्णत्ता । सच्चप्पवायस्स णं पुव्वस्स दो वत्थू पण्णत्ता। आतप्पवायस्स णं पुव्वस्स सोलस वत्थू पण्णत्ता। कम्मप्पवायस्स णं पुव्वस्स तीसं वत्थू पण्णत्ता । पच्चक्खाणस्स णं पुव्वस्स वीसं वत्थू पण्णत्ता । अणुप्पवायस्स णं पुव्वस्स पण्णरस वत्थू पण्णत्ता । अवंझस्स णं पुव्वस्स बारस वत्थू पण्णत्ता । पाणाउस्स णं पुव्वस्स तेरस वत्थू पण्णत्ता। किरियाविसालस्स णं पुव्वस्स तीसं वत्थू पण्णत्ता । लोगबिंदुसारस्स णं पुव्वस्स पणुवीसं वत्थू पण्णत्ता ।

दस चोद्दस अट्ठऽट्ठारसेव बारस दुवे य वत्थूणि ।
सोलस तीसा वीसा पण्णरस अणुप्पवायम्मि ॥६१॥
बारस एक्कारसमे बारसमे तेरसेव वत्थूणि ।
तीसा पुण तेरसमे चोद्दसमे पण्णवीसाओ ॥६२॥
चत्तारि दुवालस अट्ठ चेव दस चेव चूलवत्थूणि ।
आतिल्लाण चउण्हं सेसाणं चूलिया णत्थि ॥६३॥

सेत्तं पुव्वगतं ।

[टी०] **से किं तं पुव्वगयेत्यादि**, अथ **किं तत् पूर्वगतम्** ?, उच्यते, यस्मात्तीर्थकरः तीर्थप्रवर्त्तनाकाले गणधराणां सर्वसूत्राधारत्वेन पूर्वं **पूर्वगत**सूत्रार्थं भाषते तस्मात् पूर्वाणीति भणितानि, गणधराः पुनः श्रुतरचनां विदधाना **आचारा**दिक्रमेण रचयन्ति स्थापयन्ति च, मतान्तरेण तु पूर्वगतसूत्रार्थः पूर्वमर्हता भाषितो गणधरैरपि पूर्वगतश्रुतमेव पूर्वं रचितं

पश्चा**दाचारादि** । नन्वेवं [१]य**दाचारनिर्युक्त्या**मभिहितं **सव्वेसिं आयारो पढमो** [आचा० नि० ८] इत्यादि तत् कथम् ?, उच्यते, तत्र स्थापनामाश्रित्य तथोक्तमिह त्वक्षररचनां प्रतीत्य भणितं 'पूर्वं पूर्वाणि कृतानि' इति ।

तच्च **पूर्वगतं चतुर्दशविधं प्रज्ञप्तम्, तद्यथा– उप्पाये**त्यादि, तत्रो**त्पादपूर्वं** प्रथमम्, तत्र च सर्वद्रव्याणां पर्यवाणां चोत्पादभावमङ्गीकृत्य प्रज्ञापना कृता, तस्य च पदपरिमाणमेका कोटी । **अग्गेणीयं** द्वितीयम्, तत्रापि सर्वेषां द्रव्याणां पर्यवाणां जीवविशेषाणां चाऽ**ग्रं** परिमाणं वर्ण्यत इत्य**ग्रेणीतम्**, तस्य पदपरिमाणं षण्णवतिः पदशतसहस्राणि । **वीरियं** ति **वीर्यप्रवादं** तृतीयम्, तत्राप्यजीवानां जीवानां च सकर्मेतराणां वीर्यं प्रोच्यत इति **वीर्यप्रवादम्** । तस्यापि सप्ततिः पदशतसहस्राणि परिमाणम् । **अस्तिनास्तिप्रवादं** चतुर्थम्, यद्यल्लोके यथास्ति यथा वा नास्ति, अथवा स्याद्वादाभिप्रायतः तदेवास्ति तदेव नास्तीत्येवं प्रवदतीति **अस्तिनास्तिप्रवादं** भणितम्, तदपि पदपरिमाणतः षष्टिः पदशतसहस्राणि। **ज्ञानप्रवादं** पञ्चमम्, तस्मिन् मतिज्ञानादिपञ्चकस्य भेदप्ररूपणा यस्मात् कृता तस्मात् **ज्ञानप्रवादम्**, तस्मिन् पदपरिमाणमेका कोटी एकपदोनेति । **सत्यप्रवादं** षष्ठम् । **सत्यं** संयमः सत्यवचनं वा, तद्यत्र सभेदं सप्रतिपक्षं च वर्ण्यते तत् **सत्यप्रवादम्**, तस्य पदपरिमाणम् एका पदकोटी षट् च पदानीति । **आत्मप्रवादं** सप्तमम्, **आय** त्ति आत्मा सोऽनेकधा यत्र नयदर्शनैर्वर्ण्यते **तदात्मप्रवादम्**, तस्य पदपरिमाणं षड्विंशतिः पदकोट्यः। **कर्म्मप्रवाद**मष्टमम्, ज्ञानावरणादिकमष्टविधं कर्म्म प्रकृति-स्थित्यनुभाग-प्रदेशादिभिर्भेदैरन्यैश्चोत्तरोत्तरभेदैर्यत्र वर्ण्यते तत् **कर्म्मप्रवादम्**, तत्परिमाणमेका पदकोटी अशीतिश्च सहस्राणीति । **प्रत्याख्यानं** नवमम्, तत्र सर्वप्रत्याख्यानस्वरूपं वर्ण्यत इति **प्रत्याख्यानप्रवादम्**, तत्परिमाणं चतुरशीतिः पदशतसहस्राणीति । **विद्यानुप्रवादं** दशमम्, तत्रानेके विद्यातिशया वर्णिताः, तत्परिमाणमेका पदकोटी दश च पदशतसहस्राणीति । **अवन्ध्य**मेकादशम्, वन्ध्यं नाम निष्फलम्, न वन्ध्यमवन्ध्यं सफलमित्यर्थः, तत्र हि सर्वे ज्ञान-तपः-संयमयोगाः शुभफलेन

१. "सव्वेसि आयारो, तित्थस्स पवत्तणे पढमयाए । सेसाइं अंगाइं, एक्कारस आणुपुव्वीए ॥८॥" - इति **आचाराङ्गनिर्युक्तौ** ॥

सफला वर्ण्यन्ते, अप्रशस्ताश्च प्रमादादिकाः सर्वे अशुभफला वर्ण्यन्ते, अतोऽ**वन्ध्यम्**, तस्य च परिमाणं षड्विंशतिः पदकोट्यः । **प्राणायु**र्द्वादशम्, तत्राप्यायुःप्राणविधानं सर्वं सभेदमन्ये च प्राणा वर्णिताः, तत्परिमाणमेका पदकोटी षट्पञ्चाशच्च पदशतसहस्राणीति । **क्रियाविशालं** त्रयोदशम्, तत्र कायिक्यादयः क्रिया **विशाल** त्ति सभेदाः संयमक्रियाः छन्दःक्रियाविधानानि च वर्ण्यन्त इति **क्रियाविशालम्**, तत्पदपरिमाणं नव पदकोट्यः । **लोकबिन्दुसारं** च चतुर्दशम्, तच्चास्मिन् लोके श्रुतलोके वा बिन्दुरिवाक्षरस्य सर्वोत्तममिति, सर्वाक्षरसन्निपातप्रतिष्ठितत्वेन च **लोकबिन्दुसारं** भणितम्, तत्प्रमाणमर्द्धत्रयोदश पदकोट्य इति ।

उप्पायपुव्वस्सेत्यादि कण्ठ्यम्, नवरं **वस्तु** नियतार्थाधिकारप्रतिबद्धो ग्रन्थविशेषोऽध्ययनवदिति, तथा चूडा इव **चूडा**, इह दृष्टिवादे[1] परिकर्म्म-सूत्र-पूर्वगता-ऽनुयोगोक्तानुक्तार्थसङ्ग्रहपरा ग्रन्थपद्धतयश्चूडा इति । **सेत्तं पुव्वगते** त्ति निगमनम् ।

[सू० १४७] [५] **से किं तं अणुओगे ? अणुओगे दुविहे पण्णत्ते, तंजहा— मूलपढमाणुओगे य गंडियाणुओगे य । से किं तं मूलपढमाणुओगे ? मूलपढमाणुओगे एत्थ णं अरहंताणं भगवंताणं पुव्वभवा, देवलोगगमणाणि, आउं, चयणाणि, जम्मणाणि य, अभिसेया, रायवरसिरीओ, सीयाओ, पव्वज्जाओ, तवा य, भत्ता, केवलणाणुप्पाता, तित्थपवत्तणाणि य, संघयणं, संठाणं, उच्चत्तं, आउं, वण्णविभागो, सीसा, गणा, गणहरा य, अज्जा, पवत्तिणीओ, संघस्स चउव्विहस्स जं वा वि परिमाणं, जिणा, मणपज्जव-ओहिणाणि-समत्तसुयणाणिणो य वादी अणुत्तरगती य जत्तिया, जत्तिया सिद्धा, पातोवगतो य जो जहिं जत्तियाइं भत्ताइं छेयइत्ता अंतगडो मुणिवरुत्तमो, तमरतोघविप्पमुक्का सिद्धिपहमणुत्तरं च पत्ता, एते अन्ने य एवमादी भावा पढमाणुओगे कहिया आघविज्जंति पण्णविज्जंति परूविज्जंति [दंसिज्जंति निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति]। सेत्तं मूलपढमाणुओगे । से किं तं गंडियाणुओगे? गंडियाणुओगे अणेगविहे पण्णत्ते, तंजहा— कुलकरगंडियाओ**

---

१. सेतं जे२ ॥

तित्थकरगंडियाओ गणधरगंडियाओ चक्कवट्टिगंडियाओ दसारगंडियाओ बलदेवगंडियाओ वासुदेवगंडियाओ हरिवंसगंडियाओ भद्दबाहुगंडियाओ तवोकम्मगंडियाओ चित्तंतरगंडियाओ ओसप्पिणिगंडियाओ उस्सप्पिणिगंडियाओ अमर-नर-तिरिय-निरयगतिगमणविविह-परियट्टणाणुयोगे, एवमातियातो गंडियातो आघविज्जंति पण्णविज्जंति परूविज्जंति [दंसिज्जंति निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति] । सेत्तं गंडियाणुओगे ।

[६] से किं तं चूलियाओ ? जण्णं आइल्लाणं चउण्हं पुव्वाणं चूलियाओ, सेसाइं पुव्वाइं अचूलियाइं । सेत्तं चूलियाओ ।

[७] दिट्ठिवायस्स णं परित्ता वायणा, संखेज्जा अणुओगदारा जाव संखेज्जातो निज्जुत्तीओ । से णं अंगट्ठताए बारसमे अंगे, एगे सुतक्खंधे, चोद्दस पुव्वाइं, संखेज्जा वत्थू, संखेज्जा चूलवत्थू, संखेज्जा पाहुडा, संखेज्जा पाहुडपाहुडा, संखेज्जातो पाहुडियातो, संखेज्जातो पाहुडपाहुडियातो, संखेज्जाणि पयसयसहस्साणि पदग्गेणं, संखेज्जा अक्खरा, अणंता गमा, अणंता पज्जवा, परित्ता तसा, अणंता थावरा, सासता कडा णिबद्धा णिकाइया जिणपण्णत्ता भावा आघविज्जंति पण्णविज्जंति परूविज्जंति दंसिज्जंति निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति । [१]एवंणाते, एवं विण्णाते, एवं चरणकरणपरूवणा आघविज्जति । सेत्तं दिट्ठिवाते । सेत्तं दुवालसंगे गणिपिडगे ।

[टी०] से किं तमित्यादि, अनुरूपोऽनुकूलो वा योगो**ऽनुयोगः** सूत्रस्य निजेनाभिधेयेन सार्द्धमनुरूपः सम्बन्ध इत्यर्थः, स च **द्विविधः प्रज्ञप्तः, तद्यथा– मूलप्रथमानुयोगश्च गण्डिकानुयोगश्च** । **से किं त**मित्यादि, इह धर्म्मप्रणयनाद् मूलं तावत्तीर्थकराः, तेषां प्रथमसम्यक्त्वाप्तिलक्षणपूर्वभवादिगोचरोऽनुयोगो **मूलप्रथमानुयोगः**, तथा चाह- **से किं तं मूलपढमाणुओगे** इत्यादि सूत्रसिद्धं यावत् **सेतं मूलपढमाणुओगे** । **से किं त**मित्यादि इहैकवक्तव्यतार्थाधिकारानुगता वाक्यपद्धतयो **गण्डिका** उच्यन्ते तासा**मनुयोगः** अर्थकथनविधिः **गण्डिकानुयोगः**, तथा चाह– **गंडियाणुओगे**

१. दृश्यतां पृ० २१४ टि० १ ॥

अणेगेत्यादि, तत्र कुलकरगण्डिकासु कुलकराणां **विमलवाहनादी**नां पूर्वजन्माद्यभिधीयत इति, एवं शेषास्वपि अभिधानवशतो भावनीयम्, यावत् **चित्रान्तरगण्डिकाः**, नवरं **दशार्हाः समुद्रविजया**दयो दश वसुदेवान्ताः । तथा **चित्रा** अनेकार्था **अन्तरे ऋषभा-ऽजित**तीर्थकरान्तरे **गण्डिका** एकवक्तव्यतार्थाधिकारानुगता, ततश्च चित्राश्च ता अन्तरगण्डिकाश्च **चित्रान्तरगण्डिकाः**, एतदुक्तं भवति– **ऋषभा-ऽजित**तीर्थकरान्तरे तद्वंशजभूपतीनां शेषगतिगमनव्युदासेन शिवगमना-ऽनुत्तरोपपातप्राप्तिप्रतिपादिका-**श्चित्रान्तरगण्डिका** इति, ताश्च–

[१]चोद्दस लक्खा सिद्धा निवईणेक्को य होइ सव्वट्ठे ।
एवेक्केक्कट्ठाणे पुरिसजुगा हुंतऽसंखेज्जा ।। [　]

इत्यादिना ग्रन्थेन **नन्दिटीका**यामभिहितास्तत एवावधार्याः, इह सूत्रगमनिकामात्रस्य विवक्षिततत्वादिति, शेषं सूत्रसिद्धमा निगमनात्, नवरं **संखेज्जा वत्थु** त्ति पञ्चविंशत्युत्तरे द्वे शते, **संखेज्जा चूलवत्थु** त्ति चतुस्त्रिंशत् ।।१२।।

[सू० १४८] इच्चेतं दुवालसंगं गणिपिडगं अतीते काले अणंता जीवा आणाए विराहेत्ता चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्टिंसु, इच्चेतं दुवालसंगं गणिपिडगं पडुप्पन्ने काले परित्ता जीवा आणाए विराहेत्ता चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्टंति, इच्चेतं दुवालसंगं गणिपिडगं अणागते काले अणंता जीवा आणाए विराहेत्ता चाउरंतं संसारकंतारं अणुपरियट्टिस्संति ।

इच्चेतं दुवालसंगं गणिपिडगं अतीते काले अणंता जीवा आणाए आराहेत्ता चाउरंतं संसारकंतारं वितिवतिंसु, एवं पडुपण्णे वि, अणागते वि ।

दुवालसंगे णं गणिपिडगे ण कयाति ण आसी, ण कयाति णत्थि, ण कयाति ण भविस्सइ, भुविं च भवति य भविस्सति य, धुवे णितिए सासते अक्खए अव्वए अवट्ठिते णिच्चे । से जहाणामए पंच अत्थिकाया ण कयाइ ण आसि, ण कयाइ णत्थी, ण कयाइ ण भविस्संति, भुविं च भवंति

१. नन्दीसूत्रस्य चूर्णौ हारिभद्र्यां च वृत्तौ चोद्दस... ... आदय एकविंशतिर्गाथा उद्धृता वर्तन्ते । ताश्च तत्रैव जिज्ञासुभिर्द्रष्टव्याः ।।

य भविस्संति य, धुवा णितिया जाव णिच्चा, एवामेव दुवालसंगे गणिपिडगे ण कयाति ण आसि, ण कयाति णत्थी, ण कयाति ण भविस्सति, भुविं च भवति [य] भविस्सइ य, जाव अवट्ठिते णिच्चे ।

एत्थ णं दुवालसंगे गणिपिडगे अणंता भावा, अणंता अभावा, अणंता हेऊ, अणंता अहेऊ, अणंता कारणा, अणंता अकारणा, अणंता जीवा, अणंता अजीवा, अणंता भवसिद्धिया, अणंता अभवसिद्धिया, अणंता सिद्धा, अणंता असिद्धा, आघविज्जंति पण्णविज्जंति परूविज्जंति दंसिज्जंति निदंसिज्जंति उवदंसिज्जंति ।

[टी०] साम्प्रतं द्वादशाङ्गे विराधनानिष्पन्नं त्रैकालिकं फलमुपदर्शयन्नाह– **इच्चेय**मित्यादि, इत्येतद् **द्वादशाङ्गं गणिपिटकमतीतकाले अनन्ता जीवा आज्ञया विराध्य चतुरन्तं संसारकान्तारम् अणुपरियट्टिंसु** त्ति अनुपरिवृत्तवन्तः, इदं हि द्वादशाङ्गं सूत्रार्थोभयभेदेन त्रिविधम्, ततश्च **आज्ञया** सूत्राज्ञया अभिनिवेशतोऽन्यथापाठादिलक्षणया, अतीतकाले **अनन्ता जीवाश्चतुरन्तं संसारकान्तारं** नारक-तिर्यङ्-नरा-ऽमरविविधवृक्षजालदुस्तरं भवाटवीगहनमित्यर्थः, अनुपरावृत्तवन्तो **जमालि**वत्, अर्थाज्ञया पुनरभिनिवेशतोऽन्यथाप्ररूपणादिलक्षणया **गोष्ठामाहिल**वत्, उभयाज्ञया पुनः पञ्चविधाचारपरिज्ञानकरणोद्यतगुर्वादेशादेरन्यथा-करणलक्षणया गुरुप्रत्यनीकद्रव्यलिङ्गधार्यनेकश्रमणवत्, सूत्रार्थोभयैर्विराध्येत्यर्थः, अथवा द्रव्य-क्षेत्र-काल-भावापेक्षमागमोक्तानुष्ठानमेवाज्ञा, तया, तदकरणेनेत्यर्थः । **इच्चेय**मित्यादि गतार्थमेव, नवरं **परीत्ता जीवा** इति संख्येया जीवाः, वर्त्तमान-विशिष्टविराधकमनुष्यजीवानां संख्येयत्वात्, **अणुपरियट्टंति** त्ति अनुपरावर्त्तन्ते, भ्रमन्तीत्यर्थः । **इच्चेय**मित्यादि, इदमपि भावितार्थमेव, नवरम् **अणुपरियट्टिस्संति** त्ति अनुपरावर्त्तिष्यन्ते, पर्यटिष्यन्तीत्यर्थः ।

इच्चेयमित्यादि कण्ठ्यम्, नवरं **विइवइंसु**[1] त्ति **व्यतिव्रजितवन्तः**, चतुर्गतिकसंसारोल्लङ्घनेन मुक्तिमवाप्ता इत्यर्थः, **एवं प्रत्युत्पन्नेऽपि**, नवरम् अयं विशेषः–

१. विई° जे२ ॥

वीवयंति त्ति **व्यतिव्रजन्ति**, व्यतिक्रामन्तीत्यर्थः, **अनागते**ऽप्येवम्, नवरं **वीवइस्संति** त्ति **व्यतिव्रजिष्यन्ति**, व्यतिक्रमिष्यन्तीत्यर्थः ।

यदिदमनिष्टेतरभेदभिन्नं फलं प्रतिपादितमेतत् सदावस्थायित्वे सति द्वादशाङ्गस्योपजायत इत्याह– **दुवालसंगे**त्यादि, **द्वादशाङ्गं ण**मित्यलङ्कारे **गणिपिटकं न कदाचिन्नासी**दनादित्वात्, **न कदाचिन्न भवति** सदैव भावात्, **न कदाचिन्न भविष्यति** अपर्यवसितत्वात्, किं तर्हि ? **भुविं चे**त्यादि, **अभूच्च भवति च भविष्यति च**, ततश्चेदं त्रिकालभावित्वादचलत्वाच्च **ध्रुवं** मेर्वादिवत्, ध्रुवत्वादेव **नियतं** पञ्चास्तिकायेषु लोकवचनवत्, नियतत्वादेव **शाश्वतं** समयावलिकादिषु कालवचनवत्, शाश्वतत्वादेव वाचनादिप्रदाने**ऽप्यक्षयं गङ्गासिन्धु**प्रवाहेऽपि **पद्महृद**वत्, अक्षयत्वादेवा**ऽव्ययं मानुषोत्तरा**द्बहिः समुद्रवत्, अव्ययत्वादेव स्वप्रमाणे**ऽवस्थितं जम्बूद्वीपा**दिवत्, अवस्थितत्वादेव **नित्य**माकाशवदिति, साम्प्रतं दृष्टान्तमत्रार्थे आह– **से जहा नामए** इत्यादि, **तद्यथा नाम पञ्चास्तिकाया** धर्म्मास्तिकायादयः **न कदाचिन्नासन्नि**त्यादि[१] प्राग्वत्, **एवामेवे**त्यादि दार्ष्टान्तिकयोजना निगदसिद्धैवेति ।

एत्थ णमित्यादि, **अत्र द्वादशाङ्गे गणिपिटके अनन्ता भावा** आख्यायन्त इति योगः, तत्र भवन्तीति **भावा** जीवादयः पदार्थाः, एते च जीव-पुद्गलानन्तत्वा**दनन्ता** इति, तथा **अनन्ता अभावाः**, सर्वभावानामेव पररूपेणासत्त्वात्त एवानन्ता अभावा इति, स्व-परसत्ताभावा-ऽभावोभयाधीनत्वाद्वस्तुतत्त्वस्य, तथाहि– जीवो जीवात्मना भावोऽजीवात्मना चाभावोऽन्यथाऽजीवत्वप्रसङ्गादिति । अन्ये तु धर्म्मापेक्षया **अनन्ता भावाः अनन्ता अभावाः** प्रतिवस्त्वस्तित्वनास्तित्वाभ्यां प्रतिबद्धा इति व्याचक्षते ।

तथा**ऽनन्ता हेतवः**, तत्र **हिनोति** गमयति जिज्ञासितधर्म्मविशिष्टानर्थानिति हेतुः, ते चानन्ताः, वस्तुनोऽनन्तधर्म्मात्मकत्वात्, तत्प्रतिबद्धधर्म्मविशिष्टवस्तुगमकत्वाच्च हेतोः, सूत्रस्य चानन्तगमपर्यायात्मकत्वादिति, यथोक्तहेतुप्रतिपक्षतो**ऽनन्ता अहेतवः** तथा **अनन्तानि कारणानि** मृत्पिण्ड-तन्त्वादीनि घट-पटादिनिर्वर्त्तकानि, तथा **अनन्तान्यकारणानि** सर्वकारणानामेव कार्यान्तराकारणत्वात्, न हि मृत्पिण्डः पटं

---

१. °त्यादिः खं० जे१,२ ॥

निर्वर्त्तयतीति । तथा **अनन्ता जीवाः** प्राणिनः, एव**मजीवाः** द्व्यणुकादयः, **भवसिद्धिका** भव्याः इतरे तु अभव्याः । **सिद्धा** निष्ठितार्थाः, **इतरे** संसारिणः, **आघविज्जंती**त्यादि पूर्ववदिति ।

[सू० १४९] [१] दुवे रासी पण्णत्ता, तंजहा- जीवरासी य अजीवरासी य । अजीवरासी दुविहा पण्णत्ता, तंजहा- रूविअजीवरासी य अरूविअजीवरासी य । से किं तं अरूविअजीवरासी ? अरूविअजीवरासी दसविहा पण्णत्ता, तंजहा- धम्मत्थिकाए जाव अद्धासमए, जाव से किं तं अणुत्तरोववातिया? अणुत्तरोववातिया पंचविहा पण्णत्ता, तंजहा- विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजिय-सव्वट्ठसिद्धया, सेत्तं अणुत्तरोववातिया, सेत्तं पंचेंदियसंसारसमावण्णजीवरासी ।

दुविहा णेरइया पण्णत्ता, तंजहा- पज्जत्ता य अपज्जत्ता य, एवं दंडओ भाणियव्वो जाव वेमाणिय त्ति ।

[टी०] द्वादशाङ्गस्य स्वरूपमनन्तरमभिहितमथ तदभिधेयस्य राशिद्वयान्तर्भावतः स्वरूपमभिधित्सुराह- **दुवे रासी**त्यादि । इह च **प्रज्ञापनायाः** प्रथमपदं **प्रज्ञापना**ख्यं सर्वं तदक्षरमध्येतव्यम्, किमवसानमित्याह- **जाव [१] से किं त**मित्यादि, केवलमस्य **प्रज्ञापनासूत्र**स्य चायं विशेषः, इह **दुवे रासी पण्णत्ता** इत्यभिलापः, तत्र तु **दुविहा पण्णवणा पण्णत्ता - जीवपण्णवणा अजीवपण्णवणा य** [प्रज्ञापना० ३] त्ति, अतिदिष्टस्य च सूत्रतः सर्वस्य **प्रज्ञापना**पदस्य लेखितुमशक्यत्वादर्थतस्तल्लेश उपदर्श्यते- तत्राऽजीवराशिर्द्विविधो रूप्यरूपिभेदात्, तत्रारूप्यजीवराशिर्दशधा- धर्मास्तिकाय-स्तद्देशस्तत्प्रदेशाश्चेत्येवमधर्मास्तिकायाकाशास्तिकायावपि वाच्यावेवं नव दशमोऽद्धासमय इति । रूप्यजीवराशिश्चतुर्द्धा- स्कन्धा देशाः प्रदेशाः परमाणवश्चेति, ते च वर्ण-गन्ध-रस-स्पर्श-संस्थानभेदतः पञ्चविधाः संयोगतोऽनेकविधा इति । जीवराशिर्द्विविधः- संसारसमापन्नोऽसंसारसमापन्नश्च, तत्रासंसारसमापन्ना जीवा द्विविधाः- अनन्तर-परम्परसिद्धभेदात्, तत्रानन्तरसिद्धाः पञ्चदशप्रकाराः, परम्परसिद्धास्त्वनन्तप्रकारा

१. प्रज्ञापना० १४७ ॥

इति, संसारसमापन्नास्तु पञ्चधैकेन्द्रियादिभेदेन, तत्रैकेन्द्रियाः पञ्चविधाः पृथिव्यादिभेदेन, पुनः प्रत्येकं द्विविधाः सूक्ष्म-बादरभेदेन, पुनः पर्याप्ता-ऽपर्याप्तभेदेन द्विधा, एवं द्वि-त्रि-चतुरिन्द्रिया अपि, पञ्चेन्द्रियाश्चतुर्द्धा नारकादिभेदात्, तत्र नारकाः सप्तविधाः रत्नप्रभादिपृथिवीभेदात्, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चस्त्रिधा जल-स्थल-खचरभेदात्, तत्र जलचराः पञ्चविधा मत्स्य-कच्छप-ग्राह-मकर-सुंसुमारभेदात् । पुनर्मत्स्या अनेकधा श्लक्ष्णमत्स्यादिभेदात् । कच्छपा [1]द्वेधा अस्थिकच्छप-मांसकच्छपभेदात्, ग्राहाः पञ्चधा दिलि-वेष्टक-मद्गु-पुलक-सीमाकारभेदात्, **मकरा** द्विधा शुण्डामकरा मष्टमकराश्च, संसुमारास्त्वेकविधाः, स्थलचरा द्विधा चतुष्पद-परिसर्प्पभेदात्, तत्र चतुष्पदाश्चतुर्द्धा एकखुर-द्विखुर-गण्डीपद-सनखपदभेदात्, क्रमेण चैते अश्व-गो-हस्ति-सिंहादयः, परिसर्प्पा द्विधा उरःपरिसर्प-भुजपरिसर्पभेदात्, उरःपरिसर्पाश्चतुर्द्धा अहि-अजगरा-ऽऽशालिक-महोरगभेदात्, तत्राऽहयो द्विधा दर्वीकरा मुकुलिनश्चेति, खचराश्चतुर्द्धा चर्मपक्षिणो लोमपक्षिणः समुद्गपक्षिणो विततपक्षिणश्च, तत्राद्यौ द्वौ वल्गुली-हंसादिभेदावितरौ द्वीपान्तरेष्वेव स्तः, सर्वे च पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च द्विधा– सम्मूर्च्छिमा गर्भव्युत्क्रान्तिकाश्च, तत्र संमूर्च्छिमाः नपुंसका एव, इतरे तु त्रिलिङ्गा इति, गर्भव्युत्क्रान्तिकमनुष्यास्त्रिधा - कर्मभूमिजा अकर्मभूमिजा अन्तरद्वीपजाश्चेति, कर्मभूमिजा द्विविधाः– आर्या म्लेच्छाश्च, आर्या द्वेधा - ऋद्धिप्राप्ता इतरे च, तत्र प्रथमा अर्हदादयः, द्वितीया नवविधाः क्षेत्र-जाति-कुल-कर्म-शिल्प-भाषा-ज्ञान-दर्शन-चारित्रभेदात् ।

देवाश्चतुर्विधाः भवनवास्यादिभेदात्, भवनपतयो दशधा असुर-नागादयः, व्यन्तरा अष्टधा पिशाचादयः, ज्योतिष्काः पञ्चधा **चन्द्रादयः**, वैमानिका द्वेधा कल्पोपगाः कल्पातीताश्च, कल्पोपगा द्वादशधा सौधर्मादिभेदात्, कल्पातीता [2]द्वेधा– ग्रैवेयका अनुत्तरोपपातिकाश्च, ग्रैवेयका नवधा, अनुत्तरोपपातिकाः पञ्चधेति, एतत् समस्तं सूचयतोक्तं **जाव से किं तं अणुत्तरे**त्यादि । पूर्वोक्तमेव जीवराशिं दण्डकक्रमेण द्विधा दर्शयन्नाह– **दुविहे**त्यादि सुगमम् । नवरं **दंडओ** त्ति ।

---

१. द्विधा जे२ हे१ ॥ २. द्वैधा जे२ ॥

नेरइया १ असुराई १० पुढवाई ५ बिंदियादओ ४ मणुया १ ।
वंतर १ जोइस १ वेमाणिया य १ अह दंडओ एवं ॥ [ ] ॥

[सू० १४९] [२] इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए केवइयं ओगाहेत्ता केवइया णिरया पण्णत्ता? गोयमा ! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए आसीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहेत्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जेत्ता मज्झे अट्ठहत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं रयणप्पभाए पुढवीए णेरइयाणं तीसं निरयावाससयसहस्सा भवंतीति मक्खाया । ते णं णरया अंतो वट्टा, बाहिं चउरंसा, जाव असुभा निरया असुभातो णरएसु वेयणातो ।

[टी०] अथानन्तरप्रज्ञापितानां नारकादीनां पर्याप्ता-ऽपर्याप्तभेदानां स्थाननिरूपणायाह– **इमीसे ण**मित्यादि अवगाहनासूत्रादर्वाक् सर्वं कण्ठ्यम्, नवरं **ते णं निरया** इत्यादि, अत्र च [1] **जीवाभिगमचूर्ण्य**नुसारेण लिख्यते - किल द्विविधा नरका भवन्ति आवलिकाप्रविष्टाः आवलिकाबाह्याश्च, तत्रावलिकाप्रविष्टा अष्टासु दिक्षु भवन्ति, ते च वृत्त-त्र्यस्र-चतुरस्रक्रमेण प्रत्यवगन्तव्याः, एतेषां च मध्ये इन्द्रकाः सीमन्तकादयो भवन्ति, आवलिकाबाह्यास्तु पुष्पावकीर्णा दिग्विदिशामन्तरालेषु भवन्ति, नानासंस्थानसंस्थिता इति निरयसंस्थानव्यवस्था, तत्र च बाहुल्यमङ्गीकृत्येदमभिधीयते – [2] **अंतो वट्टे**त्यादि, उक्तं च **सूत्रकृद्वृत्तिकृता**- [3] **नरकाः सीमन्तकादिका बाहुल्यमङ्गीकृत्याऽन्तः मध्ये वृत्ता बहिरपि चतुरस्रा अधश्च [4] क्षुरुप्रसंस्थानसंस्थिताः, एतच्च संस्थानं पुष्पावकीर्णकानाश्रित्योक्तं तेषामेव प्रचुरत्वात्, आवलिकाप्रविष्टास्तु वृत्त-त्र्यस्र-चतुरस्रसंस्थाना भवन्ती[सूत्रकृताङ्गवृ०]ति,** तत्रान्तर्वृत्ता मध्ये शुषिरमाश्रित्य, बहिश्चतुरस्रा कुड्यपरिधिमाश्रित्य, **यावत्करणा**दिदं दृश्यं यदुत– **अधः [5] क्षुरुप्रसंस्थानसंस्थिताः** -

१. "इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए नरका किंसंठिया पण्णत्ता ? गोयमा ! दुविहा पन्नत्ता, तंजहा- आवलियपविट्ठा य आवलियबाहिरा य । तत्थ णं जे ते आवलियपविट्ठा ते तिविहा पन्नत्ता, तंजहा- वट्टा तंसा चउरंसा । तत्थ णं जे ते आवलियबाहिरा ते नानासंठाणसंठिता पन्नत्ता ।" इति **जीवाभिगम**सूत्रे तृतीयायां प्रतिपत्तौ द्वितीये उद्देशके । अस्य सूत्रस्य **चूर्णि**रत्राभिप्रेता प्रतीयते । सम्प्रति **जीवाभिगमचूर्णि**र्नोपलभ्यते ॥ २. अत्र **प्रज्ञापना**सूत्रस्य द्वितीये **स्थान**पदे १७४ तमं सूत्रं द्रष्टव्यम् ॥ ३. दृश्यतां **सूत्रकृताङ्ग**स्य द्वितीये श्रुतस्कन्धे द्वितीयस्य अध्ययनस्य **शीलाचार्य**विरचितायां **वृत्तौ** ॥ ४. **क्षुरप्र**° हे२ ॥ ५. **क्षुरप्र**° जे१ हे२ ॥

भूतलमाश्रित्य क्षुरु[1]प्राकारास्तद्भूतलस्य संचारिसत्त्वपादच्छेदकत्वात्, अन्ये त्वाहुः - तेषामधस्तनोंऽशः क्षुरुप्र इवाग्रेऽग्रे प्रतलो विस्तीर्णश्चेति क्षुरप्रसंस्थानता । तथा **निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंदसूरनक्खत्तजोइसप्पहा मेयवसापूयरुहिरमंसचिक्खल्ललित्ताणु-लेवणतला असुई[2] वीसा परमदुब्भिगंधा काऊअगणिवण्णाभा कक्खडफासा दुरहियासा** इति, तत्र **नित्यं** सर्वदा **अन्धकारम्** अन्धत्वकारकं बहलबलाहकपटलाऽऽच्छादित-गगनमण्डलाऽमावास्याऽर्द्धरात्राऽन्धकारवत्**तमः** तमिस्रं येषु ते **नित्यान्धकारतमसः**, अथवा नित्येनान्धकारेण सार्वकालिकेनेत्यर्थः **तमसः** तमिस्रा **नित्यान्धकारतमसः**, जात्यन्धमेघाऽन्धकाराऽमावास्यानिशीथतुल्या इत्यर्थः, कथमित्यत आह– **व्यपगता** अविद्यमाना **ग्रहचन्द्रसूरनक्षत्र**रूपाणां **ज्योतिषां** ज्योतिष्कलक्षणविमानविशेषाणां ज्योतिषो वा दीपाद्यग्नेः **प्रभा** प्रकाशो येषु ते तथा, **पह** त्ति पथशब्दो वाऽयं व्याख्येयः, तथा मेदो-वसा-पूय-रुधिर-मांसानि शरीरावयवास्तेषां यच्चि**क्खल्लं** कर्दमस्तेन **लिप्तम्** उपदिग्धम**नुलेपनेन** सकृल्लिप्तस्य पुनः पुनरुपलेपनेन **तलं** भूमिका येषां ते **मेदो-वसा-पूय-रुधिर-मांसचिक्खल्ललिप्तानुलेपनतलाः**, यद्यपि च तत्र मेदःप्रभृतीन्यौ-दारिकपञ्चेन्द्रियशरीरावयवरूपाणि न सन्ति वैक्रियशरीरत्वान्नारकाणां तथापि तदाकारास्तदवयवास्त[3]त्तयोच्यन्त इति, **अशुचयो विश्राः** आमगन्धयः पूतिगन्धय इत्यर्थः, अत एव **परमदुरभिगन्धाः काऊअगणिवण्णाभ** त्ति **कृष्णाग्नि**र्लोहादीनां ध्मायमानानां तद्व**र्णवदाभा** येषां ते **कृष्णाग्निवर्णाभाः**, तथा कर्कशः स्पर्शो येषां ते **कर्कशस्पर्शाः**, अत एव **दुःखेन** कृच्छ्रेणाधिसोढुं शक्यते वेदना येषु ते **दुरधि[4]सहाः**, अत एवाऽ**शुभा नरका** अत एव च **अशुभा नरकेषु वेदना** इति ॥

[सू० १४९] [३] एवं सत्त वि भाणियव्वाओ जं जासु जुज्जति-

आसीयं बत्तीसं अट्ठावीसं तहेव वीसं च ।
अट्ठारस सोलसगं अट्ठुत्तरमेव बाहल्लं ॥६४॥
तीसा य पण्णवीसा पण्णरस दसेव सयसहस्साइं ।
तिण्णेगं पंचूणं पंचेव अणुत्तरा नरगा ॥६५॥

---

१. क्षुरप्र° जे१ हे२ ॥ २. **असुइ** जे२ ॥ ३. **तत्तया** तत्त्वेन उच्यन्त इत्यर्थः ॥ ४. °**सह्या** जे२ हे२ ॥

चउसट्ठी असुराणं चउरासीतिं च होति नागाणं ।
बावत्तरिं सुवण्णाण वाउकुमाराण छण्णउतिं ॥६६॥
दीव-दिसा-उदधीणं विज्जुकुमारिंद-थणिय-मग्गीणं ।
छण्हं पि जुवलगाणं छावत्तरि मो सतसहस्सा ॥६७॥
बत्तीसऽट्ठावीसा बारस अट्ठ चउरो सतसहस्सा ।
पण्णा चत्तालीसा छच्च सहस्सा सहस्सारे ॥६८॥
आणय-पाणयकप्पे चत्तारि सयाऽऽरणच्चुते तिन्नि ।
सत्त विमाणसताइं चउसु वि एएसु कप्पेसु ॥६९॥
एक्कारसुत्तरं हेट्ठिमेसु सत्तुत्तरं च मज्झिमए ।
सयमेगं उवरिमए पंचेव अणुत्तरविमाणा ॥७०॥

दोच्चाए णं पुढवीए तच्चाए णं पुढवीए चउत्थी[ए णं पुढवीए] पंचमी [ए णं पुढवीए] छट्ठी[ए णं पुढवीए] सत्तमी[ए णं पुढवीए] गाहाहिं भाणियव्वा। सत्तमाए णं पुढवीए पुच्छा, गोतमा ! सत्तमाए पुढवीए अट्ठुत्तरजोयणसतसहस्सबाहल्लाए उवरिं अद्धतेवण्णं जोयणसहस्साइं ओगाहेत्ता हेट्ठा वि अद्धतेवण्णं जोयणसहस्साइं वज्जेत्ता मज्झे तिसु जोयणसहस्सेसु एत्थ णं सत्तमाए पुढवीए नेरइयाणं पंच अणुत्तरा महतिमहालया महानिरया पण्णत्ता, तंजहा- काले, महाकाले, रोरुते, महारोरुते, अपतिट्ठाणे णामं पंचमए। ते णं निरया वट्टे य तंसा य, अधे खुरप्पसंठाणसंठिता जाव असुभा नरगा असुभाओ नरएसु वेयणातो ।

[टी०] **एवं सत्त वि भाणियव्व** त्ति प्रथमाममुञ्चता सप्त इत्युक्तम्– **जं जासु जुज्जइ** त्ति यच्च यस्यां पृथिव्यां बाहल्यस्य नरकाणां च परिमाणं युज्यते [1]स्थानान्तरोक्तानुसारेण तच्च तस्यां वाच्यम्, तच्चेदम्- **आसीतं** गाहा, **तीसा य** गाहा, अशीतिसहस्राधिकं योजनलक्षं रत्नप्रभायां बाहल्यमेवं शेषासु भावनीयम्, तथा त्रिंशल्लक्षाणि प्रथमायां नरकावासानामित्येवं शेषास्वपि नेयमिति, आवासपरिमाणं चासुरादीनामपि दशानां

१. **प्रज्ञापनासूत्रे** द्वितीये स्थानपदे क्वचिदक्षरशः क्वचित्तु अर्थानुसारि सर्वमिदमभिहितं विस्तरेण ॥

सौधर्म्मादीनां च कल्पेतराणां सूत्रैर्वक्ष्यतीति, तन्निवासपरिमाणसङ्ग्रहः– **चउसट्ठी** इत्यादि गाथाः पञ्च । एवं चेह सूत्राभिलापो दृश्यः– सक्करप्पभाए णं पुढवीए केवइयं ओगाहित्ता केवइया निरया पण्णत्ता ?, गोयमा ! सक्करप्पभाए णं पुढवीए बत्तीसुत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहित्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जेत्ता मज्झे तीसुत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं सक्करप्पभाए पुढवीए नेरइयाणं पणुवीसं निरयावाससयसहस्सा भवन्तीति मक्खाया, ते णं निरयेत्यादि, एवं गाथानुसारेणान्येऽपि पञ्चालापका वाच्या इति, एतदेवाह– **दोच्चाए** इत्यादि **वेयणाओ** इत्येतदन्तं सुगमम्, नवरं **गाहाहिं** ति गाथाभिः करणभूताभिर्गाथानुसारेणेत्यर्थः, **भणितव्वा** वाच्या नरकावासा इति प्रक्रमः। तथा **वट्टे य तंसा य** त्ति मध्यमो वृत्तः शेषास्त्र्यस्रा इति ॥

[सू० १५०] [१] **केवतिया णं भंते ! असुरकुमारावासा पण्णत्ता ? गोतमा! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसहस्सं ओगाहेत्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जेत्ता मज्झे अट्ठहत्तरे जोयणसतसहस्से एत्थ णं रयणप्पभाए पुढवीए चउसट्ठिं असुरकुमारावाससतसहस्सा पण्णत्ता । ते णं भवणा बाहिं वट्टा, अंतो चउरंसा, अहे पोक्खरकण्णियासंठाणसंठिता, उक्किण्णंतरविपुलगंभीरखातफलिहा अट्टालयचरियदारगोउरकवाडतोरणपडिदुवारदेसभागा जंतमुसलमुसंढिसतग्घिपरिवारिता अउज्झा अडयालकोट्ठयरइया अडयालकतवणमालालाउल्लोइयमहिया गोसीससरसरत्तचंदणदद्दरदिण्णपंचंगुलितला कालागुरुपवरकुंदुरुक्कतुरुक्कडज्झंतधूवमघमघेंतगंधुद्धुराभिरामा सुगंधवरगंधगंधिया गंधवट्टिभूता अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा नीरया णिम्मला वितिमिरा विसुद्धा सप्पभा समिरीया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा । एवं जस्स जं कमती तं तस्स जं जं गाहाहिं भणियं, तह चेव वण्णओ ।**

[२] **केवतिया णं भंते ! पुढविकाइयावासा पण्णत्ता ? गोतमा ! असंखेज्जा पुढविकाइयावासा पण्णत्ता । एवं जाव मणूस त्ति ।**

[३] **केवतिया णं भंते ! वाणमंतरावासा पण्णत्ता ? गोतमा ! इमीसे णं रतणप्पभाए पुढवीए रयणामयस्स कंडस्स जोयणसहस्सबाहल्लस्स उवरिं**

एगं जोयणसतं ओगाहेत्ता हेट्ठा चेगं जोयणसतं वज्जेत्ता मज्झे अट्ठसु जोयणसतेसु एत्थ णं वाणमंतराणं देवाणं तिरियमसंखेज्जा भोमेज्जणगरावाससतसहस्सा पण्णत्ता । ते णं भोमेज्जा नगरा बाहिं वट्टा अंतो चउरंसा, एवं जहा भवणवासीणं तहेव णेयव्वा, णवरं पडागमालाउला सुरम्मा पासादीया [दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा] ।

[४] केवतिया णं भंते ! जोतिसियावासा पण्णत्ता ? गोयमा ! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ सत्तनउयाइं जोयणसयाइं उड्ढं उप्पतित्ता एत्थ णं दसुत्तरजोयणसतबाहल्ले तिरियं जोतिसविसए जोतिसियाणं देवाणं असंखेज्जा जोतिसियविमाणावासा पण्णत्ता । ते णं जोतिसियविमाणावासा अब्भुग्गयमूसियपहसिया विविहमणिरयणभत्तिचित्ता वाउद्धुतविजयवेजयंतीपडागच्छत्तातिच्छत्तकलिया तुंगा गगणतलमणुलिहंत-सिहरा जालंतररयण पंजरुम्मिलित व्व मणिकणगथूभियागा विगसितसतवत्त-पुंडरीयतिलयरयणद्धचंदचित्ता अंतो बहिं च सण्हा तवणिज्जवालुगापत्थडा सुहफासा सस्सिरीयरूवा पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

[५] केवइया णं भंते ! वेमाणियावासा पण्णत्ता ? गोयमा ! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ उड्ढं चंदिमसूरियगहगणनक्खत्ततारारूवा णं वीतिवइत्ता बहूणि जोयणाणि बहूणि जोयणसताणि [बहूणि] जोयणसहस्साणि [बहूणि] जोयणसयसहस्साणि [बहुगीतो] जोयणकोडीतो [बहुगीतो] जोयणकोडाकोडीतो असंखेज्जाओ जोयणकोडाकोडीतो उड्ढं दूरं वीइवइत्ता एत्थ णं वेमाणियाणं देवाणं सोहम्मीसाण-सणंकुमार-माहिंद-बंभ-लंतग-सुक्क-सहस्सार-आणय-पाणय-आरण-ऽच्चुएसु [१] गेवेज्जगणुत्तरेसु य चउरासीति विमाणावाससयसहस्सा सत्ताणउतिं च सहस्सा तेवीसं च विमाणा भवंतीति मक्खाया । ते णं विमाणा अच्चिमालिप्पभा भासरासिवण्णाभा अरया नीरया णिम्मला वितिमिरा विसुद्धा

१. गेवेज्जमणु° जे२ । गेवेज्जगमणु° जे१ ॥

सव्वरयणामया अच्छा सण्हा लण्हा घट्ठा मट्ठा णिप्पंका णिक्कंकडच्छाया सप्पभा समिरिया सउज्जोया पासादीया दरिसणिज्जा अभिरूवा पडिरूवा ।

[६] सोहम्मे णं भंते ! कप्पे केवतिया विमाणावासा पण्णत्ता ? गोयमा ! बत्तीसं विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता । एवं ईसाणाइसु २८ । १२ । ८। ४ । **एयाइं सयसहस्साइं,** ५० । ४० । ६ । **एयाइं सहस्साइं, आणए पाणए चत्तारि, आरणच्चुए तिण्णि, एयाणि सयाणि, एवं गाहाहिं भाणियव्वं।**

[टी०] अथासुराद्यावासविषयमभिलापं दर्शयति– **केव** इत्यादि सुगमम्, नवरं तानि भवनानि **बहिर्वृत्तानि** वृत्तप्राकारावृतनगरवत्, **अन्तः** सम**चतुरस्राणि** तदवकाशदेशस्य चतुरस्रत्वात्, **अधः पुष्करकर्णिकासंस्थानसंस्थितानि, पुष्करकर्णिका** पद्ममध्यभागः, सा चोन्नतसमचित्रबिन्दुकिनी भवतीति, तथा **उत्कीर्णान्तर-विपुलगम्भीरखात-परिखानि, उत्कीर्णं** भुवमुत्कीर्य पालीरूपं कृत**मन्तरम्** अन्तरालं ययोस्ते उत्कीर्णान्तरे ते विपुलगम्भीरे[१] खात-परिखे येषां तानि तथा, तत्र **खात**मध उपरि च समम्,**परिखा** तूपरि विशाला अधः सङ्कुचिता, तयोरन्तरे तेषु पाली अस्तीति भावः, तथा **अट्टालकाः** प्राकारस्योपर्याश्रयविशेषाः, **चरिका** नगर-प्राकारयोरन्तर-मष्टहस्तो मार्गः, पाठान्तरेण **चतुरय** त्ति चतुरकाः सभाविशेषाः ग्रामप्रसिद्धाः, **दारगोउर** त्ति गोपुरद्वाराणि प्रतोल्यो नगरस्येव, **कपाटानि** प्रतीतानि, **तोरणान्यपि** तथैव, **प्रतिद्वाराणि** अवान्तरद्वाराणि, तत एतेषां द्वन्द्वः, एतानि **देश**लक्षणेषु **भागेषु** येषां तानि तथा, इह देशो भागश्चानेकार्थः, ततोऽन्योन्यमनयोर्विशेष्यविशेषणभावो दृश्य इति, तथा **यन्त्राणि** पाषाणक्षेपणयन्त्राणि, **मुशलानि** प्रतीतानि, **मुसुण्ढयः** प्रहरणविशेषाः, **शतघ्न्यः** शतानामुपघातकारिण्यो महाकायाः काष्ठ-शैलस्तम्भयष्टयः, ताभिः **परियारिय** त्ति परिवारितानि, परिकरितानीत्यर्थः, तथा **अयोधानि** योधयितुं सङ्ग्रामयितुं दुर्गत्वान्न शक्यन्ते परबलैर्यानि तान्ययोधानि, अविद्यमाना वा **योधाः** परबलसुभटा यानि प्रति तान्ययोधानि । तथा **अडयालकोट्ठगरइय** त्ति अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्न-विचित्रच्छन्दगोपुररचितानि, **अन्ये** भणन्ति **अडयाल**शब्दः किल प्रशंसावाचकः । तथा

---

१. °म्भीरखातपरिखे खं० जे१ ॥

अडयालकयवणमाल त्ति अष्टचत्वारिंशद्भेदभिन्नाः प्रशंसार्हा वा **कृता वनमाला** वनस्पतिपल्लवस्रजो येषु तानि तथा । तथा **लाइयं** ति यद् भूमेश्छगणादिनोपलेपनम् **उल्लोइयं** ति कुड्यमालानां सेटिकादिभिः सम्मृष्टीकरणम्, ततस्ताभ्यामिव **महितानि** पूजितानि **लाउल्लोइयमहितानि** । तथा **गोशीर्षं** चन्दनविशेषः **सरसं** च रसोपेतं यद् **रक्तचन्दनं** चन्दनविशेषः, ताभ्यां **दर्दराभ्यां** घनाभ्यां दत्ताः **पञ्चाङ्गुलयस्तला** हस्तकाः कुड्यादिषु येषु, अथवा गोशीर्षसरसरक्तचन्दनस्य सत्का **दर्दरेण** चपेटाभिघातेन **दर्दरेषु वा** सोपानवीथीषु दत्ताः पञ्चाङ्गुलयस्तला येषु तानि **गोशीर्षसरसरक्तचन्दनदर्दरदत्तपञ्चाङ्गुलितलानि** । तथा **कालागुरुः** कृष्णागुरुर्गन्धद्रव्यविशेषः **प्रवरः** प्रधानः **कुन्दुरुक्कः** चीडा **तुरुष्कः** सिल्हकं गन्धद्रव्यमेव एतानि च तानि **डज्झंत** त्ति दह्यमानानि [1]चेति विग्रहः, तेषां यो धूमो **मघमघेंत** त्ति अनुकरणशब्दोऽयं मघमघायमानो बहलगन्ध इत्यर्थः तेनो**द्धुराणि** [2]उत्कटानि यानि तानि तथा, तानि च तान्य**भिरामाणि** च रमणीयानीति समासः । तथा **सुगन्धयः** सुरभयो ये **वरगन्धाः** प्रधानवासास्तेषां **गन्धः** आमोदो येष्वस्ति तानि **सुगन्धिवरगन्धगन्धिकानि** । तथा **गन्धवर्त्तिः** गन्धद्रव्याणां गन्धयुक्तिशास्त्रोपदेशेन निर्वर्त्तिता गुटिका, **तद्भूतानि** तत्कल्पानीति **गन्धवर्त्तिभूतानि** प्रवरगन्धगुणानीत्यर्थः । तथा **अच्छानि** आकाशस्फटिकवत्, **सण्ह** त्ति श्लक्ष्णानि सूक्ष्मस्कन्धनिष्पन्नत्वात्, श्लक्ष्णदलनिष्पन्नपटवत्, **लण्ह** त्ति मसृणानीत्यर्थः, घुण्टितपटवत्, **घट्ठ** त्ति घृष्टानीव घृष्टानि खरशानया पाषाणप्रतिमावत्, **मट्ठ** त्ति मृष्टानीव मृष्टानि सुकुमारशानया पाषाणप्रतिमेव, शोधितानि वा प्रमार्जनिकयेव, अत एव **नीरय** त्ति नीरजांसि रजोरहितत्वात्, **निम्मल** त्ति निर्मलानि कठिनमलाभावात्, **वितिमिर** त्ति वितिमिराणि निरन्धकारत्वात्, **विसुद्ध** त्ति विशुद्धानि [3]निष्कलङ्कत्वात्, न चन्द्रवत् सकलङ्कानीत्यर्थः। तथा **सप्पह** त्ति सप्रभाणि, सप्रभावाणि अथवा **स्वेन** आत्मना **प्रभान्ति** शोभन्ते प्रकाशन्ते वेति स्वप्रभाणि, यतः **समिरीय** त्ति **समरीचीनि** सकिरणानि अत एव

---

१. च तानि यानि तानि तथा, तेषां यो हे२ । च यानि तानि तथा, यो हे१ ॥ २. उत्कुटानि खं० जे२ ॥ ३. निःपंकत्वात् हे१,२ । निःपंचकत्वात् जे२ ॥

सउज्जोय त्ति सहोद्**द्योतेन** वस्त्वन्तरप्रकाशनेन वर्त्तन्ते इति **सोद्द्योतानि, पासाईय**[1] त्ति प्रासादीयानि मनःप्रसत्तिकराणि, **दरिसणिज्ज** त्ति दर्शनीयानि, तानि हि पश्यश्चक्षुषा न श्रमं गच्छतीति भावः, **अभिरूव** त्ति अभिरूपाणि कमनीयानि, **पडिरूव** त्ति प्रतिरूपाणि द्रष्टारं द्रष्टारं प्रति रमणीयानि, नैकस्य कस्यचिदेवेत्यर्थः ।

एवमित्यादि, यथा असुरकुमारावाससूत्रे तत्परिमाणमभिहित**मेव**मिति, तथा यद् भवनादिपरिमाणं **यस्य** नागकुमारादिनिकायस्य **क्रमते** घटते तत्तस्य वाच्यमिति । किंविधं तत् परिमाणमत आह– **जं जं गाहाहिं भणियं** यद्यद् गाथाभिः **चउसट्ठी असुराण**मित्यादिकाभिरभिहितम्, किं परिमाणमेव तथा वाच्यम् ? नेत्याह– **तह चेव वण्णओ** त्ति यथा असुरकुमारे भवनानां वर्णक उक्तस्तथा सर्वेषामसौ वाच्य इति, तथाहि– **केवइया णं भंते ! नागकुमारावासा पण्णत्ता ?, गोयमा ! इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए असीउत्तरजोयणसयसहस्सबाहल्लाए उवरिं एगं जोयणसयसहस्सं ओगाहेत्ता हेट्ठा चेगं जोयणसहस्सं वज्जेत्ता मज्झे अट्ठहत्तरे जोयणसयसहस्से एत्थ णं रयणप्पभाए [पुढवीए] चुलसीई नागकुमारावाससयसहस्सा → [पण्णत्ता], ते णं भवणा** इत्यादीति ← ।

केवइया णं भंते । पुढवीत्यादि गतार्थम्, नवरं मनुष्याणां गर्भव्युत्क्रान्तिकानाम् असंख्यातानामभावात् संख्याता एवावासाः, सम्मूर्च्छिमानां त्वसंख्येयत्वेन प्रतिशरीरमावासभावादसंख्येया इति भावनीयमिति ।

केवइया णं भंते ! जोइसियाणं विमाणावासा इत्यादि। **अब्भुग्गयमूसियपहसिय** त्ति **अभ्युद्गता** सञ्जाता **उत्सृता** प्रबलतया सर्वासु दिक्षु प्रसृता या **प्रभा** दीप्तिस्तया **सिताः** शुक्ला **इत्यभ्युद्गतोत्सृतप्रभासिताः**, तथा **विविधा** अनेकप्रकारा **मणयः** चन्द्रकान्ताद्या **रत्नानि** कर्केतनादीनि, तेषां **भक्तयो** विच्छित्तिविशेषास्ताभि**श्चित्राः** चित्रवन्तः आश्चर्यवन्तो वेति **विविधमणिरत्नभक्तिचित्राः**, तथा **वातोद्धूता** वायुकम्पिता **विजयः** अभ्युदयस्तत्संसूचिका **वैजयन्ती**त्यभिधाना याः पताका अथवा **विजया** इति वैजयन्तीनां पार्श्वकर्णिका उच्यन्ते तत्प्रधाना या वैजयन्त्यस्ताश्च तद्वर्जिताः **पताकाश्च छत्रातिच्छत्राणि च** उपर्युपरिस्थितातपत्राणि तैः **कलिता** युक्ता

---

१. पासाइय जे२ हे१,२ ॥ →....← एतच्चिह्नान्तर्गतपाठस्थाने हे२ मध्ये ईदृशः पाठः- **भवंतीति मक्खाय त्ति । द्वीपकुमारादीनां तु षण्णां प्रत्येकं षट्सप्ततिर्वाच्येति** ॥

वातोद्धूतविजयवैजयन्तीपताकाछत्रातिच्छत्रकलिता इति । **तुङ्गा** उच्चैस्त्वगुणयुक्ताः, अत एव **गयणतलमणुलिहंतसिहर** त्ति **गगनतलम्** अम्बर**मनुलिखद्** अभिलङ्घयच्छिखरं येषां ते **गगनतलानुलिखच्छिखराः** । तथा **जालान्तरेषु** [१] जालकमध्यभागेषु रत्नानि येषां ते **जालान्तररत्नाः**, इह प्रथमाबहुवचनलोपो द्रष्टव्यः, जालकानि च भवनभित्तिषु लोके प्रतीतान्येव तदन्तरेषु च शोभार्थं रत्नानि सम्भवन्त्येवेति । तथा **पञ्जरोन्मीलिता** इव पञ्जरबहिष्कृता इव, यथा किल किञ्चिद्वस्तु **पञ्जराद्** वंशादिमयप्रच्छादनविशेषाद्बहिः कृतमत्यन्तमविनष्टच्छायत्वाच्छोभते एवं तेऽपीति भावः । तथा मणिकनकानां सम्बन्धिनी **स्तूपिका** शिखरं येषां ते **मणिकनकस्तूपिकाकाः** । तथा विकसितानि यानि शतपत्रपुण्डरीकाणि द्वारादौ प्रतिकृतित्वेन तिलकाश्च भित्त्यादिषु पुण्ड्राणि रत्नमयाश्च ये अर्द्धचन्द्रा द्वाराग्रादिषु तैश्चित्रा ये ते **विकसितशतपत्रपुण्डरीकतिलकरत्नार्द्धचन्द्रचित्राः** । तथा अन्तर्बहिश्च **श्लक्ष्णा** मसृणा इत्यर्थः । तथा **तपनीयं** सुवर्णविशेषस्तन्मय्या **वालुकायाः** सिकतायाः **प्रस्तटः** प्रतरो येषु ते **तपनीयवालुकाप्रस्तटाः**, पाठान्तरे तु **सण्ह**शब्दस्य वालुकाविशेषणत्वात् **श्लक्ष्णतपनीयवालुकाप्रस्तटा** इति व्याख्येयम् । तथा **सुखस्पर्शाः शुभस्पर्शा वा**, तथा **सश्रीकं** सशोभं **रूपम्** आकारो येषाम् अथवा सश्रीकाणि शोभावन्ति रूपाणि नरयुग्मादीनि रूपकाणि येषु ते **सश्रीकरूपाः**, [२]**प्रासादीया दर्शनीयाः अभिरूपाः प्रतिरूपा** इति पूर्ववत् ।

[३]**केवइए**त्यादि, **रत्नप्रभायाः** पृथिव्या **बहुसमरमणिज्जाओ भूमिभागाओ** त्ति बहुसमरमणीयस्य भूमिभागस्य **ऊर्ध्वम्** उपरि, तथा **चन्द्रमः-सूर्य-ग्रहगण-नक्षत्र-तारारूपाणि**, **ण**मित्यलङ्कारे, किम् ? **वीइवइत्त** त्ति **व्यतिव्रज्य** व्यतिक्रम्येत्यर्थः, तारारूपाणि चेह तारका एवेति, तथा **बहूनी**त्यादि, किमित्याह– **ऊर्ध्वम्** उपरि **दूरमत्यर्थं व्यतिव्रज्य** चतुरशीतिर्विमानलक्षाणि भवन्तीति सम्बन्धः, **इति मक्खाय** त्ति **इति** एवंप्रकारा अथवा यतो भवन्ति तत **आख्याताः** सर्ववेदिनेति, **ते णं** ति तानि विमानानि, **ण**मिति वाक्यालङ्कारे, **अच्चिमालिप्पभ** त्ति **अर्चिमाली**

---

१. जालमध्य॰ जे२ ॥ २. प्रसा॰ जे२ हे२ ॥ ३. केव इत्यादि जे२ ॥

आदित्यस्तद्वत् **प्रभान्ति** शोभन्ते यानि तान्यर्चिमालिप्रभाणि, तथा **भासानां** प्रकाशानां राशिः **भासराशिः** आदित्यस्तस्य **वर्णस्तद्वदाभा** छाया वर्णो येषां केषांचित्तानि **भासराशिवर्णाभानि**, तथा **अरय** त्ति अरजांसि स्वाभाविकरजोरहितत्वात्, **नीरय** त्ति नीरजांसि आगन्तुकरजोविरहात्, **निम्मल** त्ति निर्मलानि कक्खटमलाभावात्, **वितिमिराणि** आहार्यान्धकाररहितत्वात्, **विशुद्धानि** स्वाभाविकतमोविरहात् सकलदोषविगमाद्वा, **सर्वरत्नमयानि** न दार्वादिदलमयानीत्यर्थः, **अच्छान्या**काशस्फटिकवत्, **श्लक्ष्णानि** सूक्ष्मस्कन्धमयत्वात्, घृष्टानीव **घृष्टानि** खरशानया पाषाणप्रतिमेव, मृष्टानीव **मृष्टानि** सुकुमारशानया पाषाणप्रतिमेवेति, **निष्पङ्कानि** कलङ्कविकलत्वात् कर्दमविशेषरहितत्वाच्च, **निष्कङ्कटा** निष्कवचा निरावरणा निरुपघातेत्यर्थः **छाया** दीप्तिर्येषां तानि निष्कङ्कटच्छायानि, **सप्रभाणि** प्रभाववन्ति, **समरीचीनि** सकिरणानीत्यर्थः, **सोद्द्योतानि** वस्त्वन्तरप्रकाशनकराणीत्यर्थः, **पासाईए**त्यादि प्राग्वत् ।

सोहम्मे णं भंते ! कप्पे केवइया विमाणावासा पण्णत्ता ?, गोयमा ! बत्तीसं विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता । एवमीशानादिष्वपि द्रष्टव्यम्, एतदेवाह– **एवं ईसाणाइसु** त्ति, **एवं गाहाहिं भाणियव्वं** ति **बत्तीस अट्ठवीसा** इत्यादिकाभिः पूर्वोक्तगाथाभिः, तदनुसारेणेत्यर्थः, प्रतिकल्पं भिन्नपरिमाणा विमानावासा भणितव्यास्तद्वर्णकश्च वाच्यो [1]यथा– **ते णं विमाणेत्यादि** यावत् **पडिरूवा**, नवरमभिलापभेदोऽयं यथा– **ईसाणे णं भंते ! कप्पे केवइया विमाणावासा पण्णत्ता ?, गोयमा ! अट्ठावीसं विमाणावाससयसहस्सा पण्णत्ता, ते णं विमाणा जाव पडिरूवा** । एवं सर्वं पूर्वोक्तगाथानुसारेण **प्रज्ञापनाद्वितीयपदानुसारेण** च वाच्यमिति ॥

[सू० १५१] [2]नेरइयाणं भंते ! केवतियं कालं ठिती पण्णत्ता ? गोयमा! जहन्नेणं दस वाससहस्साइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ।

अपज्जत्तगाणं भंते ! नेरइयाणं केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ? गोयमा! जहन्नेणं अंतोमुहुत्तं, उक्कोसेण वि अंतोमुहुत्तं ।

---

१. यथा नास्ति जे२ ॥ २. प्रज्ञापनासूत्रे चतुर्थे स्थितिपदे विस्तरेणेदं सर्वं विद्यते ॥

पज्जत्तगाणं जहन्नेणं दस वाससहस्साइं अंतोमुहुत्तूणाइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं अंतोमुहुत्तूणाइं ।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए एवं जाव [१]विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजियाणं देवाणं केवइयं कालं ठिती पण्णत्ता ? गोयमा ! जहन्नेणं बत्तीसं सागरोवमाइं, उक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाणि । सव्वट्ठे अजहण्णमणुक्कोसेणं तेत्तीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता ।

[टी०] अनन्तरं नारकादिजीवानां स्थानान्युक्तानि, अथ तेषामेव स्थितिमुपदर्शयितुमाह– **नेरइयाणं भंते** इत्यादि सुगमम्, नवरं **स्थितिः** नारकादिपर्यायेण जीवानामवस्थानकालः, **अपज्जत्तयाणं** ति, नारकाः किल लब्धितः पर्याप्तका एव भवन्ति, करणतस्तूपपातकाले अन्तर्मुहूर्त्तं यावदपर्याप्तका भवन्ति ततः पर्याप्तकाः, ततस्तेषामपर्याप्तकत्वेन स्थितिर्जघन्यतोऽप्युत्कर्षतोऽपि चान्तर्मुहूर्त्तमेव, पर्याप्तकानां पुनरौघिक्येव जघन्योत्कृष्टा चान्तर्मुहूर्त्तोना भवतीति, अयं चेह पर्याप्तका-ऽपर्याप्तकविभागः–

नारयदेवा तिरिमणुयगब्भया जे असंखवासाऊ ।
एते उ अपज्जत्ता उववाए चेव बोद्धव्वा ॥ [ ]
सेसा य तिरियमणुया लद्धिं पप्पोववायकाले य ।
दुहओ वि य भइयव्वा पज्जत्तियरे य जिणवयणं ॥ [ ] ति ।

उक्ता सामान्यतो नारकस्थितिः, विशेषतस्तामभिधातुमिदमाह– **इमीसे ण**मित्यादि, स्थितिप्रकरणं च सर्वं **प्रज्ञापना**प्रसिद्धमित्यतिदिशन्नाह– **एव**मिति यथा **प्रज्ञापना**यां सामान्य-पर्याप्तका-ऽपर्याप्तकलक्षणेन गमत्रयेण नारकाणां नारकविशेषाणां तिर्यगादिकानां च स्थितिरुक्ता एवमिहापि वाच्या, कियद्दूरं यावदित्याह– **जाव विजये**त्यादि, अनुत्तरसुराणामौघिका-ऽपर्याप्तक-पर्याप्तकलक्षणं गमत्रयं यावदित्यर्थः, इह

---

१. अत्रैव **समवायाङ्ग**सूत्रे एकत्रिंशत्स्थानके "विजय-वेजयंत-जयंत-अपराजिताणं देवाणं जहण्णेणं एक्कतीसं सागरोवमाइं ठिती पण्णत्ता" [सू० ३१] इति अभिहितम्, अत्र तु जघन्येन द्वात्रिंशत् सागरोपमाणि उक्तानि । कथमेकत्रैव सूत्रे परस्परं विसंवादः ?॥ **अनुयोगद्वारसूत्रे** [सू० ३९१[९]], **प्रज्ञापना**सूत्रे चतुर्थे पदे ४३६[३] तमे सूत्रे **उत्तराध्ययन**सूत्रे षट्त्रिंशत्तमेऽध्ययने [गा० २४३] च **एकत्रिंशद्** एव जघन्येन स्थितिरुक्ता ॥

चैवमतिदिष्टसूत्राण्यर्थतो वाच्यानि– रत्नप्रभानारकाणां भदन्त ! कियती स्थितिः ?, गौतम! जघन्येन दश वर्षसहस्राणि, उत्कर्षतः सागरोपमम् १, अपर्याप्तकरत्नप्रभापृथिवीनारकाणां भदन्त ! कियन्तं कालं स्थितिः प्रज्ञप्ता ?, गौतम! उभयथाऽपि अन्तर्मुहूर्त्तम्[1] २, एवं पर्याप्तकानां सामान्योक्तैवान्तर्मुहूर्त्तोना वाच्या ३, एवं शेषपृथिवीनारकाणां प्रत्येकं दशानामसुरादीनां पृथिवीकायिकादीनां तिरश्चां गर्भजेतरभेदानां मनुष्याणां व्यन्तराणामष्टविधानां ज्योतिष्काणां पञ्चप्रकाराणां **सौधर्म्मा**दीनां वैमानिकानां च गमत्रयं वाच्यम्, इह च विजयादिषु जघन्यतो द्वात्रिंशत् सागरोपमाण्युक्तानि, **गन्धहस्त्या**दिष्वपि[2] तथैव दृश्यते, **प्रज्ञापनायां** त्वेकत्रिंशदुक्तेति मतान्तरमिदम्, पर्याप्तकाऽपर्याप्तकगमद्वयमिह समूह्यम्, एवं सर्वार्थसिद्धिस्थितिरपि त्रिभिर्गमैर्वाच्येति ॥

[सू० १५२] **कति[3] णं भंते ! सरीरा पण्णत्ता ? गोतमा ! पंच सरीरा पण्णत्ता, तंजहा- ओरालिए जाव कम्मए ।**

ओरालियसरीरे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ? गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा- एगिंदियओरालियसरीरे जाव गब्भवक्कंतियमणुस्सपंचिंदिय-ओरालियसरीरे य । ओरालियसरीरस्स णं भंते! केमहालिया सरीरोगाहणा पण्णत्ता ? गोयमा ! जहन्नेणं अंगुलस्स असंखेज्जतिभागं, उक्कोसेणं सातिरेगं जोयणसहस्सं । एवं जहा ओगाहणसंठाणे ओरालियपमाणं तहा निरवसेसं,

---

१. °हूर्त्तम् २. **पर्याप्तकानां तु सामान्यो**° हे२ ॥ २. **तत्त्वार्थटीका**कर्तुः **सिद्धसेना**चार्यस्य **गन्धहस्ति**नाम्ना प्रसिद्धिरस्ति । किन्तु **तत्त्वार्थस्य सिद्धसेना**चार्यविरचिताया टीकायामीदृशः पाठो वर्तते- ''विजयादिषु चतुर्षु जघन्येन एकत्रिंशत उत्कर्षेण द्वात्रिंशत्, सर्वार्थसिद्धे त्रयस्त्रिशत् सागरोपमाणि अजघन्योत्कृष्टा स्थितिः । **भाष्यकारेण** तु सर्वार्थसिद्धेऽपि जघन्यापि द्वात्रिंशत् सागरोपमाण्यधीता, तन्न विद्मः केनाप्यभिप्रायेण'' [तत्त्वार्थटीका ४।३२] । अत इदम**भयदेवसूरि**वचनं तत्त्वार्थव्याख्याकर्तुः **सिद्धसेना**चार्यस्य **गन्धहस्तित्व**प्रसिद्धिबाधकम्, ततश्चिन्त्यमिदम् ।

''**परतः परतः पूर्वा पूर्वाऽनन्तरा** [तत्त्वार्थसू० ४।४२] माहेन्द्रात् परतः, पूर्वा परा अनन्तरा जघन्या स्थितिर्भवति, तद्यथा- माहेन्द्रे परा स्थितिर्विशेषाधिकानि सप्त सागरोपमाणि सा ब्रह्मलोके जघन्या स्थितिर्भवति, ब्रह्मलोके दश सागरोपमाणि परा स्थितिः सा लान्तके जघन्या । एवमा सर्वार्थसिद्धादिति'' इति **तत्त्वार्थभाष्ये** पाठः ४।४२॥

दिगम्बरपरम्परायां तु उपरिमग्रैवेयकेषु प्रथमे एकान्नत्रिंशत्, द्वितीये त्रिंशत्, तृतीये एकत्रिंशत्, अनुदिशविमानेषु द्वात्रिंशत्, विजयादिषु त्रयस्त्रिंशत् सागरोपमाणि उत्कृष्टा स्थितिः, सर्वार्थसिद्धे त्रयस्त्रिंशदेवेति'' इति **तत्त्वार्थराजवार्तिके** ४।३२॥

३. **प्रज्ञापनासूत्र**स्य एकविंशतितमे **अवगाहनासंस्थानपदे** एतद् विस्तरेण वर्णितमस्ति ।

एवं जाव मणुस्से उक्कोसेणं तिण्णि गाउयाइं।

कतिविहे णं भंते ! वेउव्वियसरीरे पण्णत्ते ? गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा- एगिंदियवेउव्वियसरीरे य पंचिंदियवेउव्वियसरीरे य । एवं जाव सणंकुमारे आढत्तं जाव अणुत्तरा भवधारणिज्जा जा तेसिं रयणी रयणी परिहायति ।

आहारयसरीरे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ? गोयमा ! एगाकारे पण्णत्ते। जइ एगाकारे पण्णत्ते किं मणुस्सआहारयसरीरे अमणुस्सआहारयसरीरे ? गोयमा ! मणुस्साहारगसरीरे, णो अमणूसाहारगसरीरे । एवं जति मणूस० किं गब्भवक्कंतिय० संमुच्छिम० ? गोयमा ! ग०भवक्कंतिय०, नो संमुच्छिम०। जइ गब्भवक्कंतिय० किं कम्मभूमग० अकम्मभूमग० ? गोयमा ! कम्मभूमग०, नो अकम्मभूमग०। जइ कम्मभूमग० किं संखेज्जवासाउय० असंखेज्जवासाउय०? गोयमा ! संखेज्जवासाउय०, नो असंखेज्जवासाउय० । जइ संखेज्जवासाउय० किं पज्जत्तय० अपज्जत्तय० ? गोयमा ! पज्जत्तय०, नो अपज्जत्तय० । जइ पज्जत्तय० किं सम्मद्दिट्ठी० मिच्छदिट्ठी० सम्मामिच्छदिट्ठी० ? गोयमा ! सम्मदिट्ठि०, नो मिच्छदिट्ठि० नो सम्मामिच्छदिट्ठि० । जइ सम्मदिट्ठि० किं संजत० असंजत० संजतासंजत० ? गोयमा ! संजत०, नो असंजत० नो संजतासंजत०। जइ संजत० किं पमत्तसंजत० अपमत्तसंजत० ? गोयमा ! पमत्तसंजत०, नो अपमत्तसंजत०। जइ पमत्तसंजत० किं इड्ढिपत्त० अणिड्ढिपत्त०? गोयमा! इड्ढिपत्त०, नो अणिड्ढिपत्त० । वयणा वि भणियव्वा । आहारयसरीरे समचउरंससंठाणसंठिते । आहार[यसरीरस्स केमहालिया सरीरोगाहणा पन्नत्ता? गोयमा !] जहन्नेणं देसूणा रयणि, उक्कोसेणं पडिपुण्णा रयणी ।

तेयासरीरे णं भंते ! कतिविहे पण्णत्ते ? गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा- एगिंदियतेयसरीरे य बेइंदियतेयसरीरे य तेइंदियतेयसरीरे य चउरिंदियतेयसरीरे य पंचिंदियतेयसरीरे य एवं जाव गेवेज्जयस्स णं भंते ! देवस्स मारणंतियसमुग्घातेणं समोहतस्स समाणस्स [तेयासरीरस्स] केमहालिया

सरीरोगाहणा पण्णत्ता ? गोयमा ! सरीरप्पमाणमेत्ता विक्खंभबाहल्लेणं, आयामेणं जहन्नेणं अहे जाव विज्जाहरसेढीओ, उक्कोसेणं अहे जाव अहोलोइया गामा, उड्ढं जाव सयाइं विमाणाइं, तिरियं जाव मणुस्सखेत्तं, एवं जाव अणुत्तरोववाइया वि । एवं कम्मयसरीरं पि भाणियव्वं ।

[टी०] अनन्तरं नारकादिजीवानां स्थितिरुक्ता, इदानीं तच्छरीराणामव[1]गाहना-प्रतिपादनायाह– **कइ णं भंते** इत्यादि कण्ठ्यम्, नवरमे**केन्द्रियौदारिकशरीर**मित्यादौ **यावत्**करणाद् द्वित्रिचतुष्पञ्चेन्द्रियौदारिकशरीराणि पृथिव्याद्येकेन्द्रिय-जलचरादि-पञ्चेन्द्रियभेदेन प्रागुपदर्शितजीवराशिक्रमेण वाच्यानि, कियद्दूरमित्याह- **गब्भवक्कंतिये**त्यादि । **ओरालियसरीरस्से**त्यादि, तत्रो**दारं** प्रधानं तीर्थकरादिशरीराणि प्रतीत्य अथवो[2]**रालं** विशालं समधिकयोजनसहस्रप्रमाणत्वात् वनस्पत्यादि प्रतीत्य अथवा [3]**उरलं** स्वल्पप्रदेशोपचितत्वात् बृहत्त्वाच्च [4]भेण्डवदिति, अथवा मांसास्थिस्नायुबद्धं यच्छरीरं तत् समयपरिभाषया **ओराल**मिति, तच्च तच्छरीरं चेति प्राकृतत्वादौ(दो)रा[5]लिय-शरीरम्, तस्य, अवगाहन्ते यस्यां साऽ**वगाहना** आधारभूतं क्षेत्रम्, शरीराणामवगाहना **शरीरावगाहना**, अथ**वौदारिकशरीरस्य** जीवस्य औदारिकशरीररूपावगाहना [6]**शरीरावगाहना** सा भदन्त ! **केमहालिया** किम्महती **प्रज्ञप्ता** ?, तत्र **जघन्येनाङ्गुलासंख्येयभागं** यावत् पृथिव्याद्यपेक्षया, **उत्कर्षेण सातिरेकं योजनसहस्र**मिति बादरवनस्पत्यपेक्षयेति ।

एवं जाव [7]**मणुस्से** त्ति, इह **एवं यावत्**करणा**दवगाहनासंस्थाना**भिधान**प्रज्ञापनै**-कविंशतितमपदाभिहितग्रन्थोऽर्थतोऽयमनुसरणीयः, तथाहि- एकेन्द्रियौदारिकस्य पृच्छा निर्वचनं च तदेव, तथा पृथिव्यादीनां चतुर्णां बादर-सूक्ष्मपर्याप्ता-ऽपर्याप्तानां जघन्यत उत्कृष्टतश्चाङ्गुलासंख्येयभागः, वनस्पतीनां बादरपर्याप्तानामुत्कर्षतः साधिकं योजनसहस्रम्, शेषाणां त्वङ्गुलासंख्येयभाग एव, द्वि-त्रि-चतुरिन्द्रियाणां पर्याप्तानां

१. °गाहना आह खं० ॥ २. °**वोरालं विस्तरालं समधि**° हे२ ॥ ३. **ओरालं** खं० ॥ ४. **भिंडवदिति** खं० । **भेंडवदित्यादि** हे२ ॥ ५. °**लियं शरीरं** खं० ॥ ६. **औदारिकशरीरावगाहना** खं० । खं० अनुसारेण **ओरालियसरीरोगाहणा** इति मूलपाठः संभाव्यते ॥ ७. **मणुस्सेत्यादि इह** खं० ॥

क्रमेण द्वादश योजनानि त्रीणि गव्यूतानि चत्वारि चेति, पञ्चेन्द्रियतिरश्चां जलचराणां पर्याप्तानां गर्भजानां संमूर्च्छनजानां चोत्कर्षतो योजनसहस्रम्, एवं स्थलचराणां चतुष्पदानां संमूर्च्छनजानां पर्याप्तानां गव्यूतपृथक्त्वम्, गर्भव्युत्क्रान्तिकानां तेषां षड् गव्यूतानि, उरःपरिसर्प्पाणां गर्भव्युत्क्रान्तिकानां योजनसहस्रम्, एषामेव सम्मूर्च्छनजानां योजनपृथक्त्वम्, भुजपरिसर्प्पाणां गर्भजानां गव्यूतपृथक्त्वम्, सम्मूर्च्छनजानां धनुःपृथक्त्वम्, खचराणां गर्भजानां सम्मूर्छनजानां च धनुःपृथक्त्वमेव, तथा मनुष्याणां गर्भव्युत्क्रान्तिकानां गव्यूतत्रयम् सम्मूर्च्छनजानामङ्गुलासंख्येयभागः, एष एव सर्वत्र जघन्यपदे अपर्याप्तपदे चेति ।

तथा **कइविहे ण**मित्यादि स्पष्टम्, नवरं विविधा विशिष्टा वा क्रिया विक्रिया, तस्यां भवं वैक्रियम्, विविधं विशिष्टं वा कुर्वन्ति तदिति वैकुर्विकमिति वा, तत्रैकेन्द्रियवैक्रियशरीरं वायुकायस्य पञ्चेन्द्रियवैक्रियशरीरं नारकादीनाम् । **एवं जावे**त्यादेरतिदेशादिदं द्रष्टव्यम्, यदुत **जइ एगिंदियवेउव्वियसरीरए किं वाउकाइयएगिंदियवेउव्वियसरीरए अवाउकाइयएगिंदियवेउव्वियसरीरए ?, गोयमा! वाउकाइयएगिंदियसरीरए नो अवाउकाइय [प्रज्ञापना सू०१५१५]** इत्यादिनाऽभिलापेनायमर्थो दृश्यः, यदि वायोः किं सूक्ष्मस्य बादरस्य वा ?, बादरस्यैव, यदि बादरस्य किं पर्याप्तकस्या-ऽपर्याप्तकस्य वा ?, पर्याप्तकस्यैव, यदि पञ्चेन्द्रियस्य किं नारकस्य पञ्चेन्द्रियतिरश्चो मनुजस्य देवस्य वा ?, गौतम ! सर्वेषाम्, तत्र नारकस्य सप्तविधस्य पर्याप्तकस्येतरस्य च, यदि तिरश्चः किं सम्मूर्च्छिमस्य इतरस्य वा ?, इतरस्य, तस्यापि संख्यातवर्षायुष एव पर्याप्तकस्य, [१]तस्य च जलचरादिभेदेन त्रिविधस्यापि । तथा मनुष्यस्य गर्भजस्यैव, तस्यापि कर्मभूमिजस्यैव, तस्यापि संख्यातवर्षायुष एव पर्याप्तकस्यैव च । तथा देवस्य भवनवास्यादेः, तत्रासुरादेर्दशविधस्य पर्याप्तकस्येतरस्य च, एवं व्यन्तरस्याष्टविधस्य ज्योतिष्कस्य पञ्चविधस्य, तथा यदि वैमानिकस्य किं कल्पोपपन्नस्य कल्पातीतस्य ? उभयस्यापि पर्याप्तस्यापर्याप्तस्य चेति ।

तथा वैक्रियं भदन्त ! किंसंस्थितम् ?, उच्यते, नानासंस्थितम्, तत्र वायोः

१. **तस्यापिजल** हे१ ॥

पताकासंस्थितम्, नारकाणां भवधारणीयमुत्तरवैक्रियं च हुण्डसंस्थितम्, पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्-मनुष्याणां[1] नानासंस्थितम्, देवानां भवधारणीयं समचतुरस्रसंस्थानसंस्थितमुत्तरवैक्रियं नानासंस्थितम्, केवलं कल्पातीतानां भवधारणीयमेव ।

तथा वैक्रियशरीरावगाहना भदन्त ! किंमहती ?, **गौतम** ! जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागमुत्कर्षतः सातिरेकं योजनलक्षम्, वायोरुभयथा अङ्गुलासंख्येयभागम्, एवं नारकस्य जघन्येन, भवधारणीया तु उत्कर्षतः पञ्च धनुःशतानि, एषा च सप्तम्याम्, षष्ठ्यादिषु त्वियमेव अर्द्धार्द्धहीनेति, उत्तरवैक्रिया तु जघन्यतः सर्वेषामप्यङ्गुलसंख्येयभागमुत्कर्षतस्तु नारकस्य भवधारणीयद्विगुणेति, पञ्चेन्द्रियतिरश्चां योजनशतपृथक्त्वमुत्कर्षतः, मनुष्याणां तूत्कर्षतः सातिरेकं योजनानां लक्षम्, देवानां तु लक्षमेवोत्तरवैक्रियम्, भवधारणीया तु भवनपति-व्यन्तर-ज्योतिष्क-सौधर्म्मेशानानां सप्त हस्ताः, सनत्कुमार-माहेन्द्रयोः षट्, ब्रह्म-लान्तकयोः पञ्च, महाशुक्र-सहस्रारयोश्चत्वार आनतादिषु त्रयो ग्रैवेयकेषु द्वावनुत्तरेष्वेक इति, अनन्तरोक्तसूत्रत एवाह[2]– **एवं जाव सणंकुमारे**त्यादि, **एव**मिति **दुविहे पण्णत्ते एगिंदिए**त्यादिना पूर्वदर्शितक्रमेण **प्रज्ञापनोक्तं** वैक्रियावगाहनामानसूत्रं वाच्यम्, कियद्दूरमित्याह– **यावत् सनत्कुमारे आरब्धं** भवधारणीयवैक्रियशरीरपरिहाणमिति गम्यं ततोऽपि यावद**नुत्तराणि** अनुत्तरसुरसम्बन्धीनि भवधारणीयानि शरीराणि यानि भवन्ति तेषां **रत्नी रत्निः परिहीयत** इति, एतदर्थं सूत्रं तावदिति, पुस्तकान्तरे त्विदं वाक्यमन्यथापि दृश्यते, तत्राप्यक्षरघटनैतदनुसारेण कार्येति ।

आहारएत्यादि सुगमम्, नवरम् **एव**मिति यथा पूर्वम् आलापकः परिपूर्ण उच्चारित एवमुत्तरत्रापि, तथाहि– **जइ मणुस्स** त्ति - **जइ मणुस्साहारगसरीरे किं गब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरे संमुच्छिममणुस्साहारगसरीरे ?, गोयमा ! गब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरे नो संमुच्छिममणुस्साहारगसरीरे, जइ गब्भवक्कंतिय०** इत्यादि सर्वमूह्यं यावत् **जइ पमत्तसंजयसम्मदिट्ठिपज्जत्तयसंखेज्जवासाउयकम्मभूमगगब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरे किं इड्ढिपत्तपमत्त-**

१. तिर्यग्मनु° जे२ ॥ २. सूत्र एवाह जे१ खं० ॥

संजयस[1]म्मदिट्ठिपज्जत्तयसंखेज्जवासाउयकम्मभूमगगब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरे अणिड्ढिपत्तपमत्तसंजयसम्मदिट्ठिपज्जत्तयसंखेज्जवासाउयकम्मभूमगगब्भवक्कंतियमणुस्साहारगसरीरे ?, गोयमा ! द्वितीयस्य निषेधः प्रथमस्य चानुज्ञा वाच्या, एतदेवाह– **वयणा वि भाणियव्व** त्ति सूचितवचनान्यप्युक्तन्यायेन सर्वाणि भणनीयानि, विभागेन पूर्णान्युच्चारणीयानीत्यर्थः,

आहार त्ति 'आहारगसरीरस्स केमहालिया सरीरोगाहणा पण्णत्ता ?, गोयमा !' इत्येतत् सूचितम्, **जहण्णेणं देसूणा रयणी**ति, कथम् ? उच्यते, तथाविधप्रयत्नविशेषतस्तथाऽऽरम्भकद्रव्यविशेषतश्च प्रारम्भकालेऽप्युक्तप्रमाणभावात्, न हीहौदारिकादेरिवाङ्गुलासंख्येयभागमात्रता प्रारम्भकाले इति भावः ।

तेयासरीरे णं भंते इत्यादि, **एवं यावत्**करणात् **प्रज्ञापना**सत्कैकविंशतितमपदोक्ता तैजसशरीरवक्तव्यता इह वाच्या, सा चेयमर्थतः- **एगिंदियतेयगसरीरे णं भंते ! कतिविहे ?, गोयमा ! पंचविहे पण्णत्ते, तंजहा- पुढवि जाव वणप्फइकाइयएगिंदियतेयगसरीरे** [**प्रज्ञापना सू० १५३६-१५३७**], एवं जीवराशिप्ररूपणाऽनुसारेण सूत्रं भावनीयम्, यावत् **सव्वट्ठसिद्धगअणुत्तरोववाइयकप्पातीतवेमाणियदेवपंचेंदियतेयगसरीरे णं भंते ! किंसंठिए ?, नाणासंठिए [प्रज्ञापना सू० १५४४[३]]**, यस्य पृथिव्यादिजीवस्य यदौदारिकादिशरीरसंस्थानं तदेव तैजसस्य कार्म्मणस्य च ।

तथा **जीवस्य मारणान्तिकसमुद्घातगतस्य कियती** तैजसी **शरीरावगाहना** ?, **शरीरमात्रा विष्कम्भ-बाहल्याभ्या**मायमतस्तु जघन्येनाङ्गुलस्यासंख्येयभाग उत्कर्षत ऊर्ध्वमधश्च लोकान्ताल्लोकान्तं यावदेकेन्द्रियस्य, ततस्तत्रोत्पत्तिमङ्गीकृत्येति भावः, एवं सर्वेषामेवैकेन्द्रियाणाम्, द्वीन्द्रियादीनां तु आयामत उत्कर्षेण तिर्यग्लोकाल्लोकान्तं यावत् प्रायस्तिर्यग्लोके द्वीन्द्रियादितिरश्चां भावात्, नारकस्य जघन्यतो योजनसहस्रम्, कथम् ?, नरकात् पातालकलशस्य सहस्रमानं कुड्यं भित्त्वा तत्र मत्स्यतयोत्पद्यमानस्य, उत्कर्षेण तु अधः सप्तमीं यावत् सप्तमपृथिवीनारकं समुद्रादिमत्स्येषूत्पद्यमानं प्रतीत्य, तिर्यक् स्वयम्भूरमणं यावत् ऊर्ध्वं पण्डकवनपुष्करिणीं यावत्, यतस्तयोर्नारक उत्पद्यते,

---

१. °**म्मदिट्ठि**° खं० जे१ हे२ ॥

न परतः, मनुष्यस्य लोकान्तं यावत्, भवनपति-व्यन्तर-ज्योतिष्क-सौधर्मेशानदेवानां जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागः स्वस्थान एव पृथिव्यादितयोत्पादात्, उत्कर्षतस्तु अधस्तृतीयपृथिवीं यावत् तिर्यक् स्वयम्भूरमणबहिर्वेदिकान्तम् ऊर्ध्वमीषत्प्राग्भारां यावत्, यत एते शुभपर्याप्तबादरेष्वेव पृथिव्यादिषूत्पद्यन्ते अतो न परतोऽपीति, सनत्कुमारादि-सहस्रारान्तदेवानां तु जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागः, कथम् ?, पण्डकवनादि-पुष्करिणीमज्जनार्थमवतारे मृतस्य तत्रैव मत्स्यतयोत्पद्यमानत्वात्, पूर्वसम्बन्धिनीं वा मनुष्योपभुक्तस्त्रियं परिष्वज्य मृतस्य तद्गर्भे समुत्पादादिति, उत्कर्षतस्तु अधो यावन्महापातालकलशानां द्वितीयस्त्रिभागः, तत्र हि जलसद्भावान्मत्स्येषूत्पद्यमानत्वात्, तिर्यक् स्वयम्भूरमणसमुद्रं यावत्, ऊर्ध्वमच्युतं यावत्, तत्र हि सङ्गतिकदेवनिश्रया गतस्य मृत्वेहोत्पद्यमानत्वादिति, आनतादीनामच्युतान्तानां तु जघन्यतोऽङ्गुला-संख्येयभागः, कथम् ?, इहागतस्य मरणकालविपर्यस्तमतेर्मनुष्योपभुक्तस्त्रियमभिष्वज्य मृतस्य तत्रैवोत्पत्तेरिति, उत्कर्षतस्त्वधो यावदधोलोकग्रामान्, तिर्यग् मनुष्यक्षेत्रे, ऊर्ध्वमच्युतविमानानि यावत् मनुष्येष्वेवोत्पद्यन्ते एत इति भावना तथैव कार्या, ग्रैवेयकानुत्तरोपपातिकदेवानां जघन्यतो विद्याधरश्रेणीं यावत्, उत्कर्षतोऽधो यावद-धोलोकग्रामान्, तिर्यग् मनुष्यक्षेत्रम्, ऊर्ध्वं तद्विमानान्येवेति, एवं कार्म्मणस्याप्यवगाहना दृश्या समानत्वादेतयोरिति । उक्तार्थमेव सूत्रांशमाह– **गेवेज्जगस्स ण**मित्यादि ।

[सू० १५३] भेदे विसय संठाणे अब्भंतर बाहिरे य देसोधी ।
ओहिस्स वड्ढि हाणी पडिवाती चेव अपडिवाती ॥७१॥

कतिविहे णं भंते ! ओही पण्णत्ते ? गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते- भवपच्चइए य खओवसमिए य । एवं सव्वं [1]ओहिपदं भाणियव्वं ।

सीता य दव्व सारीर सात तह वेयणा भवे दुक्खा ।
अब्भुवगमुवक्कमिया णिताइं चेव अणिदातिं ॥७२॥

नेरइया णं भंते ! किं सीतवेदणं वेयंति, उसिणवेयणं वेयंति, सीतोसिणवेयणं वेयंति ? गोयमा ! नेरइया० एवं चेव [2]वेयणापदं भाणियव्वं ।

१. प्रज्ञापनासूत्रस्य त्रयस्त्रिंशत्तमम् अवधिपदम् ॥ २. प्रज्ञापनासूत्रस्य पञ्चत्रिंशत्तमं वेदनापदम् ॥

कति णं भंते ! लेसातो पण्णत्तातो ? गोयमा ! छल्लेसातो पण्णत्तातो, तंजहा- किण्हलेसा नीललेसा काउलेसा तेउलेसा पम्हलेसा सुक्कलेसा । एवं लेसापदं[१] भाणियव्वं ।

अणंतरा य आहारे आहाराभोयणा विय ।
पोग्गला नेव जाणंति अज्झवसाणा य सम्मत्ते ॥७३॥

नेरइया णं भंते ! अणंतराहारा ततो निव्वत्तणया ततो परियातियणता ततो परिणामणता ततो परियारणया ततो पच्छा विकुव्वणया ? हंता गोयमा ! एवं आहारपदं[२] भाणियव्वं ।

[टी०] अनन्तरं शरीरिणामवगाहनाधर्म्म उक्तोऽधुना त्ववधिधर्मप्रतिपादनायाह– **भेदे** इत्यादि द्वारगाथा, तत्र **भेदो**ऽवधेर्वक्तव्यः, यथा द्विविधोऽवधिः - भवप्रत्ययः क्षायोपशमिकश्च, तत्र भवप्रत्ययो देवनारकाणां क्षायोपशमिको मनुष्यतिरश्चामिति, तथा **विषयो** गोचरोऽवधेर्वाच्यः, स च[३] चतुर्द्धा - द्रव्यतः क्षेत्रतः कालतो भावतश्च, तत्र द्रव्यतो जघन्येन तेजो-भाषयोरग्रहणप्रायोग्यानि द्रव्याणि जानाति, उत्कर्षतस्तु सर्वमेकाणुकाद्यनन्ताणुकान्तं रूपिद्रव्यजातं जानाति, क्षेत्रं जघन्यतोऽङ्गुलासंख्येयभागं जानाति उत्कर्षतोऽसंख्येयान्यलोके लोकमात्राणि खण्डानि जानाति, कालं जघन्यत आवलिकाया असंख्येयभागमतीतमनागतं च जानाति, उत्कर्षतः संख्यातीता उत्सर्प्पिण्यवसर्प्पिणीर्जानाति, भावान् जघन्यतः प्रतिद्रव्यं चतुरो वर्णादीन् उत्कर्षतः प्रतिद्रव्यमसंख्येयान् सर्वद्रव्यापेक्षया त्वनन्तानिति । तथा **संस्थान**मवधेर्वाच्यम्, यथा नारकाणां तप्राकारोऽवधिः, पल्याकारो भवनपतीनाम्, पटहाकारो व्यन्तराणाम्, झल्लर्याकृतिर्ज्योतिष्काणाम्, मृदङ्गाकारः कल्पोपपन्नानाम्, पुष्पावलीरचितशिखर-चङ्गेर्याकारो ग्रैवेयकाणाम्, कन्याचोलकसंस्थानोऽनुत्तरसुराणां लोकनाड्याकृतिरित्यर्थः, तिर्यङ्-मनुष्याणां तु नानासंस्थान इति । तथा **अब्भंतर** त्ति के अवधिप्रकाशित-क्षेत्रस्याभ्यन्तरे वर्त्तन्ते इति वाच्यम्, तत्र **नेरइयदेवतित्थंकरा य ओहिस्सऽबाहिरा हुंति**

१. **प्रज्ञापना**सूत्रस्य सप्तदशं **लेश्या**पदम् ॥ २. अत्र **प्रज्ञापना**सूत्रस्य अष्टाविंशतितमम् **आहारपदं** न ग्राह्यम्, किन्तु **आहारपद**शब्देन चतुस्त्रिंशत्तमं **परिचारणा**पदं ग्राह्यमिति टीकायां निर्दिष्टम**भयदेव**सूरिपादैः ॥ ३. **च** नास्ति खं० जे१ ॥

[*आव० नि०६६] इत्यादि । तथा **बाहिरे** त्ति केऽवधिक्षेत्रस्य बाह्या भवन्तीति वाच्यम्, तत्र शेषा जीवा बाह्यावधयोऽभ्यन्तरावधयश्च भवन्ति । तथा **देसोहि** त्ति अवधिप्रकाश्यवस्तुनो देशप्रकाशी अवधिर्देशावधिः स केषां भवतीति वाच्यम्, तद्विपरीतस्तु सर्वावधिः, तत्र मनुष्याणाम् उभयमन्येषां देशावधिरेव, यतः सर्वावधिः केवलज्ञानलाभप्रत्यासत्तावेवोत्पद्यत इति । तथाऽ**वधेर्वृद्धिर्हानिश्च** वाच्या, यो येषां भवति, तत्र तिर्यङ्-मनुष्याणां वर्द्धमानो हीयमानश्च भवति, शेषाणामवस्थित एव, तत्र वर्द्धमानो योऽङ्गुलासंख्येयभागादि दृष्ट्वा बहु बहुतरं पश्यति, विपरीतस्तु हीयमान इति। तथा **प्रतिपाती चाप्रतिपाती** चावधिर्वाच्यः, तत्रोत्कर्षतो लोकमात्रः प्रतिपाती, ततः परमप्रतिपाती, तत्र भवप्रत्ययस्तं भवं यावन्न प्रतिपतति, क्षायोपशमिकस्तूभयथेति। एतदेव दर्शयति– **कइविहे**त्यादि, अत्रावसरे **प्रज्ञापनायास्त्र**यस्त्रिंशत्तमं पदमन्यूनमध्येयमिति ।

अनन्तरमुपयोगविशेषः क्षायोपशमिको जीवपर्यायः उक्तोऽधुना स एवौदयिको वेदनालक्षणोऽभिधीयते– **सीया** इत्यादि द्वारगाथा, तत्र **सीया य** त्ति **च**शब्दोऽनुक्तसमुच्चये, तेन त्रिविधा वेदना - शीता उष्णा शीतोष्णा चेति, तत्र शीतामुष्णां च वेदयन्ति नारकाः, शेषास्त्रिविधामपि । **दव्व** त्ति उपलक्षणत्वाच्चतुर्विधा वेदना द्रव्यादिभेदेन, तत्र पुद्गलद्रव्यसम्बन्धात् द्रव्यवेदना, नारकाद्युपपातक्षेत्रसम्बन्धात् क्षेत्रवेदना, नारकाद्यायुःकालसम्बन्धात् कालवेदना, वेदनीयकर्म्मोदयाद् भाववेदना, तत्र नारकादयो वैमानिकान्ताश्चतुर्विधामपि वेदनां वेदयन्तीति । तथा **सारीर** त्ति त्रिधा– वेदना शारीरी मानसी शारीरमानसी च, तत्र संज्ञिपञ्चेन्द्रियाः सर्वे त्रिविधामपि, इतरे तु शारीरीमेवेति। तथा **साय** त्ति त्रिधा वेदना - साता असाता सातासाता चेति, तत्र सर्वे जीवाः त्रिविधामपि वेदयन्तीति । **तह वेयणा भवे दुक्ख** त्ति, त्रिविधा वेदना– सुखा दुःखा सुखदुःखा चेति, तत्र सर्वेऽपि त्रिविधामपि वेदयन्ति, नवरं सातासातयोः सुखदुःखयोश्चायं विशेषः- सातासाते क्रमेणोदयप्राप्तवेदनीयकर्म्मपुद्गलानुभवलक्षणे, सुखदुःखे तु परेण उदीर्यमाणवेदनीयकर्म्मानुभवलक्षणे । तथा **अब्भुवगमुवक्कमिय** त्ति, द्विधा वेदना- आभ्युपगमिकी औपक्रमिकी चेति, तत्राद्या यामभ्युपगमतो वेदयन्ति

जीवा यथा साधवः शिरोलोच-ब्रह्मचर्यादिकाम्, द्वितीया तु स्वयमुदीर्णस्योदीरणाकरणेन वोदयमुपनीतस्य वेदनीयस्यानुभवः, तत्र पञ्चेन्द्रियतिर्यङ्-मनुष्या द्विविधामपि शेषास्त्वौपक्रमिकीमेव वेदयन्तीति । तथा **णीयाए चेव अणियाए** त्ति, द्विविधा वेदना, तत्र **निदया** आभोगतः **अनिदया** त्वनाभोगतः, तत्र संज्ञिन उभयतोऽसंज्ञिनस्त्वनिदयेति, एतद्द्वारविवरणाय **नेरइया ण**मित्यादि, इहावसरे **प्रज्ञापनायाः** पञ्चत्रिंशत्तमं **वेदना**ख्यं पदमध्येयमिति ।

अनन्तरं वेदना प्ररूपिता, सा च लेश्यावत एव भवतीति लेश्याप्ररूपणायाह– **कइ णं भंते** इत्यादि, इह स्थाने **प्रज्ञापनायाः** सप्तदशं षडुद्देशकं **लेश्या**भिधानं पदमध्येतव्यम्, तच्चास्माभिरतिबहुत्वादर्थतोऽपि न लिखितमिति तत एवावधारणीयमिति ।

अनन्तरं लेश्या उक्ताः, सलेश्या एव चाहारयन्तीत्याहारप्ररूपणाय **अणंतरा ये**त्यादिद्वारश्लोकमाह । तत्र **अणंतरा य आहारे** त्ति **अनन्तराश्च** अव्यवधानाश्चा**हार**विषये अनन्तराहारा जीवा वाच्या इत्यर्थः, तथा**ऽऽहारस्याऽऽभोगना, अपिचे**ति वचनादनाभोगना च वाच्या । तथा **पुद्गलान्न जानन्त्येव, एव**कारान्न पश्यन्तीति चतुर्भङ्गी सूचिता । तथा **अध्यवसानानि सम्यक्त्वं** च वाच्यमिति ।

तत्राद्यद्वारार्थमाह– **नेरइए**त्यादि, **अणंतराहार** त्ति उपपातक्षेत्रप्राप्तिसमय एवाहारयन्तीत्यर्थः । **ततो निव्वत्तणया** इति ततः शरीरनिर्वृत्तिः । ततो **परियादियणय** त्ति ततः पर्यापानमङ्गप्रत्यङ्गैः समन्तात् पानमित्यर्थः । **ततो परिणामणय** त्ति आपीतस्योपात्तस्य परिणतिरिन्द्रियादिविभागेन । ततो **परियारणय** त्ति ततः शब्दादिविषयोपभोग इत्यर्थः । **ततो पच्छा विउव्वणय** त्ति ततः पश्चाद्विक्रिया नानारूपा इत्यर्थः । **हंत** त्ति हन्त गौतम !, एवमेतदिति भावः, एवं सर्वेषां पञ्चेन्द्रियाणां वक्तव्यम्, नवरं देवानां पूर्वं विकुर्वणा पश्चात् परिचारणा शेषाणां तु पूर्वं परिचारणा पश्चाद्विकुर्वणा, एकेन्द्रियादीनामप्येवमेव प्रश्नः, निर्वचने तु यत्र वैक्रियसम्भवो नास्ति तत्र विकुर्वणा निषेधनीयेति ।

एवमाहारपयं भाणियव्वं ति यथाऽऽद्यद्वारस्य प्रश्न उक्तस्तथा तदुत्तरं शेषद्वाराणि च भणद्भिः **प्रज्ञापनायाश्च**तुस्त्रिंशत्तमं **परिचारणा**पदाख्यं पदमिह भणितव्यमिति, इदं

चात्राहारविचारप्रधानतया आहारपदमुक्तमिति, तत् पुनरेवमर्थतस्तत्र **आहाराभोगणाइ य**[1] त्ति एतस्य विवरणम् - नारकाणां किमाभोगनिर्वर्त्तित आहारोऽनाभोगनिर्वर्त्तितो वा ?, उभयथापीति निर्वचनम्, एवं सर्वेषाम्, नवरमेकेन्द्रियाणामनाभोगनिर्वर्त्तित एवेति । तथा **पोग्गला नेव जाणंति** त्ति, अस्यार्थः– नारका यान् पुद्गलान् आहारयन्ति तानवधिनापि न जानन्ति अविषयत्वात्तदवधेस्तेषाम्, न पश्यन्ति चक्षुषाऽपि लोमाहारत्वात् तेषाम्, एवमसुरादयस्त्रीन्द्रियान्ताः, केवलम् एकेन्द्रिया अनाभोगाहारत्वाद् द्वित्रीन्दियाश्च मत्यज्ञानित्वान्न जानन्ति चक्षुरिन्द्रियाभावाच्च न पश्यन्तीति, चतुरिन्द्रियास्तु चक्षुःसद्भावेऽपि मत्यज्ञानित्वात् प्रक्षेपाहारं न जानन्ति, चक्षुषा तु पश्यन्ति, तथा त[2]एव लोमाहारमाश्रित्य न जानन्ति न पश्यन्तीति व्यपदिश्यते, चक्षुषोऽविषयत्वात्तस्य, पञ्चेन्द्रियतिर्यञ्चो मनुष्याश्च केचिज्जानन्ति पश्यन्ति चावधिज्ञानादियुक्ताः लोमाहारं प्रक्षेपाहारं च, तथाऽन्ये जानन्ति न पश्यन्ति लोमाहारम्, जानन्त्यवधिना न पश्यन्ति चक्षुषा, तथा अन्ये न जानन्ति पश्यन्ति, तत्र न जानन्ति प्रक्षेपाहारं मत्यज्ञानित्वात् पश्यन्ति चक्षुषा, तथा अन्ये न जानन्ति न पश्यन्ति लोमाहारं निरतिशयत्वादिति, व्यन्तर-ज्योतिष्का नारकवत्, वैमानिकास्तु ये सम्यग्दृष्टयस्ते जानन्ति विशिष्टावधित्वात् पश्यन्ति च चक्षुषोऽपि विशिष्टत्वात्, मिथ्यादृष्टयस्तु न जानन्ति न पश्यन्ति, प्रत्यक्ष-परोक्षज्ञानयोस्तेषामस्पष्टत्वादिति । तथा **अज्झवसाणा य** त्ति दारम्, नारकादीनां प्रशस्ताप्रशस्तान्यसंख्येयान्यध्यवसानानीति । तथा **संमत्ते** त्ति दारम्, तत्र नारकाः किं सम्यक्त्वाभिगमिनो मिथ्यात्वाभिगमिनः सम्यक्त्वमिथ्यात्वाभिगमिनश्चेति? त्रिविधा अपि, एवं सर्वेऽपि, नवरमेकेन्द्रिय-विकलेन्द्रिया मिथ्यात्वाभिगमिन एवेति ।

[सू० १५४] [१] कतिविहे णं भंते ! आउगबंधे पण्णत्ते ? गोयमा ! छव्विहे आउगबंधे पण्णत्ते, तंजहा- जातिनामनिधत्ताउए, एवं गतिनाम० ठितिनाम० पदेसनाम० अणुभाग० ओगाहणानाम० ।

[२] नेरइयाणं भंते ! कतिविहे आउगबंधे पन्नत्ते ?, गोयमा ! छव्विहे पन्नत्ते, तंजहा- जातिनाम० जाव ओगाहणानाम० । एवं जाव वेमाणिय त्ति।

---

१. "**आहाराभोयणाइ य** इति आहाराभोगना, आदिशब्दादाहारानाभोगना च वक्तव्या ।" इति **प्रज्ञापनासूत्रस्य** चतुस्त्रिंशत्तमे पदे **मलयगिरिसूरिविरचितायां** वृत्तौ ॥ २. **एव च लोमा**° खं० ॥

[३] निरयगती णं भंते ! केवतियं कालं विरहिता उववाएणं पण्णत्ता? गोयमा! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं बारस मुहुत्ते, एवं तिरियगति मणुस्स[गति] देव[गति] । सिद्धिगती णं भंते ! केवइयं कालं विरहिया सिज्झणयाए पण्णत्ता ? गोयमा ! जहन्नेणं एक्कं समयं, उक्कोसेणं छम्मासे। एवं सिद्धिवज्जा उव्वट्टणा ।

[४] इमीसे णं भंते ! रयणप्पभाए पुढवीए नेरइया केवइयं कालं विरहिया उववाएणं ? एवं उववायदंडओ भाणियव्वो उव्वट्टणादंडओ य ।

[टी०] अनन्तरमाहारप्ररूपणा कृता, आहारश्चायुर्बन्धवतामेव भवतीत्यायुर्बन्धप्ररूपणायाह–[1] **कइविहे**त्यादि, तत्रायुषो **बन्धः** निषेक **आयुर्बन्धः**, निषेकश्च प्रतिसमयं बहुहीनहीनतरस्य दलिकस्यानुभवनार्थं रचना, निधत्तमपीह निषेक उच्यते, अत एवाह– **जाइनामनिधत्ताउए**, जातिनाम्ना सह **निधत्तं** निषिक्तमनुभवनार्थं बह्वल्पाल्पतरक्रमेण व्यवस्थापितमायु**र्जातिनामनिधत्तायुः**, अथ किमर्थं जात्यादिनामकर्म्मणाऽऽयुर्विशेष्यते[2] ?, उच्यते– आयुष्कस्य प्राधान्योपदर्शनार्थम्, यस्मान्नारकाद्यायुरुदये सति जात्यादिनामकर्म्मणामुदयो भवति, नारकादिभवोपग्राहकं चायुरेव, यस्माद् **व्याख्याप्रज्ञप्त्यामुक्तम्– नेरइए णं भंते ! नेरइएसु उववज्जइ, अनेरइए नेरइएसु उववज्जइ ?, गोयमा ! नेरइए नेरइएसु उववज्जइ, नो अनेरइए नेरइएसु उववज्जइ** [भगवती० ४/९/१७३], एतदुक्तं भवति - नारकायुःप्रथमसमयसंवेदनकाल एव नारक इत्युच्यते, तत्सहचारिणां च पञ्चेन्द्रियजात्यादिनामकर्म्मणामप्युदय इति ।

तथा **गतिनामनिधत्ताउए** त्ति, **गति**र्नारकगत्यादिः, तल्लक्षणं नामकर्म्म तेन सह **निधत्तं** निषिक्तमायु**र्गतिनामनिधत्तायुः** ।

तथा **ठिइनामनिधत्ताउए** त्ति, **स्थिति**र्यत् स्थातव्यं तेन भावेनायुर्दलिकस्य सैव **नाम** परिणामो धर्म इत्यर्थः **स्थितिनाम**, गति-जात्यादिकर्म्मणां वा प्रकृत्यादिभेदेन चतुर्विधानां यः स्थितिरूपो भेदस्तत् स्थितिनाम, तेन सह निधत्तमायुः **स्थितिनामनिधत्तायु**रिति।

तथा **पएसनामनिधत्ताउए** त्ति, **प्रदेशानां** प्रमितपरिमाणानामायुःकर्मदलिकानां **नाम**[3]

१. अत्र प्रज्ञापनासूत्रे षष्ठं व्युत्क्रान्तिपदं द्रष्टव्यम् ॥ २. °र्विशिष्यिते जे२ हे१, हेसं२ ॥ ३. नामः जे२ खं० हे२॥

परिणामो यः तथाऽऽत्मप्रदेशेषु सम्बन्धनं स **प्रदेशनाम**, जाति-गत्यवगाहनाकर्म्मणां वा यत् प्रदेशरूपं नामकर्म्म तत् **प्रदेशनाम**, तेन सह निधत्तमायुः **प्रदेशनामनिधत्तायु**रिति। तथा **अणुभागनामनिधत्ताउए** त्ति, **अनुभागः** आयुष्कर्मद्रव्याणां तीव्रादिभेदो रसः स एव तस्य वा **नामः** परिणामोऽ**नुभागनामः**, अथवा गत्यादीनां नामकर्मणामनुभागबन्धरूपो भेदोऽ**नुभागनाम**, तेन सह निधत्तमायु**रनुभागनामनिधत्तायु**रिति ।

तथा **ओगाहणानामनिधत्ताउए** त्ति, अवगाहते जीवो यस्यां साऽ**वगाहना** शरीरमौदारिकादि पञ्चविधम्, तत्कारणं कर्माप्यवगाहना, तद्रूपं नामकर्म्माऽव**गाहनानाम**, तेन सह निधत्तमा**युरवगाहनानामनिधत्तायु**रिति । **नेरइयाण**मित्यादि स्पष्टम् ।

अनन्तरमायुर्बन्ध उक्तोऽधुना बद्धायुषां नारकादिगतिषूपपातो भवतीति तद्विरहकालप्ररूपणायाह– **निरयगई ण**मित्यादि कण्ठ्यम्, नवरं यद्यपि रत्नप्रभादिषु चतुर्विंशतिर्मुहूर्त्तादिविरहकालः, यथोक्तम्–

चउवीसई[१] मुहुत्ता सत्त अहोरत्त तह य पण्णरसा ।
मासो य दो य चउरो छम्मासा विरहकालो उ ॥ [बृहत्सं० २८१] त्ति ।

तथापि सामान्यगत्यपेक्षया द्वादश मुहूर्त्ता उक्ताः, तथा **एवं**करणाद् यत्तिर्यङ्मनुष्यगत्योः सामान्येन द्वादश मुहूर्त्ता उक्ताः तद् गर्भव्युत्क्रान्तिकापेक्षया, देवगतौ तु सामान्यत एव। **सिद्धिवज्जा उव्वट्टण** त्ति नारकादिगतिषु द्वादशमुहूर्त्तो विरहकाल

१. °**साई** खं० जे१ । ''चउवीसयं मुहुत्ता, सत्त अहोरत्त तह य पन्नरस । मासो अ दो अ चउरो छम्मासा विरहकालो उ ॥२८१॥ उक्कोसो रयणाइसु, सव्वासु जहन्नओ भवे समओ । एमेव य उव्वट्टण, संखा पुण सुरवरूतुल्ला ॥२८२॥ **व्या०-** इह नरकेषु नारकाः सततमेव प्राय उत्पद्यन्ते । केवलं कदाचिदन्तरं भवति । तच्चान्तरं जघन्यतः सर्वासु समस्तासु पृथिवीषु प्रत्येकं भवत्येकः समयः । उत्कर्षतो रत्नप्रभायां पृथिव्यां चतुर्विंशतिमूहुर्त्ता अन्तरम् । शर्कराप्रभायां सप्ताहोरात्राः । वालुकाप्रभायां पञ्चदश । पङ्कप्रभायां मासः । धूमप्रभायां द्वौ मासौ । तमःप्रभायां चत्वारो मासाः । तमस्तमःप्रभायां षण्मासाः । **एमेव य उव्वट्टण** त्ति यथोपपातविरहकाल उक्त एवमेवोद्वर्तनाविरहकालोऽपि जघन्यत उत्कर्षतश्च वाच्यः । ततः समस्तासु पृथिवीषु प्रत्येकमुद्वर्तनाविरहकालो जघन्यत एकः समयः । उत्कर्षतो रत्नप्रभायां चतुर्विंशतिमुहूर्त्ताः । शर्कराप्रभायां सप्ताहोरात्राः । वालुकाप्रभायां पक्षः । पङ्कप्रभायां मासः । धूमप्रभायां द्वौ मासौ । तमःप्रभायां चत्वारो मासाः । तमस्तमःप्रभायां षण्मासाः । ''संखा पुण सुरवरूतुल्ल त्ति' उपपात उद्वर्तनायां च सङ्ख्या पुनरेकस्मिन् समये सुरवरतुल्या सुराणामिव द्रष्टव्या । तद्यथा- एकस्मिन् समये नारका उत्पद्यन्ते जघन्यपद एको द्वौ वा, उत्कर्षतः सङ्ख्यंयाता असङ्ख्याता वा, एवमेव चोद्वर्तन्तेऽपीति ॥२८१-८२॥'' इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरिसूरि**विरचितायां वृत्तौ ॥

उद्वर्त्तनायामिति, सिद्धानां तूद्वर्त्तनैव नास्ति, अपुनरावृत्तित्वात्तेषामिति ।

इमीसे णं रयणप्पभाए पुढवीए नेरइया केवइकालं विरहिया उववाएणं पण्णत्ता ?, एवं उववायदंडओ भाणियव्वो त्ति, स चायम्– गोयमा ! जहण्णेणं एक्कं समयं उक्कोसेणं चउव्वीसं मुहुत्ताइं [प्रज्ञापना० ६।५६९][1], अनेनाभिलापेन शेषा वाच्याः, तथाहि– सक्करप्पभाए णं उक्कोसेणं सत्त राइंदियाणि, वालुयप्पभाए अद्धमासं, पंकप्पभाए मासं, धूमप्पभाए दो मासा, तमप्पभाए चउरो मासा, अहेसत्तमाए छ मास त्ति । असुरकुमारा चउवीसइ मुहुत्ता एवं जाव थणियकुमारा । पुढविकाइया अविरहिया उववाएणं एवं सेसा वि। बेइंदिया अंतोमुहुत्तं, एवं तेइंदियचउरिंदियसंमुच्छिमपंचिंदियतिरिक्खजोणिया वि, गब्भवक्कंतिया तिरिया मणुया य बारस मुहुत्ता, संमुच्छिममणुस्सा चउवीसई मुहुत्ता विरहिया उववाएणं, वंतर-जोइसिया चउवीसं मुहुत्ताइं, एवं सोहम्मीसाणे वि, सणंकुमारे णव दिणाइं वीसा य मुहुत्ता, माहिंदे बारस दिणाइं दस मुहुत्ता, बंभलोए अद्धतेवीसं राइंदियाइं, लंतए पणयालीसं, महासुक्के असीइं, सहस्सारे दिणसयं, आणए संखेज्जा मासा, एवं पाणए वि, आरणे संखेज्जा वासा, एवं अच्चुए वि, गेवेज्जपत्थडेसु तिसु तिसु कमेणं संखेज्जाइं वाससयाइं वाससहस्साइं वाससयसहस्साइं, विजयाइसु असंखेज्जं कालं, सव्वट्ठसिद्धे पलिओवमस्सासंखेज्जइभागं ति, एवं उव्वट्टणादंडओ वि त्ति ।

[सू० १५४] [५] नेरइया णं भंते ! जातिनामनिधत्ताउगं कतिहिं आगरिसेहिं पगरेंति? गोयमा ! सिय १, सिय २।३।४।५।६।७, सिय अट्ठहिं, नो चेव णं नवहिं। एवं सेसाण वि आउगाणि जाव वेमाणिय त्ति ।

[टी०] उपपात उद्वर्त्तना चायुर्बन्धे एव भवतीत्यायुर्बन्धे विधिविशेषप्ररूपणायाह– **नेरइए**त्यादि कण्ठ्यम्, नवरम् आकर्षो नाम कर्मपुद्गलोपादानम्, यथा गौः पानीयं पिबन्ती भयेन पुनः पुनः आबृंहति, एवं जीवोऽपि तीव्रेणायुर्बन्धाध्यवसानेन सकृदेव जातिनामनिधत्तायुः प्रकरोति, मन्देन द्वाभ्यामाकर्षाभ्यां मन्दतरेण त्रिभिर्मन्दतमेन चतुर्भिः पञ्चभिः षड्भिः सप्तभिरष्टाभिर्वा न पुनर्नवभिः, एवं शेषाण्यपि, **आउगाणि** त्ति गतिनामनिधत्तायुरादीनि वाच्यानि यावद् वैमानिका इति, अयं चैकाद्याकर्षनियमो जात्यादिनामकर्मणामायुर्बन्धकाल एव बध्यमानानां न शेषकालम्, आयुर्बन्धपरि-

---

१. अत्र **प्रज्ञापनासूत्रस्य** षष्ठं व्युत्क्रान्तिपदं द्रष्टव्यम् ॥

समाप्तेरुत्तरकालमपि बन्धोऽस्त्येव, एषां ध्रुवबन्धिनीनां च ज्ञानावरणादिप्रकृतीनां प्रतिसमयमेव बन्धनिर्वृत्तिर्भवति, एतास्तु [1]परावृत्य परावृत्य बध्यन्त इति ।

[सू० १५५] [१] **कइविहे णं भंते ! संघयणे पण्णत्ते ? गोयमा ! छव्विहे संघयणे पण्णत्ते, तंजहा- वइरोसभनारायसंघयणे रिसभनारायसंघयणे नारायसंघयणे अद्धनारायसंघयणे खीलियासंघयणे छेवट्ठ(सेवट्ट?)संघयणे ।**

[टी०] अनन्तरं जीवानामायुर्बन्धप्रकार उक्तोऽधुना तेषामेव संहनन-संस्थान-[2]वेदप्रकारानाह– **कइविहे ण**मित्यादि दण्डकत्रयं कण्ठ्यम्, नवरं **संहनन**मस्थिबन्धविशेषः, मर्कटस्थानीयमुभयोः पार्श्वयोरस्थि [3]नाराचम्, **ऋषभ**स्तु पट्टः, **वज्रं** कीलिका, वज्रं च ऋषभश्च नाराचं च यत्रास्ति तद्वज्रर्षभनाराचसंहननम्, [4]मर्कट-पट्ट-कीलिकारचनायुक्तः प्रथमोऽस्थिबन्धः, [5]मर्कट-कीलिकाभ्यां द्वितीयः, मर्कटयुक्तस्तृतीयः, मर्कटैककदेशबन्धन-द्वितीयपार्श्वकीलिकासम्बन्धश्चतुर्थः, [6]अङ्गुलिद्वयस्य संयुक्तस्य मध्ये कीलिकैव दत्ता यत्र तत् कीलिकासंहननं पञ्चमम्, यत्रास्थीनि चर्मणा निकाचितानि केवलं तत् **सेवार्त्तम्**, स्नेहपानादीनां नित्यपरिशीलना **सेवा**, तया **ऋतं** प्राप्तं **सेवार्त्त**मिति षष्ठम् ।

[सू० १५५] [२] **नेरइया णं भंते ! किंसंघयणी [पण्णत्ता] ? गोयमा ! छण्हं संघयणाणं असंघयणी, णेवट्ठी, णेव छिरा, [7]णवि ण्हारू, जे पोग्गला अणिट्ठा अकंता अप्पिया अमणुण्णा अमणावा ते तेसिं असंघयणत्ताए परिणमंति ।**

असुरकुमारा णं [भंते !] किंसंघयणी पण्णत्ता ? गोयमा ! छण्हं संघयणाणं असंघयणी, णेवट्ठी, णेव छिरा जाव जे पोग्गला इट्ठा कंता पिया मणुण्णा मणामा मणाभिरामा ते तेसिं असंघयणत्ताए परिणमंति । एवं जाव थणियकुमार त्ति ।

पुढवि[काइया णं भंते !] किंसंघयणी पन्नत्ता ? [गोयमा !] सेवट्टसंघयणी पण्णत्ता, एवं जाव संमुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणिय त्ति । गब्भवक्कंतिया

---

१. परावृत्य बध्यंत जे२ हे२ ॥ २. °प्रकारामाह जे१ । °प्रकारमाह खं० ॥ ३. नाराच खं० ॥ ४. °मर्कटकपट्ट° जे२ ॥ ५. मर्कटक-कीलि° जे२ हे२ ॥ ६. अत्र 'अस्थिद्वयस्य' इति पाठः शुद्धो भाति ॥ ७. °णेव अटी० ॥

छव्विहसंघयणी । संमुच्छिममणुस्सा णं सेवट्टसंघयणी । गब्भवक्कंतियमणूसा छव्विहे संघयणे पण्णत्ता । जहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोतिसिया वेमाणिया ।

[टी०] **छण्हं संघयणाणं असंघयणि** त्ति उक्तरूपाणां षण्णां संहननानामन्यतमस्याप्यभावेनाऽ**संहनिनः** अस्थिसञ्चयरहिताः, अत एवाह– **नेवट्ठी** नैवास्थीनि तच्छरीरके, **नेव छिर** त्ति नैव **शिरा** धमन्यः, **णेव ण्हारू** नैव स्नायूनीति कृत्वा संहननाभावः, तत्सहितानां हि प्रचुरमपि दुःखं न बाधाविधायि स्यात्, नारकास्त्वत्यन्तशीतादिबाधिता इति, न चास्थिसञ्चयाभावे शरीरं नोपपद्यते, स्कन्धवत्तदुपपत्तेः, अत एवाह– **जे पोग्गले**त्यादि, ये पुद्गला **अनिष्टाः** अवल्लभाः सदैवैषां सामान्येन, तथा **अकान्ता** अकमनीयाः सदैव तद्भावेन, तथा **अप्रिया** द्वेष्याः सर्वेषामेव, तथाऽ**शुभाः** प्रकृत्यसुन्दरतया, तथा **अमनोज्ञा** अमनोरमाः कथयापि, तथा **अमनआपा** न मनःप्रियाश्चिन्तयापि, **ते** एवंभूताः पुद्गलास्**तेषां** नारकाणाम् **असंघयणत्ताए** त्ति अस्थिसञ्चयविशेषरहितशरीरतया परिणमन्ति ।

[सू० १५५] [३] **कतिविहे णं भंते ! संठाणे पण्णत्ते ? गोयमा ! छव्विहे संठाणे पण्णत्ते, तंजहा- समचउरंसे, णग्गोहपरिमंडले, साति, खुज्जे, वामणे, हुंडे ।**

णेरइया णं भंते ! किं[संठाणी पण्णत्ता ?] गोयमा ! हुंडसंठाणी पण्णत्ता। असुरकुमारा [णं भंते !] किं[संठाणी पण्णत्ता ?] गोयमा ! समचउरंससंठाणसंठिया पण्णत्ता जाव थणिय त्ति ।

पुढवि[काइया] मसूरयसंठाणा पण्णत्ता । आऊ[काइया] थिबुयसंठाणा पण्णत्ता । तेऊ[काइया] सूइकलावसंठाणा पण्णत्ता । वाऊ[काइया] पडातियासंठाणा पण्णत्ता । वणप्फति[काइया] णाणासंठाणसंठिता पण्णत्ता।

बेंतिया तेंतिया चउरिंदिया सम्मुच्छिमपंचेंदियतिरिक्खजोणिया हुंडसंठाणा पण्णत्ता । गब्भवक्कंतिया छव्विहसंठाणा [पण्णत्ता] ।

संमुच्छिममणूसा हुंडसंठाणसंठिता पण्णत्ता । गब्भवक्कंतियाणं [मणूसाणं] छव्विहा संठाणा [पण्णत्ता] ।

जहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोतिसिया वेमाणिया ।

[टी०] **कइविहे संठाणे**त्यादि, तत्र मानोन्मानप्रमाणानि अन्यूनान्यनतिरिक्तानि अङ्गोपाङ्गानि च यस्मिन् शरीरसंस्थाने तत् **समचतुरस्र**संस्थानम्, तथा नाभित उपरि सर्वावयवाश्चतुरस्रलक्षणाऽविसंवादिनोऽधस्तु तदनुरूपं यन्न भवति **तन्न्यग्रोध**संस्थानम्, तथा नाभितोऽधः सर्वावयवाश्चतुरस्रलक्षणाविसंवादिनो यस्योपरि च यत्तदनुरूपं न भवति तत् **सादि**संस्थानम्, तथा ग्रीवा हस्तपादाश्च समचतुरस्रलक्षणयुक्ता यत्र संक्षिप्तविकृतं च मध्यकोष्ठं तत् **कुब्ज**संस्थानम्, तथा यल्लक्षणयुक्तं कोष्ठं चतुरस्रलक्षणापेतं ग्रीवाद्यवयव-हस्तपादं च **तद्वामनम्**, तथा यत्र हस्तपादाद्यवयवाः बहुप्रायाः प्रमाणविसंवादिनश्च तद् हुण्डमित्युच्यते।

[सू० १५६] कतिविहे णं भंते ! वेए पण्णत्ते ? गोयमा ! तिविहे वेए पण्णत्ते, तंजहा- इत्थिवेदे पुरिसवेदे णपुंसगवेदे । णेरतियाणं भंते ! किं इत्थिवेए पुरिसवेए णपुंसगवेए पण्णत्ते ? गोयमा ! णो इत्थि[वेदे], णो पुंवेदे, णपुंसगवेदे [पण्णत्ते] । असुरकुमा[राणं भंते !] किं [इत्थिवेए पुरिसवेए णपुंसगवेए पण्णत्ते] ? गोयमा ! इत्थि[वेए,] पुमं[वेए,] णो णपुंसग[वेए] जाव थणिय त्ति । पुढवि[काइया] आउ[काइया] तेउ[काइया] वाउ[काइया] वण[प्फतिकाइया] बे[इंदिया] ते[इंदिया] चउ[रिंदिया] संमुच्छिमपंचेंदिय-तिरिक्ख[जोणिया] संमुच्छिममणूसा णपुंसगवेया । गब्भवक्कंतियमणूसा पंचेंदियतिरिया तिवेया । जहा असुरकुमारा तहा वाणमंतरा जोतिसिया वेमाणिया ।

[टी०] **कइविहे वेद(दे)** इत्यादि, तत्र **स्त्रीवेदः** पुंस्कामिता, **पुरुषवेदः** स्त्रीकामिता, **नपुंसकवेदः** स्त्रीपुंस्कामितेति ।

[सू० १५७] ते णं काले णं ते णं समए णं कप्पस्स समोसरणं णेतव्वं जाव गणहरा सावच्चा णिरवच्चा वोच्छिन्ना ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे तीताए उस्सप्पिणीते सत्त कुलकरा होत्था, तंजहा-

[1]मित्तदामे सुदामे य, सुपासे य सयंपभे ।
विमलघोसे सुघोसे य, महाघोसे य सत्तमे ॥७४॥

जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे तीताए उस्सप्पिणीए दस कुलकरा होत्था, तंजहा-

सतज्जले सताऊ य, [2]अजितसेणे अणंतसेणे य ।
कक्कसेणे भीमसेणे, महासेणे य सत्तमे ॥७५॥
दढरहे दसरहे सतरहे ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए समाते सत्त कुलगरा होत्था, तंजहा-

[1]पढमेत्थ विमलवाहण० [[3]चक्खुम जसमं चउत्थमभिचंदे ।
तत्तो पसेणईए मरुदेवे चेव नाभी य ॥७६॥] गाहा

एतेसि णं सत्तण्हं कुलगराणं सत्त भारियातो होत्था, तंजहा-

चंदजस चंद०[कंता सुरूव पडिरूव चक्खुकंता य ।
सिरिकंता मरुदेवी कुलगरपत्तीण णामाइं ॥७७॥] गाहा ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे णं ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थकराण पितरो होत्था, तंजहा-

णाभी जियसत्तू या० [जियारी संवरे इ य ।
मेहे धरे पइट्ठे य महसेणे य खत्तिए ॥७८॥
सुग्गीवे दढरहे विण्हू वसुपुज्जे य खत्तिए ।
कयवम्मा सीहसेणे य भाणू विस्ससेणे इ य ॥७९॥
सूरे सुदंसणे कुंभे सुमित्तविजए समुद्दविजये य ।
राया य आससेणे सिद्धत्थे च्चिय खत्तिए ॥८०॥] गाहा ।

---

१. स्थानाङ्गेऽपि सू० ५५६ ॥ २. स्थानाङ्गसूत्रे [सू०७६७] 'अणंतसेणे त अजितसेणे त' इति पाठः ॥
३. अत्र [ ] कोष्ठकान्तर्गतः पाठ आवश्यकनिर्युक्ति-स्थानाङ्ग-समवायाङ्गटीकानुसारेण अस्माभिः पूरित इति सर्वत्र ज्ञेयम् ॥

उदितोदितकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया ।
तित्थप्पवत्तयाणं एते पितरो जिणवराणं ॥८१॥

जंबुद्दीवे एवं मातरो-

मरुदेवा० [विजय सेणा सिद्धत्था मंगला सुसीमा य ।
पुहई लक्खण रामा नंदा विण्हू जया सामा ॥८२॥
सुजसा सुव्वय अइरा सिरि देवी य पभावई ।
पउमावती य वप्पा सिव वम्मा तिसिला इ य ॥८३॥] गाहातो ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थकरा होत्था, तंजहा- उसभ १ अजित २ जाव वद्धमाणो २४ य ।

एतेसिं चउवीसाए तित्थकराणं चउवीसं पुव्वभविया णामधेज्जा होत्था, तंजहा-

पढमेत्थ वतिरणाभे विमले तह विमलवाहणे चेव ।
तत्तो य धम्मसीहे सुमित्त तह धम्ममित्ते य ॥८४॥
सुंदरबाहू तह दीहबाहु जुगबाहु लट्ठबाहू य ।
दिण्णे य इंददिण्णे सुंदर माहिंदरे चेव ॥८५॥
सीहरहे मेहरहे रुप्पी य सुदंसणे य बोधव्वे ।
तत्तो य णंदणे खलु सीहगिरी चेव वीसतिमे ॥८६॥
अद्दीणसत्तु संखे सुदंसणे णंदणे य बोधव्वे ।
ओसप्पिणीए एते तित्थकराणं तु पुव्वभवा ॥८७॥

एतेसि णं चउवीसाए तित्थयराणं चउवीसं सीयाओ होत्था, तंजहा-

सीया सुदंसणा सुप्पभा य सिद्धत्थ सुप्पसिद्धा य ।
विजया य वेजयंती जयंती अपराजिया ॥८८॥
अरुणप्पभ सूरप्पभ सुंकप्पभ अग्गिसप्पभा चेव ।
विमला य पंचवण्णा सागरदत्ता तह णागदत्ता य ॥८९॥

अभयकर णिव्वुतिकरी मणोरमा तह मणोहरा चेव ।
देवकुरु उत्तरकुरा विसाल चंदप्पभा सीया ॥९०॥
एतातो सीयातो सव्वेसिं चेव जिणवरिंदाणं ।
सव्वजगवच्छलाणं सव्वोतुकसुभाए छायाए ॥९१॥
पुव्विं उक्खित्ता माणुसेहिं सा हट्ठरोमकूवेहिं ।
पच्छा वहंति सीयं असुरिंद-सुरिंद-नागिंदा ॥९२॥
चलचवलकुंडलधरा सच्छंदविउव्वियाभरणधारी ।
सुर-असुरवंदियाणं वहंति सीयं जिणिंदाणं ॥९३॥
पुरतो वहंति देवा नागा पुण दाहिणम्मि पासम्मि ।
पच्चत्थिमेण असुरा गरुला पुण उत्तरे पासे ॥९४॥
उसभो य विणीताए बारवतीए अरिट्ठवरणेमी ।
अवसेसा तित्थकरा णिक्खंता जम्मभूमीसु ॥९५॥
सव्वे वि एगदूसेण [णिग्गया जिणवरा चउव्वीसं ।
ण य णाम अण्णलिंगे ण य गिहिलिंगे कुलिंगे य ॥९६॥] गाहा ।
एक्को भगवं वीरो पासो मल्ली [य तिहिं तिहिं सएहिं ।
भगवं पि वासुपुज्जो छहिं पुरिससएहिं निक्खंतो ॥९७॥] गाहा ।
उग्गाणं भोगाणं रातिण्णा[णं च खत्तियाणं च ।
चउहिं सहस्सेहिं उसभो सेसा उ सहस्सपरिवारा ॥९८॥] गाहा ।
सुमतित्थ णिच्चभत्तेण [णिग्गओ वासुपुज्जो जिणो चउत्थेणं ।
पासो मल्ली वि य अट्ठमेण सेसा उ छट्ठेणं ॥९९॥] गाहा ।

एतेसि णं चउवीसाए तित्थकराणं चउवीसं पढमभिक्खादेया होत्था, तंजहा–

सेज्जंस बंभदत्ते सुरिंददत्ते य इंददत्ते य ।
तत्तो य धम्मसीहे सुमित्ते तह धम्ममित्ते य ॥१००॥

पुस्से पुणव्वसू पुण णंदे सुणंदे जए य विजए य ।
पउमे य सोमदेवे महिंददत्ते य सोमदत्ते य ॥१०१॥
अपरातिय वीससेणे वीसतिमे होति उसभसेणे य ।
दिण्णे वरदत्ते धन्ने बहुले य आणुपुव्वीए ॥१०२॥
एते विसुद्धलेसा जिणवरभत्तीय पंजलिउडाओ ।
तं कालं तं समयं पडिलाभेंती जिणवरिंदे ॥१०३॥
संवच्छरेण भिक्खा० [लद्धा उसभेण लोगणाहेण ।
सेसेहिं बीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ ॥१०४॥] गाहा ।
उसभस्स पढमभिक्खा० [खोयरसो आसि लोगणाहस्स ।
सेसाणं परमण्णं अमयरसरसोवमं आसि ॥१०५॥] गाहा ।
सव्वेसिं पि जिणाणं जहियं लद्धातो पढमभिक्खातो ।
तहियं वसुधारातो [१] सरीरमेत्तीओ वुट्ठातो ॥१०६॥
एतेसि णं चउवीसाए तित्थकराणं चउवीसं चेतियरुक्खा होत्था, तंजहा-
णग्गोह सत्तिवण्णे साले पियते पियंगु छत्तोहे ।
सिरिसे य णागरुक्खे माली य पिलुंक्खुरुक्खे य ॥१०७॥
तेंदुग पाडलि जंबू आसोत्थे खलु तहेव दधिवण्णे ।
णंदीरुक्खे तिलए अंबगरुक्खे असोगे य ॥१०८॥
चंपय बउले य तहा वेडसरुक्खे तहा य धायईरुक्खे ।
साले य वद्धमाणस्स चेतियरुक्खा जिणवराणं ॥१०९॥
बत्तीसतिं धणूइं चेतियरुक्खो उ वद्धमाणस्स ।
णिच्चोउगो असोगो ओच्छन्नो सालरुक्खेणं ॥११०॥

---

१. तुलना- "सव्वेहिं पि जिणेहिं, जहिअं लद्धाओ पढमभिक्खाओ । तहिअं वसुहाराओ, वुट्ठाओ पुप्फवुट्ठीओ ॥३३१॥ अद्धतेरसकोडी उक्कोसा तत्थ होइ वसुहारा । अद्धतेरस लक्खा, जहण्णिआ होइ वसुहारा ॥३३२॥" इति आवश्यकनिर्युक्तौ ॥

तिण्णेव गाउयाइं चेतियरुक्खो जिणस्स उसभस्स ।
सेसाणं पुण रुक्खा सरीरतो बारसगुणा उ ॥१११॥
सच्छत्ता सपडागा सवेइया तोरणेहिं उववेया ।
सुरअसुरगरुलमहियाण चेतियरुक्खा जिणवराणं ॥११२॥

एतेसि णं चउवीसाए तित्थकराणं चउवीसं पढमसीसा होत्था, तंजहा-

पढमेत्थ उसभसेणे बितिए पुण होइ सीहसेणे उ ।
चारू य वज्जणाभे चमरे तह सुव्वय विदब्भे ॥११३॥
दिण्णे वाराहे पुण आणंदे गोत्थुभे सुहम्मे य ।
मंदर जसे अरिट्ठे चक्काउह सयंभु कुंभे य ॥११४॥
भिसए य इंद कुंभे वरदत्ते दिण्ण इंदभूती य ।
उदितोदितकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया ।
तित्थप्पवत्तयाणं पढमा सिस्सा जिणवराणं ॥११५॥

एतेसि णं चउवीसाए तित्थकराणं चउवीसं पढमसिस्सिणीओ होत्था, तंजहा–

बंभी फग्गू सम्मा अतिराणी कासवी रती सोमा ।
सुमणा वारुणि सुलसा धारणि धरणी य धरणिधरा ॥११६॥
पउमा सिवा सुयी अंजू भावितप्पा य रक्खिया ।
बंधू पुप्फवती चेव अज्जा वणिला य आहिया ॥११७॥
जक्खिणी पुप्फचूला य चंदणज्जा य आहिता ।
उदितोदितकुलवंसा विसुद्धवंसा गुणेहिं उववेया ।
तित्थप्पवत्तयाणं पढमा सिस्सी जिणवराणं ॥११८॥

[टी०] एते च पूर्वोदिता अर्थाः समवसरणस्थितेन भगवता देशिता इति समवसरणवक्तव्यतामाह– **ते ण**मित्यादि, इह **ण**ङ्कारौ वाक्यालङ्कारार्थौ, अतस्**ते** इति

प्राकृतत्वात् **तस्मिन् काले** सामान्येन दुःषमसुषमालक्षणे, **तस्मिन् समये** विशिष्टे यत्र भगवानेव विहरति स्मेति । **कप्पस्स समोसरणं नेयव्वं** ति इहावसरे [1] **कल्पभाष्य**क्रमेण समवसरणवक्तव्यताऽध्येया, सा चाऽऽ**वश्यको**क्तया न व्यतिरिच्यते, वाचनान्तरे तु [2] **पर्युषणाकल्पो**क्तक्रमेणेत्यभिहितम्, कियद्दूरमित्याह– **जाव गणे**त्यादि, तत्र गणधरः पञ्चमः **सुधर्माख्यः सापत्यः**, शेषा **निरपत्याः** अविद्यमानशिष्यसन्ततय इत्यर्थः, **वोच्छिन्न** त्ति सिद्धा इति, तथाहि–

परिनिव्वुया गणहरा जीवंते नायए नव जणा उ ।
इंदभूई सुहम्मे य रायगिहे निव्वुए वीरे ।। [आव० नि० ६५८] त्ति ।

अयं च समवसरणनायकः कुलकरवंशोत्पन्नो महापुरुषश्चेति कुलकराणां वरपुरुषाणां च वक्तव्यतामाह– **जंबुद्दीवे**त्यादि सुगमम्, नवरं

[3] **पढमेत्थ विमलवाहण चक्खुम जसमं चउत्थमभिचंदे ।**
तत्तो पसेणईए मरुदेवे चेव नाभी य ।। [आव० नि० १५५] त्ति ।

तथा– [3] **चंदजस चंदकंता सुरूव पडिरूव चक्खुकंता य ।**
सिरिकंता मरुदेवी कुलगरपत्तीण णामाइं ।। [आव० नि० १५९] ति ।

---

१. बृहत्कल्पभाष्ये '**समोसरणे केवइया**... ।।११७६।।' इति गाथात आरभ्य '**संखाईए वि भवे**.... ।।१२१७।।' इति गाथापर्यन्तं समवसरणवक्तव्यता वर्तते, किन्तु **जाव गणहरा सावच्चा निरवच्चा वोच्छिन्ना** इति अत्र **जाव**शब्देन सूचितः कोऽपि पाठो **बृहत्कल्पभाष्ये** नास्ति । **आवश्यकनिर्युक्तौ** तु **समोसरणे केवइया**... ।।५४३।। इत्यत आरभ्य **जं कारण णिक्खमणं वोच्छं एएसि आणुपुव्वीए । तित्थं च सुहम्माओ णिरवच्चा गणहरा सेसा** ।।५९५।। इति पर्यन्ता बृहत्कल्पभाष्येण अक्षरशः समानप्राया बह्व्यो गाथाः सन्ति, तत्र च **निरवच्चा गणहरा सेसा** इति पाठ उपलभ्यते।। २. 'ते णं काले णं ते णं समए णं समणस्स भगवओ महावीरस्य नव गणा इक्कारस गणहरा हुत्था । .... सव्वे वि णं एते समणस्स भगवओ महावीरस्स एक्कारस वि गणहरा दुवालसंगिणो चउदसपुव्विणो समत्तगणिपिडगधारगा रायगिहे नगरे मासिएणं भत्तेणं अपाणएणं कालगया जाव सव्वदुक्खप्पहीणा। थेरे इंदभूई थेरे अज्जसुहम्मे य सिद्धिगए महावीरे पच्छा दोण्णि वि थेरा परिनिव्वुया, जे इमे अज्जत्ताए समणा निग्गंथा विहरंति एए णं सव्वे अज्जसुहम्मस्स अणगारस्स आवच्चिज्जा, अवसेसा गणहरा निरवच्चा वुच्छिन्ना ।'' इति **पर्युषणाकल्पसूत्रे** स्थविरावल्याम् ।। ३. **स्थानाङ्गसू० ५५६** । ''प्रथमोऽत्र विमलवाहनश्चक्षुष्मान् यशस्वी चतुर्थोऽभिचन्द्रः ततश्च प्रसेनजित् मरुदेवश्चैव नाभिश्चेति भावार्थः सुगम एवेति गाथार्थः ।।१५५।। चन्द्रयशाः चन्द्रकान्ता सुरूपा प्रतिरूपा चक्षुःकान्ता च श्रीकान्ता मरुदेवी कुलकरपत्नीनां नामानीति गाथार्थः ।।१५९।।'' इति **आवश्यकसूत्रे हारिभद्र्यां** वृत्तौ ।।

तथा– **नाभी जियसत्तू या जियारी संवरे इ य ।**
मेहे धरे पइट्ठे य, महसेणे य खत्तिए ॥
सुग्गीवे दढरहे विण्हू वसुपुज्जे य खत्तिए ।
[1]**कयवम्मा सीहसेणे य भाणू विस्ससेणे इ य ॥**
सूरे सुदंसणे कुंभे सुमित्तविजए समुद्दविजये य ।
राया य आससेणे सिद्धत्थे च्चिय खत्तिए ॥ [आव० नि० ३८७-३८९] त्ति।

तथा– **मरुदेवि विजय सेणा सिद्धत्था मंगला सुसीमा य ।**
पुहई लक्खण रामा नंदा विण्हू जया सामा ॥
सुजसा सुव्वय अइरा, सिरि देवी य पभावती ।
पउमावती य वप्पा सिव वम्मा तिसिला इ य ॥ [आव० नि० ३८५-३८६] त्ति।

तथा **सव्वोउगसुभाए छायाए** त्ति **सर्वर्त्तुकया** सर्वेषु शरदादिषु ऋतुषु सुखदया **छायया** प्रभया आतपाभावलक्षणया वा युक्ता इति शेषः ॥९१॥ तथा **सा हट्ठरोमकूवेहिं** ति **सा** शिबिका यस्यां जिनोऽध्यारूढः **हृष्टरोमकूपैः** उद्धुषितरोमभिरित्यर्थः ॥९२॥ तथा **चलचवलकुंडलधर** त्ति चलाश्च ते चपलकुण्डलधराश्चेति वाक्यम्, तथा **स्वच्छन्देन** स्वरुच्या विकुर्वितानि यान्य**ाभरणानि** मुकुटादीनि तानि धारयन्ति ये ते तथा **असुरेन्द्रादय** इति योगः ॥९३॥ **गरुल** त्ति गरुडध्वजाः **सुपर्णकुमारा** इत्यर्थः ॥९४॥

तथा– [2]**सव्वे वि एगदूसेण निग्गया जिणवरा चउवीसं ।**
न य णाम अन्नलिंगे न य गिहिलिंगे कुलिंगे य ॥ [आव० नि० २२७] त्ति ।

[एग]दूसेण त्ति एकेन वस्त्रेणेन्द्रसमर्प्पितेन नोपधिभूतेन युक्ता निष्क्रान्ता इत्यर्थः, **न** चाऽ**न्यलिङ्गे** स्थविरकल्पिकादिलिङ्गे, तीर्थकरलिङ्ग एवेत्यर्थः, **कुलिङ्गे** शाक्यादिलिङ्गे । तथा–

[3]**एक्को भगवं वीरो पासो मल्ली य तिहिं तिहिं सएहिं ।**

१. **कयधम्मा** जे१,२ ॥ २. **सर्वेऽपि एकदूष्येण** एकवस्त्रेण **निर्गताः जिनवराश्चतुर्विंशतिः**, **अपिशब्दस्य** व्यवहितः संबन्धः, **सर्वे** यावन्तः खल्वतीता जिनवरा अपि एकदूष्येण निर्गताः । सर्वे तीर्थकृतः तीर्थकरलिङ्ग एव निष्क्रान्ताः, **न च नाम अन्यलिङ्गे न गृहस्थलिङ्गे कुलिङ्गे** वा, अन्यलिङ्गाद्यर्थ उक्त एवेति गाथार्थः ॥२२७॥'' **आव० हारि०** ॥ ३. **एको भगवान् वीरः** चरमतीर्थकरः प्रव्रजितः, तथा **पार्श्वो मल्लिश्च त्रिभिस्त्रिभिः शतैः** सह, तथा **भगवांश्च वासुपूज्यः षड्भिः पुरुषशतैः** सह **निष्क्रान्तः** प्रव्रजितः । तथा **उग्राणां भोगानां राजन्यानां**

भयवं पि वासुपुज्जो छहिं पुरिससएहिं निक्खंतो ॥
उग्गाणं भोगाणं राइण्णाणं च खत्तियाणं च ।
चउहिं सहस्सेहिं उसभो सेसा उ सहस्सपरिवारा ॥ [आव० नि० २२४-२२५]

तथा– [१] **सुमइऽत्थ निच्चभत्तेण निग्गओ वासुपुज्जो जिणो चउत्थेणं ।**
पासो मल्ली विय अट्ठमेण सेसा उ छट्ठेणं ॥ [आव० नि० २२८] ति,

सुमतिरत्र नित्यभक्तेन, अनुपोषितो निष्क्रान्त इत्यर्थः ।

तथा– [२] **संवच्छरेण भिक्खा लद्धा उसभेण लोगनाहेण ।**
सेसेहि बीयदिवसे लद्धाओ पढमभिक्खाओ ॥ [आव० नि० ३१९] त्ति,

तथा– **उसभस्स पढमभिक्खा खोयरसो आसि लोगनाहस्स ।**
सेसाणं परमण्णं अमयरसरसोवमं आसि ॥ [आव० नि० ३२०]

सरीरमेत्तीओ त्ति पुरुषमात्राः ॥१०६॥

चेइयरुक्ख त्ति बद्धपीठा वृक्षा येषामधः केवलान्युत्पन्नानीति ।

बत्तीसं धणुयाइं गाहा, **निच्चोउगो** त्ति **नित्यं** सर्वदा **ऋतुरेव** पुष्पादिकालो यस्य स नित्यर्त्तुकः **असोगो** त्ति **अशोका**भिधानो यः समवसरणभूमिमध्ये भवति, **ओच्छन्नो सालरुक्खेणं** ति अवच्छन्नः शालवृक्षेणेत्यत एव वचना**दशोकस्यो**परि **शालवृक्षो**ऽपि कथञ्चिदस्तीत्यवसीयत इति ॥११०॥

तिण्णेव गाउयाइं गाहा **ऋषभस्वामि**नो द्वादशगुण इत्यर्थः ॥१११॥

सवेइय त्ति वेदिकायुक्ताः, एते चाशोकाः समवसरणसम्बन्धिनः सम्भाव्यन्त इति ॥११२॥

च **क्षत्रियाणां** च **चतुर्भिः सहस्रैः** सह **ऋषभः**, किम् ? निष्क्रान्त इति वर्त्तते, **शेषास्तु** अजितादयः **सहस्रपरिवारा** निष्क्रान्ता इति, उग्रादीनां च स्वरूपमधः प्रतिपादितमेवेति गाथार्थः ॥२२४-२५॥'' **आव० हारि०** ॥

१. ''**सुमतिः** तीर्थकरः, **थे**ति निपातः, **नित्यभक्तेन** अनवरतभक्तेन **निर्गतो** निष्क्रान्तः, तथा **वासुपूज्यो जिनश्चतुर्थेन**, निर्गत इति वर्त्तते, तथा **पार्श्वो मल्ल्यपि चाष्टमेन, शेषास्तु** ऋषभादयः **षष्ठेने**ति गाथार्थः ॥२२८॥'' **आव० हारि०** ॥ २. **संवत्सरेण भिक्षा लब्धाः ऋषभेण लोकनाथेन** प्रथमतीर्थकृता, **शेषैः** अजितादिभिः भरतक्षेत्रतीर्थकृद्भिः **द्वितीयदिवसे लब्धाः प्रथमभिक्षा** इति गाथार्थः ॥३१९॥ **ऋषभस्य** तु **इक्षुरसः** प्रथमपारणके **आसील्लोकनाथस्य, शेषाणाम्** अजितादीनां परमं च तदन्नं च **परमान्नं** पायसलक्षणम्, किंविशिष्टमित्याह- अमृतरसवद् रसोपमा यस्य तद् **अमृतरसरसोपममासीदि**ति गाथार्थः ॥३२०॥'' इति **आवश्यकसूत्रस्य हारिभद्र्यां** वृत्तौ ॥

[सू० १५८] [१] जंबुद्दीवे णं दीवे भारहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए बारस चक्कवट्टीपितरो होत्था, तंजहा–

उसभे सुमित्तविजए समुद्दविजए य विस्ससेणे य ।
सूरिते सुदंसणे पउमुत्तर कत्तवीरिए चेव ॥११९॥
महाहरी य विजए य पउमे राया तहेव य ।
बंभे बारसमे वुत्ते पिउनामा चक्कवट्टीणं ॥१२०॥

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे इमाए ओसप्पिणीए बारस चक्कवट्टिमायरो होत्था, तंजहा–

सुमंगला जसवती भद्दा सहदेवा अतिरा सिरि देवी ।
जाला तारा मेरा वप्पा चुलणी य अपच्छिमा ॥१२१॥

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे इमाए ओसप्पिणीए बारस चक्कवट्टी होत्था तंजहा–

भरहे सगरे मघवं० [सणंकुमारो य रायसद्दूलो ।
संती कुंथू य अरो हवइ सुभूमो य कोरव्वो ॥१२२॥
नवमो य महापउमो हरिसेणो चेव रायसद्दूलो ।
जयनामो य नरवई बारसमो बंभदत्तो य ॥१२३॥] गाधातो ।

एतेसि णं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारस इत्थिरयणा होत्था, तंजहा–

पढमा होइ सुभद्दा, भद्दा सुणंदा जया य विजया य ।
कण्हसिरी सूरसिरी, पउमसिरी वसुंधरा देवी ।
लच्छिमती कुरुमती, इत्थीरतणाण नामाइं ॥१२४॥

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे इमाए ओसप्पिणीए नव बलदेव-वासुदेवपितरो होत्था, तंजहा–

पयावती य बंभे [रुद्दे सोमे सिवे ति त ।
महसीह अग्गिसीहे, दसरहे नवमे त वसुदेवे ॥१२५॥] गाहा ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए णव वासुदेवमातरो

होत्था, तंजहा–

मियावती उमा चेव, पुढवी सीया य अम्मया ।
लच्छिमती सेसमती, केकई देवई इ य ॥१२६॥

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे इमाए ओसप्पिणीए णव बलदेवमायरो होत्था, तंजहा–

भद्दा सुभद्दा य सुप्पभा सुदंसणा विजया य वेजयंती ।
जयंती अपरातिया णवमिया य रोहिणी बलदेवाणं मातरो ॥१२७॥

[टी०] तथा–भरहो सगरो मघवं सणंकुमारो य रायसद्दूलो ।
संती कुंथू य अरो हवइ सुभूमो य कोरव्वो ॥
नवमो य महापउमो हरिसेणो चेव रायसद्दूलो ।
जयनामो य नरवई बारसमो बंभदत्तो य ॥ [आव० नि० ३७४-३७५]

तथा– पयावती य बंभो सोमो रुद्दो सिवो महसिवो य ।
अग्गिसिहो य[१] दसरहो नवमो भणिओ य वसुदेवो । [आव० नि० ४११] त्ति।

[सू० १५८] [२] जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे इमीसे ओसप्पिणीए नव दसारमंडला होत्था, तंजहा– उत्तमपुरिसा मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा ओयंसी तेयंसी वच्चंसी जसंसी छायंसी कंता सोमा सुभगा पियदंसणा सुरूवा सुहसील-सुहाभिगम-सव्वजणणयणकंता ओहबला अतिबला महाबला अणिहता अपरातिया सत्तुमद्दणा रिपुसहस्समाणमधणा साणुक्कोसा अमच्छरा अचवला अचंडा मितमंजुपलावहसित-गंभीर-मधुरपडिपुण्णसच्चवयणा अब्भुवगयवच्छला सरण्णा लक्खणवंजणगुणोववेता माणुम्माणपमाण-पडिपुण्णसुजातसव्वंगसुंदरंगा ससिसोमागारकंतपियदंसणा अमसणा पयंड-दंडप्पयारगंभीरदरिसणिज्जा तालद्धयोव्विद्धगरुलकेऊ महाधणुविकड्डया महासत्तसागरा दुद्धरा धणुद्धरा धीरपुरिसा जुद्धकित्तिपुरिसा विपुलकुलसमुब्भवा महारयणविहाडगा अद्धभरहसामी सोमा रायकुलवंसतिलया अजिया अजितरहा

१. इतः परं त्रीणि पत्राणि खं० मध्ये न सन्ति ॥

हल-मुसल-कणगपाणी संख-चक्क-गय-सत्ति-णंदगधरा पवरुज्जलसुकंतविमलगोत्थुभतिरीडधारी कुंडलउज्जोवियाणणा पुंडरीयणयणा एकावलिकंठलइतवच्छा सिरिवच्छसुलंछणा वरजसा सव्वोउयसुरभिकुसुमसुरचितपलंबसोभंतकंतविकसंतचित्तवरमालरइयवच्छा अट्ठसयविभत्तलक्खणपसत्थसुंदरविरतियंगमंगा मत्तगयवरिंदललियविक्कमविलासियगती सारतनवथणियमधुरगंभीरकोंचनिग्घोसदुंदुभिसरा कडिसुत्तगनीलपीयकोसेज्जवाससा पवरदित्ततेया नरसीहा नरवती नरिंदा नरवसहा मरुयवसभकप्पा अब्भहियं रायतेयलच्छीए दिप्पमाणा नीलग-पीतगवसणा दुवे दुवे राम-केसवा भायरो होत्था, तंजहा–

तिविट्ठू[१] य जाव कण्हे ॥१२८॥
अयले वि० जाव रामे यावि अपच्छिमे ॥१२९॥

एतेसि णं णवण्हं बलदेव-वासुदेवाणं पुव्वभविया नव नामधेज्जा होत्था, तंजहा–

विस्सभूती पव्वयए धणदत्त समुद्ददत्त सेवाले ।
पियमित्त ललियमित्ते पुणव्वसू गंगदत्ते य ॥१३०॥
एताइं नामाइं पुव्वभवे आसि वासुदेवाणं ।
एत्तो बलदेवाणं जहक्कमं कित्तइस्सामि ॥१३१॥
विस्सनंदी सुबंधू य सागरदत्ते असोग ललिए य ।
वाराह धम्मसेणे अपराइय रायललिए य ॥१३२॥

एतेसिं णं णवण्हं बलदेव-वासुदेवाणं पुव्वभविया नव धम्मायरिया होत्था, तंजहा–

---

१. "तिविट्ठू अ दुविट्ठू सयंभु पुरिसुत्तमे पुरिससीहे । तह पुरिसपुंडरीए दत्ते नारायणे कण्हे ॥४०॥ अयले विजए भद्दे सुप्पभे अ सुदंसणे । आणंदे णंदणे पउमे रामे आवि अपच्छिमे ॥४१॥" इति संपूर्णं गाथाद्वयम् **आवश्यकमूलभाष्ये** वर्तते ॥

संभूत सुभद्द सुदंसणे य सेयंस कण्ह गंगदत्ते य ।
सागर समुद्दनामे दुमसेणे य णवमए ॥१३३॥
एते धम्मायरिया कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं ।
पुव्वभवे आसिण्हं जत्थ निदाणाइं कासी य ॥१३४॥

एतेसिं णं णवण्हं वासुदेवाणं पुव्वभवे णव णिदाणभूमीतो होत्था, तंजहा–
महुरा जाव हत्थिणपुरं च ॥१३५॥

एतेसि णं णवण्हं वासुदेवाणं नव णिदाणकारणा होत्था, तंजहा–
गावी जुए जाव मातुका ति य ॥१३६॥

एतेसि णं णवण्हं वासुदेवाणं णव पडिसत्तू होत्था, तंजहा–
अस्सग्गीवे जाव जरासंधे ॥१३७॥

एते खलु पडिसत्तू जाव सचक्केहिं ॥१३८॥

एक्को य सत्तमाए पंच य छट्ठीए पंचमा एक्को ।
एक्को य चउत्थीए कण्हो पुण तच्चपुढवीए ॥१३९॥
अणिदाणकडा रामा० [सव्वे वि य केसवा नियाणकडा ।
उड्ढंगामी रामा केसव सव्वे अहोगामी ॥१४०॥] गाहा ।
अट्ठंतकडा रामा, एगो पुण बंभलोयकप्पम्मि ।
एक्का से गब्भवसही, सिज्झिस्सति आगमिस्सेणं ॥१४१॥

जंबुद्दीवे णं दीवे एरवते वासे इमीसे ओसप्पिणीए चउवीसं तित्थगरा होत्था, तंजहा–

चंदाणणं सुचंदं च अग्गिसेणं च नंदिसेणं च ।
इसिदिण्णं वयहारिं वंदिमो सामचंदं च ॥१४२॥
वंदामि जुत्तिसेणं अजितसेणं तहेव सिवसेणं ।
बुद्धं च देवसम्मं सययं निक्खित्तसत्थं च ॥१४३॥
अस्संजलं जिणवसभं वंदे य अणंतई अमियणाणिं ।
उवसंतं च धुयरयं वंदे खलु गुत्तिसेणं च ॥१४४॥

अतिपासं च सुपासं देवीसरवंदियं च मरुदेवं ।
निव्वाणगयं च धरं खीणदुहं सामकोट्ठं च ॥१४५॥
जियरागमग्गिसेणं वंदे खीणरयमग्गिउत्तं च ।
वोकसियपेज्जदोसं च वारिसेणं गतं सिद्धिं ॥१४६॥

जंबुद्दीवे दीवे भरहे वासे आगमेसाते उस्सप्पिणीए सत्त कुलगरा भविस्संति, तंजहा–

मित्तवाहणे सुभूमे य सुप्पभे य सयंपभे ।
दत्ते सुहुमे सुबंधू य आगमेसाणं होक्खति ॥१४७॥

जंबुद्दीवे णं दीवे [भरहे वासे] आगमेसाते उस्सप्पिणीते दस कुलकरा भविस्संति, तंजहा– विमलवाहणे सीमंकरे सीमंधरे खेमंकरे खेमंधरे दढधणू दसधणू सयधणू पडिसुई सम्मुई त्ति ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे आगमेसाए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थकरा भविस्संति, तंजहा–

महापउमे १ सुरादेवे २ सुपासे य ३ सयंपभे ४ ।
सव्वाणुभूती ५ अरहा देवउत्ते य होक्खती ६ ॥१४८॥
उदए ७ पेढालपुत्ते य ८ पोट्टिले ९ सतए ति य १० ।
मुणिसुव्वते य अरहा ११ सव्वभावविदू जिणे १२ ॥१४९॥
अममे १३ णिक्कसाए य १४, निप्पुलाए य १५ निम्ममे १६ ।
चित्तउत्ते १७ समाही य १८ आगमिस्सेण होक्खई ॥१५०॥
संवरे १९ अणियट्टी य २०, विवाए २१ विमले ति य २२ ।
देवोववाए अरहा २३ अणंतविजए ति य २४ ॥१५१॥
एते वुत्ता चउव्वीसं भरहे वासम्मि केवली ।
आगमिस्साण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥१५२॥

एतेसि णं चउवीसाए तित्थकराणं पुव्वभविया चउवीसं नामधेज्जा भविस्संति, तंजहा–

सेणिय सुपास उदए, पोट्टिल अणगारे तह दढाऊ य ।
कत्तिय संखे य तहा, णंद सुणंदे सतए य बोधव्वा ॥१५३॥
देवई चेव सच्चति तह वासुदेवे बलदेवे ।
रोहिणि सुलसा चेव य तत्तो खलु रेवती चेव ॥१५४॥
तत्तो हवति मिगाली बोधव्वे खलु तहा भयाली य ।
दीवायणे य कण्हे तत्तो खलु नारए चेव ॥१५५॥
अंमडे दारुमडे या सातीबुद्धे य होति बोधव्वे ।
उस्सप्पिणि आगमेसाए तित्थकराणं तु पुव्वभवा ॥१५६॥

एतेसि णं चउवीसं तित्थकराणं चउवीसं पितरो भविस्संति, चउवीसं मातरो भविस्संति, चउवीसं पढमसीसा भविस्संति, चउवीसं पढमसिस्सिणीतो भविस्संति, चउवीसं पढमभिक्खादा भविस्संति, चउवीसं चेतियरुक्खा भविस्संति ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे आगमेसाए उसप्पिणीए बारस चक्कवट्टी भविस्संति, तंजहा–

भरहे य दीहदंते गूढदंते य सुद्धदंते य ।
सिरिउत्ते सिरिभूती सिरिसोमे य सत्तमे ॥१५७॥
पउमे य महापउमे विमलवाहणे विपुलवाहणे चेव ।
रिट्ठे बारसमे वुत्ते आगमेसा भरहाहिवा ॥१५८॥

एतेसि णं बारसण्हं चक्कवट्टीणं बारस पितरो भविस्संति, बारस मातरो भविस्संति, बारस इत्थीरयणा भविस्संति ।

जंबुद्दीवे णं दीवे भरहे वासे आगमेसाए उस्सप्पिणीए णव बलदेव-वासुदेवपितरो भविस्संति, णव वासुदेवमातरो भविस्संति, णव बलदेवमातरो भविस्संति णव दसारमंडला भविस्संति, तंजहा– उत्तिमपुरिसा मज्झिमपुरिसा पहाणपुरिसा ओयंसी एवं सो चेव वण्णतो भाणियव्वो जाव नीलगपीतगवसणा दुवे दुवे राम-केसवा भातरो भविस्संति, तंजहा–

णंदे य १ णंदमित्ते २ दीहबाहू ३ तहा महाबाहू ४ ।
अइबले ५ महब्बले ६ बलभद्दे य सत्तमे ७ ॥१५९॥
दुविट्ठू य ८ तिविट्ठू य ९ आगमेसाणं वण्हिणो ।
जयंते विजए भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे ॥
आणंदे णंदणे पउमे संकरिसणे य अपच्छिमे ॥१६०॥

एतेसि णं नवण्हं बलदेव-वासुदेवाणं पुव्वभविया णव नामधेज्जा भविस्संति, णव धम्मायरिया भविस्संति, णव नियाणभूमीओ भविस्संति, णव नियाणकारणा भविस्संति, णव पडिसत्तू भविस्संति, तंजहा–

तिलए य लोहजंघे वइरजंघे य केसरी य पहराए ।
अपराजिये य भीमे महाभीमसेणे य सुग्गीवे य अपच्छिमे ॥१६१॥
एते खलु पडिसत्तू कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं ।
सव्वे य चक्कजोही हम्मिहिंति सचक्केहिं ॥१६२॥

जंबुद्दीवे णं दीवे एरवते वासे आगमेसाए उस्सप्पिणीए चउवीसं तित्थकरा भविस्संति, तंजहा–

[1]सुमंगले अत्थसिद्धे य, णेव्वाणे य महाजसे ।
धम्मज्झए य अरहा, आगमेसाण होक्खति ॥१६३॥
[2]सिरिचंदे पुप्फकेऊ य, महाचंदे य केवली ।
सुयसागरे य अरहा, आगमेसाण होक्खती ॥१६४॥

---

१. **तेरापंथिभिः** जैन विश्वभारती-लाडनूंतः ईसवीये १९८४ वर्षे प्रकाशिते, स्थानकवासिभिश्च ईसवीये २००० वर्षे **ब्यावरतः** प्रकाशिते समवायाङ्गसूत्रेऽत्र ईदृशः पाठः- ''सुमंगले य सिद्धत्थे णिव्वाणे य महाजसे । धम्मज्झए य अरहा आगमिस्साण होक्खई ॥ सिरिचंदे पुप्फकेऊ महाचंदे य केवली । सुयसागरे य अरहा आगमिस्साण होक्खई ॥ सिद्धत्थे पुण्णघोसे य महाघोसे य केवली । सच्चसेणे य अरहा आगमिस्साण होक्खई ॥ सूरसेणे य अरहा महासेणे य केवली । सव्वाणंदे य अरहा देवउत्ते य होक्खई ॥ सुपासे सुव्वए अरहा अरहे य सुकोसले। अरहा अणंतविजए आगमिस्साण होक्खई ॥ विमले उत्तरे अरहा अरहा य महाबले । देवाणंदे य अरहा आगमिस्साण होक्खई ॥ एए वुत्ता चउव्वीसं एरवयम्मि केवली । आगमिस्साण होक्खंति धम्मतित्थस्स देसगा ॥'' २. इत आरभ्य '**देवउत्ते य होक्खती**' इतिपर्यन्तः पाठः खं० मध्ये द्विर्भूतः ॥

सिद्धत्थे पुण्णघोसे य, महाघोसे य केवली ।
सच्चसेणे य अरहा, [1]अणंतविजए इ य ॥१६५॥
सूरसेणे महासेणे, देवसेणे य केवली ।
सव्वाणंदे य अरहा, देवउत्ते य होक्खती ॥१६६॥
सुपासे सुव्वते अरहा, महासुक्के य सुकोसले ।
[2]देवाणंदे अरहा अणंतविजए इ य ॥१६७॥
विमले उत्तरे अरहा अरहा य महाबलो ।
देवोववाए अरहा आगमेस्साण होक्खती ॥१६८॥
एए वुत्ता चउव्वीसं, एरवतवासम्मि केवली ।
आगमेसाण होक्खंति, धम्मतित्थस्स देसगा ॥१६९॥

बारस चक्कवट्टिपितरो मातरो चक्कवट्टिइत्थीरयणा भविस्संति, नव बलदेव-वासुदेवपितरो मातरो णव दसारमंडला भविस्संति, तंजहा– उत्तिमपुरिसा जाव रामकेसवा भायरो भविस्संति, नामा, पडिसत्तू, पुव्वभवणामधेज्जाणि, धम्मायरिया, णिदाणभूमीओ, णिदाणकारणा, आयाए, एरवते आगमेसा भाणियव्वा, एवं दोसु वि आगमेसा भाणियव्वा ।

[टी०] **जंबूदीवे**त्यादि । **दसारमंडल** त्ति । **दशाराणां** वासुदेवानां **मण्डलानि** बलदेव-वासुदेवद्वय-द्वयलक्षणाः समुदाया **दशारमण्डलानि**, अत एव **दो दो राम-केसव** त्ति [3]वक्ष्यति, दशारमण्डलाव्यतिरिक्तत्वाच्च बलदेव-वासुदेवानां दशारमण्डलानीति

१. खं० मध्ये यादृशः पाठ उपलभ्यते सोऽत्र उपन्यस्तः । **अणंतविजए इ य** इत्ययं पाठः खं० मध्ये १६७ तमे श्लोके पुनरपि दृश्यते । किन्तु एतत्स्थाने **आगमेस्साण होक्खती** इति पाठोऽत्र यदि भवेत् तदा सर्वं समञ्जसं भवेत्, २४ संख्यापूर्तिरपि च कथञ्चिद् भवेत् । अत्र च समवायाङ्गसूत्रस्य हस्तलिखितादर्शेषु अन्येषु च **प्रवचनसारोद्धार-तित्थोगाली**प्रकीर्णकादिग्रन्थेषु भूयान् पाठविसंवादो दृश्यते । विस्तरेण एतज्जिज्ञासुभिः **श्रीमहावीर-जैनविद्यालयेन** विक्रमसं० २०४१ वर्षे [इसवीये १९८५ वर्षे] प्रकाशितेऽस्मत्संपादिते **समवायाङ्गसूत्रे** तत्रत्यपरिशिष्टे च द्रष्टव्यम् ॥ २. जे१,२ मध्येऽत्र ईदृशः पाठः- **देवाणंदे अरहा णं विजये विमल उत्तरे ॥१६७॥ अरहा अरहा य महायसे । देवोववाए अरहा आगमेस्साण होक्खती ॥१६८॥** ३. दृश्यतां पृ०२९९ पं०२५ ॥

पूर्वमुद्दिश्यापि दशारमण्डलव्यक्तिभूतानां तेषां विशेषणार्थमाह– **तद्यथे**त्यादि, **तद्यथे**ति बलदेव-वासुदेवस्वरूपोपन्यासारम्भार्थः, केचित्तु **दशारमंडणा** इति पठन्ति, तत्र **दशाराणां** वासुदेवकुलीनप्रजानां **मण्डनाः** शोभाकारिणो **दशारमण्डनाः**, **उत्तमपुरुषा** इति तीर्थकरादीनां चतुष्पञ्चाशत उत्तमपुरुषाणां मध्यवर्त्तित्वात्, **मध्यमपुरुषाः** तीर्थकर-चक्रिणां प्रतिवासुदेवानां[१] च बलाद्यपेक्षया मध्यवर्त्तित्वात्, **प्रधानपुरुषा**-स्तात्कालिकपुरुषाणां शौर्यादिभिः प्रधानत्वात्, **ओजस्विनो** मानसबलोपेतत्वात्, **तेजस्विनो** दीप्तशरीरत्वात्, **वर्चस्विनः** शारीरबलोपेतत्वात्, **यशस्विनः** पराक्रमं प्राप्य प्रसिद्धिप्राप्तत्वात्, **छायंसि** त्ति प्राकृतत्वात् छायावन्तः शोभमानशरीराः, अत एव **कान्ताः** कान्तियोगात्, **सौम्या** अरौद्राकारत्वात्, **सुभगा** जनवल्लभत्वात्, **प्रियदर्शनाः** चक्षुष्यरूपत्वात्, **सुरूपाः** समचतुरस्रसंस्थानत्वात्, **शुभं सुखं** वा सुखकरत्वा**च्छीलं** स्वभावो येषां ते **शुभशीलाः सुखशीला** वा, सुखेना**भिगम्यन्ते** सेव्यन्ते ये शुभशीलत्वादेव ते **सुखाभिगम्याः**, **सर्वजननयनानां कान्ता** अभिलाष्या ये ते तथा, ततः पदत्रयस्य कर्म्मधारयः, **ओघबलाः** प्रवाहबलाः अव्यवच्छिन्नबलत्वात्, **अतिबलाः** शेषपुरुषबलानामतिक्रमात्, **महाबलाः** प्रशस्तबलाः, **अनिहता** निरुप-क्रमायुष्कत्वादुरो[२]युद्धे वा भूम्यामपातित्वात्, **अपराजिता**स्तैरेव शत्रूणां पराजितत्वात्, एतदेवाह– **शत्रुमर्दना**स्तच्छरीर-तत्सैन्यकदर्थनाद्, **रिपुसहस्रमानमथना**स्तद्वाञ्छित-कार्यविघटनात्, **सानुक्रोशाः** प्रणतेष्वद्रोहकत्वात्, **अमत्सराः** परगुणलवस्यापि ग्राहकत्वात्, **अचपला** मनोवाक्कायस्थैर्यात्, **अचण्डा** निष्कारणप्रबलकोपरहितत्वात्, **मिते** परिमिते **मञ्जुनी** कोमले **प्रलापश्च** आलापो **हसितं** च येषां ते **मितमञ्जुप्रलाप-हसिताः**, **गम्भीरम्** अदर्शितरोष-तोष-शोकादिविकारं मेघनादवद्वा, **मधुरं** श्रवणसुखकरं **प्रतिपूर्णम्** अर्थप्रतीतिजनकं **सत्यम्** अवितथं **वचनं** वाक्यं येषां ते तथा, ततः पदद्वयस्य कर्म्मधारयः, **अभ्युपगतवत्सलाः** तत्समर्थनशीलत्वात्, **शरण्या**स्त्राणकरणे साधुत्वात्, **लक्षणानि** मानादीनि वज्र-स्वस्तिक-चक्रादीनि वा **व्यञ्जनानि** तिलक-

१. °वादीनां हे२ ॥ २. °युद्धे बाहुभ्यामपाति अपरा° जे२ ॥

मषादीनि तेषां **गुणा** महर्द्धिप्राप्त्यादयस्तैरुपअपइताः [1]शकन्ध्वादिदर्शना**दुपपेता** युक्ता **लक्षणव्यञ्जनगुणोपपेताः**, **मान**मुदकद्रोणपरिमाणशरीरता, कथम् ?, उदकपूर्णायां द्रोण्यां निविष्टे पुरुषे यज्जलं ततो निर्गच्छति तद्यदि द्रोणप्रमाणं स्यात् तदा स पुरुषो मानप्राप्त इत्यभिधीयते, **उन्मानम्** अर्द्धभारपरिमाणता, कथम् ?, तुलारोपितस्य पुरुषस्य यद्यर्द्धभारस्तौल्यं भवति तदाऽसावुन्मानप्राप्त उच्यते, **प्रमाण**मष्टोत्तरशत-मङ्गुलानामुच्छ्रयः, मानोन्मानप्रमाणैः **प्रतिपूर्णम्** अन्यूनं **सुजात**मा गर्भाधानात् पालनविधिना **सर्वाङ्गसुन्दरं** निखिलावयवप्रधानम् **अङ्गं** शरीरं येषां ते तथा, **शशिवत् सौम्याकार**मरौद्रमबीभत्सं वा **कान्तं** [2]दीप्रं **प्रियं** जनप्रेमोत्पादकं **दर्शनं** रूपं येषां ते तथा, **अमसण** त्ति **अमसृणाः** प्रयोजनेष्वनलसाः **अमर्षणा** वा अपराधिष्वकृतक्षमाः, **प्रकाण्ड** उत्कटो **दण्डप्रकार** आज्ञाविशेषो नीतिभेदविशेषो वा येषां ते तथा, अथवा **प्रचण्डो** दुःसाध्यसाधकत्वाद् **दण्डप्रचारः** सैन्यविचरणं येषां ते तथा, **गम्भीरा** अलक्ष्यमाणान्तर्वृत्तित्वेन दृश्यन्ते ये ते **गम्भीरदर्शनीयाः**, ततः पदद्वयस्य कर्म्मधारयः, प्रचण्डदण्डप्रचारेण वा ये गम्भीरा दृश्यन्ते, तथा तालस्तलो [3]वा वृक्षविशेषो ध्वजो येषां ते **तालध्वजाः** बलदेवाः, **उद्विद्धः** उच्छ्रितो **गरुड**लक्षितः **केतुः** ध्वजो येषां ते **उद्विद्धगरुडकेतवो** वासुदेवाः, तालध्वजाश्च उद्विद्धगरुडकेतवश्च **तालध्वजोद्विद्धगरुडकेतवः**, **महाधनुर्विकर्षकाः** महाप्राणत्वात्, महास[4]त्त्वलक्षण-जलस्य सागरा इव **सागरा** आश्रयत्वा**न्महासत्त्वसागराः**, **दुर्द्धरा** रणाङ्गणे तेषां प्रहरतां केनापि धन्विना धारयितुमशक्यत्वात्, **धनुर्धराः** कोदण्डप्रहरणाः, धीरेष्वेव ते **पुरुषाः** पुरुषकारवन्तो न कातरेष्विति **धीरपुरुषाः**, युद्धजनिता या कीर्त्तिस्तत्प्रधानाः पुरुषा **युद्धकीर्त्तिपुरुषाः**, **विपुलकुलसमुद्भवा** इति प्रतीतम्, **महारत्नं** वज्रं तस्य महाप्राणतया विघटका अङ्गुष्ठ-तर्ज्जनीभ्यां चूर्णका **महारत्नविघटकाः**, वज्रं हि

---

१. "**७९. अचोऽन्त्यादि टि** ।१।१।६४। अचां मध्ये योऽन्त्यः स आदिर्यस्य तट्टिसंज्ञं स्यात् ॥ शकन्ध्वादिषु पररूपं वाच्यम् ॥ तच्च टेः ॥ शकन्धुः । कर्कन्धुः। कुलटा । (ग) सीमन्तः केशवेशे ॥ सीमान्तोऽन्यः । मनीषा। हलीषा । लाङ्गलीषा । पतञ्जलिः । सारङ्गः पशु-पक्षिणोः । सारङ्गोऽन्यः ॥ आकृतिगणोऽयम् ॥ मार्तण्डः ॥" इति पा० सिद्धान्तकौमुद्याम् ॥ **२. दीप्तं** जे२ हे२ ॥ **३. वा** नास्ति जे१,२ हे१ ॥ ४. इतः खं० प्रतेः प्रारम्भः ॥

अधिकरण्यां धृत्वा अयोघनेनाऽऽस्फोट्यते न च भिद्यते तावेव[१] च भिनत्तीति दुर्भेदं तदिति, अथवा **महती** या **आरचना** सागर-शकटव्यूहादिना प्रकारेण सिसङ्ग्रामयिषोर्महासैन्यस्य तां रणरङ्गरसिकतया महाबलतया च **विघटयन्ति** वियोजयन्ति ये ते **महारचनाविघटकाः**, पाठान्तरेण तु **महारणविघटकाः**, **अर्द्धभरतस्वामिनः**, **सौम्या** नीरुजा **राजकुलवंशतिलकाः अजिताः अजितरथाः**, **हलमुशल-कणकपाणयः**, तत्र हल-मुशले प्रतीते, ते प्रहरणतया **पाणौ** हस्ते येषां ते बलदेवाः, येषां तु **कणका** बाणाः पाणौ ते शाङ्गर्धन्वानो वासुदेवाः, **शंखश्च** पञ्चजन्याभिधानः **चक्रं** च सुदर्शननामकं **गदा** च कौमोदकीसंज्ञा लकुटविशेषः **शक्तिश्च** त्रिशूलविशेषो **नन्दकश्च** नन्दकाभिधानः खड्गः, तान् धारयन्तीति **शंख-चक्र-गदा-शक्ति-नन्दकधराः** वासुदेवाः, **प्रवरो** वरप्रभावयोगादु**ज्ज्वलः** शुक्लत्वात् स्वच्छतया वा, **सुकान्तः** कान्तियोगात्, पाठान्तरे **सुकृतः** सुपरिकर्म्मितत्वात्, **विमलो** मलवर्ज्जितत्वात्, **गोत्थुभ** त्ति कौस्तुभाभिधानो यो मणिविशेषस्तं **तिरीडं** ति किरीटं च मुकुटं धारयन्ति ये ते तथा, **कुण्डलोद्द्योतिताननाः**, **पुण्डरीकवन्नयने** येषां ते तथा, **एकावली** आभरणविशेषः सा **कण्ठे** ग्रीवायां **लगिता** विलम्बिता सती **वक्षसि** उरसि वर्त्तते येषां ते **एकावलीकण्ठलगितवक्षसः**, **श्रीवृक्षा**भिधानं सुष्ठु लाञ्छनं महापुरुषत्वसूचकं वक्षसि येषां ते **श्रीवृक्षलाञ्छनाः**, **वरयशसः** सर्वत्र विख्यातत्वात्, **सर्वर्तुकानि** सर्वर्तुसंभवानि **सुरभीणि** सुगन्धीनि यानि कुसुमानि तैः **सुरचिता** कृता या **प्रलम्बा** आप्रपदीना **सोभंत** त्ति शोभमाना **कान्ता** कमनीया **विकसन्ती** फुल्लन्ती **चित्रा** पञ्चवर्णा **वरा** प्रधाना **माला** स्रक् **रचिता** निहिता **रतिदा** वा सुखकारिका वक्षसि येषां ते **सर्वर्तुकसुरभिकुसुमसुरचितप्रलम्बशोभमानकान्तविकसच्चित्र-वरमालारचितवक्षसः**, तथा अष्टशतसंख्यानि **विभक्तानि** विविक्तरूपाणि यानि **लक्षणानि** चक्रादीनि तैः **प्रशस्तानि** मङ्गल्यानि **सुन्दराणि** च मनोहराणि **विरचितानि** विहितानि **अंगमंग** त्ति अङ्गोपाङ्गानि शिरोऽङ्गुल्यादीनि येषां ते **अष्टशतविभक्तलक्षणप्रशस्तसुन्दरविरचिताङ्गोपाङ्गाः**, तथा मत्तगजवरेन्द्रस्य यो

---

१. **तावेव** अधिकरण्ययोघनावेव इत्यर्थः ॥

ललितो मनोहरो **विक्रमः** संचरणं तद्वद्**विलासिता** संजातविलासा **गतिः** गमनं येषां ते **मत्तगजवरेन्द्रललितविक्रमविलासितगतयः**, तथा शरदि भवः **शारदः** स चासौ **नवं स्तनितं** रसितं यस्मिन्निर्घोषे स **नवस्तनितः** स चेति समासः, स चासौ मधुरो **गम्भीरश्च** यः **क्रौञ्चनिर्घोषः** पक्षिविशेषनिनादस्तद्वद् **दुन्दुभिस्वरवच्च स्वरो** नादो येषां ते **शारदनवस्तनितमधुरगम्भीरक्रौञ्चनिर्घोषदुन्दुभिस्वराः**, इह च शरत्काले हि क्रौञ्चा माद्यन्ति मधुरध्वनयश्च भवन्तीति शारदग्रहणम्, तथा पौनःपुण्येन शब्दप्रवृत्तौ तद्भङ्गादमनोज्ञता तस्य स्यादिति **नवस्तनित**ग्रहणं स्वरूपोपदर्शनार्थं तु[1] **मधुरगम्भीर**ग्रहणमिति, तथा **कटीसूत्रकम्** आभरणविशेषस्तत्प्रधानानि **नीलानि** बलदेवानां **पीतानि** वासुदेवानां **कौशेयकानि** वस्त्रविशेषभूतानि **वासांसि** वसनानि येषां ते **कटीसूत्रकनीलपीतकौशेयवाससः**, **प्रवरदीप्ततेजसो** वरप्रभावतया वरदीप्तितया च, **नरसिंहा** विक्रमयोगात्, **नरपतयः** तन्नायकत्वात्, **नरेन्द्राः** परमैश्वर्ययोगात्, **नरवृषभा** उत्क्षिप्तकार्यभरनिर्वाहकत्वात्, **मरुद्वृषभकल्पाः** देवराजोपमाः, **अभ्यधिकं** शेषराजेभ्यः **राजतेजोलक्ष्म्या दीप्यमानाः**, **नीलकपीतकवसना** इति पुनर्भणनं निगमनार्थम्, कथं ते नवेत्याह– **दुवे दुवे** इत्यादि, एवं च नव वासुदेवा नव बलदेवा इति,

तिविट्ठू य यावत्करणात् दुविट्ठू य सयंभु पुरिसुत्तमे पुरिससीहे ।
तह पुरिसपुंडरीए दत्ते नारायणे कण्हे ॥ [आव० भा० ४०] त्ति,

अयले विजये भद्दे सुप्पभे य सुदंसणे ।
आनंदे णंदणे पउमे रामे आवि अपच्छिमे ॥ [आव० भा० ४१] त्ति ।

कित्तीपुरिसाणं ति कीर्त्तिप्रधानपुरुषाणामिति ॥१३४॥

महुरा य कणगवत्थू सावत्थी पोयणं च रायगिहं ।
कायंदी कोसंबी मिहिलपुरी हत्थिणपुरं च ॥[2] [आव० प्र०]

तथा– **गावी जुए**[3] **संगामे तह इत्थी पराइओ रंगे ।**
भज्जाणुराग गोट्ठी परइड्ढी माउया इ य ॥ [आव० प्र०] त्ति ।

---

१. च मधुर° खं० ॥ २. **आवश्यकनिर्युक्तौ** प्रक्षिप्तेयं गाथा ॥ ३. **य जुए** खं० हे१ ॥

तथा– अस्सग्गीवे तारए मेरए महुकेढवे निसुंभे य ।
बलि पहराए तह [1]रावणे य नवमे जरा[2]संधे ।। [आव० भा० ४२] त्ति ।
[3]एए खलु पडिसत्तू कित्तीपुरिसाण वासुदेवाणं ।
सव्वे वि चक्कजोही सव्वे वि हया [4]सचक्केहिं ।। [आव० भा० ४३] ति ।
अणियाणकडा रामा सव्वे वि य केसवा नियाणकडा ।
उड्ढंगामी रामा केसव सव्वे अहो[5]गामी ।। [आव० नि० ४१५] ति ।

आगमिस्सेणं ति आगमिष्यता कालेन **आगमेस्साणं** ति पाठान्तरे **आगमिष्यतां** भविष्यतां मध्ये से[6]त्स्यतीति ।।१४१।।

जम्बूद्वीपैरवते अस्यामवसर्प्पिण्यां चतुर्विंशतिस्तीर्थकरा अभूवन्, तांश्च स्तुतिद्वारेणाह- **चंदाणणं** गाहा । **चन्द्राननं** १ **सुचन्द्रं** च २ **अग्निसेनं** च ३ [7]**नन्दिषेणं** च ४ । क्वचि**दात्म**[8]**सेनो**ऽयं दृश्यते । **ऋषिदिन्नं** [9]च ५ **व्रतधारिणं** च ६ वन्दामहे **श्यामचन्द्रं** च ७ ।।१४२।।

वंदामि गाहा, वन्दे **युक्तिसेनं** क्वचिदयं **दीर्घबाहुर्दीघसेनो** वोच्यते ८, **अजितसेनं** क्वचिदयं **शतायुरुच्यते** ९, तथैव **शिवसेनं** क्वचिदयं **सत्यसेनो**ऽभिधीयते **सत्यकिश्चेति** १०, **बुद्धं चावगततत्त्वं** च **देवशर्म्माणं देवसेना**परनामकं ११, **सततं** सदा वन्दे इति प्रकृतम्, **निक्षिप्तशस्त्रं** च नामान्तरतः **श्रेयांसम्** १२ ।।१४३।।

असंजलं गाहा, **असंज्वलं जिनवृषभं** पाठान्तरेण **अस्वयंज्वलं** १३, **वन्दे** [10]**अनन्तजितममितज्ञानिनं** सर्वज्ञमित्यर्थः, नामान्तरेणायं **सिंहसेन** इति १४, **उपशान्तं**

---

१. **रामणे** जे१,२ हे१,२ ।। २. °**संध त्ति** जे१ खंमू० । °**संधु त्ति** खसं० ।। ३ "**एते खलु प्रतिशत्रवः**, **एते** एव, **खलु**शब्दस्य अवधारणार्थत्वात्, नान्ये, **कीर्त्तिपुरुषाणां वासुदेवानाम्**, **सर्वे** चक्रयोधिनः, **सर्वे** च **हताः स्वचक्रै**रिति, यतस्तान्येव तच्चक्राणि वासुदेवव्यापत्तये क्षिप्तानि तैः पुण्योदयात् वासुदेवं प्रणम्य तानेव व्यापादयन्ति इति गाथार्थः ।।४३।। अनिदानकृतो रामाः, सर्वे अपि च केशवा निदानकृतः, ऊर्ध्वगामिनो रामाः, केशवाः सर्वे अधोगामिनः । भावार्थः सुगमः, नवरं प्राकृतशैल्या पूर्वापरनिपातः **अनिदानकृता रामाः** इति, अन्यथा अकृतनिदाना रामा इति द्रष्टव्यम्, केशवास्तु कृतनिदाना इति गाथार्थः ।।४१५।।" इति **आवश्यकसूत्रस्य हारिभद्र्यां** वृत्तौ ।। ४. **सचक्केण** । **अणि**° जे२ ।। ५. °**गामि त्ति** जे१ ।। ६. **सेत्स्यंतीति** खं० ।। ७. **नंदिसेणं** जे२ हे२ ।। ८. °**सेनो दृश्यते** जे२ ।। ९. **च** नास्ति जे१,२ हे१,२ ।। १०. **अनन्तजिनम**° जे२ हे१ । **अनन्तकं तं जिनम**° हे२ ।।

च उपशान्तसंज्ञं **धूतरजसं** १५ **वन्दे खलु गुप्तिसेनं च** १६ ॥१४४॥

अइपासं गाहा, **अतिपार्श्वं च** १७ **सुपार्श्वं** १८ **देवेश्वरवन्दितं च मरुदेवं** १९ **निर्वाणगतं च धरं** धरसंज्ञं २० **क्षीणदुःखं श्यामकोष्ठं च** २१ ॥१४५॥

जिय गाहा, **जितरागमग्निसेनं** **महासेना**परनामकं २२ **वन्दे क्षीणरजसमग्निपुत्रं च** २३ **व्यवकृष्टप्रेमद्वेषं** च **वारिषेणं** २४ **गतं सिद्धिमिति**, स्थानान्तरे किञ्चिदन्यथाप्यानुपूर्वी नाम्नामुपलभ्यते ॥१४६॥

महापद्मादयो विजयान्ताश्चतुर्विंशतिः ॥१४८॥ एवमिदं सर्वं सुगमं ग्रन्थसमाप्तिं यावत्, नवरम् **आयाए** त्ति बलदेवादेरायातं देवलोकादेश्च्युतस्य मनुष्येषूत्पादः [१]सिद्धिश्च यथा **रामस्ये**ति, **एवं दोसु वि** त्ति भरतैरावतयो**रागमिष्यन्तो** वासुदेवादयो **भणितव्याः**।

[सू० १५९] **इच्चेतं एवमाहिज्जति, तंजहा- कुलगरवंसे ति य एवं तित्थगरवंसे ति य चक्कवट्टिवंसे ति य दसारवंसे ति य गणधरवंसे ति य इसिवंसे ति य जतिवंसे ति य मुणिवंसे ति य सुते ति वा सुतंगे ति वा सुतसमासे ति वा सुतखंधे ति वा समाए ति वा संखेति वा । समत्तमंगमक्खायं, अज्झयणं ति त्ति बेमि ॥**

॥ समवाओ चउत्थमंगं सम्मत्तं ॥ ग्रं० १६६७॥

[टी०] इत्यमेवमनेकधाऽर्थानुपदर्श्याधिकृतग्रन्थस्य यथार्थान्यभिधानानि दर्शयितुमाह– **इत्येत**दधिकृतशास्त्र**मेवम**नेनाभिधानप्रकारेणा**ऽऽख्यायते** अभिधीयते, **तद्यथा**– कुलकरवंशस्य तत्प्रवाहस्य प्रतिपादकत्वात् **कुलकरवंश इति च, इति**रुपदर्शने, **च**शब्दः समुच्चये, एवं **तित्थगरवंसे इ य** त्ति यथा देशेन कुलकरवंशप्रतिपादकत्वात् कुलकरवंश इत्येतदाख्यायते एवं देशतस्तीर्थकरवंशप्रतिपादकत्वात् तीर्थकरवंश इति च आख्यायते एतदिति, एवं **चक्रवर्त्तिवंश इति च दशारवंश इति च गणधरवंश इति च**, गणधरव्यतिरिक्ताः शेषा जिनशिष्या ऋषयस्तद्वंशप्रतिपादकत्वा**दृषिवंश इति च**, तत्प्रतिपादनं चात्र **पर्युषणाकल्प**स्य समस्तस्य ऋषिवंशपर्यवसानस्य समवसरणप्रक्रमेण भणितत्वादत एव **यतिवंशो मुनिवंश**श्चैतदुच्यते, यति-मुनिशब्दयोः

१. **सिद्धिश्च यथा रामस्येति** नास्ति जे२ हे१ । जे१ मध्ये पत्रं त्रुटितम् ॥

ऋषिपर्यायत्वात्, तथा **श्रुतमिति वै**तदाख्यायते, परोक्षतया त्रैकालिकार्थावबोधन-सहत्वादस्य, तथा **श्रुताङ्गमिति वा श्रुतस्य** प्रवचनस्य पुरुषरूपस्याङ्गम् अवयव इति कृत्वा, तथा **श्रुतसमास इति [वा]** समस्तसूत्रार्थानामिह संक्षेपेणाभिधानात्, **श्रुतस्कन्ध इति वा** श्रुतांशसमुदायरूपत्वादस्य, **समाए इ व** त्ति समवाय इति वा, समस्तानां जीवादिपदार्थानामभिधेयतयेह समवायनात् मीलनादित्यर्थः, तथा एकादि-संख्याप्रधानतया पदार्थप्रतिपादनपरत्वादस्य **संख्येति** [1]वाऽऽख्यायते, तथा **समस्तं** परिपूर्णं [2]तदेत**दङ्गमाख्यातं** भगवता, नेह श्रुतस्कन्धद्वयादिखण्डनेना**चारा**दाविवाङ्गतेति भावः, तथा **अज्झयणं ति** त्ति समस्तमेतदध्ययनमित्याख्यातं नेहोद्देशकादिखण्डनाऽस्ति **शस्त्रपरिज्ञा**दिष्विवेति भावः, **इति**शब्दः समाप्तौ । **बेमि** त्ति किल **सुधर्म्मस्वामी जम्बूस्वामिनं** प्रत्याह स्म, **ब्रवीमि** प्रतिपादयामि एतत् **श्रीमन्महावीरवर्द्धमानस्वामिनः** समीपे यदवधारितमित्यनेन गुरुपारम्पर्यमर्थस्य प्रतिपादितं भवति, एवं च शिष्यस्य ग्रन्थे गौरवबुद्धिरुपजनिता भवति, आत्मनश्च गुरुषु बहुमानो दर्शित औद्धत्यं च परिहृतम्, अयमेवार्थः शिष्यस्य सम्पादितो भवति मुमुक्षूणां चायं मार्ग इत्यावेदितमिति **समवायाख्यं चतुर्थमङ्गं** वृत्तितः **समाप्तम्** ॥

नमः श्री**वीराय** प्रवरवर**पार्श्वाय** च नमो
नमः श्रीवाग्देव्यै वरकविसभाया अपि नमः ।
नमः श्रीसङ्घाय स्फुटगुणगुरुभ्योऽपि च नमो
नमः सर्वस्मै च प्रकृतविधि[3]साहायककृते ॥१॥

यस्य ग्रन्थवरस्य वाक्यजलधेर्लक्षं सहस्राणि च,
चत्वारिंशदहो चतुर्भिरधिका मानं पदानामभूत् ।
तस्योच्चैश्चुलुकाकृतिं निदधतः कालादिदोषात्तथा,
दुर्लेखात् खिलतां गतस्य कुधियः कुर्वन्तु किं मादृशाः ? ॥२॥

---

१. **व्याख्यायत** खं० । जे१ मध्ये पत्रं खण्डितम्॥ २. **सदेत**° जे२ हे१,२ ॥ ३. ''सहायाद्वा'' - सि० ७।१।६२। ''योपान्त्याद् गुरूपोत्तमादसुप्रख्यादकञ्'' - सि० ७।१।७२। ॥

स्वं कष्टेऽतिनिधाय कष्टमधिकं मा मेऽन्यदा जायताम्,
व्याख्यानेऽस्य तथा विवेक्तुमनसामल्पश्रुतानाममुम् ।
इत्यालोचयता तथापि किमपि प्रोक्तं मया तत्र च,
दुर्व्याख्यानविशोधनं विदधतु प्राज्ञाः परार्थोद्यताः ॥३॥
इह वचसि विरोधो नास्ति सर्वज्ञवाक्त्वात्, क्वचन तदवभासो यः स मान्द्यान्नृबुद्धेः।
वरगुरुविरहाद्वाऽतीतकाले मुनीशैर्गणधरवचनानां [१]स्रस्तसङ्घातनाद्वा ॥४॥
व्याख्यानं यद्यपीदं प्रवरकविवचःपारतन्त्र्येण दृब्धम्
सम्भाव्योऽस्मिंस्तथापि क्वचिदपि मनसो मोहतोऽर्थादिभेदः ।
किन्तु श्रीसङ्घबुद्धेरनुसरणविधेर्भावशुद्धेश्च दोषो
मा मेऽभूदल्पकोऽपि प्रशमपरमना [२]अस्तु देवी श्रुतस्य ॥५॥
निःसम्बद्धवि[३]हारहारिचरितान् श्री**वर्द्धमाना**भिधान्
सूरीन् ध्यातवतोऽतितीव्रतपसो ग्रन्थप्रणीतिप्रभोः ।
श्रीमत्सूरि**जिनेश्वरस्य** जयिनो दर्प्पीयसां वाग्मिनाम्,
तद्बन्धोरपि **बुद्धिसागर** इति ख्यातस्य सूरेर्भुवि ॥६॥
शिष्येणा**भयदेवा**ख्यसूरिणा वि[४]वृतिः कृता ।
श्रीमतः **समवाया**ख्यतुर्याङ्गस्य समासतः ॥७॥
एकादशसु शतेष्वथ विंशत्यधिकेषु विक्रमसमानाम् ।
अणहिलपाटकनगरे रचिता **समवायटीके**यम् ॥८॥
प्रत्यक्षरं निरूप्यास्याः ग्रन्थमानं विनिश्चितम् ।
त्रीणि श्लोकसह[५]स्राणि, [६]पादन्यूना च षट्शती[७] ॥९॥

१. **श्रस्त**° खं० हे१,२ ॥ २. **स्ताच्च देवी** जे२ हे१ ॥ ३. °**विहारिहारि**° खं० । जे१ मध्ये पत्रं खण्डितम्॥ ४. **विवृत्तिः** जे१,२ । खं० मध्ये पत्रं खण्डितम् ॥ ५. °**स्राणि पादन्यूनानि** जे१ खंमू० । °**स्राणि पादन्यूना च** खंसं० ॥ ६ **पादोनाष्टशती तथा । ग्रंथाग्रं ३७७५ । शुभं भवतु श्री मणसंघस्य** हे२ ॥ **हे२** = अणहिलपुरपत्तने [= पाटणनगरे] श्रीहेमचन्द्राचार्यज्ञानमन्दिरे ९९९७ ग्रन्थक्रमाङ्के विद्यमानः कागजपत्रोपरिलिखित आदर्शः । पत्रसंख्या १-६९ । अयमादर्शः षोडशे वैक्रमे शतके लिखितः प्रतिभाति ॥ ७ **शुभं भवतु श्रीसंघस्य ।। श्री कल्याणमस्तु**

श्रीरस्तु ग्रंथाग्रं ३५७५ हे१ ॥ **हे१** = पूर्वं वाडीपार्श्वनाथभण्डारसत्कः सम्प्रति तु उपरि निर्दिष्टे श्रीहेमचन्द्राचार्यजैनज्ञानमन्दिरे ६८९७ ग्रन्थक्रमाङ्के विद्यमानः कागजपत्रोपरि लिखितः आदर्शः । पत्रसंख्या १-८४ । अयमपि षोडशे वैक्रमे शतके लिखितः प्रतिभाति ॥

खं० मध्ये इतः परं महती प्रशस्तिर्वर्तते, तद्यथा– "नमः श्रीवर्धमानाय वर्धमानाय वेदसा। वेदसारं परं ब्रह्म ब्रह्मबद्धस्थितिश्च यः ॥१॥ स्वबीजमुप्तं कृतिभिः कृषीवलैः क्षेत्रे सुसिक्तं शुभभाववारिणा । क्रियेत यस्मिन् सफलं शिवश्रिया पुरं तदत्रास्ति दयावटाभिधम् ॥२॥ ख्यातस्तत्रास्ति वस्तुप्रगुणगणः प्राणिरक्षैकदक्षः । सज्ज्ञाने लब्धलक्ष्यो जिनवचनरुचिश्चंचदुच्चैश्चरित्रः । पात्रं पात्रैकचूडामणिजिनसुगुरूपासनावासनायाः । संघः सुश्रावकाणां सुकृतमतिरमी सन्ति तत्रापि मुख्याः ॥३॥ **होनाकः** सज्जनज्येष्ठः श्रेष्ठी **कुमरसिंहकः** । **सोमाकः** श्रावकः श्रेष्ठः शिष्टधी**ररिसिंहकः** ॥४॥ **कडुयाकश्च** सुश्रेष्ठी **सांगाक** इति सत्तमः । **खीम्वाकः** **सुहडाकश्च** धर्मकर्मैककर्मठः ॥५॥ एतन्मुखः श्रावकसंघ एषोऽन्यदा वदान्यो जिनशासनज्ञः । सदा सदाचारविचारचारुक्रियासमाचारशुचिव्रतानाम् ॥६॥ श्रीम**ज्जगच्चन्द्र**मुनीन्द्रशिष्यश्रीपूज्य**देवेन्द्र**मुनीश्वराणाम् । तदाद्यशिष्यत्वभृतां च **विद्यानन्दा**ख्यविख्यातमुनिप्रभूणाम् ॥७॥ तथा गुरूणां सुगुणैर्गुरूणां श्री**धर्मघोषा**भिधसूरिराजाम् । सद्देशनामेवमपापभावां शुश्राव भावावनतोत्तमांगः ॥८॥ विषयसुखपिपासोर्गेहिनः क्वास्ति शीलं करणवशगतस्य स्यात् तपो वाऽपि कीदृक् । अनवरतमदभ्रारम्भिणो भावनाः कास्तदिह नियतमेकं दानमेवास्य धर्मः ॥९॥ किंच– धर्मः स्फूर्जति **दान**मेव गृहिणां ज्ञानाभयोपग्रहैस्त्रेधा तद्वरमाद्यमत्र यदितो निःशेषदानोदयः । ज्ञानं चाद्य न पुस्तकैर्विरहितं दातुं च लातुं च वा शक्यं पुस्तकलेखनेन कृतिभिः कार्यस्तदर्थोऽर्थवान् ॥१०॥ श्रुत्वेति संघसमवायविधीयमानज्ञानार्चनोद्भवधनेन मिथः प्रवृद्धिम् । नीतेन पुस्तकमिदं श्रुतक्रोशवृद्ध्यै बद्धादरश्चिरमलेखयदेष हृष्टः ॥११॥ यावज्जिनमतभानुः प्रकाशिताशेषवस्तुविचारः । जगति जयतीह पुस्तकमिदं बुधैर्वाच्यतां तावत् ॥१२॥

संवत् १३४९ वर्षे माघ शुदि १३ अद्येह **दयावटे** श्रे० **होना** श्रे० **कु**मरसीह श्रे० **सोम**प्रभृतिसंघसमवायसमारब्ध**पुस्तकभां**डागारे ले० **सीहाकेन** श्री**समवायवृत्तिपुस्तकं लिखितम्** ॥छ॥"

प्रथमं परिशिष्टम् ।

श्री समवायाङ्गसूत्रान्तर्गतानां गाथार्धानामकारादिक्रमः ।

गाथार्धम्	पृष्ठाङ्कः
अइबले ५ महब्बले ६	३००
अंतोधूमेण मारेइ	१००
अंतो नदंतं मारेइ	१००
अंबे अंबरिसी चेव	५६
अंमडे दारुमडे या	२९९
अकुमारभूए जे केइ	१०१
अक्खीणझंझे पुरिसे	१०१
अट्ठंतकडा रामा	२९७
अट्ठारस सोलसगं	२५९
अणंतरा य आहारे	२७६
अणागयस्स नयवं	१०१
अणिदाणकडा रामा	२९७
अणिस्सितोवहाणे य ४	११६
अण्णाणी जिणपूयट्ठी	१०३
अण्णातता ७ अलोभे य	१०३
अतवस्सिए य जे केइ	१०२
अतिपासं च सुपासं	२९८
अत्तदोसोवसंहारे २१	११६
अत्थीणत्थिपवायं	५२
अत्थे य ११ सूरियावत्ते	६२
अद्दीणसत्तु संखे	२८७
अदुवा तुममकासि त्ति	१०१
अपराजिये य भीमे	३००
अपरातिय वीससेणे	२८९
अपस्समाणो पस्सामि	१०३
अप्पडिपूयए थद्धे	१०२
अप्पणो अहिए बाले	१०१
अप्पणो य अबोहीए	१०२
अबंभयारी जे केइ	१०१
अबहुस्सुए य जे केइ	१०२
अब्भुवगमुवक्कमिया	२७५
अभयकर णिव्वुतिकरी	२८८
अममे णिक्कसाए	२९८
अयले वि जाव	२९६
अरुणप्पभ सूरप्पभ	२८७
अवसेसा तित्थकरा	२८८
असच्चवाई णिण्हाई	१००
असिपत्ते धणु कुम्भे	५६
अस्संजलं जिणवसभं	२९७
अस्सग्गीवे जाव	२९७
आगमिस्साण होक्खंति	२९८
आगमेसाण होक्खंति	३०१
आणंदे णंदणे पउमे	३००
आणय-पाणयकप्पे	२६०
आतिल्लाण चउण्हं	२४९
आयरियउवज्झाएहिं	१०२
आयरियउवज्झायाणं	१०२
आराहणा य मरणंते	११६
आलोयणा १ निरवलावे २	११६
आवंती धुतं विमोहायणं	३०
आसीयं बत्तीसं	२५९
इड्ढी जुती जसो वण्णो	१०३
इत्थीविसयगेहीए	१०१
इत्थीहिं गिद्धे वसए	१०१
इसिदिण्णं वयहारिं	२९७
इस्सरेण अदुवा गामेण	१०१
ईसादोसेण आइट्ठे	१०१
उक्खित्तणाए १ संघाडे २	७२
उग्गाणं भोगाणं	२८८
उड्ढंगामी रामा केसव	२९७
उत्तरे य २४ दिसाई य २५	६२
उदएणक्कम्म मारेति	१००
उदए ७ पेढालपुत्ते य ८	२९८
उदितोदितकुलवंसा	२८७
उदितोदितकुलवंसा	२९०
उदितोदितकुलवंसा	२९०
उप्पायपुव्वमग्गेणियं	५२
उवगसंतं पि झंपिता	१०१
उवड्डियं पडिविरयं	१०२
उवसंतं च धुयरयं	२९७
उवहि सुय भत्तपाणे	४३
उसभस्स पढमभिक्खा	२८९
उसभे सुमित्तविजये	२९४
उसभो य विणीताए	२८८
उस्सप्पिणि आगमेसाए	२९९
एए वुत्ता चउव्वीसं	३०१
एक्का से गब्भवसही	२९७
एक्कारसुत्तरं हेट्ठिमेसु	२६०
एक्को भगवं वीरो पासो	२८८
एक्को य चउत्थीए	२९७
एक्को य सत्तमाए	२९७

गाथार्धम्	पृष्ठाङ्कः
एताइं नामाइं	२९६
एतातो सीयातो सव्वेसिं	२८८
एते खलु पडिसत्तू	२९७
एते खलु पडिसत्तू	३००
एते छण्णक्खत्ता	५७
एते छन्नक्खत्ता	१३८
एते धम्मायरिया	२९७
एते विसुद्धलेसा	२८९
एते वुत्ता चउव्वीसं	२९८
एत्तो बलदेवाणं	२९६
एयारिसं नरं हंता	१०२
ओसप्पिणीए एते	२८७
ओहिस्स वड्डी हाणी	२७१
कक्कसेणे भीमसेणे	२८६
कण्हसिरी सूरसिरी	२९४
कत्तिय संखे य तहा	२९९
कम्मप्पवायपुव्वं	५२
कयवम्मा सीहसेणे य	२८६
कितिकम्मस्स य करणे	४३
खरस्सरे महाघोसे	५६
गद्दभे व्व गवं मज्झे	१०१
गावी जुए जाव	२९७
गूढायारी निगूहेज्जा	१००
चंदजस चंद [कंता	२८६
चेदाणणं सुचंदं	२९७
चंपय बउले य तहा	२८९
चउसट्ठी असुराणं	२६०
चउसिरं तिगुत्तं	४३
चउहिं सहस्सेहिं	२८८
चत्तारि दुवालस अट्ठ	२४९

गाथार्धम्	पृष्ठाङ्कः
चलचवलकुंडलधरा	२८८
चारू य वज्जणाभे	२९०
चित्तउत्ते १७ समाही य	२९८
चित्तरसा मणियंगा	३४
छण्हं पि जुगलयाणं	१६९
छण्हं पि जुवलयाणं	२६०
जं निस्सिए उव्वहती	१०१
जक्खिणी पुप्फचूला य	२९०
जयंती अपरातिया णवमिया	२९५
जयंते विजए भद्दे	३००
जयनामो य नरवई	२९४
जाणमाणो परिसओ	१०१
जायतेयं समारब्भ	१००
जाला तारा मेरा	२९४
जियरागमग्गिसेणं वंदे	२९८
जे अंतरायं चेएइ	१०१
जे कहाहिगरणाइं	१०२
जे नायगं व रट्ठस्स	१०१
जे य आहम्मिए जोए	१०२
जे य माणुस्सए भोए	१०३
जे यावि तसे पाणे	१००
झाणसंवर जोगे य	११६
णंदिरुक्खे तिलए	२८९
णंदे य १ णंदमित्ते २	३००
ण य णाम अण्णलिंगे	२८८
णग्गोह सत्तिवण्णे साले	२८९
णाभी जियसत्तू या	२८६
णिच्चोउगो असोगो	२८९
णिधयो पुरिसज्जाया	२१८
तं कालं तं समयं	२८९

गाथार्धम्	पृष्ठाङ्कः
तं तिप्पयंतो भावेति	१०२
तत्तो किरियविसालं	५२
तत्तो पसेणईए	२८६
तत्तो य णंदणे खलु	२८७
तत्तो य धम्मसीहे	२८७
तत्तो य धम्मसीहे	२८८
तत्तो हवति मिगाली	२९९
तस्स लुब्भइ वित्तम्मि	१०१
तस्स संपग्गहीयस्स	१०१
तहियं वसुधारातो	२८९
तहेवाणंतणाणीणं	१०२
तित्थप्पवत्तयाणं एते	२८७
तित्थप्पवत्तयाणं पढमा	२९०
तित्थप्पवत्तयाणं पढमा	२९०
तिण्णेग पंचूणं	२५९
तिण्णेव गाउयाइं	२९०
तिन्नेव उत्तराइं	१३८
तिलए य लोहजंघे	३००
तिविट्ठू य जाव	२९६
तिव्वे सुभ समायरे	१००
तीसा पुण तेरसमे	२४९
तीसा य पण्णवीसा	२५९
तुंबे अ ६ रोहिणी ७ मल्ली	७२
तेंदुग पाडलि जंबू	२८९
ते चेव खिंसती बाले	१०२
तेऽतिप्पयंतो आसयति	१०३
तेसिं अवण्णिमं बाले	१०२
तेसिं अवण्णिमं बाले	१०३
दत्ते सुहुमे सुबंधू य	२९८
दस चोद्दस अट्ठऽट्ठारसेव	२४९

गाथार्धम्	पृष्ठाङ्कः
दायणे य निकाए य	४३
दावद्दवे ११ उदगणाते १२	७२
दिण्णे य इंददिण्णे	२८७
दिण्णे वरदत्ते धन्ने	२८९
दिण्णे वाराहे पुण	२९०
दीव-दिसा-उदधीणं	२६०
दीव-दिसा-उदहीणं	१६९
दीवायणे य कण्हे	२९९
दुओणय जहाजायं	४३
दुविट्ठू य ८ तिविट्ठू य ९	३००
देवई चेव सच्चति	२९९
देवकुरु उत्तरकुरा	२८८
देवाणंदे अरहा	३०१
देवोववाए अरहा २३	२९८
देवोववाए अरहा	३०१
धंसेइ जो अभूयेणं	१०१
धम्मज्झए य अरहा	३००
धितीमती य १६ संवेगे	११६
नंदिफले १५ अवरकंका	७२
नवमो य महापउमो	२९४
नेयाउयस्स मग्गस्स	१०२
निव्वाणगयं च धरं	२९७
पउमा सिवा सुयी	२९०
पउमावती य वप्पा	२८७
पउमे य महापउमे	२९९
पउमे य सोमदेवे	२८९
पच्चक्खाणे विओसग्गो	११६
पच्चत्थिमेण असुरा	२८८
पच्छा वहंति सीयं	२८८
पढमा होइ सुभद्दा	२९४
पढमेत्थ उसभसेणे	२९०
पढमेत्थ वतिरणाभे	२८७
पढमेत्थ विमलवाहण	२८६
पण्णा चत्तालीसा छच्च	२६०
पभू ण कुणई किच्चं	१०२
पयावती य बंभे	२९४
पलियंक १५ निसिज्जा य	६९
पाणिणा संपहित्ताणं	१००
पासो मल्ली वि य अट्ठमेण	२८८
पियमित्त ललियमित्ते	२९६
पुणो पुणो पणिहीए	१००
पुरतो वहंति देवा	२८८
पुव्वभवे आसिण्हं	२९७
पुव्विं उक्खित्ता	२८८
पुस्से पुणव्वसू पूण वंदे	२८९
पुहई लक्खण रामा	२८७
पोग्गला नेव जाणंति	२७६
फलेणं अदुव दंडेणं	१००
बंधू पुप्फवती चेव	२९०
बंभी फग्गू सम्मा	२९०
बंभे बारसमे वुत्ते	२९४
बत्तीसतिं धणूइं	२८९
बत्तीसऽट्ठावीसा बारस	२६०
बहुजणस्स णेयारं	१०२
बारस एक्कारसमे	२४९
बावत्तरिं सुवण्णाण	२६०
बुद्धं च देवसम्मं	२९७
भगवं पि वासुपुज्जो	२८८
भद्दा सुभद्दा य सुप्पभा	२९५
भरहे य दीहदंते	२९९
भरहे सगरे मघवं	२९४
भिसए य इंद कुंभे	२९०
भेदे विसय संठाणे	२७१
भोगभोगे वियारेति	१०१
मंदर जसे अरिट्ठे	२९०
मंदर १ मेरु २ मणोरम ३	६२
मत्तंगया य भिंगा	३४
मरुदेवा विजयसेणा	२८७
महसीह अग्गिसीहे	२९४
महापउमे १ सुरादेवे २	२९८
महाहरी य विजए य	२९४
महुरा जाव हत्थिणपुरं	२९७
मिगसिर अद्दा पूसो	३३
मित्तदामे सुदामे य	२८६
मित्तवाहणे सुभूमे य	२९८
मियावती उमा चेव	२९५
मुणिसुव्वते य अरहा ११	२९८
मेहे धरे पइट्ठे य	२८६
रयणुच्चय ७ पियदंसण ८	६२
राया य आससेणे	२८६
रिट्ठे बारसमे वुत्ते	२९९
रुद्दोवरुद्द काले य	५६
रोहिणि सुलसा चेव य	२९९
लच्छिमती कुरुमती	२९४
लच्छिमती सेसमती	२९५
वंदामि जुत्तिसेणं	२९७
वयछक्कं ६ कायछक्कं १२	६९
वाराह धम्मसेणे	२९६
विउलं विक्खोभइत्ताणं	१०१
विज्जा अणुप्पवायं	५२

गाथार्धम्	पृष्ठाङ्कः
विजया य वेजयंती	२८७
विभज्ज मत्थयं फाले	१००
विमलघोसे सुघोसे य	२८६
विमला य पंचवण्णा	२८७
विमले उत्तरे अरहा	३०१
विस्सनंदी सुबंधू य	२९६
विस्सभूती पव्वयए	२९६
वोकम्म धम्मओ भंसे	१०२
वोकसियपेज्जदोसं य	२९८
संगाणं च परिण्णा य	११६
संती कुंथू य अरो	२९४
संभूत सुभद्द सुदंसणे	२९७
संवच्छरेण भिक्खा	२८९
संवरे १९ अणियट्टी य	२९८
सच्चप्पवायपुव्वं	५२
सच्चसेणे य अरहा	३०१
सच्छत्ता सपडागा	२९०
सज्झायवायं वयति	१०२
सढे नियडीपण्णाणे	१०२
सतज्जले सताऊ य	२८६
सत्तभिसय भरणि अद्दा	५७
सत्त विमाणसताइं	२६०
सत्थपरिण्णा लोगविजओ	३०
सप्पी जहा अंडउडं	१०१
समोसरण सन्निसेज्जा य	४३
सम्मदिट्ठी १२ समाही य	११६
सयमेगं उवरिमए	२६०
सव्वजगवच्छलाणं	२८८
सव्वतित्थाण भेयाय	१०२
सव्वलोयपरे तेणे	१०२
सव्वाणंदे य अरहा	३०१
सव्वाणुभूती ५ अरहा	२९८
सव्वे य चक्कजोही	३००
सव्वे वि एगदूसेण	२८८
सव्वेसिं पि जिणाणं	२८९
सागर समुद्दनामे	२९७
साले य वद्धमाणस्स	२८९
साहारणट्ठा जे केइ	१०२
साहाहेउं सहीहेउं	१०२
सिद्धत्थे पुण्णघोसे य	३०१
सिरिउत्ते सिरिभूती	२९९
सिरिकंता मरुदेवी	२८६
सिरिचंदे पुप्फकेऊ य	३००
सिरिसे य णागरुक्खे	२८९
सीता य दव्व सारीर	२७५
सीया सुदंसणा सुप्पभा	२८७
सीसम्मि जे पहणइ	१००
सीसावेढेण जे केई	१००
सीहरहे मेहरहे	२८७
सुंदरबाहू तह दीहबाहू	२८७
सुग्गीवे दढरहे	२८६
सुजसा सुव्वय अइरा	२८७
सुपासे सुव्वते अरहा	३०१
सुभे य सुभघोसे य	२७
सुमंगला जसवती	२९४
सुमंगले अत्थ सिद्धे य	३००
सुमणा वारुणि सुलसा	२९०
सुमतित्थ णिच्चभत्तेण	२८८
सुयसागरे य अरहा	३००
सुर-असुरवंदियाणं	२८८
सुरअसुरगरुलमहियाण	२९०
सूरसेणे महासेणे	३०१
सूरिते सुदंसणे पउमुत्तर	२९४
सूरे सुदंसणे कुंभे	२८६
सेज्जंस बंभदत्ते	२८८
सेड्डिं बहुरवं हंता	१०१
सेणावइं पसत्थारं	१०१
सेणिय सुपास उदए	२९९
सेला सलिला य समुद्द	२१८
सेसाणं परमण्णं	२८९
सेसाणं पुण रुक्खा	२९०
सेसेहिं बीयदिवसे	२८९
सोमे सिरिधरे चेव	२७
सोलस तीसा वीस	२४९
हत्थो चित्ता य तहा	३३

द्वितीयं परिशिष्टम्- कतिपयानि विशिष्टानि टिप्पनानि ।

[पृ०२६ पं०१७] सम्प्रति **चन्द्रप्रज्ञप्तिः सूर्यप्रज्ञप्तिश्च** प्राय एकरूपैव संजाता उपलभ्यते, अतः एतद्विषये सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्रं तट्टीका चात्र उपन्यस्येते अस्माभिः–

"ता कहं ते जोतिसस्स दारा आहिताति वदेज्जा । तत्थ खलु इमाओ पंच पडिवत्तिओ पन्नत्ताओ– तत्थेगे एवमाहंसु–ता कत्तियादिया णं सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पन्नत्ता । एगे पुण एवमाहंसु - ता महादिया णं सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पन्नत्ता । एगे पुण एवमाहंसु-ता धणिट्ठादिया णं सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पन्नत्ता। एगे पुण एवमाहंसु-ता अस्सिणीयादिया णं सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पन्नत्ता । एगे पुण एवमाहंसु-ता भरणीयादिया णं सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पन्नत्ता... वयं पुण एवं वदामो-ता अभिईयादिया णं सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिया पन्नत्ता तंजहा-अभिई सवणो धणिट्ठा सतभिसया पुव्वापोट्ठवया उत्तरापोट्ठवया रेवती। अस्सिणीयादिया णं सत्त नक्खत्ता दाहिणदारिया पन्नत्ता तंजहा-अस्सिणी भरणी कत्तिया रोहिणी संठाणा अद्दा पुणव्वसू । पुस्सादिया णं सत्त नक्खत्ता पच्छिमदारिया पन्नत्ता तंजहा-पुस्सो अस्सेसा महा पुव्वाफग्गुणी उत्तराफग्गुणी हत्थो चित्ता । सातियादिया णं सत्त नक्खत्ता उत्तरदारिया पन्नत्ता तंजहा-साती विसाहा अनुराहा जेट्ठा मूले पुव्वासाढा उत्तरासाढा।" इति **चन्द्रप्रज्ञप्तौ सूर्यप्रज्ञप्तौ** च।

अस्य व्याख्या- "**ता कहं ते जोइसदारा** इत्यादि, ता इति पूर्ववत्, कथम् ? - केन प्रकारेण केन क्रमेणेत्यर्थः ज्योतिषो - नक्षत्रचक्रस्य द्वाराणि आख्यातानीति वदेत् ? एवमुक्ते भगवानेतद्विषये यावत्यः परतीर्थिकानां प्रतिपत्तयस्तावतीरुपदर्शयति- **तत्थे**त्यादि, तत्र - तेषां पञ्चानां परतीर्थिकसङ्घातानां मध्ये एके एवमाहुः - कृत्तिकादीनि सप्त नक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि, इह येषु नक्षत्रेषु पूर्वस्यां दिशि गच्छतः प्रायः शुभमुपजायते तानि पूर्वद्वारकाणि, एवं दक्षिणद्वारकादीन्यपि **वक्ष्यमाणानि** भावनीयानि, अत्रैवोपसंहारमाह– **एगे एवमाहंसु** एके पुनरेवमाहुः - अनुराधादीनि सप्त नक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि, अत्राप्युपसंहारः– **एगे एवमाहंसु** एवं शेषाण्यप्युपसंहारवाक्यानि योजनियानि, एके पुनरेवमाहुः-धनिष्ठादीनि सप्त नक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि, एके पुनरेवमाहुः- अश्विन्यादीनि सप्त नक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि प्रज्ञप्तानि एके पुनरेवमाहुः भरण्यादीनि सप्त नक्षत्राणि पूर्वद्वारकाणि, सम्प्रत्येतेषामेव पञ्चानामपि मतानां भावनिकामाह- **तत्थ जे ते एवमाहंसु** इत्यादि सुगमम्, भगवान् स्वमतमाह- वयं पुण इत्यादि पाठसिद्धम् ।।" इति श्री**मलयगिरि**विरचितायां **सूर्यप्रज्ञप्तिटीका**यां दशमस्य प्राभृतस्य एकविंशतितमे प्राभृतप्राभृते।

[पृ०३९ पं०१८] "अथ प्रतिमाप्रतिमास्वरूपमाह- **सम्ममणुव्वयगुणवयसिक्खावयवं थिरो य नाणी य । अट्ठमि-चउद्दसीसुं पडिमं ठाएगराईयं १०।१७।। सम्मं०** गाहा । **सम्य**गिति सम्यक्त्वम्, **अणुव्रत-गुणव्रत-शिक्षापदानि** प्रतीतानि । तानि यस्य सन्ति स तद्वान् । पूर्वोक्तप्रतिमा-

चतुष्कयुक्त इत्यर्थः । सोऽपि **स्थिरो**ऽविचलसत्त्वः । इतरो हि तद्विराधको भवति । यतः सा रात्रौ चतुष्पथादौ च विधीयते, तत्र चोपसर्गाः संभवन्तीति । **ज्ञानी च** ज्ञाता प्रतिमाकल्पपादेः। अज्ञानो हि सर्वत्राप्ययोग्यः किं पुनरस्यामिति । **च**शब्दौ समुच्चयार्थौ । **अष्टमीचतुर्दश्योः** प्रतीतयोः। उपलक्षणत्वादस्य पौषधदिवसेष्विति दृश्यम्, **प्रतिमां** कायोत्सर्गं **ठाइ** त्ति अधितिष्ठति करोतीत्यर्थः। किंप्रमाणमित्याह-एका रात्रिः परिमाणस्या इत्येकरात्रिकी सर्वरात्रिकी तां यस्तस्य प्रतिमाप्रतिमा भवतीति शेषः । इति गाथार्थः ॥१७॥

शेषदिनेषु यादृशोऽसौ भवति तद्दर्शयितुमाह– **असिणाणवियडभोई मउलियडो दिवसबंभयारी य। रत्तिं परिमाणकडो पडिमावज्जेसु दियहेसु १०।१८।। असिणा॰** गाहा । **अस्नानो**ऽविद्यमानस्नानः । **विकटे** प्रकटे दिवसे, न रात्राविति यावत्, भोक्तुं शीलमस्येति **विकटभोजी** चतुर्विधाहाररात्रि-भोजनवर्जकः, ततः पूर्वपदेन सह कर्मधारयः । तथा **मौलिकृतो**ऽबद्धकच्छः । तथा **दिवसे** ब्रह्म चरतीत्येवंशीलो दिवसब्रह्मचारी । **चः** समुच्चये । तथा **रत्ति**मिति विभक्तिपरिणामाद् **रात्रौ** रजन्यां **परिमाणकृतः** मैथुनासेवनं प्रति कृतयोषिद्भोगपरिमाणः । कदेत्याह– **प्रतिमावर्जेषु** अपर्वस्वित्यर्थः, **दिवसेषु** दिनेषु । उक्तव्याख्यानसंवादिनी चेयं गाथा यदुत– **असिणाणवियडभोई पकासभोइ त्ति होइ जं भणियं । दिवसओ न रत्ति भुंजे मउलिकडो कच्छ नवि रोधे ।।** [ ] कच्छां नारोपयतीत्यर्थः । इति गाथार्थः ॥१८॥'' इति **पञ्चाशकस्य अभयदेव**सूरिविरचितायां वृत्तौ ॥

[पृ०४३ पं०१, पृ०४५ पं०१३] ''ओहद्दारस्स इमे बारस पडिदारा– **उवहि सुत भत्त पाणे अंजलीपग्गहेति य । दावणा य निकाए य । अब्भुट्ठाणे ति यावरे ।।२०७१।। कितिकम्मस्स य करणे वेयावच्चे करणेति य । समोसरण सणिसेज्जा, कधाए य पबंधणे ।।२०७२।।** उवहि त्ति दारस्स इमे छ पडिदारा– **उग्गम उप्पादण एसणा य परिकम्मणा य परिहरणा । संजोय-विहिविभत्ता छट्ठाणा होंति उवधिम्मि ।। २०७३।।** तत्थ उग्गम त्ति दारं, अस्य व्याख्या– **समणुण्णेण मणुण्णो सहितो सुद्धोवधिग्गहे सुद्धो । अह अविसुद्धं गेण्हति जेणऽविसुद्धं तमावज्जे ।।२०७४।।** संभोतितो संभोइएण समं उवहिं सोलसेहि आहाकम्मतिएहिं उग्गमदोसेहिं सुद्धं उप्पाएति तो सुद्धो । अह असुद्धं उप्पाएति जेण उग्गमदोसेण असुद्धं गेण्हति तत्थ जावतिओ कम्मबंधो जं च पायच्छित्तं तं आवज्जति ।।२०७४।। **एगं व दो व तिण्णि व आउट्टंतस्स होति पच्छित्तं । आउट्टंते वि ततो परेण तिण्हं विसंभोगो ।।२०७५।।** संभोइओ असुद्धं गेण्हंतो चोइओ भणाति-'संता पडिचोयणा, मिच्छामि दुक्कडं, ण पुणो एवं करिस्सामो' । एवं आउट्टे जमावण्णो तं पच्छित्तं दाउं संभोगो । एवं बितियवाराए वि । एवं ततियवाराए वि । ततियवाराओ परेणं चउत्थवाराए तमेव अतियारं सेविऊण आउट्टंतस्स वि विसंभोगो ।।२०७५।।'' - इति **निशीथभाष्यचूर्णौ** पञ्चमे उद्देशके ।।

[पृ०४३ पं०८] "कहि णं भंते ! विजयस्स देवस्स विजया णाम रायहाणी पण्णत्ता ?, गोयमा ! विजयस्स णं दारस्स पुरत्थिमेणं तिरियमसंखेज्जे दीवसमुद्दे वीतिवतित्ता अण्णंमि जंबुद्दीवे दीवे बारस जोयणसहस्साइं ओगाहित्ता एत्थ णं विजयस्स देवस्स विजया णाम रायहाणी प० **बारस जोयणसहस्साइं आयामविक्खंभेणं** सत्ततीसजोयणसहस्साइं नव य अडयाले जोयणसए किंचिविसेसाहिए परिक्खेवेणं पण्णत्ते.... ॥ [सू० १३५] ॥ व्या०- **कहि णं भंते ! विजयस्सेत्यादि**, क्व भदन्त ! विजयस्य देवस्य विजया नाम राजधानी प्रज्ञप्ता ?, भगवानाह– **गौतम** ! विजयस्य द्वारस्य पूर्वस्यां दिशि तिर्यग् असङ्ख्येयान् द्वीपसमुद्रान् **व्यतिव्रज्य** अतिक्रम्य अत्रान्तरे योऽन्यः जम्बूद्वीपः अधिकृतद्वीपतुल्याभिधानः, अनेन जम्बूद्वीपानामप्यसङ्ख्येयत्वं सूचयति, तस्मिन् द्वादश योजनसहस्राणि अवगाह्य अत्रान्तरे विजयस्य देवस्य योग्या विजया नाम राजधानी प्रज्ञप्ता मया शेषैश्च तीर्थकृद्भिः, सा च **द्वादश योजनसहस्राणि आयामविष्कम्भेण** आयामविष्कम्भाभ्याम्, सप्तत्रिंशद् योजनसहस्राणि नव शतानि **अष्टाचत्वारिंशानि** अष्टचत्वारिंशदधिकानि किञ्चिद्विशेषाधिकानि परिक्षेपेण, इदं च परिक्षेपपरिमाणं 'विक्खंभवग्गदहगुणकरणी वट्टस्स परिरओ होइ' [ ] इति करणवशात् स्वयमानेतव्यम् ॥" इति **जीवाभिगमसूत्रे** तृतीयायां प्रतिपत्तौ प्रथमे उद्देशके **मलयगिरिसूरिविरचितायां वृत्तौ** ॥

[पृ०६० पं०१५, पृ०१५९, पं०२] "**सयभिसया भरणीओ अद्दा अस्सेस साइ जेट्ठा य । एए छ नक्खत्ता पणयालमुहुत्तसंजोगा ॥७/१६०॥ टी० शतभिषक् भरणी आर्द्रा अश्लेषा स्वातिः ज्येष्ठा, चः** समुच्चये **एतानि षट् नक्षत्राणि पञ्चदश मुहूर्तान्** यावत् चन्द्रेण सह **संयोगः** सम्बन्धो येषां तानि तथा, तद्यथा– एतेषां षण्णामपि नक्षत्राणां प्रत्येकं सप्तषष्टिखण्डीकृतस्याहोरात्रस्य सत्कान् सार्द्धान् त्रयस्त्रिंशद्भागान् यावच्चन्द्रेण सह योगो भवति ततो मुहूर्त्तगतसप्तषष्टिभागकरणार्थं त्रयस्त्रिंशत् त्रिंशता गुण्यन्ते जातानि नव शतानि **नवतानि** नवत्यधिकानि ९९० यदपि चार्द्धं तदपि त्रिंशता गुणयित्वा द्विकेन भज्यते लब्धाः पञ्चदश मुहूर्तस्य सप्तषष्टिभागास्ते पूर्वराशौ प्रक्षिप्यन्ते जातः पूर्वराशिः सहस्रं पञ्चोत्तरम् १००५, अस्य सप्तषष्ट्या भागे हृते लब्धाः पञ्चदश मुहूर्त्ता इति । तथा– "**तिण्णेव उत्तराइं पुणव्वसू रोहिणी विसाहा य । एए छ नक्खत्ता पणयालमुहुत्तसंजोगा ॥७/१६०॥ टी० तिस्र उत्तराः** उत्तरफल्गुनी उत्तराषाढा उत्तरभद्रपदा इत्येवंरूपाः **पुनर्वसू रोहिणी विशाखा, चः** समुच्चये, **एतानि** एवकारस्य भिन्नक्रमत्वादेतान्येवेति योज्यम्, सूत्रे पुंस्त्वनिर्देशः प्राकृतत्वात्, **षड् नक्षत्राणि पञ्चचत्वारिंशतं मुहूर्तान्** यावच्चन्द्रेण सह संयोगो येषां तानि तथा, तद्यथा-अत्रापि षण्णां नक्षत्राणां प्रत्येकं सप्तषष्टिखण्डीकृतस्याहोरात्रस्य सत्कानां भागानां शतमेकमेकस्य च भागस्यार्द्धं चन्द्रेण सह योगस्तत्रैषां भागानां मुहूर्त्तगतभागकरणार्थं शतं प्रथमतस्त्रिंशता गुण्यते जातानि त्रीणि सहस्राणि पञ्चदशोत्तराणि ३०१५, एतेषां सप्तषष्ट्या

भागे हृते लब्धाः पञ्चचत्वारिंशन्मुहूर्त्ता इति ।'' इति **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तेः** सप्तमे वक्षस्कारे १६० तम सूत्रस्य **शान्तिचन्द्रीया**यां वृत्तौ ॥

[पृ०६६ पं०१६] ''**सम्प्रति लवण**समुद्रशिखावक्तव्यतामाह– **दसजोयणसहस्सा, लवणसिहा चक्कवालओ रुंदा । सोलस सहस्स उच्चा, सहस्समेगं च ओगाढा ॥१७॥ व्या०** अभ्यन्तरतो बाह्यतश्च पञ्चनवतिपञ्चनवतियोजनसहस्राणि परित्यज्य मध्यभागे लवणसमुद्रस्य शिखा वर्तते, सा च चक्रवालतो रथचक्राकारेण **रुन्दा** विस्तीर्णा दश योजनसहस्राणि, तथा भूतले समजलपट्टादूर्ध्वमुच्चा षोडश योजनसहस्राणि, सहस्रमेकं योजनानामवगाढा भूमौ प्रविष्टा ॥१७॥ **देसूणमद्धजोयण, लवणसिहोवरि दगं दुवे काला । अइरेगं अइरेगं, परिवड्ढइ हायए वावि ॥१८॥ व्या०** अनन्तरोक्ताया लवणसमुद्रशिखाया उपरि देशोनमर्धयोजनं किञ्चिन्न्यूने द्वे गव्यूते द्वौ कालौ अहोरात्रमध्ये द्वौ वारौ उदकमतिरेकमतिरेकं परिवर्धते हीयते च, पातालकलशगतवायुक्षोभे वर्धते तदुपशान्तौ च हीयते इत्यर्थः ॥१८॥ सम्प्रति वेलन्धरवक्तव्यतामाह– **अब्भिंतरियं वेलं, धरंति लवणोदहिस्स नागाणं । बायालीस सहस्सा, दुसत्तरि सहस्स बाहिरियं ॥१९॥ सट्ठिं नागसहस्सा, धरंति अग्गोदयं समुद्दस्स । वेलंधरआवासा, लवणे चाउद्दिसिं चउरो ॥२०॥ व्या०** लवणसमुद्रस्याभ्यन्तरिकां जम्बूद्वीपाभिमुखां वेलां शिखोपरिजलं शिखां च अर्वाक् प्रविशन्तीं धरन्ति वारयन्ति **नागानां** नागकुमाराणां भवनपतिनिकायान्तर्वर्तिनां द्वाचत्वारिंशत्सहस्राणि, बाह्यां धातकीखण्डद्वीपाभिमुखां वेलां धातकीखण्डद्वीपमध्ये प्रविशन्तीं वारयन्ति नागानां द्वासप्ततिसहस्राणि, तथा षष्टिनागसहस्राणि अग्रोदकं देशोनयोजनार्धजलादुपरि वर्धमानं जलं समुद्रस्य लवणसमुद्रस्य वारयन्ति । एवं सर्वसङ्ख्यया वेलन्धरदेवानामेकं लक्षं चतुःसप्ततिसहस्राणि भवन्ति । उक्तं च– ''लवणस्स णं भंते समुद्दस्स केवइया नागसहस्सा अब्भिंतरियं वेलं धरंति ? केवइया नागसहस्सा बाहिरियं वेलं धरंति ? केवइया नागसहस्सा अग्गोदगं धरंति ? **गोयमा !** लवणस्स णं समुद्दस्स बायालीसं नागसहस्सा अब्भिंतरियं वेलं धरंति, बावत्तरि नागसहस्सा बाहिरियं वेलं धरंति, सट्ठिं नागसहस्सा अग्गोदगं धरंति । एवमेव सपुव्वावरेण लवणे समुद्दे एगसयसाहस्सिया चउहत्तरिं च नागसहस्सा भवंतीति मक्खायं'' [ ] । एतेषां च वेलन्धरदेवानामावासा आश्रयभूताः पर्वता लवणसमुद्रे पूर्वादिषु चतसृषु दिक्षु द्विचत्वारिंशद्द्विचत्वारिंशद्योजनसहस्राण्यवगाह्यात्रान्तरे प्रत्येकमेकैकभावेन चत्वारः चतुःसङ्ख्या वेदितव्याः ॥१९-२०॥ सम्प्रति तेषामावासपर्वतानामावासपर्वताधिपतीनां च नागराजानां नामान्याह– **पुव्वाइं अणुकमसो, गोत्थुभ दगभास संख दगसीमा । गोत्थुभ सिवए संखे, मणोसिले नागरायाणो ॥२१॥ व्या०** तथा पूर्वाद्यनुक्रमेणैवैतेषामावासपर्वतानामधिपतीनां नामान्यमूनि, तद्यथा– गोस्तूपस्यावासपर्वतस्याधिपतिर्गोस्तूपनामा देवः, दकभासस्य शिवः, शङ्खस्य शङ्खः, दकसीम्नो मनःशिलः । एते चत्वारोऽपि प्रत्येकं चतुर्णामिन्द्रसामानिकसहस्राणाम्, चतसृणामग्रमहिषीणां

सपरिवाराणाम्, तिसृणां पर्षदाम्, सप्तानामनीकानाम्, सप्तानामनीकाधिपतीनाम्, षोडशानामात्मरक्षकदेवसहस्राणाम्, स्वस्य स्वस्यावासपर्वतस्य, स्वस्याः स्वस्या राजधान्या अधिपतयः । तत्र गोस्तूपदेवस्य राजधानी गोस्तूपा, सा च गोस्तूपस्यावासपर्वतस्य पूर्वतोऽपरस्मिन् लवणसमुद्रे द्वादशयोजनसहस्रेभ्यः परतो वेदितव्या । शिवदेवस्य शिवा राजधानी, सा च दकभासस्यावासपर्वतस्य दक्षिणतोऽपरस्मिन् लवणसमुद्रे । शङ्खदेवस्य शङ्खा नाम राजधानी, सा च शङ्खस्यावासपर्वतस्यापरतोऽपरस्मिन् लवणसमद्रे। मनःशिलस्य देवस्य मनःशिला राजधानी, सा च दकसीम्न आवासपर्वतस्योत्तरतोऽपरस्मिन् लवणसमुद्रे ॥२१॥ तदेवमुक्ता महतां वेलन्धराणां नागराजानामावासपर्वता नामानि च, सम्प्रति क्षुल्लवेलन्धरदेवानामावासपर्वतान् नामानि चाह– **अणुवेलंधरवासा, लवणे विदिसासु संठिया चउरो । कक्कोडग विज्जुप्पभ, कइलास रुणप्पभे चेव ॥२२॥ कक्कोडग कद्दमए, केलास रुणप्पभे य रायाणो । बायालीस सहस्से, गंतुं उदहिम्मि सव्वेऽवि ॥२३॥ व्या०** महतां वेलन्धराणामादेशप्रतीच्छकतयाऽनुयायिनो वेलन्धरा अनुवेलन्धरास्तेषा**मावासा** आवासपर्वता **लवणे** लवणसमुद्रे विदिक्षु उत्तरपूर्वादिकासु चतसृषु विदिक्षु द्वाचत्वारिंशतं योजनसहस्राण्यवगाह्यान्तरे संश्रिताः स्थिताः चत्वारः चतुःसङ्ख्या वेदितव्याः, तद्यथा– उत्तरपूर्वस्यां दिशि कर्कोटकः १, दक्षिणपूर्वस्यां विद्युत्प्रभः २, दक्षिणापरस्यां कैलाशः ३, अपरोत्तरस्यामरुणप्रभः ४ । एतेषामधिपतयो नागराजा यथाक्रमं कर्कोटकः कर्दमकः कैलाशः अरुणप्रभश्च । एते च चत्वारोऽपि गोस्तूपदेव इव महर्द्धिका वेदितव्याः, नवरं कर्कोटकस्य नागराजस्य राजधानी कर्कोटिका, सा च कर्कोटकस्यावासपर्वतस्योत्तरपूर्वस्यां दिशि तिर्यगसङ्ख्येयान् द्वीपसमुद्रानतिक्रम्यापरस्मिन् लवणसमुद्रे द्वादशयोजनसहस्रेभ्यः परतोऽवगन्तव्या । कर्दमस्य च नागराजस्य कर्दमिका राजधानी, सा च विद्युत्प्रभस्य स्वावासपर्वतस्य दक्षिणपूर्वतोऽपरस्मिन् लवणसमुद्रे । कैलाशदेवस्य नागराजस्य कैलाशा नाम राजधानी, सा च स्वावासपर्वतस्य कैलाशस्य दक्षिणापरतोऽपरस्मिन् लवणसमुद्रे । अरुणप्रभस्य नागराजस्यारुणप्रभा नाम राजधानी, सा च स्वावासपर्वतस्यारुणप्रभस्यापरोत्तरतोऽपरस्मिन् लवणसमुद्रे। एते च सर्वेऽपि गोस्तूपादयोऽरुणप्रभपर्यवसाना अष्टावप्यावासपर्वता जम्बूद्वीपवेदिकान्तात्प्रत्येकं द्विचत्वारिंशतं योजनसहस्राण्युदधौ लवणसमुद्रेऽवगाह्यात्रान्तरे वेदितव्याः । एतच्च प्रागेव भावितम् ॥२२-२३॥ सम्प्रत्येतेषामवगाहादिप्रमाणमाह– **चत्तारि जोयणसए, तीसं कोसं च उवगया भूमिं । सत्तरस जोयणसए, इगवीसे ऊसिया सव्वे ॥२४॥ व्या०** सर्वेऽष्टावपि गोस्तूपादयः पर्वताः प्रत्येकं चत्वारि योजनशतानि त्रिंशदधिकानि ४३० एकं च क्रोशं १ भूमिमुपगता भूमौ प्रविष्टाः, सप्तदश योजनशतानि एकविंशत्यधिकानि १७२१ उच्छ्रिता उच्चाः । एते च सर्वेऽपि प्रत्येकमेकैकया वेदिकया एकैकेन च वनखण्डेन समन्ततः परिक्षिप्ताः ॥२४॥'' इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ।

[पृ०६८ पं० २२] ''**नाणंतरायदसगं दंसण चत्तारि उच्च जसकित्ती । एया सोलस पयडी, सुहुमकसायम्मि वोच्छिन्ना ॥२३॥ व्या०**- '**नाणंतरायदसगं**' इति, ज्ञानावरणं पञ्चविधमन्तरायं

पञ्चविधम्, '**दंसण चत्तारि**' इति, दर्शनावरणानि चत्वारि चक्षुरचक्षुरवधिकेवलदर्शनावरणाख्यानि, उच्चैर्गोत्रम्, यशःकीर्त्तिः, इत्येताः षोडश प्रकृतयः सूक्ष्मकषाये बन्धं प्रतीत्य व्यवच्छिन्नाः । एतद्बन्धस्य साम्परायिकत्वादुत्तरेषु च सम्परायस्य कषायोदयलक्षणस्याभावात् ॥२३॥'' इति सटीके प्राचीने **कर्मस्तवाख्ये** द्वितीये कर्मग्रन्थे ॥

[पृ०८७ पं० ७] ''**गंगा णं महाणई पवहे छ सकोसाइं जोअणाइं विक्खंभेणं अद्धकोसं उव्वेहेणं तयणंतरं च णं....** [जम्बू० ४।७४] । **व्या०**- अथास्या एव प्रवहमुखयोः पृथुत्वोद्वेधौ दर्शयति- **गंगा णमि**त्यादि, गङ्गा महानदी **प्रवहे**, यतः स्थानात् नदी वोढुं प्रवर्त्तते स प्रवहः, पद्मद्रहात्तोरणान्निर्गम इत्यर्थः, तत्र षट् सक्रोशानि योजनानि विष्कम्भेण, तथा क्रोशार्द्धमुद्वेधेन, महानदीनां सर्वत्रोद्वेधस्य स्वव्यासपञ्चाशत्तमभागरूपत्वात्, अस्तीति शेषः, **तदनन्तर**मिति पद्मद्रहतोरणीयव्यासादनन्तरम्, एतेन यावत् क्षेत्रं स व्यासोऽनुवृत्तस्तावत्क्षेत्रादनन्तरं गङ्गाप्रपातकुण्डनिर्गमादनन्तरमित्यर्थः, एतेन च योऽन्यत्र प्रवहशब्देन मकरमुखप्रणालनिर्गमः प्रपातकुण्डनिर्गमो वाऽभिहितः स नेति, श्री**अभयदेवसूरि**पादैः **समवायाङ्गवृत्तौ श्रीमलयगिरि**पादैश्च **बृहत्क्षेत्रसमास**वृत्तौ पद्मद्रहतोरणनिर्गमपरत्वेनैव व्याख्यानात्, एवमुद्वेधेऽपि ज्ञेयम् ।'' इति **जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ** चतुर्थे वक्षस्कारे ७४ तमसूत्रस्य **शान्तिचन्द्र**विरचितायां वृत्तौ ॥

[पृ०८९ पं०२२] ''पञ्चविंशतिभिर्भावनाभिः, क्रिया पूर्ववत्, प्राणातिपातादिनिवृत्तिलक्षण-महाव्रतसंरक्षणाय भाव्यन्त इति भावनाः, ताश्चेमाः– इरियासमिए सया जए, उवेह भुंजेज्ज व पाणभोयणं । आयाणनिक्खेवदुगुंछ संजए, समाहिए संजमए मणोवई ॥१॥ अहस्ससच्चे अणुवीइ भासए, जे कोहलोहभयमेव वज्जए । स दीहरायं समुपेहिया सिया, मुणी हु मोसं परिवज्जए सया ॥२॥ सयमेव उ उग्गहजायणे, घडे मतिमं निसम्म सइ भिक्खु उग्गहं । अणुण्णविय भुंजिज्ज पाणभोयणं, जाइत्ता साहंमियाण उग्गहं ॥३॥ आहारगुत्ते अविभूसियप्पा, इत्थिं न निज्झाइ न संथवेज्जा । बुद्धो मुणी खुड्डकहं न कुज्जा, धम्माणुपेही संधए बंभचेरं ॥४॥ जे सद्दरूवरसगंधमागए, फासे य संपप्प मणुण्णपावए । गिहीपदोसं न करेज्ज पंडिए, स होइ दंते विरए अकिंचणे ॥५॥ गाथाः पञ्च, आसां व्याख्या-ईरणम् ईर्या, गमनमित्यर्थः, तस्यां समितः-सम्यगित ईर्यासमितः, ईर्यासमितता प्रथमभावना. यतोऽसमितः प्राणिनो हिंसेदतः सदा यतः-सर्वकालमुपयुक्तः सन् 'उवेह भुंजेज्ज व पाणभोयणं' 'उवेह'त्ति अवलोक्य भुञ्जीत पानभोजनम्, अनवलोक्य भुञ्जानः प्राणिनो हिंसेत्, अवलोक्य भोक्तव्यं द्वितीयभावना, एवमन्यत्राप्यक्षरगमनिका कार्या, आदाननिक्षेपौ-पात्रादेर्ग्रहणमोक्षौ आगमप्रसिद्धौ जुगुप्सति-करोत्यादाननिक्षेपजुगुप्सकः, अजुगुप्सन् प्राणिनो हिंस्यात् तृतीयभावना, संयतः-साधुः समाहितः सन् संयमे 'मणोवइ'त्ति अदुष्टं मनः प्रवर्तयेत्, दुष्टं प्रवर्तयन् प्राणिनो हिंसेत् चतुर्थी भावना, एवं वाचमपि, पञ्चमी भावना, गताः प्रथमव्रतभावनाः । द्वितीयव्रतभावनाः प्रोच्यन्ते-'अहस्ससच्चे'त्ति अहास्यात् सत्यः, हास्यपरित्यागादित्यर्थः, हास्यादनृतमपि ब्रूयात्, अतो हास्यपरित्यागः प्रथमभावना,

अनुविचिन्त्य-पर्यालोच्य भाषेत, अन्यथाऽनृतमपि ब्रूयात्, द्वितीयभावना, यः क्रोधं लोभं भयमेव वा त्यजेत्, स इत्थम्भूतो दीर्घरात्रं-मोक्षं समुपेक्ष्य-सामीप्येन(द्रष्टा) दृष्ट्वा 'सिया' स्यात् मुनिरेव मृषां परिवर्जेत सदा, क्रोधादिभ्योऽनृतभाषणादिति भावनात्रयम्, गता द्वितीयव्रतभावनाः । तृतीयव्रतभावनाः प्रोच्यन्ते-'स्वयमेव' आत्मनैव प्रभुं प्रभुसंदिष्टं वाऽधिकृत्य अवग्रहयाच्ञायां प्रवर्तते अनुविचिन्त्य, अन्यथाऽदत्तं गृह्णीयात्, प्रथमभावना, 'घडे मइमं निसम्म'त्ति तत्रैव तृणाद्यनुज्ञापनायां चेष्टेत मतिमान् **निशम्य** आकर्ण्य प्रतिग्रहदातृवचनम्, अन्यथा तददत्तं गृह्णीयात्, परिभोग इति द्वितीया भावना, 'सइ भिक्खु उग्गहं'ति सदा भिक्षुरवग्रहं स्पष्टमर्यादयाऽनुज्ञाप्य भजेत, अन्यथाऽदत्तं संगृह्णीयात्, तृतीया भावना, अनुज्ञाप्य गुरुमन्यं वा भुञ्जीत पानभोजनम्, अन्यथाऽदत्तं गृह्णीयात्, चतुर्थी भावना, याचित्वा साधर्मिकाणामवग्रहं स्थानादि कार्यम्, अन्यथा तृतीयव्रतविराधनेति पञ्चमी भावना, उक्तास्तृतीयव्रतभावनाः । साम्प्रतं चतुर्थव्रतभावनाः प्रोच्यन्ते— 'आहारगुत्ते'त्ति आहारगुप्तः स्यात्, नातिमात्रं स्निग्धं वा भुञ्जीत, अन्यथा ब्रह्मव्रतविराधकः स्यात्, प्रथमा भावना, अविभूषितात्मा स्याद्-विभूषां न कुर्याद्, अन्यथा ब्रह्मव्रतविराधकः स्यात्, द्वितीया भावना, स्त्रियं न निरीक्षेत तद्व्यतिरेकादिन्द्रियाणि नाऽऽलोकयेद्, अन्यथा ब्रह्मव्रतविराधकः स्यात्, तृतीया भावना, 'न संथवेज्ज'त्ति न स्त्र्यादिसंसक्तां वसतिं सेवेत, अन्यथा ब्रह्मविराधकः स्यात्, चतुर्थी भावना, **बुद्धः** अवगततत्त्वः **मुनिः** साधुः क्षुद्रकथां न कुर्यात् स्त्रीकथां स्त्रीणां वेति, अन्यथा ब्रह्मविराधकः स्यात्, पञ्चमी भावना, 'धम्म(धम्माणु)पेही संधए बंभचेरं'ति निगदसिद्धम्, उक्ताश्चतुर्थव्रतभावनाः । पञ्चमव्रतभावनाः प्रोच्यन्ते-यः शब्दरूपरसगन्धानागतान्, प्राकृतशैल्याऽलाक्षणिकोऽनुस्वारः, स्पर्शांश्च संप्राप्य **मनोज्ञ-पापकान्** इष्टानिष्टानित्यर्थः, **गृद्धिम्** अभिष्वङ्गलक्षणाम्, प्रद्वेषः प्रकटस्तं न कुर्यात् पण्डितः, स भवति दान्तो विरतोऽकिञ्चन इति, अन्यथाऽभिष्वङ्गादेः पञ्चममहाव्रतविराधना स्यात्, पञ्चापि भावनाः, उक्ताः पञ्चमहाव्रतभावनाः, अथवाऽसम्मोहार्थं यथाक्रमं प्रकटार्थाभिरेव भाष्यगाथाभिः प्रोच्यन्ते— ''पणवीस भावणाओ पंचण्ह महव्वयाणमेयाओ । भणियाओ जिणगणहरपुज्जेहिं नवर सुत्तम्मि ॥१॥ इरियासमिइ पढमा आलोइयभत्तपाणभोई य । आयाणभंडनिक्खेवणा य समिई भवे तइया ॥२॥ मणसमिई वयसमिई पाणइवायम्मि होंति पंचेव । हासपरिहारअणुवीइभासणा कोहलोहभयपरिण्णा ॥३॥ एस मुसावायस्स अदिन्नदाणस्स होंतिमा पंच । पहुसंदिट्ठ पहू वा पढमोग्गह जाएँ अणुवीई ॥४॥ उग्गहणसील बिइया तत्थोग्गेण्हेज्ज उग्गहं जहियं । तणडगलमल्लगाई अणुण्णवेज्जा तहिं तहियं ॥५॥ तच्चम्मि उग्गहं तू अणुण्णवे सारिउग्गहे जा उ । तावइय मेर काउं न कप्पई बाहिरा तस्स ॥६॥ भावण चउत्थ साहम्मियाण सामण्णमण्णपाणं तु । संघाडगमाईणं भुंजेज्ज अणुण्णवियए उ ॥७॥ पंचमियं गंतूणं साहम्मियउग्गहं अणुण्णविया । ठाणाई चेएज्जा पंचेव अदिण्णदाणस्स ॥८॥ बंभवयभावणाओ णो अइमायापणीयमाहारे । दोच्च अविभूसणा ऊ विभूसवत्ती न उ हवेज्जा ॥९॥ तच्चा भावण इत्थीण इंदिया मणहरा ण णिज्झाए । सयणासणा विवित्ता इत्थिपसुविवज्जिया सेज्जा ॥१०॥ एस चउत्था

ण कहे इत्थीण कहं तु पंचमा एसा । सद्दा रूवा गंधा रस फासा पंचमी एए ॥११॥ रागद्दोसविवज्जण अपरिग्गहभावणाउ पंचेव । सव्वा पणवीसेया एयासु न वट्टियं जं तु ॥१२॥'' इति **आवश्यकसूत्र**स्य चतुर्थेऽध्ययने **हारिभद्र**यां वृत्तौ ॥

[पृ०१२० पं०७] ''सुयं मे आउसंतेण भगवया एवमक्खायं-इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नत्ताओ, कतराओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नत्ताओ ? इमा खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नत्ताओ, तंजधा- सेहे रातिणियस्स पुरतो गंता भवति, आसादणा सेहस्स ॥१॥ सेहे रायणियस्स सपक्खं गंता भवति, आसायणा सेहस्स ॥२॥ सेहे रायणियस्स आसन्नं गंता भवति, आसयणा सेहस्स ॥३॥ एवं एएणं अभिलावेणं *सेहे रातिणियस्स पुरओ चिट्ठित्ता भवति, आसायणा सेहस्स* ॥४॥ सेहे राईणियस्स सपक्खं चिट्ठित्ता भवति, आसायणा सेहस्स ॥५॥ सेहे रायणियस्स आसन्नं चिट्ठित्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥६॥ सेहे रायणियस्स पुरतो निसीइत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥७॥ सेहे रायणियस्स सपक्खं निसीइत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥८॥ सेहे रायणियस्स आसन्नं निसीइत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥९॥ सेहे रायणियेण सद्धिं बहिया विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा निक्खंते समाणे पुव्वामेव सेहतराए आयामेइ पच्छा रायणिए, आसादणा सेहस्स ॥१०॥ सेहे रायणिएण सद्धिं बहिया विहारभूमिं वा वियारभूमिं वा निक्खंते समाणे तत्थ पुव्वामेव सेहतराए आलोएति पच्छा रायणिए, आसायणा सेहस्स ॥११॥ केइ रायणियस्स पुव्वं संलवत्तए सिया ते पुव्वामेव सेहतरए आलवेति पच्छा रातिणिए, आसायणा सेहस्स ॥१२॥ सेहे रातिणियस्स रातो वा विआले वा वाहरमाणस्स अज्जो केइ सुत्ते ? के जागरे ? तत्थ सेहे जागरमाणे रातिणियस्स अपडिसुणेत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥१३॥ सेहे असणं वा ४ पडिग्गहित्ता पुव्वामेव सेहतरागस्स आलोएइ पच्छा रायणियस्स, आसादणा सेहस्स ॥१४॥ सेहे असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिगाहेत्ता पुव्वामेव सेहतरागस्स पडिदंसेति पच्छा रायणियस्स, आसादणा सेहस्स ॥१५॥ सेहे असणं वा ४ पडिग्गाहेत्ता तं पुव्वामेव सेहतरागं उवणिमंतेति पच्छा रायणियस्स, आसादणा सेहस्स ॥१६॥ सेहे रायणिएण सद्धिं असणं वा ४ पडिग्गाहेत्ता तं रायणियस्स अणापुच्छित्ता जस्स जस्स इच्छइ तस्स तस्स खद्धं खद्धं दलयइ, आसादणा सेहस्स ॥१७॥ सेहे असणं वा ४ पडिग्गाहित्ता राइणिएण सद्धिं आहारेमाणे तत्थ सेहे खद्धं खद्धं डाअं डाअं रसितं रसियं ऊसढं ऊसढं मणुण्णं मणुण्णं मणामं मणामं निद्धं निद्धं लुक्खं लुक्खं आहारेत्ता भवइ, आसादणा सेहस्स ॥१८॥ सेहे रायणियस्स वाहरमाणस्स अपडिसुणित्ता भवइ, आसादणा सेहस्स ॥१९॥ सेहे रायणियस्स वाहरमाणस्स तत्थगते चेव पडिसुणेत्ता भवति, आसायणा सेहस्स ॥२०॥ सेहे रायणियस्स किं ति वइत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥२१॥ सेहे रायणियं तुमं ति वत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥२२॥ सेहे रायणियस्स खद्धं खद्धं वत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥२३॥ सेहे रायणियं तज्जाएण तज्जाएण पडिभणित्ता

भवइ, आसादणा सेहस्स ॥२४॥ सेहे रातिणियस्स कहं कहेमाणस्स इति एवं ति वत्ता न भवति, आसायणा सेहस्स ॥२५॥ सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स नो सुमरसीति वत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥२६॥ सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स णो सुमणसे भवति, आसादणा सेहस्स ॥२७॥ सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स परिसं भेत्ता भवति, आसायणा सेहस्स ॥२८॥ सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स कहं आच्छिंदित्ता भवति, आसायणा सेहस्स ॥२९॥ सेहे रायणियस्स कहं कहेमाणस्स तीए परिसाए अणुट्ठिताए अभिन्नाए अवुच्छिन्नाए अव्वोगडाए दोच्चंपि तमेव कहं कथिता भवति, आसादणा सेहस्स ॥३०॥ सेहे रायणियस्स सेज्जासंथारगं पाएणं संघट्टित्ता हत्थेणं अणणुण्णवेत्ता गच्छति, आसादणा सेहस्स ॥३१॥ सेहे रायणियस्स सेज्जासंथारए चिट्ठित्ता वा निसीइत्ता वा तुयट्टित्ता वा भवइ, आसायणा सेहस्स ॥३२॥ सेहे रायणियस्स उच्चासणे वा समासणंसि वा चिट्ठित्ता वा निसीयित्ता वा तुयट्टित्ता वा भवति, आसादणा सेहस्स ॥३३॥ एताओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पन्नत्ताओ त्ति बेमि ॥'' इति **दशाश्रुतस्कन्धे** तृतीयेऽध्ययने [तृतीयस्यां दशायाम्] । विशेषतो जिज्ञासुभिः **दशाश्रुतस्कन्धचूर्णि**र्विलोकनीया ॥

[पृ०१३० पं०१५] ``साम्प्रतं हैमवतवर्षस्य जीवामाह– **सत्तत्तीस सहस्सा, छच्च सया जोयणाण चउसयरा । हेमवयवासजीवा, किंचूणा सोलस कला य ॥५४॥ व्या०** सप्तत्रिंशत्सहस्राणि षट् शतानि **चतुःसप्ततानि** चतुःसप्तत्यधिकानि योजनानां कलाश्च षोडश किञ्चिदूना, एतावती हैमवतवर्षस्य जीवा । तथाहि- हैमवतवर्षस्यावगाह इष्वपरपर्यायः सप्ततिसहस्रप्रमाणः ७०००० । तेन जम्बूद्वीपविष्कम्भः कलारूप एकोनविंशतिलक्षप्रमाण ऊनः क्रियते, जाता अष्टादश लक्षास्त्रिंशत्सहस्राणि १८३०००० । एष राशिर्यथोक्तेनावगाहेन ७०००० गुण्यते, गुणिते च सति जात एककः द्विकः अष्टकः एककः अष्टौ शून्यानि १२८१००००००००। एष राशिर्भूयश्चतुर्भिर्गुण्यते, जातः पञ्चकः एककः द्विकः चतुष्कः अष्टौ शून्यानि ५१२४०००००००० । अस्य वर्गमूलानयने लब्धः सप्तकः एककः पञ्चकः अष्टकः द्विकः एककः ७१५८२१ । शेषं तूद्धरति द्विकः नवकः पञ्चकः नवकः पञ्चकः नवकः २९५९५९ । छेदराशिः एककः चतुष्कः त्रिकः एककः षट्कः चतुष्कः द्विकः १४३१६४२ । वर्गमूललब्धस्य तु कलाराशेर्योजनकरणार्थमेकोनविंशत्या भागो ह्रियते, लब्धानि योजनानां सप्तत्रिंशत्सहस्राणि षट् शतानि चतुःसप्तत्यधिकानि कलाश्च पञ्चदश ३७६७४ क० १५, उद्धरितराश्यपेक्षया किञ्चिदूनैका कला लभ्यते इति परिभाव्य 'किंचूणा सोलस कला य' इत्युक्तम् ॥५४॥'' - इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ॥

[पृ०१३१ पं०१३, १५७] ``अधुनाऽस्यैव हैमवतवर्षस्य धनुःपृष्ठं बाहां चाह– **चत्तारि य सत्त सया, अडतीससहस्स दस कला य धणु । बाहा सत्तट्ठिसया, पणपन्ना तिन्नि य कलाओ ॥५५॥ व्या०** अष्टात्रिंशत्सहस्राणि सप्त शतानि चत्वारिंशदधिकानि योजनानां दश च कला इत्येतावत्प्रमाणं हैमवतवर्षस्य धनुःपृष्ठम् । तथाहि– हैमवतवर्षस्येषुपरिमाणं सप्ततिसहस्राणि

७००००। अस्य वर्गे जातः चतुष्कः नवकः शून्यान्यष्टौ ४९०००००००० । एष राशिर्भूयः षड्भिर्गुण्यते, जातः द्विकः नवकः चतुष्कः अष्टौ च शून्यानि २९४०००००००० । एतत् प्रागुक्ते हैमवतवर्षजीवावर्गे पञ्चकः एककः द्विकः चतुष्कः अष्टौ शून्यानि ५१२४०००००००० इत्येवंपरिमाणे प्रक्षिप्यते, जातः पञ्चकः चतुष्क एककः अष्टकः अष्टौ शून्यानि ५४१८०००००००० । अस्य वर्गमूलानयने लब्धः सप्तकः त्रिकः षट्कः शून्यं सप्तकः शून्यम् ७३६०७० । शेषमुद्धरितं नवकः पञ्चकः पञ्चकः एककः शून्यं शून्यम् ९५५१०० । छेदराशिरेककः चतुष्कः सप्तकः द्विकः एककः चतुष्कः शून्यम् १४७२१४०। वर्गमूललब्धः कलाराशिरेकोनविंशत्या योजनकरणाय भज्यते, लब्धानि योजनानामष्टात्रिंशत्सहस्राणि सप्त शतानि चत्वारिंशदधिकानि योजनानां कलाः दश ३८७४० क० १० ॥ तथा सप्तषष्टिशतानि **पञ्चपञ्चाशानि** पञ्चपञ्चाशदधिकानि योजनानां कलास्तिस्रः ६७५५ क० ३ हैमवतवर्षस्य बाहा । तथाहि- महतो धनुःपृष्ठात् हैमवतवर्षसत्कात् अष्टात्रिंशत्सहस्राणि सप्त शतानि चत्वारिंशदधिकानि योजनानां कला दश ३८७४० क० १० इत्येवंपरिमाणात् डहरकं धनुःपृष्ठं क्षुल्लहिमवतः संबन्धि पञ्चविंशतिसहस्राणि द्वे शते त्रिंशदधिके कलाश्चतस्रः २५२३० क० ४ इत्येवंप्रमाणं शोध्यते, शोधिते च सति तस्मिन् जातं शेषमिदम्— एककः त्रिकः पञ्चकः एककः शून्यं १३५१० कलाश्च षट् ६ । अस्यार्धे लब्धानि योजनानां सप्तषष्टिशतानि पञ्चपञ्चाशदधिकानि तिस्रः कलाः ६७५५ क० ३ ॥५५॥

[पं०१८] ''सम्प्रति मेरोः काण्डादिवक्तव्यतामाह— **मेरुस्स तिन्नि कंडा, पुढवोवलवइरसक्करा पढमे । रयए य जायरूवे, अंके फलिहे य बीयम्मि ॥३१२॥ एगागारं तइयं, तं पुण जंबूणयामयं होइ । जोयणसहस्स पढमं, बाहल्लेणं च बीयं तु ॥३१३॥ तेवट्ठि सहस्साइं, तइयं छत्तीस जोणसहस्सा ।** व्या० मेरोः पर्वतस्य त्रीणि काण्डानि, काण्डं नाम विशिष्टपरिमाणानुगतो विच्छेदः, तत्र प्रथमे काण्डे पृथिव्युपलवज्रशर्कराः, किमुक्तं भवति ? प्रथमं काण्डं क्वचित्पृथिवीबहुलम्, क्वचिदुपलबहुलम्, क्वचिद्वज्रबहुलम्, क्वचिच्छर्कराबहुलम् । तथा द्वितीयकाण्डे रजतम्, जातरूपम्, अङ्करत्नानि, स्फटिकरत्नानि च, अत्रापीयं भावना— द्वितीयं काण्डं क्वचिद्रजतबहुलम्, क्वचिज्जातरूपबहुलम्, क्वचिदङ्करत्नबहुलम्, क्वचित्स्फटिकरत्नबहुलम् । तृतीयं पुनरेकाकारम्, तच्च सर्वात्मना जाम्बूनदमयम्। उक्तं च— ''मंदरस्स णं भंते पव्वयस्स कइ कंडा पन्नत्ता ? गोयमा! तिन्नि कंडा पन्नत्ता, तंजहा— हेट्ठिल्ले कंडे मज्झिल्ले कंडे उवरिमे कंडे । मंदरस्स णं भंते पव्वयस्स हिट्ठिल्ले कंडे कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! चउव्विहे पन्नत्ते, तंजहा— पुढवी उवले वइरे सक्करा। मंदरस्स णं भंते ! पव्वयस्स मज्झिल्ले कंडे कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा! चउविहे पन्नत्ते, तंजहा- अंके फलिहे रयए जायरूवे । मंदरस्स णं भंते ! पव्वयस्स उवरिमे कंडे कइविहे पन्नत्ते ? गोयमा ! एगागारे पन्नत्ते, तंजहा— सव्वजंबूणयामए'' [ ] । तत्र प्रथमं काण्डं बाहल्येन योजनसहस्रं योजनसहस्रपरिमाणम्, तच्च भूमाववगाढम्, द्वितीयं तु त्रिषष्टिसहस्राणि, तच्च समतलभूभागादारभ्य

प्रतिपत्तव्यम्, तृतीयं षट्त्रिंशद्योजनसहस्राणि । एवं काण्डत्रयपरिमितो मेरुर्योजनलक्षप्रमाणः ॥ **मेरुस्स उवरि चूला, उव्विद्धा जोयणदुवीसं ॥३१४॥ एवं सव्वग्गेणं, समूसिओ मेरु लक्खमइरित्तं । व्या०** मेरोर्लक्षप्रमाणस्योपरि योजनसहस्रप्रमाणायामविष्कम्भस्योपरितनस्य तलस्य बहुमध्यभागे द्वे विंशती (४०) योजनानामुद्विद्धा चूला, एवं सर्वात्मना परिमाणतश्चिन्त्यमानो मेरुर्योजनलक्षमतिरिक्तं भवति चत्वारिंशदधिकयोजनलक्षप्रमाणो भवतीत्यर्थः ॥'' - इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ॥

[पृ०१४४ पं०२३] ''साम्प्रतं महाहिमवतो जीवामाह– **तेवन्न सहस्साइं, नव य सया जोयणाण इगतीसा । जीवा महाहिमवए, अद्ध कला छक्कलाओ य ॥५६॥ व्या०** महाहिमवति पर्वते जीवा त्रिपञ्चाशत्सहस्राणि नव शतानि एकत्रिंशदधिकानि योजनानां षट् कलाः परिपूर्णाः अर्धकला च । तथाहि– महाहिमवतोऽवगाहो लक्षं पञ्चाशत्सहस्राणि १५०००० । अनेन जम्बूद्वीपविष्कम्भः कलारूप एकोनविंशतिलक्षप्रमाण ऊनः क्रियते, ततो जातं शेषं सार्धाः सप्तदश लक्षाः १७५००००। एतावदवगाहेनोक्तरूपेण १५०००० गुण्यते, जातो द्विकः षट्कः द्विकः पञ्चकः अष्टौ शून्यानि २६२५००००००००० । एष राशिः पुनश्चतुर्भिर्गुण्यते, जातः एककः शून्यं पञ्चकः शून्यानि दश १०५०००००००००००, एष महाहिमवतो जीवावर्गः, अस्य वर्गमूलमानीयते, लब्धः एककः शून्यं द्विकः चतुष्कः षट्कः नवकः पञ्चकः १०२४६९५ । शेषमुद्धरितमेककः पञ्चकः षट्कः नवकः सप्तकः पञ्चकः १५६९७५ । छेदराशिः द्विकः शून्यं चतुष्कः नवकः त्रिकः नवकः शून्यं २०४९३९० । वर्गमूललब्धस्य तु राशेर्योजनकरणार्थमेकोनविंशत्या भागो ह्रियते, लब्धानि योजनानां त्रिपञ्चाशत्सहस्राणि नव शतानि एकत्रिंशदधिकानि कलाः षट् ५३९३१ क० ६ । उद्धरितस्तु कलाराशिरर्धकलानयनाय द्विकेन गुण्यते, ततश्छेदराशिना भज्यते इति लब्धमेकं कलार्धमिति ॥५६ ॥'' इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ।

[पृ०१४८ पं०९] ''साम्प्रतमस्यैव महाहिमवतो धनुःपृष्ठं बाहां चाह– **सत्तावन्न सहस्सा, धणुपट्ठं तेणउय दुसय दस य कला । बाहा बाणुउइ सया, छसत्तरा नव कलद्धं च ॥५७॥ व्या०** महाहिमवतो धनुःपृष्ठं सप्तपञ्चाशत्सहस्राणि द्वे शते त्रिनवत्यधिके योजनानां कला दश । तथाहि– महाहिमवत इषुः सार्धलक्षप्रमाणः १५००००, तस्य वर्गो द्विकः द्विकः पञ्चकः शून्यान्यष्टौ २२५००००००००० । एष राशिः षड्भिर्गुण्यते, जात एककः त्रिकः पञ्चकः शून्यानि नव १३५०००००००००, एतत् प्रागभिहिते महाहिमवतो जीवावर्गे एककः शून्यं पञ्चकः शून्यानि दश १०५०००००००००००० इत्येवंपरिमाणे प्रक्षिप्यते, जात एककः एककः अष्टकः पञ्चकः शून्यानि नव ११८५०००००००००, अस्य वर्गमूलानयने लब्ध एककः शून्यम् अष्टकः अष्टकः पञ्चकः सप्तकः सप्तकः १०८८५७७ । शेषमिदम् एककः एककः पञ्चकः शून्यं सप्तकः एककः ११५०७१ । छेदराशिर्द्विकः एककः सप्तकः सप्तकः एककः पञ्चकः चतुष्कः २१७७१५४ । वर्गमूललब्धस्य कलाराशेर्योजनानयनार्थमेकोनविंशत्या भागो ह्रियते, लब्धानि योजनानां सप्तपञ्चाशत्सहस्राणि द्वे शते

त्रिनवत्यधिके कला दश ५७२९३ क० १० ॥ तथा द्विनवतिशतानि **षट्सप्ततानि** षट्सप्तत्यधिकानि योजनानां नव कला एकं च कलार्धमित्येतावत्प्रमाणा पूर्वस्यामपरस्यां च दिशि प्रत्येकं महाहिमवतो बाहा । तथाहि– महतो धनुःपृष्ठान्महाहिमवतः सत्कात् सप्तपञ्चाशत्सहस्राणि द्वे शते त्रिनवत्यधिके कला दश ५७२९३ क० १० इत्येवंपरिमाणात् लघु धनुःपृष्ठं हैमवतवर्षसंबन्धि योजनानामष्टात्रिंशत्सहस्राणि सप्त शतानि चत्वारिंशदधिकानि कला दश ३८७४० क० १० एवंसङ्ख्यमपनीयते, अपनीते च सति तस्मिन् जातं शेषमिदम् एककः अष्टकः पञ्चकः पञ्चकः त्रिकः १८५५३, अस्यार्धे लब्धानि योजनानां द्विनवतिशतानि षट्सप्तत्यधिकानि नव कला एकं कलार्धं ९२७६ क० ९ अर्धम् १ ॥५७॥'' इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ।

[पृ०१५२ पं०३] ''**केण**मित्यादि, केन कारणेन शुक्लपक्षे चन्द्रो वर्द्धते ? केन वा कारणेन चन्द्रस्य कृष्णपक्षे परिहाणिर्भवति, केन वा **अनुभावेन** प्रभावेण चन्द्रस्य एकः पक्षः कृष्णो भवति एको ज्योत्स्नः - शुक्ल इति ? एवमुक्ते भगवानाह- **किण्ह**मित्यादि, इह द्विविधो राहुस्तद्यथा- पर्वराहुः नित्यराहुश्च, तत्र पर्वराहुः स उच्यते यः कदाचिदकस्मात् समागत्य निजविमानेन चन्द्रविमानं सूर्यविमानं च अन्तरितं करोति, अन्तरिते च कृते लोके ग्रहणमिति प्रसिद्धिः, स इह न गृह्यते, यस्तु नित्यराहुस्तस्य विमानं कृष्णम्, तच्च तथाजगत्स्वाभाव्यात् चन्द्रेण सह **नित्यं** सर्वकालमविरहितं तथा **चतुरङ्गुलेन** चतुर्भिरङ्गुलैर**प्राप्तं** सत् **चन्द्रविमानस्याधस्ताच्चरति**, तच्चैवं चरत् शुक्लपक्षे शनैः शनैः प्रकटीकरोति चन्द्रमसं कृष्णपक्षे च शनैः शनैरावृणोति, तथा चाह- **बावट्ठि**मित्यादि, इह द्वाषष्टिभागीकृतस्य चन्द्रविमानस्य द्वौ भागावुपरितनावपाकृत्य शेषस्य पञ्चदशभिर्भागे हृते ये चत्वारो भागा लभ्यन्ते ते द्वाषष्टिशब्देनोच्यन्ते, अवयवे समुदायोपचारात्, एतच्च व्याख्यानं **जीवाभिगमचूर्ण्या**दिदर्शनतः कृतम्, न पुनः स्वमनीषिकया, तथा चास्या एव गाथाया व्याख्याने **जीवाभिगम**चूर्णिः- ''चन्द्रविमानं द्वाषष्टिभागीक्रियते, ततः पञ्चदशभिर्भागो ह्रियते, तत्र चत्वारो भागा द्वाषष्टिभागानां पञ्चदशभागेन लभ्यन्ते, शेषौ द्वौ भागौ, एतावद् दिने दिने शुक्लपक्षस्य राहुणा मुच्यते'' इत्यादि, एवं च सति यत् **समवायाङ्गसूत्रम्** - 'सुक्कपक्खस्स दिवसे दिवसे चंदो बावट्ठिं भागे परिवड्ढइ'त्ति तदप्येवमेव व्याख्येयम्, सम्प्रदायवशाद्धि सूत्रं व्याख्येयम्, न स्वमनीषिकया, सम्प्रदायश्च यथोक्तस्वरूप इति, तत्र शुक्लपक्षस्य दिवसे **यत्** यस्मात् कारणात् चन्द्रो द्वाषष्टिं द्वाषष्टिं भागान्- द्वाषष्टिभागसत्कान् चतुरश्चतुरो भागान् यावत्परिवर्धते, **कालेन** कृष्णपक्षेन पुनर्दिवसे दिवसे तानेव द्वाषष्टिभागसत्कान् चतुरश्चतुरो भागान् **क्षपयति** परिहापयति । एतदेव व्याचष्टे- **पन्नरस** इत्यादि, कृष्णपक्षे प्रतिदिवसं राहुविमानं स्वकीयेन पञ्चदशेन भागेन चन्द्रविमानं पञ्चदशमेव भागं **वृणोति** आच्छादयति, शुक्लपक्षे तु पुनस्तमेव प्रतिदिवसं पञ्चदशभागम् आत्मीयेन पञ्चदशभागेन **व्यतिक्रामति** मुञ्चति, किमुक्तं भवति ?-कृष्णपक्षे प्रतिपदं आरभ्यात्मीयेन पञ्चदशेन पञ्चदशेन भागेन प्रतिदिवसमेकैकं पञ्चदशभागमुपरितनभागादारभ्यावृणोति, शुक्लपक्षे तु प्रतिपद आरभ्य तेनैव क्रमेण

प्रतिदिवसमेकैकं पञ्चदशभागं प्रकटीकरोति, तेन जगति चन्द्रमण्डलवृद्धिहानी प्रतिभासेते, स्वरूपतः पुनश्चन्द्रमण्डलमवस्थितमेव । तथा चाह- **एवं वड्ढइ** इत्यादि, **एवं** राहुविमानेन प्रतिदिवसं क्रमेणानावरणकरणतो **वर्धते** वर्धमानः प्रतिभासते चन्द्रः, एवं राहुविमानेन प्रतिदिवसं क्रमेणावरणकरणतः **प्रतिहानिः** प्रतिहानिप्रतिभासो भवति चन्द्रस्य विषये, एतेनैवानुभावेन कारणेन एकः पक्षः **कालः** कृष्णो भवति, यत्र चन्द्रस्य परिहाणिः प्रतिभासते, एकस्तु **ज्योत्स्नः** शुक्लो यत्र चन्द्रविषयो वृद्धिप्रतिभासः ।'' इति **सूर्यप्रज्ञप्तेः** एकोनविंशतितमे प्राभृते १०० तमसूत्रस्य **मलयगिरि**सूरिविरचितायां वृत्तौ ।

[पृ०१५२ पं०१८] ``इह द्विविधो राहुस्तद्यथा-पर्वराहुर्नित्यराहुश्च, तत्र पर्वराहुः स उच्यते यः कदाचिदकस्मात् समागत्य निजविमानेन चन्द्रविमानं सूर्यविमानं वाऽन्तरितं करोति, अन्तरिते च कृते लोके ग्रहणमिति प्रसिद्धिः, स इह न गृह्यते, यस्तु नित्यराहुस्तस्य विमानं कृष्णं तथाजगत्स्वाभाव्याच्चन्द्रेण सह 'नित्यं' सर्वकालमविरहितं तथा 'चउरंगुलेन' चतुरङ्गुलैरप्राप्तं सत् 'चन्द्रस्य' चन्द्रविमानस्याधस्ताच्चरति, तच्चैवं चरत् शुक्लपक्षे शनैः शनैः प्रकटीकरोति चन्द्रमसं कृष्णपक्षे च शनैः शनैरावृणोति, तथा चाह– इह द्राषष्टिभागीकृतस्य चन्द्रविमानस्य द्वौ भागावुपरितनौ सदाऽनावार्यस्वभावत्वाद् अपाकृत्य शेषस्य पञ्चदशभिर्भागे हृते ये चत्वारो भागा लभ्यन्ते ते द्राषष्टिशब्देनोच्यन्ते, अवयवे समुदायोपचारात्, एतच्च व्याख्यानमेतस्यैव **चूर्णि**मुपजीव्य कृतं न स्वमनीषिकया, तथा च तद्ग्रन्थः– ``चन्द्रविमानं द्राषष्टिभागीक्रियते, ततः पञ्चदशभिर्भागोऽपहियते, तत्र चत्वारो भागा द्राषष्टिभागानां पञ्चदशभागेन लभ्यन्ते शेषौ द्वौ, एतावद् दिने दिने शुक्लपक्षस्य राहुणा मुच्यत'' इति, एवं च सति यत्समवायाङ्गसूत्रम्– ``सुक्कपक्खस्स दिवसे दिवसे बावट्ठिं बावट्ठिं भागे परिवड्ढइ'' इति, तदप्येवमेव व्याख्येयम्, संप्रदायवशाद्धि सूत्रं व्याख्येयम्, न स्वमनीषिकया, अन्यथा महदाशातनाप्रसक्तेः, संप्रदायश्च यथोक्तस्वरूप इति, तत्र शुक्लपक्षस्य दिवसे **यद्** यस्मात् कारणाच्चन्द्रो **द्राषष्टिद्राषष्टिभागान्** द्राषष्टिभागसत्कान् चतुरश्चतुरो भागान् यावत् परिवर्द्धते, **कालेन** कृष्णपक्षेण पुनर्दिवसे २ तानेव द्राषष्टिभागसत्कान् चतुरश्चतुरो भागान् 'प्रक्षपयति' परिहापयति, एतदेव व्याचष्टे– कृष्णपक्षे प्रतिदिवसं राहुविमानं स्वकीयेन पञ्चदशेन भागेन तं 'चन्द्रं' चन्द्रविमानं पञ्चदशमेव भागं 'वृणोति' आच्छादयति, शुक्लपक्षे पुनस्तमेव प्रतिदिवसं पञ्चदशभागमात्मीयेन पञ्चदशेन भागेन 'व्यतिक्रामति' मुञ्चति, किमुक्तं भवति ? कृष्णपक्षे प्रतिपद आरभ्यात्मीयेन पञ्चदशेन पञ्चदशेन भागेन प्रतिदिवसमेकैकं पञ्चदशभागमुपरितन-भागादारभ्यावृणोति, शुक्लपक्षे तु प्रतिपद आरभ्य तेनैव क्रमेण प्रतिदिवसमेकैकं पञ्चदशभागं प्रकटीकरोति, तेन जगति चन्द्रमण्डलस्य वृद्धिहानी प्रतिभासेते, स्वरूपतः पुनश्चन्द्रमण्डलमवस्थितमेव, तथा चाह– एवं राहुविमानेन प्रतिदिवसं क्रमेणानावरणकरणतो 'वर्द्धते' वर्द्धमानः प्रतिभासते चन्द्रः'' इति **जीवाभिगम**सूत्रस्य तृतीयायां प्रतिपत्तौ द्वितीये उद्देशके **मलयगिरि**विरचितायां **वृत्तौ** ॥

[पृ०१५७ पं०२२] ''अधुनाऽस्यैव क्षुल्लहिमवतो धनुःपृष्ठं बाहां चाह– **धणुपट्ट कलचउक्कं, पणुवीससहस्स दुसय तीसऽहिया । बाहा सोलद्धकला, तेवन्न सया य पन्नहिया ॥५३॥** **व्या०** पञ्चविंशतिसहस्राणि द्वे शते त्रिंशदधिके योजनानां कलाश्चतस्रः २५२३० क० ४ इत्येतावत्परिमाणं क्षुल्लहिमवतो धनुःपृष्ठम् । तथाहि– क्षुल्लहिमवतः इषुपरिमाणं त्रिंशत्सहस्राणि कलानाम् ३००००, अस्य वर्गो विधीयते, जातो नवकः अष्टौ शून्यानि ९००००००००० । एष राशिर्भूयः षड्भिर्गुण्यते, जातः पञ्चकः चतुष्कः अष्टौ शून्यानि ५४०००००००० । एतत् क्षुल्लहिमवतो जीवावर्गे प्रागुक्तस्वरूपे द्विकः द्विकः चतुष्कः चतुष्कः अष्टौ शून्यानि २२४४०००००००० इत्येवंपरिमाणे प्रक्षिप्यते । ततो जातो राशिरयम्– द्विकः द्विकः नवकः अष्टकः अष्टौ शून्यानि २२९८०००००००० । अस्य वर्गमूलानयने लब्धः चतुष्कः सप्तकः नवकः त्रिकः सप्तकः चतुष्कः ४७९३७४ । शेषं तूद्धरितं पञ्चकः षट्कः अष्टकः एककः द्विकः चतुष्कः ५६८१२४ । छेदराशिः नवकः पञ्चकः अष्टकः सप्तकः चतुष्कः अष्टकः ९५८७४८ । वर्गमूललब्धस्तु कलाराशिर्योजनकरणार्थमेकोनविंशत्या भज्यते, लब्धानि योजनानां पञ्चविंशतिसहस्राणि द्वे शते त्रिंशदधिके चतस्रः कलाः २५२३० क० ४ । तथा त्रिपञ्चाशच्छतानि पञ्चाशदधिकानि योजनानां **षोडशार्धकलाः** सार्धपञ्चदशकलाः ५३५० क० १५ $\frac{१}{२}$ इत्येतावत्प्रमाणा पूर्वस्यामपरस्यां च दिशि प्रत्येकं बाहा । तथाहि– महतो धनुःपृष्ठात् क्षुल्लहिमवतः संबन्धिनः पञ्चविंशतिसहस्राणि द्वे शते त्रिंशदधिके योजनानां कलाश्चतस्रः २५२३० क० ४ इत्येवंपरिमाणात् लघु धनुःपृष्ठमुत्तरभरतार्धसंबन्धि चतुर्दश सहस्राणि पञ्च शतानि अष्टाविंशत्यधिकानि योजनानां कलाश्चैकादश १४५२८ क० ११ इत्येवंप्रमाणं शोध्यते, शोधिते च सति जातं शेषमिदं दश सहस्राणि सप्त शतानि एककोत्तराणि योजनानां कलाश्च द्वादश १०७०१ क० १२ । एतेषामर्धे लब्धानि त्रिपञ्चाशच्छतानि पञ्चाशदधिकानि योजनानां कलाः पञ्चदश एकं कलार्धम् ५३५० क० १५ अर्धम् १ ॥५३॥'' -इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ॥

[पृ०१६२ पं०७] ''**मोत्तूण सगमबाहं पढमाइ ठिईइ बहुतरं दव्वं । एत्तो विसेसहीणं जावुक्कोसं ति सव्वेसिं ॥८३॥ व्या०**- तदेवं कृता स्थितिस्थानप्ररूपणा । सम्प्रति निषेकप्ररूपणावसरः। तत्र च द्वे अनुयोगद्वारे-अनन्तरोपनिधा, परम्परोपनिधा च । तत्रान्तरोपनिधाप्ररूपणार्थमाह- **मोत्तूण** त्ति सर्वस्मिन्नपि कर्मणि बध्यमाने आत्मीयमात्मीयमबाधाकालं **मुक्त्वा** परित्यज्य ऊर्ध्वं दलिकनिक्षेपं करोति । तत्र प्रथमायां स्थितौ समयलक्षणायां प्रभूततरं द्रव्यं कर्मदलिकं निषिञ्चति । एत्तो विसेसहीणं ति इतः प्रथमस्थितेरूर्ध्वं द्वितीयादिषु समयसमयप्रमाणासु विशेषहीनं विशेषहीनं कर्मदलिकं निषिञ्चति । तथाहि- प्रथमस्थितेः सकाशात् द्वितीयस्थितौ विशेषहीनम्, ततोऽपितृतीयस्थितौ विशेषहीनम्, ततोऽपि चतुर्थस्थितौ विशेषहीनम्, एवं विशेषहीनं विशेषहीनं तावद्वाच्यं यावत्तत्तत्समय बध्यमानकर्मणामुत्कृष्टा स्थितिश्चरमसमय इत्यर्थः ॥८३॥'' इति **मलयगिरिसूरि**विरचितायां **कर्मप्रकृति**वृत्तौ ॥

[पृ०१६७ पं०५] ''अधुना हरिवर्षस्य जीवामाह– **एगुत्तरा नव सया, तेवत्तरिमेव जोयणसहस्सा। जीवा सत्तरस कला, अद्धकला चेव हरिवासे ।।५८।। व्या० हरिवर्षे** हरिवर्षाभिधस्य क्षेत्रस्य जीवा त्रिसप्ततिसहस्राणि नव शतानि एकोत्तराणि योजनानां कलाः सप्तदश अर्धकला च । तथाहि– हरिवर्षस्यावगाहस्त्रीणि लक्षाणि दश सहस्राणि ३१००००, अनेन जम्बूद्वीपविष्कम्भः कलारूप एकोनविंशतिलक्षप्रमाणो हीनः क्रियते, जाताः शेषाः पञ्चदश लक्षा नवतिसहस्राणि १५९००००, एतदुक्तप्रमाणेनावगाहेन ३१०००० गुण्यते, जातः चतुष्कः नवकः द्विकः नवकः अष्टौ शून्यानि ४९२९०००००००० । एष राशिर्भूयश्चतुर्भिर्गुण्यते, जात एककः नवकः सप्तकः एककः षट्कः शून्यानि चाष्टौ १९७१६०००००००० । एष हरिवर्षस्य जीवावर्गः, अस्य वर्गमूलानयने लब्ध एककः चतुष्कः शून्यं चतुष्कः एककः त्रिकः षट्कः १४०४१३६ । शेषं तिष्ठति द्विकः शून्यं नवकः त्रिकः पञ्चकः शून्यं चतुष्कः २०९३५०४ । छेदराशिः द्विकः अष्टकः शून्यम् अष्टकः द्विकः सप्तकः द्विकः २८०८२७२ । ततो योजनकरणार्थं वर्गमूललब्धमेकोनविंशत्या भज्यते, लब्धानि योजनानां त्रिसप्ततिसहस्राणि नव शतानि एकोत्तराणि कलाः सप्तदश ७३९०१ क० १७ । उद्धरितस्तु कलाराशिरर्धकलानयनाय द्विकेन गुण्यते, गुणयित्वा च यथोक्तप्रमाणेन छेदराशिना भज्यते लब्धमेकं कलार्धम्, शेषस्त्वर्धकलाराशिरेवंरूपस्तिष्ठति एककः त्रिकः सप्तकः अष्टकः सप्तकः त्रिकः षट्कः १३७८७३६ ।।५८।।'' इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ।

[पृ०१७९ पं०११] ''साम्प्रतमस्यैव हरिवर्षस्य बाहां धनुःपृष्ठं चाह– **बाहा तेर सहस्सा, एगट्ठा तिसय छक्कलऽद्धकला । धणुपट्ठ कलं चउक्कं, चुलसीइ सहस्स सोलहिया ।।५९।। व्या०** हरिवर्षस्य पूर्वस्यामपरस्यां च दिशि प्रत्येकं बाहापरिमाणं त्रयोदश सहस्राणि त्रीणि शतानि **एकषष्टानि** एकषष्ट्यधिकानि योजनानां षट् कलाः एकं च कलार्धम् । तथाहि– महतो धनुःपृष्ठात् हरिवर्षसत्कात् चतुरशीतिर्योजनानां सहस्राणि षोडशाधिकानि कलाश्चतस्रः ८४०१६ क० ४ इत्येवंपरिमाणात् डहरकं धनुःपृष्ठं महाहिमवतः संबन्धि सप्तपञ्चाशत्सहस्राणि द्वे शते त्रिनवत्यधिके कला दश ५७२९३ क० १० इत्येवंपरिमाणं शोध्यते, शोधिते च सति जातं शेषमिदम्– षड्विंशतिः सहस्राणि सप्त शतानि द्वाविंशत्यधिकानि योजनानां त्रयोदश कलाः २६७२२ क० १३, एतेषामर्धे लब्धानि योजनानां त्रयोदश सहस्राणि त्रीणि शतानि एकषष्ट्यधिकानि षट् च कलाः सार्धाः १३३६१ कलाः ६ अर्धम् १/२ । तथा चतुरशीतिर्योजनानां सहस्राणि षोडशाधिकानि चतस्रः कलाः ८४०१६ क० ४ इत्येतावत्परिमाणं हरिवर्षस्य धनुःपृष्ठम् । तथाहि– हरिवर्षस्येषुपरिमाणं तिस्रो लक्षा दश सहस्राणि ३१००००, अस्य वर्गो विधीयते, जातो नवकः षट्कः एककः शून्यान्यष्टौ ९६१०००००००० भूय एष राशिः षड्भिर्गुण्यते, आगतः पञ्चकः सप्तकः षट्कः षट्कः अष्टौ शून्यानि ५७६६०००००००० । एतत् हरिवर्षक्षेत्रस्य सत्के एककः नवकः सप्तकः एककः षट्कः शून्यान्यष्टौ १९७१६०००००००० इत्येवंरूपे जीवावर्गे प्रक्षिप्यते, ततो जातो राशिरेवंप्रमाणः– द्विकः पञ्चकः

चतुष्कः अष्टकः द्विकः शून्यान्यष्टौ २५४८२०००००००० । अस्य वर्गमूलानयने लब्ध एककः पञ्चकः नवकः षट्कः त्रिकः शून्यम् अष्टौ(ष्टकः) १५९६३०८ । शेषमुद्धरति सप्तकः षट्कः नवकः एककः त्रिकः षट्कः ७६९१३६ । छेदराशिः त्रिकः एककः नवकः द्विकः षट्कः एककः षट्कः ३१९२६१६ । वर्गमूललब्धस्तु कलाराशिर्योजनकरणार्थमेकोनविंशत्या भज्यते, लब्धानि योजनानां चतुरशीतिसहस्राणि षोडशाधिकानि चतस्रः कलाः ८४०१६ क० ४ ॥५९॥'' - इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ।

[पृ०१८० पं०३] ''**पुढविदगअगणिमारुय, इक्किक्के सत्त जोणिलक्खाओ । वणपत्तेय अणंते, दस चउदस जोणिलक्खाओ ॥३५१॥ विगलिंदिएसु दो दो, चउरो चउरो अ नारयसुरेसु । तिरिएसु हुंति चउरो, चउदस लक्खाओ मणुएसु ॥३५२॥ व्या०** पृथिव्युदकाग्निमरुतां संबन्धिन्येकैकस्मिन् समूहे सप्त योनिलक्षा भवन्ति, तद्यथा– सप्त पृथिवीनिकाये, सप्तोदकनिकाये, सप्ताग्निनिकाये, सप्त वायुनिकाये । वनस्पतिनिकायो द्विविधः, तद्यथा– प्रत्येकोऽनन्तकायश्च । तत्र प्रत्येकवनस्पतिनिकाये दश योनिलक्षाः, अनन्तवनस्पतिनिकाये चतुर्दश । **विकलेन्द्रियेषु** द्वीन्द्रियत्रीन्द्रियचतुरिन्द्रियरूपेषु प्रत्येकं द्वे द्वे योनिलक्षे, तद्यथा– द्वे योनिलक्षे द्वीन्द्रियेषु, द्वे त्रीन्द्रियेषु, द्वे चतुरिन्द्रियेषु । तथा, चतस्रो योनिलक्षा नारकाणाम्, चतस्रो देवानाम्, तथा तिर्यक्षु पञ्चेन्द्रियेषु चतस्रो योनिलक्षाः, चतुर्दश योनिलक्षा मनुष्येषु । सर्वसङ्ख्यया चतुरशीतिर्योनिलक्षा भवन्ति । उक्तं च– 'नभस्वतः सप्त जलस्य चाग्नेः, क्षितेस्तथा ताश्च निगोदयोर्द्वे । स्मृताश्चतस्रः किल नारकाणां तथा तिरश्चां त्रिदिवौकसां च ॥१॥ त्रिरीरिते द्वे विकलेन्द्रियाणां चतुर्दश स्युर्मनुजन्मनां च । वनस्पतीनां दश योनिलक्षा, अशीतिरेवं चतुरुत्तरा स्यात् ॥२॥' [ ] इति ॥३५१-३५२॥'' - इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरिसूरिविरचितायां** वृत्तौ ॥

[पृ०१८१ पं०१] ''उक्ता ज्योतिष्कविमानवक्तव्यता, **सम्प्रति** वैमानिकदेवविमानवक्तव्यतामाह– **बत्तीसट्ठावीसा बारस अट्ठ य चउरो सयसहस्सा । आरेण बंभलोगा विमाणसंखा भवे एसा ॥११७॥ व्या०** ब्रह्मलोकात् ब्रह्मलोकचरमपर्यन्तादारतोऽर्वाक् । किमुक्तं भवति ? ब्रह्मलोकमभिव्याप्य एषा विमानसङ्ख्या भवति, तद्यथा-सौधर्मे कल्पे द्वात्रिंशद्विमानानां शतसहस्राणि ३२००००० । ईशानदेवलोकेऽष्टाविंशतिः २८००००० । सनत्कुमारकल्पे द्वादश १२००००० । माहेन्द्रकल्पेऽष्टौ ८००००० । ब्रह्मलोके कल्पे चत्वारि ४००००० ॥११७॥ तथा– **पन्नास चत्त छच्चेव सहस्सा लंतसुक्कसहस्सारे । सय चउरो आणयपाणएसु तिन्नारणच्चुयए ॥११८॥ व्या०** अत्रापि पूर्वार्धे कल्पक्रमेण सङ्ख्यापदयोजना । लान्तके कल्पे पञ्चाशद्विमानानां सहस्राणि ५०००० । महाशुक्रे कल्पे चत्वारिंशत्सहस्राणि ४०००० । सहस्रारे कल्पे षट् सहस्राणि ६००० । तथा आनतप्राणतयोर्द्वयोः कल्पयोः समुदितयोश्चत्वारि विमानशतानि ४०० । आरणाच्युतयोर्द्वयोः कल्पयोः समुदितयोस्त्रीणि विमानशतानि ३०० ॥११८॥ तथा– **इक्कारसुत्तरं हिट्ठिमेसु सत्तुत्तरं च मज्झिमए ।**

सयमेगं उवरिमए पंचेव अणुत्तरविमाणा ॥११९॥ व्या० अधस्तनेषु त्रिषु ग्रैवेयकेषु समुदितेषु विमानानामेकादशोत्तरशतम् १११ । मध्यमे ग्रैवेयकत्रिके समुदिते सप्तोत्तरं विमानानां शतम् १०७। उपरितने ग्रैवेयकत्रिके समुदिते शतमेकं विमानानाम् १०० । सर्वपर्यन्तवर्तिनि तु चरमे प्रस्तटे पञ्चैवानुत्तरविमानानि, न विद्यते उत्तरं प्रधानं परं वा येभ्यस्तान्यनुत्तराणि, तानि च तानि विमानानि च अनुत्तरविमानानि ॥११९॥'' इति **बृहत्संग्रहण्या मलयगिरिसूरि**विरचितायां टीकायाम् ।

[पृ०१८९ पं०२] ''भिक्खूपडिमाण दारा ४ । अधिकारो उवधाणेण । जतो आह-भिक्खूणं उवधाणे० गाथा ४७ ॥ **भिक्खूणं उवहाणे पगयं तत्थ व हवन्ति निक्खेवा । तिन्नि य पुव्वद्दिट्ठा पगयं पुण भिक्खुपडिमाए ॥१॥** पगयं अधिगारो, णामनिप्फण्णे भिक्खू पडिमा य दुपयं णाम, भिक्खू वण्णेयव्वो पडिमा य । तत्थ भिक्खु त्ति तस्सिं भिक्खुम्मि पडिमासु य णिक्खेवो णामादी ४, दोसु वि तिन्नि णामट्ठवणादव्वभिक्खू य पुव्वुद्दिट्ठा, स भिक्खूए अधिगारो– भावभिक्खूए अधिगारो । भावभिक्खुणो तस्स वि पडिमासु, तासि णामादि तिन्नि पुव्ववण्णिता, उवासगपडिमासु। पगतं अधिगारो भावपडिमाए, सा च भावपडिमा पंचविधा, तंजधा-**समाधि**० गाथा ४८॥

समाहिओवहाणे य विवेकपडिमाइ य । पदिसंलीणा य तहा एगविहारे य पंचमीया ॥२॥ समाधिपडिमा, उवधाणपडिमा, विवेगपडिमा, पडिसंलीणपडिमा, एगविधारपडिमा । समाधिपडिमा द्विविधा– सुतसमाधिपडिमा चरित्तसमाधिपडिमा य, दर्शनं तदन्तर्गतमेव । सुतसमाधिपडिमा। छावट्ठिं कहिं ? उच्यते-**आयारे**० गाथा ४९ ॥

आयारे बायाला पडिमा सोलस य वन्निया ठाणे । चत्तारि अ ववहारे मोए दो दो चंदपडिमाओ ॥३॥ आयारे बातालीसं, कहं ? आयारग्गेहिं सत्ततीसं, बंभचेरेहिं पंच, एवं बातालीसं आयारे, ठाणे सोलस विभासितव्वा, ववहारे चत्तारि, दो मोयपडिमातो खुड्डिगा महल्लिगा य मोयपडिमा, दो चंदपडिमा - जवमज्झा वइरमज्झा य । एवं एता सुयसमाधिपडिमा छावट्ठिं।

एवं च सुयसमाधिपडिमा छावट्ठिया य पन्नत्ता । समाईयमाईया चारित्तसमाहिपडिमाओ ॥४॥ ५०। इमा पंच चारित्तसमाहिपडिमातो तंजधा-सामाइयचरित्तसमाधिपडिमा जाव अधक्खातचरित्त-समाधिपडिमा । उवहाणपडिमा दुविधा-**भिक्खूणं**० गाथा० ५१ ॥

भिक्खूणं उवहाणे उवासगाणं च वन्निया सुत्ते । गणकोवाइविवेगो सब्भिंतरबाहिरो दुविहो ॥५॥ भिक्खूणं उवहाणे बारसपडिमा सुत्ते वन्निज्जंति । उवासगाणं एक्कारस सुत्ते वण्णिता। विवेगपडिमा एक्का सा पुण कोहादि, **आदि**ग्रहणात् सरीर-उवधि-संसारविवेगा । सा समासतो दुविधा-अब्भिंतरगा बाहिरा य। अब्भिंतरिया कोधादीणं। **आदि**ग्रहणात् माणमायालोभकम्मसंसाराण य। बाहिरिया गणसरीरभत्तपाणस्स य अणेसणिज्जस्स । पडिसंलीणपडिमा चउत्था । सा एक्का चेव। सा पुण समासेण दुविधा-इंदियपडिसंलीणपडिमा य नोइंदियपडिसंलीणपडिमा य ।

इंदियसंलीणपडिमा पंचविधा-**सोतिंदियमादीया०** गाथा ५२॥ **सोइंदियमादीआ पदिसंलीणया चउत्थिया दुविहा । अट्ठगुणसमग्गस्स य एगविहारिस्स पंचमिया ॥६॥** सोतिंदियविसयपयारणिसेहो वा सोतिंदियपजुत्तेसु वा अत्थेसु रागद्दोसणिग्गहो । एवं पंचण्ह वि । णोइंदियपडिसंलीणता तिविधा-जोगपडिसंलीणता कसायपडिसंलीणता विवित्तसयणासणसेवणता जधा पन्नत्तीए । अहवा अब्भिंतरिया बाहिरगा य । एगविहारिस्स एगा चेव, सा य कस्स कप्पति ? आयरियस्स अट्ठगुणोववेतस्स, अट्ठ गुणा आयारसंपदादी समग्गो उववेतो, किं सव्वस्सेव ? नेत्युच्यते-जो सो अतिसेसं गुणेति विज्जादि पव्वेसु । उक्तं च– 'अंतो उवस्सगस्स एगरातं वा दुरातं वा तिरातं वा वसभस्स वा गीतत्थस्स विज्जादिनिमित्तं' [ ] । एवं छण्णउतिं सव्वग्गेण भावपडिमा ।''- इति **दशाश्रुतस्कन्धचूर्णौ** सप्तम्यां दशायाम् ।

[पृ०१८९ पं०१०] ''**मासाई सत्तंता पढमा बिइतइयसत्तराइदिणा । अहराई एगराई भिक्खूपडिमाण बारसगं ॥१८।३॥ मासा०** गाहा । **मासादयो** मासप्रभृतयः । **सप्तान्ताः** सप्तमासावसानाः । एकैकमासवृद्ध्या सप्त प्रतिमा भवन्ति । तत्र मासः परिमाणमस्या मासिकी प्रथमा, एवं द्विमासिकी द्वितीया, त्रिमासिकी तृतीया यावत्सप्तमासिकी सप्तमी । **पढमा-बिइ-तइय सत्तराइदिण** त्ति सप्तानामुपरि प्रथमा द्वितीया तृतीया च सप्त रात्रि-दिनानि रात्रिंदिवानि यस्यां सा तथा प्रतिमा भवति । तदभिलापश्चैवम्- प्रथमा सप्तरात्रिंदिवेत्यादि । एताश्चादितः क्रमेणाष्टमी नवमी दशमी चेति । **अहराइ** त्ति । अहोरात्रं परिमाणमस्या अहोरात्रिकी एकादशी । एका रात्रिर्यस्यां सा **एकरात्रि**रेकरात्रिकीत्यर्थः, द्वादशीति । एवं **भिक्षुप्रतिमा**नामुक्तार्थानां **द्वादश** परिमाणमस्येति **द्वादशकं** वृन्दं भवतीति गाथासमासार्थः ।

[पं०११] **दंसणवयसामाइयपोसहपडिमाअबंभसच्चित्ते । आरंभपेसउद्दिट्ठवज्जए समणभूए य ॥१०।३॥ दंसण०** गाहा । **दर्शनं** च सम्यग्दर्शनम् । **व्रतानि** चानुव्रतादीनि । **सामायिकं** च सावद्येतरयोगवर्जनासेवास्वभावम् । **पौषधं** च पर्वदिनानुष्ठेयमुपवासादि । **प्रतिमा** च कायोत्सर्गः । **अब्रह्म** चाब्रह्मचर्यम् । **सचित्तं** च सचेतनद्रव्यमिति । समाहारद्वन्द्वः । ततस्तस्मिन् विषये । प्रतिमेति प्रकरणगम्यम् । इह च दर्शनादिषु पञ्चसु विधिद्वारेण प्रतिमा, अब्रह्मसचित्तयोस्तु वर्जनद्वारेणेति । तथा **आरम्भश्च** स्वयं कृष्यादिकरणम्, **प्रेषश्च** प्रेषणं परेषां कृष्यादिषु प्रवर्तनम्, **उद्दिष्टं** चाधिकृतं श्रावकमुद्दिश्य सचेतनं सदचेतनीकृतं पक्वं वा, यो **वर्जयति** परिहरतेऽसावारम्भ-प्रेषोद्दिष्टवर्जकः प्रतिमेति प्रकृतमेव । इह च प्रतिमाप्रतिमावतोरभेदादेवमुपन्यासः । तथा **श्रमणः** साधुः स इव यः सः श्रमणभूतः । **भूत**शब्दस्योपमानार्थत्वात् । इहापि प्रतिमाप्रतिमावतोरभेदेनोपन्यासः । **च**शब्दः समुच्चयार्थः । एतासां च दर्शनप्रतिमा व्रतप्रतिमेत्येवमादिरभिलापो द्रष्टव्यः । इति द्वारगाथासमासार्थः ॥१०।३॥'' इति **पञ्चाशकस्य** श्री**अभयदेवसूरि**विरचितायां टीकायाम् ॥

[पृ०१९१ पं०१] ''सम्प्रति निषधस्य जीवामाह– **चउणउइ सहस्साइं, छप्पन्नहियं सयं**

कलाउ दो य । जीवा निसहस्सेसा, धणुपट्ठं से इमं होइ ॥६०॥ व्या० निषधस्य निषधवर्षधरस्य जीवा एषा यदुत चतुर्नवतिर्योजनानां सहस्राणि शतमेकं षट्पञ्चाशदधिकं द्वे च कले । तथाहि– निषधस्यावगाहः षड् लक्षाः त्रिंशत्सहस्राणि ६३००००, अनेन जम्बूद्वीपविष्कम्भः कलारूप एकोनविंशतिलक्षप्रमाण ऊनः क्रियते, जातं शेषं द्वादश लक्षाः सप्ततिसहस्राणि १२७००००, एतद्यथोक्तेनावगाहेन गुण्यते, जातः अष्टकः शून्यं शून्यम् एककः अष्टौ शून्यानि ८००१००००००००। एष राशिर्भूयश्चतुर्भिर्गुण्यते, जातः त्रिकः द्विकः शून्यं शून्यं चतुष्कः शून्यान्यष्टौ ३२००४००००००००। एष निषधस्य जीवावर्गः, अस्य वर्गमूलानयने लब्ध एककः सप्तकः अष्टकः अष्टकः नवकः षट्कः षट्कः १७८८९६६ । शेषमिदं षट्कः पञ्चकः शून्यमष्टकः चतुष्कः चतुष्कः ६५०८४४ । छेदराशिः त्रिकः पञ्चकः सप्तकः सप्तकः नवकः त्रिकः द्विकः ३५७७९३२ । वर्गमूललब्धस्य तु राशेर्योजनकरणार्थमेकोनविंशत्या भागो ह्रियते, लब्धानि योजनानां चतुर्नवतिसहस्राणि शतमेकं षट्पञ्चाशदधिकं द्वे च कले ९४१५६ क० २ । **धनुःपृष्ठं** धनुःपृष्ठपरिमाणं **'से'** तस्य निषधपर्वतस्येदं वक्ष्यमाणं भवति ॥६०॥'' इति **बृहत्क्षेत्र० मलय०** ।

[पृ०१९४ पं०११] **''नव चेव सहस्साइं, छावट्ठाइं सयाइं सत्तेव । सविसेस कला चेगा, दाहिणभरहद्धधणुपट्ठं ॥४३॥ व्या०** दक्षिणभरतार्धधनुःपृष्ठं धनुःपृष्ठपरिमाणं नव सहस्राणि सप्त शतानि **षट्षष्टानि** षट्षष्ट्यधिकानि, कला चैकोनविंशतिभागरूपा एका सविशेषा ९७६६ क० १ किञ्चिद्विशेषाधिका, तथाहि– धनुःपृष्ठस्य करणमिदम्– इषुवर्गं षड्गुणं जीवावर्गे प्रक्षिप्य यत्तस्य वर्गमूलं तद्धनुःपृष्ठमिति । तत्र दक्षिणभरतार्धस्येषुः कलारूपः पञ्चचत्वारिंशच्छतानि पञ्चविंशत्यधिकानि ४५२५, अस्य वर्गो द्विकः शून्यं चतुष्कः सप्तकः पञ्चकः षट्कः द्विकः पञ्चकः २०४७५६२५। एष षड्भिर्गुण्यते, जात एककः द्विकः द्विकः अष्टकः पञ्चकः त्रिकः सप्तकः पञ्चकः शून्यम् १२२८५३७५०, एष राशिर्दक्षिणभरतार्धस्य सत्के जीवावर्गे त्रिकश्चतुष्कस्त्रिकः शून्यमष्टकः शून्यं नवकः सप्तकः पञ्चकः शून्यं शून्यम् ३४३०८०९७५०० इत्येवंरूपे प्रक्षिप्यते, ततो जातो राशिः त्रिकः चतुष्कः चतुष्कः त्रिकः शून्यं नवकः पञ्चकः एककः द्विकः पञ्चकः शून्यम् ३४४३०९५१२५० । अस्य वर्गमूले लब्धम् एककः अष्टकः चत्वारः पञ्चकाः १८५५५५। शेषस्तूपरितनो राशिर्द्विकः नवकः त्रिकः द्विकः द्विकः पञ्चकः २९३२२५, छेदराशिः त्रिकः सप्तकः त्रय एकका: शून्यम् ३७१११० । वर्गमूललब्धस्य तु राशेर्योजनकरणार्थमेकोनविंशत्या भागो ह्रियते, लब्धानि योजनानां नव सहस्राणि सप्त शतानि षट्षष्ट्यधिकानि कला चैका ९७६६ क० १ ॥४३॥

[पं० १४] साम्प्रतमस्यैव वैताढ्यपर्वतस्य धनुःपृष्ठमाह– **दस चेव सहस्साइं, सत्तेव सया हवंति तेयाला । धणुपट्ठं वेयड्ढे, कला य पन्नरस हवंति ॥४५॥ व्या०** दश सहस्राणि सप्त शतानि **त्रिचत्वारिंशानि** त्रिचत्वारिंशदधिकानि योजनानां कलाश्च पञ्चदश भवन्ति १०७४३ क०

१५ वैताढ्यस्य धनुःपृष्ठम् । तथाहि– वैताढ्यस्येषुः कलानां चतुःपञ्चाशच्छतानि पञ्चसप्तत्यधिकानि ५४७५, अस्य वर्गो विधीयते जातो द्विकः नवकः नवकः सप्तकः पञ्चकः षट्कः द्विकः पञ्चकः २९९७५६२५ । भूय एष राशिः षड्भिर्गुण्यते, जात एककः सप्तकः नवकः अष्टकः पञ्चकः त्रिकः सप्तकः पञ्चकः शून्यम् १७९८५३७५० । एष राशिर्वैताढ्यसत्के जीवावर्गे चतुष्कः एककः चतुष्कः नवकः शून्यं शून्यं नवकः सप्तकः पञ्चकः शून्यं शून्यम् ४१४९००९७५०० इत्येवंरूपे प्रक्षिप्यते, ततो जातमिदम्– चतुष्कः एककः षट्कः षट्कः नवकः नवकः पञ्चकः एककः द्विकः पञ्चकः शून्यम् ४१६६९९५१२५० । अस्य वर्गमूलानयने लब्धं द्वे लक्षे चत्वारि सहस्राणि शतमेकं द्वात्रिंशदधिकं कलानाम् २०४१३२ । शेषस्तूपरितनो राशिस्तिष्ठति सप्तसप्ततिसहस्राणि अष्टौ शतानि षड्विंशत्यधिकानि ७७८२६, छेदराशिश्चतस्रो लक्षा अष्टौ सहस्राणि द्वे शते चतुःषष्ट्यधिके ४०८२६४। वर्गमूललब्धस्तु राशिर्योजनकरणार्थमेकोनविंशत्या भज्यते, लब्धानि योजनानां दश सहस्राणि सप्त शतानि त्रिचत्वारिंशदधिकानि कलाः पञ्चदश १०७४३ क० १५ ॥४५॥'' इति **बृहत्क्षेत्रसमासे मलयगिरि**सूरिविरचितायां वृत्तौ ॥

[पृ०२०८ पं०१९] दिगम्बरपरम्परायां **तत्त्वार्थराजवार्तिके** यादृशमाचाराङ्गादिस्वरूपं वर्णितं तदत्रोपन्यस्यते– ''**अङ्गप्रविष्टमाचारादिद्वादशभेदं बुद्ध्यतिशयर्द्धियुक्तगणधरानुस्मृतग्रन्थरचनम्** ।१२। भगवदर्हत्सर्वज्ञहिमवन्निर्गतवागगङ्गाऽर्थविमलसलिलप्रक्षालितान्तःकरणैः बुद्ध्यतिशयर्द्धियुक्तैर्गण-धरैरनुस्मृतग्रन्थरचनम् आचारादिद्वादशविधमङ्गप्रविष्टमित्युच्यते । तद्यथा-आचारः, सूत्रकृतम्, स्थानम्, समवायः, व्याख्याप्रज्ञप्तिः, ज्ञातृधर्मकथा, उपासकाध्ययनम्, अन्तकृद्दशा, अनुत्तरौपपातिकदशा, प्रश्नव्याकरणम्, विपाकसूत्रम्, दृष्टिवाद इति ।

आचारे चर्याविधानं शुद्ध्यष्टकपञ्चसमितित्रिगुप्तिविकल्पं कथ्यते ।

सूत्रकृते ज्ञानविनयप्रज्ञापना कल्प्याकल्प्यच्छेदोपस्थापना व्यवहारधर्मक्रियाः प्ररूप्यन्ते ।

स्थाने अनेकाश्रयाणामर्थानां निर्णयः क्रियते ।

समवाये सर्वपदार्थानां समवायश्चिन्त्यते । स चतुर्विधः-द्रव्यक्षेत्रकालभावविकल्पैः। तत्र धर्माऽधर्मास्तिकायलोकाकाशैकजीवानां तुल्याऽसंख्येयप्रदेशत्वात् एकेन प्रमाणेन द्रव्याणां समवायनाद् द्रव्यसमवायः । जम्बूद्वीपसर्वार्थसिद्ध्यप्रतिष्ठाननरकनन्दीश्वरैकवापीनां तुल्ययोजनशतसहस्रविष्कम्भ-प्रमाणेन क्षेत्रसमवायनात् क्षेत्रसमवायः। उत्सर्पिण्यवसर्पिण्योस्तुल्यदशसागरोपमकोटिकोटिप्रमाणात् कालसमवायनात् कालसमवायः । क्षायिकसम्यक्त्वकेवलज्ञानकेवलदर्शनयथाख्यातचारित्राणां यो भावः तदनुभवस्य तुल्यानन्तप्रमाणत्वात् भावसमवायनाद् भावसमवायः ।

व्याख्याप्रज्ञप्तौ षष्टिव्याकरणसहस्राणि 'किमस्ति जीवः, नास्ति' इत्येवमादीनि निरूप्यन्ते ।

ज्ञातृधर्मकथायाम् आख्यानोपाख्यानानां बहुप्रकाराणां कथनम् ।

उपासकाध्ययने श्रावकधर्मलक्षणम् ।

संसारस्यान्तः कृतो यैस्ते अन्तकृतः । नमिमतङ्गसोमिलरामपुत्रसुदर्शनयमलीकवलीककिष्कम्बल-पालाम्बष्ठपुत्रा इत्येते दश वर्धमानतीर्थङ्करतीर्थे । एवमृषभादीनां त्रयोविंशतेस्तीर्थेष्वन्येऽन्ये च दश दशानगारा दश दश दारुणानुपसर्गान्निर्जित्य कृत्स्नकर्मक्षयादन्तकृतः दश अस्यां वर्ण्यन्ते इति अन्तकृद्दशा । अथवा, अन्तकृतां दशा अन्तकृद्दशा, तस्याम् अर्हदाचार्यविधिः सिध्यतां च।

उपपादो जन्म प्रयोजनं येषां त इमे औपपादिकाः, विजयवैजयन्तजयन्तापराजितसर्वार्थसिद्धाख्यानि पञ्चानुत्तराणि, अनुत्तरेष्वौपपादिका अनुत्तरौपपादिकाः ऋषिदास-धान्य-सुनक्षत्र-कार्तिक-नन्द-नन्दन-शालिभद्र-अभय-वारिषेण-चिलातपुत्रा इत्येते दश वर्धमानतीर्थकरतीर्थे । एवमृषभादीनां त्रयोविंशतेस्तीर्थेष्वन्येऽन्ये च दश दशानगारा दश दश दारुणानुपसर्गान्निर्जित्य विजयाद्यनुत्तरेषूत्पन्ना इत्येवमनुत्तरौपपादिकाः दशास्यां वर्ण्यन्त इत्यनुत्तरौपपादिकदशा । अथवा, अनुत्तरौपपादिकानां दशा अनुत्तरौपपादिकदशा, तस्यामायुर्वैक्रियिकानुबन्धविशेषः ।

आक्षेपविक्षेपैर्हेतुनयाश्रितानां प्रश्नानां व्याकरणं प्रश्नव्याकरणम्, तस्मिंल्लौकिकवैदिकानामर्थानां निर्णयः ।

विपाकसूत्रे सुकृतदुःकृतानां विपाकश्चिन्त्यते ।

द्वादशमङ्गं दृष्टिवाद इति । कौत्कल-काणेविद्धि-कौशिक-हरिस्मश्रु-मांछपिक-रोमश-हारीत-मुण्डा-ऽश्वलायनादीनां क्रियावाददृष्टीनामशीतिशतम्, मरीचिकुमार-कपिलोलूक-गार्ग्य-व्याघ्रभूति-वाद्वलि-माठर-मौद्गल्यायनादीनामक्रियावाददृष्टीनां चतुरशीतिः, साकल्य-वल्कल-कुथुमि-सात्यमुग्रि-नारायण-कठ-माध्यन्दिन-मौद-पैप्पलाद-बादरायणाम्बष्ठि-कृदौविकायन-वसु-जैमिन्यादीनामज्ञानिकुदृष्टीनां सप्तषष्टिः, वशिष्ठ-पाराशर-जनुकर्णि-वाल्मीकि-रौमहर्षिणि-सत्यदत्त-व्यासैलापुत्रौपमन्यवैन्द्रदत्तायस्थूणादीनां वैनयिकदृष्टीनां द्वात्रिंशत् । एषां दृष्टिशतानां त्रयाणां त्रिषष्ट्युत्तराणां प्ररूपणं निग्रहश्च दृष्टिवादे क्रियते। स पञ्चविधः-परिकर्म सूत्रं प्रथमानुयोगः पूर्वगतं चूलिका चेति।'' इति **तत्त्वार्थराजवार्तिके** १।२०॥

[पृ०२१३ पं० ६] ``**पज्जायाऽणभिधेयं ठिअमण्णत्थे तयत्थनिरवेक्खं । जाइच्छिअं च नामं जावदव्वं च पाएण ॥२५॥** यत् कस्मिंश्चिद् भृतकदारकादौ इन्द्राद्यभिधानं क्रियते, तद् नाम भण्यते । कथंभूतं तत् ?, इत्याह– **पर्यायाणां** शक्र-पुरन्दर-पाकशासन-शतमख-हरिप्रभृतीनां समानार्थवाचकानां ध्वनीनाम**नभिधेय**मवाच्यम्, नामवतः पिण्डस्य संबन्धी धर्मोऽयं नाम्न्युपचरितः, स हि नामवान् भृतकदारकादिपिण्डः किलैकेन संकेतितमात्रेणेन्द्रादिशब्देनैवाऽभिधीयते, न तु शेषैः शक्र-पुरन्दर-पाकशासनादिशब्दैः, अतो नामयुक्तपिण्डगतधर्मो नाम्न्युपचरितः पर्यायानभिधेयमिति । पुनरपि कथंभूतं तन्नाम ?, इत्याह– **ठिअमण्णत्थे** त्ति विवक्षिताद् भृतकदारकादिपिण्डादन्यश्चासावर्थश्चाऽन्यार्थो देवाधिपादिः, सद्भावतस्तत्र यत् स्थितम्, भृतकदारकादौ तु संकेतमात्रतयैव

वर्तते, अथवा सद्भावतः **स्थितमन्वर्थे** अनुगतः संबद्धः परमैश्वर्यादिकोऽर्थो यत्र सोऽन्वर्थः शचीपत्यादिः, सद्भावतस्तत्र स्थितम्, भृतकदारकादौ तर्हि कथं वर्तते ?, इत्याह-**तदर्थनिरपेक्षं** तस्येन्द्रादिनाम्नोऽर्थस्तदर्थः परमैश्वर्यादिस्तस्य निरपेक्षं संकेतमात्रेणैव तदर्थशून्ये भृतकदारकादौ वर्तते, इति पर्यायानभिधेयम्, स्थितमन्यार्थे, अन्वर्थे वा, तदर्थनिरपेक्षं यत् क्वचिद् भृतकदारकादौ इन्द्राद्यभिधानं क्रियते तद् नाम, इतीह तात्पर्यार्थः । प्रकारान्तरेणाऽपि नाम्नः स्वरूपमाह- **यादृच्छिकं चे**ति, इदमुक्तं भवति– न केवलमनन्तरोक्तम्, किन्त्वन्यत्राऽवर्तमानमपि यदेवमेव यदृच्छया केनचिद् गोपालदारकादेरभिधानं क्रियते, तदपि नाम, यथा डित्थो डवित्थ इत्यादि । इदं चोभयरूपमपि कथंभूतम् ?, इत्याह– यावद्द्रव्यं च प्रायेणेति -यावदेतद्वाच्यं द्रव्यमवतिष्ठते तावदिदं नामाऽप्यवतिष्ठत इति भावः । किं सर्वमपि ?, न, इत्याह– **प्रायेणे**ति, मेरु-द्वीप-समुद्रादिकं नाम प्रभूतं यावद्द्रव्यभावि दृश्यते, किञ्चित् त्वन्यथाऽपि समीक्ष्यते, देवदत्तादिनामवाच्यानां द्रव्याणां विद्यमानानामप्यपरापरनामपरावर्तस्य लोके दर्शनात् । सिद्धान्तेऽपि यदुक्तम्-"नामं आवकहिअं" [ ]ति तत् प्रतिनियतजनपदादिसंज्ञामेवाऽङ्गीकृत्य, यथोत्तराः कुरव इत्यादि । तदेवं प्रकारद्वयेन नाम्नः स्वरूपमत्रोक्तम्, एतच्च तृतीयप्रकारस्योपलक्षणम्, पुस्तक-पत्र-चित्रादिलिखितस्य वस्त्वभिधानभूतेन्द्रादिवर्णावलीमात्रस्याऽप्यन्यत्र नामत्वेनोक्तत्वादिति । एतच्च सामान्येन नाम्नो लक्षणमुक्तम्, प्रस्तुते त्वेवं योज्यते-यत्र मङ्गलार्थशून्ये वस्तुनि मङ्गलमिति नाम क्रियते, तद् वस्तु नाम्ना नाममात्रेण मङ्गलमिति कृत्वा नाममङ्गलमित्युच्यते । पुस्तकादिलिखितं च यद् मङ्गलमिति वर्णावलीमात्रम्, तदपि नाम च तद् मङ्गलं चेति कृत्वा नाममङ्गलमित्यभिधीयते ।। इति गाथार्थः ।।२५।।" इति **विशेषावश्यकभाष्ये** मलधारि**हेमचन्द्रसूरि**विरचितायां वृत्तौ ।

[पृ०२२९ पं०१३] इह यादृशं **ज्ञाताधर्मकथाङ्ग**स्य वर्णनं दृश्यते तादृशमेव प्रायोऽक्षरशः **नन्दी**सूत्रस्य **हरिभद्र**सूरिविरचितायां वृत्तौ दृश्यते । किन्तु **जिनदास**गणिमहत्तरविरचितायां चूर्णौ अन्यथा दृश्यते, यथा– "तत्थ णातेसु आदिमा दस णाता चेव, ण तेसु अक्खादियादिसंभवो। सेसा णव णाता, तेसु एक्केक्के णाते चत्तालीसं चत्तालीसं अक्खाइयाओ भवंति, तत्थ वि एक्केक्काए अक्खाइयाए पंच पंच उवक्खाइयासताइं भवंति, तेसु वि एक्केक्काए उवक्खाइयाए पंच पंच अक्खाइओवक्खाइयसताइं भवंति, एवं एते णव कोडीओ । एताओ धम्मकहासु सोहेतव्व त्ति कातुं एकोणवीसाए णाताणं दसण्ह य धम्मकहाणं विसेसो कज्जति-दस णाता दस णव य धम्मकहातो दसहिं परोप्परं सुद्धा । एवं विसेसे कते सेसा णव णाता, ते णव चत्तालीसाए गुणिता जाता तिण्णि सता सट्ठा अक्खाइयाणं, एते अक्खाइयपंचसतेहिंतो सोधिता, तत्थ सेसं चत्तालं सतं, तं उवक्खाइयपंचसतेहिं गुणितं जाता उवक्खाइताणं सत्तरिं सहस्सा, ते पंचहिं अक्खाइतोवक्खाइयसतेहिं गुणिता एवं जाता अद्धुट्ठातो अक्खाइयकोडीतो ।" इति **नन्दीचूर्णौ**।

अभयदेवसूरिभिः **ज्ञाताधर्मकथाङ्ग**स्य स्वरूपं यादृशं वर्णितं तादृशमेव वर्णनं विधाय

हरिभद्रसूरिभिः तत्प्रान्ते ''**एवं गुरवो व्याचक्षते, अन्ये पुनरन्यथा, तदभिप्रायं पुनर्वयमतिगम्भीरत्वान्नावगच्छामः, परमार्थं त्वत्र विशिष्टश्रुतविदो विदन्तीत्यलं प्रसङ्गेन**'' इति **नन्दीटीका**यामभिहितम् । चूर्णिकारवचनं मनसि निधायैव तैरेतल्लिखितं भवेदिति प्रतीयते ॥

[पृ०२७६ पं०२३] ''**णेरइय-देव-तित्थंकरा य ओहिस्सऽबाहिरा हुंति** ।.... ॥६६॥ **व्या०** **नारका**ः प्राग्निरूपितशब्दार्थाः, **देवा** अपि, तीर्थकरणशीलास्**तीर्थकरा**ः, नारकाश्च देवाश्च तीर्थकराश्चेति विग्रहः, **च**शब्द एवकारार्थः, स चावधारणे, अस्य च व्यवहितः सम्बन्ध इति दर्शयिष्यामः, एते नारकादयः **अवधेः** अवधिज्ञानस्य न बाह्या **अबाह्या** भवन्ति, इदमत्र हृदयम्– अवध्युपलब्धस्य क्षेत्रस्यान्तर्वर्तन्ते, सर्वतोऽवभासकत्वात्, प्रदीपवत्, ततश्चार्थादबाह्यावधय एव भवन्ति, नैषां बाह्यावधिर्भवतीत्यर्थः ।.... अथवा अन्यथा व्याख्यायते- नारक-देव-तीर्थकरा अवधेरबाह्या भवन्तीति, किमुक्तं भवति ? नियतावधय एव भवन्ति, नियमेनैषामवधिर्भवतीत्यर्थः ॥'' इति **आवश्यकसूत्रे हारिभद्र्यां** वृत्तौ ।

तृतीयं परिशिष्टम् ।

श्रीसमवायाङ्गसूत्रटीकायां ग्रन्थान्तरेभ्यः साक्षितयोद्धृतानां पाठानामकारादिक्रमेण सूचिः ।

उद्धृतपाठः	पृष्ठाङ्कः
अंतोमुहुत्तमेत्तं चित्तावत्थाण-मेगवत्थुम्मि [ध्यानश० ३]	२३३
अज्ज वि धावइ नाणं... [ ]	११०
अज्ज वि न कोइ विउहं.. [ ]	११०
अट्ठ वग्ग त्ति अत्र.. [नन्दी० हारि०]	२३४
अट्ठपएसो रूयगो.. [आचा० नि० ४२]	२०५
अट्ठमिचउद्दसीसुं... [पञ्चाशक० १०।१७]	३९
अट्ठारसपयसहस्साणि पुण... [नन्दी टी०]	७१
अणियाणकडा रामा... [आव० नि० ४१५]	३०६
अणुवेलंधरवासा लवणे... [बृहत्क्षेत्र० ४२०]	६७
अतिकार्श्यमतिस्थौल्यम्,.. [ ]	१६६
अद्धेण छिन्नसेसं... [ ]	९६
अब्भंतरियं वेलं धरंति... [बृहत्क्षेत्र० ४१७]	६६
अब्भासच्छण १ छंदाणुवत्तणं.... [ ]	१८८
अभिइस्स चंदजोगो... [ज्योतिष्क० १६२]	१५८
अयले भयभेरवाणं... [पर्युषणा०]	४
अयले विजये भद्दे... [आव० भा० ४१]	३०५
अर-मल्लिअंतरे.. [आव० नि० ४२०]	१२८
अवसेसा नक्खत्ता.. [ज्योतिष्क० १६५]	१५९
असिणाणवियडभोई मउलियडो... [पञ्चाशक० १०।१८]	३९
असोगो किण्णराणं... [स्थानाङ्गसू० ६५४]	२८
अस्सग्गीवे तारए मेरए [आव० भा० ४२]	३०६
अह पावित तो संतो... [ ]	११०
आयंगुलेण वत्थुं उस्सेहपमाणओ... [बृहत्सं० गा० ३४९]	११
आयरिय उवज्झाए थेर-... [ ]	१८८
आयारम्मि अहीए जं.. [आचा० नि० १०]	२०९
आसाढवहुलपक्खे... [उत्तरा० २६।१५]	९९
आसाढे मासे दुपया [उत्तरा० २६।१३, ओघिन० २८३]	८७
इंतस्सणुगच्छणया ८ ठियस्स... [ ]	१८७
इगवीसं कोडिसयं लक्खा... [नन्दी० हारि०]	२२९
ईसाणे णं भंते [ ]	२६७
उग्गाणं भोगाणं ... [आव० नि० २२५]	२९३
उवसमसंमत्ताओ... [विशेषाव० भा० ५३१]	५५
उसभस्स पढमभिक्खा... [आव० नि० ३२०]	२९३
एए खलु पडिसत्तू.. [आव० भा० ४३]	३०६
एक्कागारं तइयं तं पुण... [बृहत्क्षेत्र० ३१३]	१३१
एक्कारसुत्तरं हेट्ठिमेसु.. [बृहत्क्षेत्र० ११९]	१८१
एक्कारसेक्कवीसा सय... [बृहत्सं० १०५]	४१
एक्को भगवं वीरो.. [आव० नि० २२४]	२९२
एगं व दो व तिण्णि... [निशीथभा० २०७५]	४५
एगुत्तरा नव सया... [बृहत्क्षेत्र० ५८]	१६७
एगिंदियतेयगसरीरे... [प्रज्ञापना० सू० १५३६-१५३७]	२७४
एतानि नक्षत्राण्युभययोगीनि... [लोकश्री टीका]	२९
एवं वड्ढइ चंदो... [सूर्यप्र० १९]	१५२
कक्कोडय कद्दमए... [बृहत्क्षेत्र० ४२१]	६७
कलंबो उ पिसायाणं... [स्थानाङ्गसू० ६५४]	२८
कायव्वा पुण भत्ती... [ ]	१८७
किण्हं राहुविमाणं निच्चं... [बृहत्सं० ११६]	५९
किण्हं राहुविमाणं निच्चं... [सूर्यप्र० १९]	१५२
कृष्णादिद्रव्यसाचिव्यात्.. [ ]	२४
गावी जुए संगामे.. [आव० प्रक्षेप०]	३०५
गोयमा ! जहण्णेणं... [प्रज्ञापना० ६५६९]	२८२

उद्धृतपाठः	पृष्ठाङ्कः
चंदजस चंदकंता.. [आव० नि० १५९]	२९१
चउ ४ तिय ३ चउरो ४... [ ]	२१८
चउणउइसहस्साइं... [बृहत्क्षेत्र० ६०]	१९१
चउवीस सहस्साइं नव य... [बृहत्क्षेत्र० ५२]	८६
चउवीसई मुहुत्ता [बृहत्सं० २८१]	२८१
चत्ताला सत्त सया... [बृहत्क्षेत्र० ५५]	१३१,१५७
चत्तारि जोयणसए... [बृहत्क्षेत्र० ४२२]	६७
चूलियसीसपहेलिय चोद्दस... [ ]	१८०
चेत्तासोएसु मासेसु.. [उत्तरा० २६ ।१३]	१३३,१३०
चोद्दस लक्खा सिद्धा.. [ ]	२५३
जइ एगिंदियवेउव्वियसरीरए किं... [प्रज्ञापना सू० १५१५]	२७२
जस्स जइ सागरोवम ठिई... [बृहत्सं० २१४]	१३
जा पढमाए जेट्ठा...[बृहत्सं० गा० २३४]	२२
तह देसकालजाणण ... [ ]	१८८
तिण्णि सया तेत्तीसा... [आव० नि० ९७१]	१९८
तित्थयर १ धम्म २ आयरिय... [ ]	१८७
तिन्नेव उत्तराइं पुणव्वसू.. [जम्बू० प्र०]	१५९
तिविट्ठू य दुविट्ठू य ... [आव० भा० ४०]	३०५
तिहिं ठाणेहिं तारारूवे.. [स्थानाङ्ग० सू० १४१]	२१९
तीसा य १ पणवीसा.. [बृहत्सं० २५५]	१७९
ते सोहिज्जंति फुडं.. [नन्दी० हारि०]	२३०
तेवट्ठि सहस्साइं... [बृहत्क्षेत्र० ३१४]	१३१
तेवन्नसहस्साइं नव य... [बृहत्क्षेत्र० ५६]	१४४
दंसणवय [पञ्चाशक० १० ।३]	१८९
दस चेव सहस्साइं... [बृहत्क्षेत्र० ४५]	१९४
दस जोयणसहस्सा... [बृहत्क्षेत्र० ४१५]	६६
दस नवगं गणाण माणं... [आव० नि० २६८]	२९
दाहिण दिवड्ढ पलियं... [बृहत्सं० ५]	११
दुविहा पण्णवणा पण्णत्ता... [प्रज्ञापना० ३]	२५६
देसूणमद्धजोयण लवणसिहोवरि.. [बृहत्क्षेत्र० ४१६]	६६
देहं विमलसुयंधं [ ]	२३६
दो १ साहि २ सत्त... [बृहत्सं० गा० १२]	२२
दो देसूणुत्तरिल्लाणं... [बृहत्सं० ५]	१५
दो वारे विजयाइसु... [विशेषाव० ४३६]	१५६
धणुपट्ठ कलचउक्कं... [बृहत्क्षेत्र० ५३]	१५७
धणुपट्ठ कलचउक्कं... [बृहत्क्षेत्र० ५९]	१७९
धम्मो मंगलमुक्कट्ठं [दशवै० १ ।१]	८२,२४८
नरकाः सीमन्तकादिका... [सूत्रकृताङ्गवृ०]	२५८
नव चेव सहस्साइं... [बृहत्क्षेत्र० ४३]	१९४
नवबंभचेरमइओ अट्ठारसपद.. [आचा० नि० ११]	२१२
नवबंभचेरमइओ... [आचारा० नि० ११]	७१
नवमो य महापउमो.. [आव० नि० ३७५]	२९५
नाणं ५ तराय ५ दसगं... [कर्मस्तव० २ ।२३]	६८
नाभी जियसत्तू या.. [आव० नि० ३८७]	२९२
नारयदेवा तिरिमणुयगब्भया... [ ]	२६८
निग्गंथ-सक्क-तावस-... [पिण्डनि० ४४५]	२१०
निच्चंधयारतमसा ववगयगहचंद.. [ ]	२५९
नेरइए णं भंते ! नेरइएसु.. [भगवती० ४/९/१७३]	२८०
नेरइयदेवतित्थंकरा य... [आव० नि० ६६]	२७६
नेरइया १ असुराई १० पुढवाई... [ ]	२५८
पंच सए छव्वीसे छच्च.. [बृहत्क्षेत्र० २९]	७४
पंचास ५० चत्त ४... [बृहत्सं० ११८]	१८१
पज्जायाणभिधेय [विशेषाव० २५]	२१३
पढमा बहुलपडिवए १ वीया... [ज्योतिष्क० २४७]	१६४
पढमाऽसीइ सहस्सा १.. [बृहत्सं० २४१]	१७३
पढमेत्थ विमलवाहण.. [आव० नि० १५५]	२९१
पणुवीसं कोडिसयं... [नन्दी० हारि०]	२३०

उद्धृतपाठः	पृष्ठाङ्कः
पयावती य वंभो... [आव० नि० ४११]	२९५
परिनिव्वुया गणहरा.. [आव० नि० ६५८]	२९१
पलियं १ अहियं २... [बृहत्सं० गा० १४]	२२
पिंडेसण १ सेज्जि २ रिया... [आव० सं०]	२१२
पुढवि-दग-अगणि-... [बृहत्सं० ३५१]	१८०
पुणव्वसु रोहिणी.. [लोकश्री]	२९
पन्नरसइभोगेण य.... [सूर्यप्र० १९]	१५२
पुव्वतुडियाडडाववहूहुय तह... [ ]	१८०
पुव्वादिअणुक्कमसो गोथुभ...[बृहत्क्षेत्र० ४१९]	६६
पोसे मासे चउप्पया [उत्तरा० २६।१३]	१३३
वत्तीस ३२ अट्ठवीसा... [बृहत्सं० ११७]	१८१
वहुलस्स सत्तमीए... [ज्योतिष्क० २५०]	१६३
वाधृलोडने [पा० धा० ५]	१६२
वावट्ठिं वावट्ठिं दिवसे... [सूर्यप्र० १९]	१५२
वाहा सत्तट्ठिसए.. [बृहत्क्षेत्र० ५५]	१५७
भरहो सगरो मघवं.. [आव० नि० ३७४]	२९५
मरुदेवि विजय सेणा.. [आव० नि० ३८५]	२९२
महुरा य कणगवत्थू.... [आव० प्रक्षेप०]	३०५
मासाई सत्तंता [पञ्चाशक० १८।३]	१८९
मेरुस्स तिन्नि कंडा.. [बृहत्क्षेत्र० ३१२]	१३१
मोक्षे भवे च सर्वत्र,...[ ]	७
मोत्तूण सगमवाहं पढमाए... [कर्मप्र० ८३]	१६२
यथा गौर्गवयस्तथा [मी० श्लो० वा०]	२१३
योग-क्षेमकृन्नाथः [ ]	५
रत्नं निगद्यते तज्जातौ जातौ यदुत्कृष्टम् [ ]	५६
रसोर्लशौ मागध्याम् [ ]	१२५
लहुहिमव हिमव निसढे... [ ]	१९९
विगलिंदिएसु दो दो.. [बृहत्सं० ३५२]	१८०
विज्जुपहमालवंते नव नव... [ ]	१९९
विज्जुप्पभहरिकूडो.. [बृहत्क्षेत्र० १५६]	२००
वीरं अरिट्ठनेमिं... [आव० नि० २२१]	७४
संजयवेमाणित्थी संजयि.. [ ]	२३६

उद्धृतपाठः	पृष्ठाङ्कः
संवच्छरेण भिक्खा... [आव० नि० ३१९]	२९३
सक्कार १ अब्भुट्ठाणे २... [ ]	१८७
सज्झाएण पसत्थं झाणं..... [उपदेशमाला० गा० ३३८]	२३३
सट्ठिं नागसहस्सा... [बृहत्क्षेत्र० ४१८]	६६
सत्त पाणूणि से थोवे,... [भगवती० ६।७।४]	१७०
सत्त य छ च्चउ चउरो.. [ ]	२१२
सत्तत्तीस सहस्सा छ.. [बृहत्क्षेत्र० ५४]	१३०
सत्तावन्न सहस्सा धणुं... [बृहत्क्षेत्र० ५७]	१४८
सत्थपरिण्णा १ लोग... [आव० सं०]	२११
सप्त स्वरास्त्रयो ग्रामा,... [ ]	१६६
समणुन्नमणुन्ने वा... [निशीथभा० २१२४]	४७
सयभिसया भरणीओ अद्दा.. [जम्बू० प्र० ७।१६०]	१५९,६०
सव्वट्ठिसद्धगअणुत्तरोववाइय.... [प्रज्ञा० सू० १५४४]	२७४
सव्वे वि एगदूसेण.. [आव० नि० २२७]	२९२
सव्वेसिं आयारो पढमो [आचा० नि० ८]	२५०
सव्वेसिं उत्तरो मेरु [ ]	६३
सहसंमुईयाए समणे [आचा० सू०७४३]	३
सागरमेगं १ तिय २... [बृहत्सं० गा० २३३]	२१
सुग्गीवे दढरहे विण्हू.. [आव० नि० ३८८]	२९२
सुजसा सुव्वय.. [आव० नि० ३८६]	२९२
सुद्धस्स चउत्थीए... [ज्योतिष्क० २४८]	१६४
सुद्धस्स य दसमीए... [ज्योतिष्क० २५१]	१६३
सुमइऽत्थ निच्चभत्तेण... [आव० नि० २२८]	२९३
सूच सूचायाम् [ ]	२१४
सूरे सुदंसणे कुंभे... [आव० नि० ३८९]	२९२
सेसा य तिरियमणुया... [ ]	२६८
सोलस भागे काऊण..[ज्योतिष्क०१११]	६०,१५२
हट्ठस्स अणवगल्लस्स,..[भगवती०६।७।४]	१६९
हरिवासे इगवीसा.. [बृहत्क्षेत्र० ३१]	२०६

अथ प्रशस्तिः

(शार्दूलविक्रीडितम्)

पादाङ्गुष्ठसुचालितामरगिरि-र्हस्तास्तदेवस्मयः, जिह्वाखण्डितशक्रसंशयचयो, वाङ्नष्टहालाहलः ।
सर्वाङ्गीणमहोपसर्गदकृपा-नेत्राम्बुदत्ताञ्जलिः, दाढादारितदिव्ययुत्समवतात्-श्रीवर्धमानो जिनः ।।१।।

(उपजाति)

श्रीगौतमस्वामि-सुधर्मदेव-जम्बूप्रभु-श्रीप्रभवप्रमुख्याः ।
सुरेशपूजापदसूरिदेवा, भवन्तु ते श्रीगुरवः प्रसन्नाः ।।२।।

(वसन्ततिलका)

एतन्महर्षिशुचिपट्टपरम्पराजान्-आनन्दसूरिकमलाभिधसूरिपादान् ।
संविग्नसन्ततिसदीशपदान् प्रणम्य, श्रीवीरदानचरणाँश्च गुरून् स्तविष्ये ।।३।।
श्रीदानसूरिवरशिष्यमतल्लिका स, श्री प्रेमसूरिभगवान् क्षमया क्षमाभः ।
सिद्धान्तवारिवरवारिनिधिः पुनातु, चारित्रचन्दनसुगन्धिशरीरशाली ।।४।।

(शार्दूलविक्रीडितम्)

प्रत्यग्रत्रिशतर्षिसन्ततिसरित्-स्रष्टा क्षमाभृन्महान्, गीतार्थप्रवरो वरश्रुतयुतः सर्वागमानां गृहम् ।
तर्के तर्कविशुद्धबुद्धिविभवः सोऽभूत् स्वकीयेऽप्यहो, गच्छे संयमशुद्धितत्परमतिः प्रज्ञावतामग्रणीः ।।५।।
तत्कालीनकरग्रहग्रहविधा-बद्धे ह्यभूद् वैक्रमे, तिथ्याराधनकारणेन करुणो भेदस्तपागच्छजः ।
कारुण्यैकरसेन तेन गुरुणा सत्पट्टकादात्मनो, वह्न्वंशेन निवारितः खकरखो-ष्ठे पिण्डवाडापुरे ।।६।।

(वसन्ततिलका)

तत्पट्टभृद् भुवनभान्वभिधश्च सूरिः, श्रीवर्धमानसुतपोनिधिकीर्तिधाम ।
न्याये विशारद इतीह जगत्प्रसिद्धो, जातोऽतिवाक्पतिमति-र्मतिमच्छरण्यः ।।७।।
तस्याद्यशिष्यलघुबन्धुरथाब्जबन्धु-तेजास्तपःश्रुतसमर्पणतेजसा सः ।
पंन्यासपद्मविजयो गणिराट् श्रियेऽस्तु, क्षान्त्यैकसायकविदीर्णमहोपसर्गः ।।८।।
सर्वाधिकश्रमणसार्थपतिर्मतीशः पाता चतुःशतमितर्षिगणस्य शस्यः ।
गच्छाधिनाथपदभृज्जयघोषसूरिः 'सिद्धान्तसूर्य' यशसा-जयतीह चोच्चैः ।।९।।
सद्बुद्धिनीरधिविबोधनबद्धकक्षः, वैराग्यदेशनविधौ परिपूर्णदक्षः ।
सीमन्धरप्रभुकृपापरपात्रमस्तु श्रीहेमचन्द्रभगवान् सततं प्रसन्नः ।।१०।।

कारुण्यकम्रालयानां महनीयमुख्यानां महोमालिनां लोकोपकारचतुराणां
वैराग्यदेशनादक्षाचार्यदेव-श्रीमद्विजयहेमचन्द्रसूरीश्वराणां सदुपदेशेन श्रीजिनशासन-आराधनाट्रस्ट-
विहिते श्रुतसमुद्धारकार्यान्वये प्रकाशितमिदं ग्रन्थरत्नं श्रुतभक्तितः ।।

वि.सं. २०६४

पंन्यासपद्मविजयपुण्यस्मृतौ

प्राचीनश्रुतसमुद्धारपद्ममालायां

२६

षड्विंशतितमपद्मम्

समतासागरपंन्यासपद्मविजयपुण्यस्मृतौ प्राचीनश्रुतसमुद्धारपद्ममाला

०१ श्रीदशवैकालिकसूत्रम्
०२ श्रीप्रश्नव्याकरणाङ्गम्
०३ श्रीजीवाजीवाभिगमसूत्रम् (पूर्वार्धः)
०४ श्रीजीवाजीवाभिगमसूत्रम् (उत्तरार्धः)
०५ पिण्डनिर्युक्तिः
०६ ज्ञाताधर्मकथाङ्गम्
०७ उपासकदशाङ्गसूत्रम्
०८ श्रीप्रज्ञापनासूत्रम् (पूर्वार्धः)
०९ श्रीप्रज्ञापनासूत्रम् (उत्तरार्धः)
१० व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्रम् (प्रथमभागः)
११ व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्रम् (द्वितीयभागः)
१२ व्याख्याप्रज्ञप्तिसूत्रम् (तृतीयभागः)
१३ श्रीउत्तराध्ययनसूत्रम् (प्रथमभागः) (भावविजयटीका)
१४ श्रीउत्तराध्ययनसूत्रम् (द्वितीयभागः) (भावविजयटीका)
१५ श्रीउत्तराध्ययनसूत्रम् (तृतीयभागः) (भावविजयटीका)
१६ श्रीऔपपातिकसूत्रम्
१७ श्रीराजप्रश्नीयसूत्रम्
१८ आवश्यकनिर्युक्तिः (प्रथमभागः)
१९ आवश्यकनिर्युक्तिः (द्वितीयभागः)
२० आवश्यकनिर्युक्तिः (तृतीयभागः)
२१ आवश्यकनिर्युक्तिः (चतुर्थभागः)
२२ श्रीउत्तराध्ययनसूत्रम् (प्रथमभागः) (शांतिसूरीश्वरटीका)
२३ श्रीउत्तराध्ययनसूत्रम् (द्वीतीयभागः) (शान्तिसूरीश्वरटीका)
२४ श्रीउत्तराध्ययनसूत्रम् (तृतीयभागः) (शान्तिसूरीश्वरटीका)
२५ श्रीनन्दीसूत्रम् (मूलम्)
२६ श्रीसमवायांगसूत्रम्
२७ श्रीअन्तकृद्दशा-अनुत्तरोपपातिकदशा-विपाकश्रुतानि